कृषि-ज्ञान-कोश

नारायण दुलीचन्द व्यास

सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

J:(P152:4)k9239
152K9
व्यास (नारायण दुली चंद)
[illegible] कोरा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

J : (P152:4)R
152K9
9236

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृषि-ज्ञान-कोष

खेती संबंधी सब प्रकार की जानकारी देनेवाली पुस्तक

मुमुक्षु भवन वेद वेदांग विद्यालय
ग्रन्थालय
आगत क्रमांक...
दिनांक...

डा० नारायण दुलीचंद व्यास

१९६९

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल,
नई दिल्ली

J:(P152:4)k
152K9

दूसरी बार : १९६९
मूल्य
रु० ६.००

❀ मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ❀
वाराणसी।
आगत क्रमांक...... 1837..............
दिनांक.............................

मुद्रक
श्यामकुमार गर्ग
राष्ट्रभाषा प्रिंटर्स
दिल्ली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशकीय

हमारा देश कृषि-प्रधान देश है। उसकी जन-संख्या का बहुत बड़ा भाग खेती-बारी पर निर्वाह करता है, लेकिन खेद की बात है कि हिन्दी में ऐसे साहित्य का बड़ा अभाव है, जो खेती के विषय में वैज्ञानिक ढंग से पूरी जानकारी दे सके। हमारे अधिकांश किसान यों तो आज भी अपढ़ हैं, पर यह जानने के लिए वे बड़े ही उत्सुक हैं कि खेती में किस प्रकार उन्नति हो सकती है और उत्पादन किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक इस विषय का बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है। खेती से सम्बन्धित प्रायः सभी आवश्यक जानकारी इ . आगई है। सामग्री को पांच खण्डों में विभाजित किया गया है। पहले खण्ड में कृषि-सम्बन्धी विषयों की जानकारी है, दूसरे में विभिन्न फसलों की खेती, तीसरे में साग-भाजी की खेती, चौथे में फलों की खेती और पांचवें में खेती के सहायक धंधों के बारे में बड़े ही विस्तार से प्रकाश डाला गया है। अन्त में कई परिशिष्टों में बहुत-से ज्ञानवर्द्धक आंकड़े दिये गए हैं। इस प्रकार अपने विषय की यह बड़ी ही उपयोगी पुस्तक बन गई है।

लेखक ने व्यावहारिक अनुभव के आधार पर इस पुस्तक को लिखा है। बहुत वर्षों तक वह हमारे देश की एक सुविख्यात कृषि-अनुसंधानशाला से सम्बद्ध रहे हैं। चूंकि यह पुस्तक अनुभव के आधार पर लिखी गई है, इसलिए खेती-बारी में संलग्न व्यक्तियों के लिए तो लाभदायक सिद्ध होगी ही, साथ ही इस विषय के अजानकार लोगों में भी खेती के प्रति जिज्ञासा और रुचि उत्पन्न करेगी।

हम चाहते हैं कि राष्ट्र की समृद्धि में रुचि रखनेवाले प्रत्येक पाठक के हाथ में यह पुस्तक हो।

—मंत्री

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रस्तावना

वर्तमान वैज्ञानिक युग में अनेक देशों ने कृषि-कला में बहुत जल्दी उन्नति की है, परन्तु हमारा कृषि-प्रधान भारत बहुत धीमी गति से चल रहा है। इसके मुख्यतः दो कारण हैं। एक तो यह कि हमारे कृषक, जिन्होंने सदियों के अनुभव के आधार पर कृषि-कला की जिन पुरानी बातों को अपना लिया है, उन्हें छोड़ना नहीं चाहते। दूसरी बात यह कि उन्हें ऐसी सामग्री भी नहीं मिलती, जिसपर पूर्णरूप से भरोसा करके नई रीतियों को अपनावें। ऐसे पात्रों का भी बहुत-कुछ अभाव है, जो निजी अनुभव के आधार पर हमारे कृषकों को निश्चित रूप से उन्नति का मार्ग दिखलावें। जो प्रचारक अथवा ग्रामसेवक सरकार की ओर से गांवों में भेजे जाते हैं उन्हें एक बताये हुए कार्यक्रम के आधार पर चलना पड़ता है। उन्हें न तो तर्क-वितर्क का अवसर मिलता है और न अधिकांश के पास कोई ऐसा संचित साहित्य या जानकारी होती है, जिसके द्वारा कृषि के कई जटिल पहलुओं को हल कर सकें।

अन्य अनेक देशों के कृषक काफी शिक्षित हैं और उन्हें उनकी आवश्यकता की पूर्ति करनेवाला कृषि-साहित्य भी मिल जाता है, फिर भी वहां प्रचारक रखे जाते हैं, जिनसे कृषकों को काफी सहायता मिलती है। हमारे यहां तो अपनी राष्ट्र-भाषा में कृषि-साहित्य का अभाव-सा ही है और अधिकांश कृषक अशिक्षित हैं। ऐसी स्थिति में हमारे यहां योग्य प्रचारकों तथा ग्रामसेवकों का होना अत्यन्त आवश्यक है, चाहे वे सरकारी कर्मचारी हों अथवा सेवाभावी युवक। ऐसे सज्जनों के हाथ में कोई ऐसा साहित्य होना अत्यन्त आवश्यक है, जिसके आधार पर वे कृषकों को लाभप्रद परामर्श देकर कृषि को उन्नत करें और हमारे देश को कम-से-कम इस कला में तो स्वावलम्बी बनावें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेक बार मेरा ऐसा विचार हुआ कि एक छोटी-सी पुस्तक लिखी जाय जिसमें कृषि-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण बातों का संक्षिप्त लेकिन स्पष्ट रूपसे समावेश हो, ताकि शिक्षित कृषक तथा नवयुवक कृषि-जैसे स्वतन्त्र मार्ग को अपनाना चाहें तो अपनाकर अपने देश का गौरव बढ़ायें। ऐसा विचार आता तो रहा, परन्तु कार्यान्वित अनेक कारणों से न हो सका। कुछ मित्रों के आग्रह से अब यह पुस्तक 'कृषि-ज्ञान-कोष' लिखी गई। गागर में सागर भरने का प्रयत्न किया गया। इसमें मुझे कितनी सफलता मिली, इसका अनुमान इसकी उपयोगिता द्वारा ही हो सकेगा।

इस पुस्तक की तैयारी में मुझे समय-समय पर भारतीय कृषि-अनुसंधानशाला के अध्यक्ष डाक्टर बी. पी. पाल से योग्य सलाह मिलती रही और श्री कालिदास साहनी, अन्य विशेषज्ञों तथा विकास-योजना के कृषि-सलाहकार ने विषय-निर्माण तथा कुछ विषयों पर विशेष प्रकाश डालने की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया, जिसके लिए मैं उपर्युक्त सज्जनों का विशेष ऋणी हूं।

बीज की उन्नत जातियों के नम्बर तथा नाम के चुनाव में केन्द्रीय कपास-कमेटी के सेक्रेटरी श्री पी. डी. नायर (लेखक के सहपाठी), केन्द्रीय चावल-अनुसंधानशाला के अध्यक्ष डाक्टर यू० पार्थसारथी, उत्तरप्रदेश के कृषि-विभाग के वनस्पति-विशेषज्ञ डाक्टर त्रिभुवनराय मेहता, वनस्पति-विशेषज्ञ श्री आर० बी० देशपांडे तथा एक गन्ना-फार्म के संचालक श्री सुब्बाराव से विशेष सहायता मिली, इसलिए मैं उपर्युक्त सज्जनों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

अन्तिम आभार मैं उन सज्जनों के प्रति प्रकट करता हूं जिन्होंने मेरी अन्य कृषि-सम्बन्धी पुस्तकों का अध्ययन कर मुझे इस पुस्तक के लिए तैयार किया और इसकी तैयारी में समय-समय पर योग्य सलाह देते रहे।

फसलों के वैज्ञानिक नाम श्री चटर्जी[1] और श्री रंधावा के सुझावों के अनुसार दिये गए हैं और कोष्ठक में पुराने नाम भी दिये हैं।

---

1. Chatterji D., Randhawa G. S, 1952.
The Indian Journal of Horticulture, vol. ix N0.4
Dec. 1962.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खाद्य तत्त्वों के रासायनिक नाम केन्द्रीय शिक्षा-मंत्रालय द्वारा प्रकाशित शब्द-कोष के आधार पर दिये गए हैं। लेखक की पहली पुस्तकों में नाइट्रोजन का नाम नत्रजन, फॉसफोरस पेंटाक्साइड (P_2O_5) का नाम स्फुर तथा पोटेशियम आक्साइड का नाम पोटाश था, उन्हें बदलकर अब नाइट्रोजन, फासफोरस पेंटाक्साइड और पोटेशियम आक्साइड रक्खा गया है और सांकेतिक चिह्न नाइट्रोजन का ना०, फासफोरस पेंटाक्साइड का फा० पे० और पोटेशियम आक्साइड का पो० आ० रक्खा है।

दूसरा संस्करण

इस संस्करण में स्थान-स्थान पर संशोधन किये गए हैं और नये-से-नये आंकड़े देने का प्रयत्न किया गया है। इसके अतिरिक्त एक विशेष बात यह की गई है कि कुछ पाठकों के सुझाव के अनुसार पुस्तक में पांचवां खण्ड जोड़ दिया गया है। इस नये खण्ड में पशु-पालन, पशु-पोषण, पशु-संवर्धन, पशु-चिकित्सा, मधु, रेशम और लाख-उत्पादन आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार कृषि के साथ-साथ कृषि से सम्बन्धित अन्य विषयों की जानकारी भी इस पुस्तक से मिल जाती है।

—नारायण दुलीचन्द व्यास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषय-सूची

पहला खण्ड

प्रकरण		पृष्ठ
	कृषि-सम्बन्धी विषयों की जानकारी	१७-१४२
१.	जन-संख्या और अन्नोत्पादन	१७
२.	मास, ऋतु, नक्षत्रादि चक्र	१६
३.	कृषि-सम्बन्धी कुछ कहावतें	२१
४.	मौसम की सूचना और उससे लाभ	२३
५.	ताप-परिमाण, जलवायु और उनका खेती पर असर	२५
६.	वर्षा	२७
७.	वातावरण की तरी	२६
८.	वायु	३०
९.	मौसम के मानचित्रों का महत्त्व	३१
१०.	स्थानों की ऊंचाई	३२
११.	भूमि	३२
१२.	खाद	४१
१३.	कृषि-यन्त्र और कृषि का यन्त्रीकरण	६३
१४.	जुताई	७०
१५.	बीज और बोआई	७६
१६.	निंदाई, निराई या सोहनी	८१
१७.	सिंचाई	८५
१८.	फसल के शत्रु और उनसे बचाव के उपाय	१०१
१९.	फसल की तैयारी	१३४
२०.	वितरण और व्यवसाय	१४०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरा खण्ड

विभिन्न फसलों की खेती १४३-२२३

१. अन्नों की खेती १४३

गेहूं १४३; धान, चावल १४६; जई १५६; जौ, जव १५७; जुवार १५८; बाजरा १६२; मक्का १६४; मड़वा, रागी १६६; कंगनी, राला, कोदों, कोदरा, चीना, वारी, शमई, कुटकी, गुंडली सावा १६८

२. दलहन की खेती १७२

उड़द १७२; किराम्रो, कुलथी १७४; खिसारी, लाख, लांग १७५; ग्वार १७६; चना १७८; चवली, बोरा, बरबटी १८०; तूअर (रहर, अरहर) १८१; मसूर १८३; मटर, वटाला, वटाणा १८४; मूंग १८५; मोठ, माथ, मटकी १८६; सोयाबीन १८७; सेम, पोपट, वाल वलोर १८८

३. तिलहन की खेती १९०

अलसी, तीसी १९१; एरंडी १९३; कुसूम, करड़ी १९५; खसखस, पोस्त १९६; तिल १९८; मूंगफली, भुई मूंग, चीना बादाम २००; राम-तिली, रामतिल २०२; तारामीरा, तोरिया, राई, सरसों २०३

४. तागवाली फसलों की खेती २०५

अम्बाड़ी, पटुआ २०५; कपास २०६; पाट २१०; सन २११

५. अन्य मूल्यवान फसलों की खेती २१३

तम्बाकू २१३; ईख, गन्ना, ऊख, सांठा २१६

६. चारे की खेती २२०

गिनी घास २२१; हाथीकांडा, बरसीम २२१; लूसर्न, शफताल २२२; सेंगी २२३

तीसरा खण्ड

सागभाजी की खेती २२४-२६१

१. कन्दवाली तरकारियां २२५

जड़वाली तरकारियां—गाजर २२६; मूली २२७; शलजम २२७;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चुकंदर २२७; पारस्निप, साल्सीफाई, रुटेबागा, स्किरेट २२८

कंदवाली तरकारियां, जिनके रूपान्तरित धड़ या शाखाएं भूमि में बैठती हैं—आलू २२९; अर्वी, घुइयां २२८; शकरकंद २३०; गांठगोभी २२८; सूरन २२८; गराडू, रतालू २३१; सुथनी २३२; कच्चू २३२; अरारूट २३२; टेपियोका २३३; एसपेरेगस २३३

२. पत्ते और कोमल डंडियां काम में लाई जानेवाली तरकारियां २३३

प्याज २३५; लहसुन २३६; लीक २३६; शाईव २३६; सिवाल २३६; कुसूम, खसखस, खिसारी २३७; चौलाई २३७; पालक ३३७; पालक खट्टा २३७; पोई २३७; वथुआ २३८; मेथी २३८; राई २३८; राजगिरा २३८; लूणिया (कुलफा) साग २३८; सरसों, सरसों सफेद, साग २३९; बंध गोभी २३९; चीनी गोभी २३९; ब्रसेल्स स्प्राउट्स २४० लेट्यूस २४०

३. फल की डंडी या फूल काम में लाई जानेवाली तरकारियां २४१

ग्लोव आर्टिचोक २४१; पटुआ २४२; फूलगोभी २४२; ब्रोकोली २४२

४. फल काम में लाई जानेवाली तरकारियां २४२

आल (लौकी) २४३; उच्चे २४४; करेला २४४; कद्दू २४४; कद्दू विलायती २४५; कद्दू भूरा २४५; कुंदरू २४५; खरबूजा २४५; खीरा ४४६; खीरा, गोल कचरी २४६; चर्यल २४६; चिचड़ा २४६; टमाटर २४७; टिंडा २४८; तरबूज २४८; तोरी (झिगुनी), तोरी (घिवरा) २४८; परवल २४९; फूट २४९; बैंगन २४९; भिण्डी (रामतरोई) २५०; मिर्च २५०; मोगरी २५१; रैन्ता (ककड़ी) २५१; स्क्वाश २५१

५. दलहन की तरकारियां २५२

(क) वे जिनकी फलियां तरकारी के काम आती हैं—बीन फ्रेंच २५२; बीन ब्रांड २५३; बीन-लाइमा २५३; बीन स्कारलेट रनर २५३; उदा, कमच २५३; सेम चारकोनी २५३; रहरिया सेम २५३

६. अन्य तरकारियां २५३

धरतीफूल, (छत्रक, धरतीफोड़, मशरूम) २५४; सहजन २५४; सिंघाड़ा २५५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७. मसाले २५५

हल्दी २५६; अदरक २५६; धनिया २५७; पोदीना २५७; सफेद जीरा २५८; स्याह जीरा २५८; कलौंजी, मंगरैला २५८; अजवायन २५८; सौंफ २५८; बड़ी सौंफ २५९; सोआ २५९; छोटी इलायची २५९; वड़ी इलायची २५९; सेलेरिएक २६०; सेकरी २६०; काली मिर्च २६०; लौंग २६०; दालचीनी २६१; तेजपात २६१

चौथा खण्ड

फलों की खेती २६२-२९३

१. सफलता के आधार २६२

फलों के लिए भूमि का चुनाव २६२; फलों के वृक्षों के वर्ग २६३

२. वृक्ष लगाने की रीतियां २६३

३. घेरा २६५

४. खाद २६५

५. वनस्पति-संवर्धन २६६

क़लमें लगाना २६६; डाली लगाना २६७; दाब-क़लम २६८; अंटा बांधना २६८; चश्मा चढ़ाना २६९; भेंट-क़लम २६९; क़लम बिठाना २७१; सहारा २७२

६. निंदाई और सिंचाई २७२

७. काट-छांट २७३

जड़ों की काट-छांट २७३; टहनियों की काट-छांट २७३; फूल और फलों की काट-छांट २७३

८. फलों के शत्रु २७३

९. फलों का व्यवसाय २७३

१०. विभिन्न फलों की खेती २७४

ताजे फल—अंगूर २७७; अमरूद २७७; अनानास २७८; अनार २७८; आड़ू २७९; आम २७९; कटहल २८०; कमरख २८०; केला २८०; खजूर २८१; खिरनी २८१; गुलाब जामुन २८१;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चकोतरा २८१; जामुन २८१; तुरंज, बिजौरा २८२; तेंदू २८२; दिलपसन्द २८२; नासपाती २८३; नीबू २८३; पपीता, (पपैया, एरंडककड़ी) २८३; फालसा २८४; बीही २८४; बेर २७५; बेरी मकोय, गूजबरी २८४; बेरी ब्लेक २८५; बेरी स्ट्रा २८५; बेल २८५; रामफल, नौना २८६; लीची २८६; लोकाट २८६; शफ़तालू २८६; शहतूत या तूत २८६; सीताफल, (शरीफा) २८७; संतरा २८७; संतरा, मौसमी, माल्टा २८७; सपाटू, चीकू २८८; सेव २८८

सूखे फल—अखरोट २८९; अंजीर २८९; काजू २९०; खूबानी जरदालू २९०; चिलगोजा २९०; चिरौंजी २९०; नारियल २९१; पिस्ता २९१; बादाम २९१

चटनी-मुरब्बा आदि के फल—अलूचा-आलूबुखारा २९२; आंवला २९२; इमली २९२; करौंदा २९३; कैथ, कबीट २९३; बाम्पी २९३

पांचवां खण्ड

कृषि के सहायक धंधे २९४-४५३

१. छोटे-बड़े धंधों के प्रकार २९४

२. पशु-पालन २९५

उपयोगी पशु-पक्षी २९५; पशु-पालन की आवश्यकता २९६; भारत की पशु-संख्या २९७

३. पशु-पोषण २९७

चारे-दाने के पोषक पदार्थ २९८; राशन और राशन के प्रकार २९९; मोटे तौर पर राशन की मात्रा गिनने की रीति ३००; दाने की मात्रा गिनने की रीति ३००; पोषण-अनुपात ३०२; विभिन्न प्रकार के पशुओं के लिए पोषण-अनुपात अंक ३०३; पोषण-अनुपात के मान से राशन गिनने की रीति ३०३; उपर्युक्त विभिन्न पदार्थों के विश्लेषणांक ३०४; चारे-दाने के लिए भारत में मिलनेवाले पदार्थ ३०५; सूखा चारा ३०५; दलहनी चारा ३०६; हरा चारा ३०६; सदाबहार चारा ३०७; साय्लेज ३०७; दाना ३०७; चरागाह ३०७; पानी की व्यवस्था ३०८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

४. पशु-प्रजनन ३०८

पशुओं की जातियां ३०८; गायों के वर्ग ३०९; दुधारू और दोकारी गायों की जातियां ३०९; अंगोल ३०९; कांकरेज ३१०; गीर ३१०; साहीवाल ३११; हरियाना ३११; भारवाही बैलों की जातियां ३१२; अमृतमहल ३१२; कांग्यम ३१२; खिलारी ३१२; गौलव ३१२; देवनी ३१२; नागौरी ३१२; निमाड़ी ३१२; मालवी ३१३; मेवाती ३१३; रथ ३१३; हल्लीकर ३१३; भैंसों की जातियां ३१३; मुर्रा ३१३; जाफराबादी ३१४; नागपुरी ३१४; मेहसाना ३१४; विभिन्न गुणोंवाले पशुओं की पहचान ३१५; दुधारू गाय की पहचान ३१५; दुधारू भैंस की पहचान ३१६; भारवाही और खेतों की जुताई के योग्य बैलों की पहचान ३१६; बैलों की आयु का अनुमान ३१७; दांत-दाढ़ के निकलने का क्रम ३१८; अच्छे सांड़ की पहचान ३१९; पशु-प्रजनन में सांड़ का महत्त्व ३१९; पशु-प्रजनन के प्रकार—'इन एण्ड इन ब्रीडिंग' ३२०; संकर-क्रिया ३२०; कृत्रिम गर्भाधान ३२०; उन्नतीकरण प्रजनन ३२१; गर्भाधान का समय ३२१; गाय-भैंसों में गर्भ-काल और प्रसव के समय ध्यान देने योग्य बातें ३२२; बछड़ों की देखभाल ३२३; प्रजनन में ध्यान देने योग्य बातें ३२५

५. भेड़ ३२६

भेड़ों के वर्ग ३२६; भेड़ों की जातियां ३२६; ऊनवाली—बीकानेरी ३२६; मांसवाली—नैलोरी ३२७; दोकारी—लोही ३२७; दक्षिणी ३२८; बिलारी ३२८; प्रजनन ६२८; चारा-दाना ३२८

६. बकरियां ३२९

बकरियों की मुख्य-मुख्य जातियां ३३०; प्रजनन ३३०; चारा-दाना ३३१; बच्चों की देखभाल ३३१

७. डेरी-व्यवसाय ३३१

व्यवसाय के प्रकार ३३१; सफलता के आधार ३३२; डेरी के पशुओं की औसत आयु ३३३; डेरीफार्म-घर ३३३; डेरीफार्म के लिए आवश्यक यन्त्र और बर्तनों की सूची ३३७; दूध और दूध के पदार्थ—खीस ३३९; पूर्ण दूध ३३९; क्रीमरहित दूध ३३९; मानकित दूध ३३९;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आंशिक निर्जीवीकृत दूध ३४०; पूर्ण निर्जीवीकृत दूध ३४०; आंशिक तथा पूर्ण निर्जीवीकरण की युक्तियां ३४०; मक्खन ३४१; घी ३४१; मट्ठा ३४१; पनीर ३४२; छेना ३४२; गाय-भैंस के दूध का शतांश में विश्लेषण ३४२

८. पशु-चिकित्सा ३४२

अस्वस्थ पशुओं के लक्षण ३४३; गाय का चित्र अंगों के नाम-सहित ३४४; शृंग-रोधन ३४४; वधिया करना ३४४; कृत्रिम गर्भाधान ३४४; टीका लगाना ३४४; दागना ३४४; नाल लगाना ३४५; रोगों की रोक-थाम ३४५; रोगों के प्रकार ३४५; औषधियों के गुण ३४६; रोग, रोग-निदान और चिकित्सा ३४६, खान-पान की असावधानी और मौसम के फेरफार से होनेवाले रोग—अजीर्ण ३४६; आफरा ३४६; कब्ज ३४७; दस्त ३४७; पेचिश ३४७; घसका ३४७; छूतवाले तथा संक्रामक रोग ३४७; खुरपका, मुंहपका ३४८; गलाघोंटू ३४८; गिल्टी रोग ३४८; जहरबाद ३४९; पशु-प्लेग ३४९; अन्य रोग—घाव और रक्त बहना ३४९; चर्म-रोग ३५०; फोड़ा ३५०; मोच खाना ३५०; वांडी ३५०; स्तन रोग ३५०; अंग-भंग ३५०; विष ३५१; जहरीले जानवरों के काटने का विष ३५१; अनजाने रोग ३५२; चिचड़ी ३५२; कुछ साधारण उपयोगी औषधियां ३५२; कुछ उपयोगी नुस्खे ३५३

९. कुक्कुटादि-पालन ३५४

उपयोगी पक्षी ३५४; मुर्गियों के वर्ग ३५५; मुर्गीशाला ३५५; चारा-दाना ३५६; मुर्गों-मुर्गियों का उनकी उपयोगितानुसार वर्गीकरण ३५६; अच्छे मुर्ग की पहचान ३५६; अच्छी मुर्गी की पहचान ३५६; अच्छे अण्डों की पहचान ३५७; अण्डे सेना ३५७; अण्डों और मुर्गियों का चालान ३५८; मुर्गियों के शत्रु और रोग—असंक्रामक ३५९; संक्रामक—काक्सी डायोसिस ३६०; पेचिश ३६०; माता ३६०; रानीखेत ३६१; हैजा ३६१

१०. रेशम-उत्पादन ३६१

रेशम-कीट की जातियां ३६१; घर में पालने योग्य कीट, 'टसर'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और 'मोगा' के कीट ३६२; घरों में पोषे जानेवाले कीट ३६३; एरी कीट (अंडी के पत्तों पर पलनेवाले कीट) ३६३; तूत पर पलनेवाले कीट ३६४; रेशम की इल्लियों की देख-भाल ३६४; रेशम के उपयोग ३६५

११. लाख-उत्पादन ३६५

लाख-कीट के आतिथेय वृक्ष और कीट की जीवन-चर्या ३६५; लाख-संचारण ३६६; लाखवाले वृक्षों की काट-छांट ३६६; लाख की तैयारी ३६७; लाख का रंग निकालना ३६७; लाख-चूर्ण ३६८; चपड़ा ३६८; बटन लाख ३६८; लाख के उपयोग ३६८

१२. मधु-उत्पादन ३६८

मधुमक्खियों के प्रकार ३६९; सारंगा ३६९; भुंगा ३६९; छोटी मक्खी ३६९; खैरा ३६९; मकरंद और परागवाले पौधे और वृक्ष ३६९; मधुमक्खी का रहन-सहन ३७०; रानी का स्वयंवर या मिलन-उड़ान ३७०; कमेरी मक्खियां ३७१; संक्षिप्त जीवन-चक्र ३७२; छत्ता ३७२; आधार-कोष्ठिका ३७२; आहार-प्रकोष्ठिका ३७२; पूर-प्रकोष्ठ ३७२; मधुमक्खी-पालन की युक्तियां ३७३; नकली मकरंद ३७४; मधुमक्खी के शत्रु ३७४

परिशिष्ट

१. साग-भाजी-सम्बन्धी विशेष जानकारी ३७५-३९५

बीज-संख्या प्रति छटांक और प्रति-एकड़ आवश्यक बीज ३७५-३७९; भिन्न-भिन्न प्रान्तों में कुछ मुख्य-मुख्य तरकारियों के बोने के समय की तालिका ३८०-३८५; साग-भाजियों में रासायनिक पदार्थों की मात्रा ३८६; सारणी ३८८-३९१; साग-भाजी और खाद्योज (विटामिंस) ३९२-३९५

२. फल-सम्बन्धी विशेष जानकारी ३९६-४०५

मुख्य-मुख्य फलों की खेती की सारणी ३९६-४०१; मुख्य-मुख्य फलों के पोषक द्रव्य ४०२-४०३; फल और खाद्योज (विटामिंस) ४०४; भिन्न-भिन्न प्रान्तों के विख्यात फल ४०५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३. सर्वे सेटलमेंट ४०६-४१४
४. समतल करना ४१४-४२०
५. मकान, सड़कों-सम्बन्धी कुछ साधारण जानकारी ४२०-४२३
६. मुद्रा, नाप, तोल, गणना-सम्बन्धी उपयोगी सारणियां ४२३-४३०
७. एक प्रकार के मान को दूसरे में बदलना ४३०-४३१
८. एक वर्गगज की उपज से एक एकड़ का अनुमान ४३२
९. पौधे की दूरी और प्रति एकड़ संख्या ४३३-४३४
१०. क्षेत्रफल और घनफल निकालने के सूत्र ४३५-४४३
११. पटवारियों के कृषकोपयोगी पत्रक ४४५-४४७
१२. भारतीय भूमि का क्षेत्रफल ४४८-४४९
१३. विभिन्न प्रकार की फसलों का क्षेत्रफल और उपज ४५०-४५२
१४. भारत के विभिन्न स्थानों की ऊंचाई, वर्षा तथा तापमान ४५३

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहला खंड

कृषि-संबंधी विषयों की जानकारी

१—जन-संख्या और अन्नोत्पादन

भारत की जनसंख्या सन् १९६१ के आधार पर लगभग ४३.८ करोड़ है। साधारणतः जनसंख्या का ७० प्रतिशत भाग स्त्री-पुरुष और शेष ३० प्रतिशत दस साल या उससे कम उम्र के बच्चों का माना जा सकता है। यदि दो बच्चों को एक पुरुष के बराबर माना जाय तो इस हिसाब से वयस्क व्यक्तियों के रूप में ७० + १५ = ८५ प्रतिशत जन-संख्या हुई। पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या का ८६ प्रतिशत[1] वयस्क व्यक्तियों के रूप में माना गया है। यदि हम ८६ प्रतिशत से गणना करें तो हमारी जन-संख्या ३७.८० करोड़ होती है।

यदि हम प्रति व्यक्ति ८ छटांक धान्य और १.५ छटांक दाल की आवश्यकता समझकर गणना करें तो सारे भारत के लिए ६ करोड़ टन धान्य और लगभग १.१ करोड़ टन दाल चाहिए।

इस पुस्तक की परिशिष्ट-संख्या १२ दिये गए १९६०-६१ के अंक देखें तो ज्ञात होगा कि हमारी उपज लगभग ६.७ करोड़ टन धान्य की और १.२ करोड़ टन दाल की है, अर्थात् वर्तमान स्थिति में हमारे पास ६.७-६.१ = ०.६ करोड़ टन धान्य और १.२-१.१ = ०.९ करोड़ टन दाल अधिक है।

---

[1] The first five year plan 1951, P. 68

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्मरण रहे कि उपर्युक्त उपज में से कुछ भाग हमें बीज के लिए छोड़ना होगा और दालों का कुछ भाग पशुओं को खिलाने के काम भी आता है। ऐसी स्थिति में हमारी उपज जनसंख्या को खिलाने के लिए मुश्किल से पूरी होती है। चूंकि हमारी जनसंख्या २ प्रतिशत प्रतिवर्ष बढ़ती जाती है, उसके लिए हमें अधिक अन्न उपजाना ही होगा।

पशुओं के खाने में जितना अन्न खर्च होता है इसकी गणना करना कुछ कठिन है; परन्तु बीज की आवश्यकता की गणना उपर्युक्त परिशिष्ट में दी गई सारणी के १९६०-६१ के आंकड़ों के आधार पर प्रति-एकड़ उपज निकाल सकते हैं—

	उपज मन[1] प्रति-एकड़	बीज की दर सेर[2] प्रति-एकड़	बीज के लिए उपज का प्रतिशत
गेहूं	७.६४	४०	१३
चावल	८.५४	१५	४.४
जौ	९.६६	३०	७.८
जुवार	४.३६	१५	२.९
बाजरा	३.१६	५	३.९
मक्का	८.०५	५	१.५
रागी	६.२३	३	१.२
छोटे धान्य	४.३५	३	१.७
उड़द	२.८२	६	५.४
कुलथी	१.८५	१०	१३.५
खिसारी	३.७५	१५	१०.०
चना	५.९३	२०	८.४

[1] १ मन=३७.३२४ किलोग्राम
१ सेर=०.९३३ किलोग्राम

[2] धान छींटकर या रोपकर बोते हैं। छींटकर बोने में एक मन प्रति-एकड़ पड़ता है। रोपकर बोने में बीस-पच्चीस सेर लगता है। जापानी रीति से लगभग दस सेर धान काफी होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तूर	७.४३	६	२.०
मटर	७.४३	२०	६.७
मसूर	४.७३	५	२.६
मूंग	१.९६	५	६.४
मोठ	२.३७	४	४.२
अन्य	३.७५	१०	६.७

उपर्युक्त गणना से ज्ञात होगा कि विभिन्न अन्नों की उपज का १.२ प्रतिशत से लेकर १३.५ प्रतिशत तक बीज के लिए रखना होगा। ऐसी स्थिति में हमें अपनी उपज काफी बढ़ानी है जो या तो नई जमीन जोतकर या जुताई, खाद, सिंचाई में सुधार करके और चुने हुए बीज बोकर अथवा कीट-व्याधि से फसलों की रक्षा करके वर्तमान जोतवाली भूमि से बढ़ानी होगी।

इसके साथ अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या का भी विचार रखना है, उन्हें भी भोजन देना है और ऐसी संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है।

२—मास, ऋतु, नक्षत्रादि चक्र

अधिकांश स्थानों में कृषक-गण अपना कार्यक्रम नक्षत्रों के आधार पर करते हैं और चूंकि हमारे नवशिक्षित पाठकों में से कई को नक्षत्र, हिन्दी-अंग्रेजी मास तथा ऋतुओं के पारस्परिक संतुलन का ज्ञान पूरा-पूरा नहीं होता, इसलिए यहां पर इस चक्र द्वारा समझाने का प्रयत्न किया गया है। चूंकि तिथियां घटती-बढ़ती रहती हैं, इसलिए कुछ ही दिनों का अंतर हो सकता है। देखिए पृष्ठ सं० १८, चित्र सं० १।

उपर्युक्त चक्र से ज्ञात होगा कि मौसम तीन गर्मी, बरसात और सर्दी और ऋतु छह ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर और वसन्त होती हैं। प्रत्येक मौसम में चार महीने और प्रत्येक ऋतु में दो महीने पड़ते हैं। नक्षत्र साल-भर में २७ होते हैं। बहुधा अश्विनी से गणना की जाती है। उपर्युक्त चक्र से इन सबका अंग्रेजी महीने और तारीखों से भी संतुलन हो जाता है। इसी चक्र से यह भी ज्ञात होगा कि बरसात का मौसम आधे मृगशिर से प्रारम्भ होकर आधे चित्रा तक रहता है। इसलिए खेती-सम्बन्धी कहावतें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

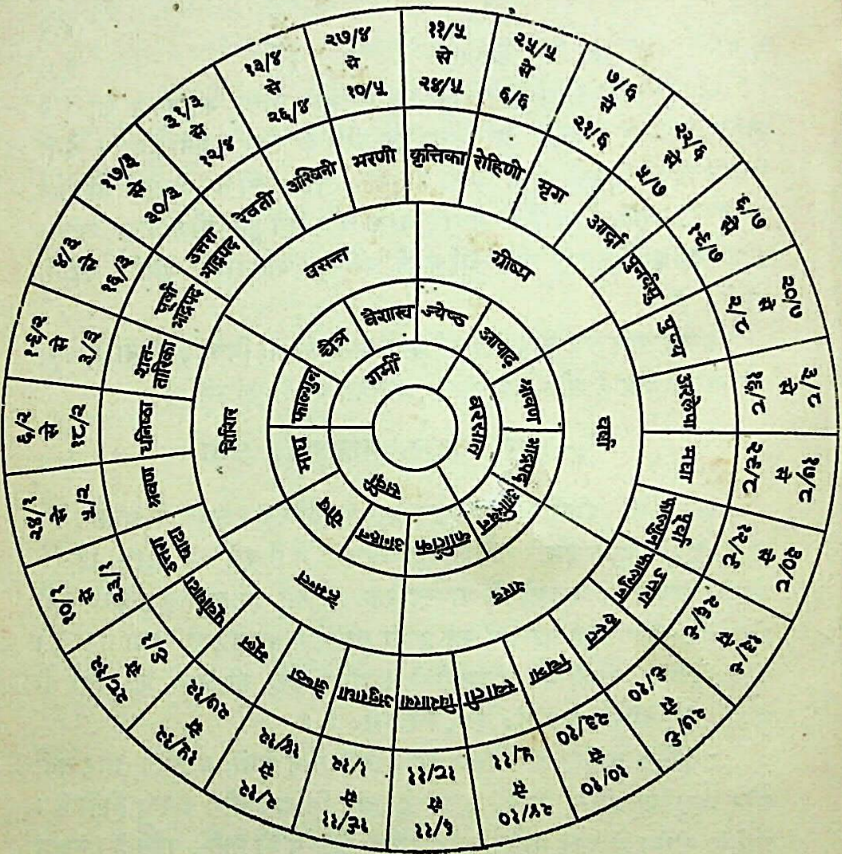

चित्र १

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधिकतर उपर्युक्त नक्षत्रों की मिलती हैं।

३—कृषि-सम्बन्धी कुछ कहावतें

प्रबन्ध-सम्बन्धी :

खेती बाड़ी चाकरी, औ घोड़े का तंग,
अपने हाथ संवारिये चाहे लाख हो संग।

नक्षत्र-सम्बन्धी :

चढ़ते वर्षे आद्रा उतरे वर्षे हस्त
कितने राजा डांडले आनन्द रहे गृहस्थ।
जो कहुं मघा में बरसे जल, सब नाजों में होगा फल।
हस्त बरसे तीन होय शाली सक्कर मास
हस्त बरसे तीन जाय तिल कोदों कपास।
हथिया पूंछ डोलावे, घर बैठा गेहूं आवे।
चित्रा गेहूं स्वांति भूसा, अनुराधा में नाज न भूसा।
चना चित्रा चौगुना स्वांति गेहूं होय।

मास-सम्बन्धी :

आषाढ़ मास पूनो दिवस बादल घेरे चन्द
तो भड्डर जोशी कहे होवे परमानन्द।
सावन केरे प्रथम दिन उगत न दीखै भान
चार महीना बरसै पानी याको है परमान।
सावन बदली चौथ की जो मेघा बरसाय
घाघ कहे घाघिन से साल सवाई जाय।
सावन कृष्णा एकादशी गर्जि मेघ घहरात
तुम जाओ प्रिय मालवा हम जायें गुजरात।
सावन शुक्ला सप्तमी उगत जो दीखै भान
या जल मिलि है कूप में या गंगा अस्नान।
सावन शुक्ला सप्तमी उभरे निकसे भान
हम जायें पति माइके तुम जाओ गुजरात।
सावन पहली पंचमी चन्दा धिरक करे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की जल देखे कूप में की सुन्दरी नीर भरे।
सावन सूखा सियारी भादों सूखा उन्हारी।
असौजा यदि मावसा जो आवै शनिवार
होवै समया किरकिरा जोसी कहे विचार।
पूस उजाली सप्तमी आठैं नवमी गाज
मेह होय तो जानि लो अब सरि है सब काज।
माघ मास जो पड़े न सीत महंगा नाज जानियो मीत।
माह उजारी तीज को बादल बिजुली देख
गेहूं जो संचय करो महंगो होवे पेख।
फागुन माही बहे पुरवाई तब गेहूं में गेरुई धाई।

दिन-सम्बन्धी :

बुध बृहस्पति दोनों भले शुक्र न भले बखान
रवि मंगल बोनी करे द्वार न आवे धान।
पांच मंगल होवे फाल्गुनो पूस पांच शनि होय
काल पड़े कह भड्डरी बीज बोओ मति कोय।

जुताई-सम्बन्धी :

मेढ़ बांध दस जोतन करे दस मन बीघा मोसो ले।
दो हल खेती एक हलवारी एक बैल से भली कुदारी।
दस हल राव आठ हल राना चार हलों का बड़ा किसाना।
एक हल हत्था दो हल काज तीन हल खेती चार हल राज।
जो कपास न गोड़ी उनके हाथ न लगे कौड़ी।
जोते खेत घास न टूटे ताकर भाग सांझ ही फूटे।

खाद-सम्बन्धी :

वही किसानी में है पूरा जो छोड़े हड्डी का चूरा।
गोबर मैला नीम की खली इनते खेती दूनी फली।
सन के डंठल खेत छिटावै तिनते लाभ चौगुनो पावै।

सिंचाई-सम्बन्धी :

गेहूं आवै बाल खेत बनाओ ताल।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोआई-सम्बन्धी :

आलू बोये अंधेरे पाख खेत में डारे कूड़ा राख।
समय समय पर करे सिंचाई दूना घर में आई।
कदम कदम पर बाजरा मेढ़क कूदे जुवार।
ऐसे जो बोवै काई घर घर भरे कोठार।

अन्य :

धान गिरै सौभागे का गेहूं गिरै अभागे का।
बिन बैलन खेती करै बिन भैयन के रार,
बिन महरारू घर करै चौहद साख लबार।
तीतरपंखी बादरी विधवा काजल रेख,
यह बरसै वह घर करै यामें मीन न मेख।

पशु-सम्बन्धी :

सींग मुड़े माथा उठा मुंह का होवे गोल,
रोम नरम चंचल करण तेज बैल अनमोल।
नीले कन्धा बैगन खुरा कबहुं न निकले कंथाबुरा।
छोटा मुंह एंठा कान यही बैल की है पहचान।
हिरन मुतान और पतली पूंछ बैल बसाही कंत बेपूछ।

कटाई-ओसाई :

चना अधपका जौ पका काटे गेहूं बाली लटका।
पछिया हवा ओसाये जोई घाघ कहे घुन कबहुं न होई।

चना पूरा पकने पर काटा जाय तो फल बहुत गिर जाते हैं। जौ का डंठल बड़ा मजबूत होता है, सो पूरा पकने पर काटने से हानि नहीं होती। गेहूं को प्रातःकाल में जब वातावरण में नमी रहे तब काटना चाहिए, नहीं दाना झड़ जाता हैं।

पछिया हवा सूखी होती है। इससे बीज अच्छे सूख जाते हैं और घुन नहीं लगता। अनाज में १० शतांश से अधिक पानी नहीं होगा तो घुन नहीं लगेगा।

४—मौसम की सूचना और उससे लाभ

मौसम की सूचना आकाशवाणी के देहाती प्रोग्राम में तथा अखबारों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में निकलती रहती हैं, जिससे आगामी एक-दो दिन में कैसी स्थिति होगी, यह दिया रहता है। इन सूचनाओं पर भी कृषकों को ध्यान देना चाहिए। यदि ऐसी सूचना से यह ज्ञात हो जाय कि तापमान बहुत गिरेगा अथवा वर्षा की सम्भावना है तो उसी भांति कृषकों को फसल अथवा खलिहान में माल पड़ा हो तो उसे, जलवायु के बुरे प्रभाव से बचाने का प्रवन्ध करना चाहिए। उदाहरण के लिए लीजिये कि पाला गिरने की सम्भावना है तो पाले से बचाने के उपचार द्वारा रक्षा हो सकती है। यदि माल खलिहान में पड़ा है और वर्षा की सम्भावना है तो उसे जल्दी तैयार कर या ढककर बचाया जा सकता है। यदि सिंचाई की आवश्यकता हो और एक-दो दिन में वर्षा आने की सूचना मिल जाय तो उस कार्य को स्थगित किया जा सकता है।

कुछ प्राकृतिक घटनाएं भी ऐसी हैं जिनका जलवायु से सम्बन्ध होता है जैसे—१. अतिवृष्टि, २. अनावृष्टि, ३. ओले, ४. हिमपात, ५. आंधी, ६. आग, इत्यादि।

अतिवृष्टि खेतों को सब जगह हानि पहुंचाती है। इससे रक्षा के लिए यह हो सकता है कि खेतों में पानी ठहरने न दिया जाय। वर्षा के बन्द होते ही खेतों को देखकर जिधर से पानी निकलने की सुविधा हो, निकाल देना चाहिए। अथवा यह भी हो सकता है कि खरीफ की फसल के बीच रबी की फसल बो दी जाय, जैसे कपास की कतारों के बीच चना।

अनावृष्टि से हानि वहां पहुंचती है, जहां सिंचाई का अभाव हो। यदि पहले से ज्ञात हो जाय तो कुछ प्रबन्ध किया जा सकता है, जैसे खेतों के आसपास मेढ़ बांधना, जिससे जो भी पानी गिरे खेतों में ही रह जाय। फसल भी ऐसी चुनी जाय जो कम वर्षा में हो जाय, जैसे बाजरा कम वर्षा में हो सकता है और जुवार को अधिक पानी चाहिए।

ओले—इनसे बचाना तो वैसे ईश्वराधीन है; परन्तु यदि पहले पता लग जाय और फसल थोड़ी हुई तो उसे काट सकते हैं।

हिमपात—सर्दी के दिनों में कभी-कभी रात को वातावरण का तापमान इतना गिर जाता है कि पाला गिरने लगता है जिससे कई फसलें नष्ट हो जाती हैं। फलों के वृक्षों को भी काफी हानि पहुंचती है। हिमपात या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पाले का अनुमान दिन के वातावरण से किया जा सकता है। जब सर्दी के दिनों में बहुत जोर की ठंडी हवा चले तब समझना चाहिए कि उस रात को पाले की सम्भावना है।

इससे बचाने के लिए नर्सरी में तो पौधों पर साया करवा देना चाहिए। फलों के नये-नये पौधों पर पहले से ही सर्दी के दिनों में घासपात या चटाई से छाया करानी चाहिए। बड़े खेतों में जहां ऐसा करना असम्भव है, लेकिन सिंचाई की सुविधा हो तो उन्हें दिन में सींच देना चाहिए। ऐसा करने से उन खेतों का तापमान अपेक्षाकृत कम गिरता है और फसल बच जाती है।

दूसरा उपाय यह है कि रात को मध्य रात्रि के समय खेतों के आसपास कुछ धुंआ कर देना चाहिए, ताकि खेतों पर धुंआ मंडराने लगे। पाले की मार बहुधा रात्रि के तीसरे या चौथे प्रहर में होती है। उस समय यदि धुंआ खेतों पर मंडराता रहे तो तापमान उन खेतों में इतना नहीं गिरता कि पाला हानि पहुंचाये। खेतों की मेढ़ों पर छोटी-छोटी ढेरियां घासपात की लगा और उनपर थोड़ा पानी छींट देना चाहिए ताकि जल्दी से न जल जाय, बल्कि, धीरे-धीरे जलकर धुंआ बनता रहे। ऐसी ढेरियों में मध्य रात्रि में आग लगानी चाहिए।

आंधी—जहां-जहां आंधी की सम्भावना हो, ऐसे स्थानों में 'आंधी-रोक' वृक्ष लगाना चाहिए, जो हवा को रोककर उनके पीछे लगी रहने-वाली फसलों को बचा सके।

आग—अधिकतर गर्मी के दिनों में लगती है। इसके लिए प्रत्येक फार्म पर गैस बुझानेवाली औषधि के पीपे रखना चाहिए। जंगलों में घास की गंजी लगाई जाय तो उसके लगाने के पहले उस जगह के घांसपात और उनके डंठलों को जला देना चाहिए। कम-से-कम इतना क्षेत्रफल जला देना चाहिए कि गंजी से बीस-पच्चीस फुट तक का घेरा घासपात-रहित रहे।

५—ताप-परिमाण, जलवायु और उनका खेती पर असर

ताप-परिमाण और जलवायु का कृषि से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन्हीं पर फसलों का चुनाव और उनकी बाढ़ निर्भर है। अनुकूल जलवायु और ताप-परिमाण मिलने पर ही कृषक अपनी फसलों को इच्छानुसार उत्पन्न कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लाभ उठा सकते हैं। हमारे देश में सब प्रकार की जलवायु और तापमान पाये जाते हैं। इससे जहां जैसी अनुकूलता हो, वैसी फसलें उपजाई जा सकती हैं।

तापमान—

वर्तमान समय में उष्णता की नाप दो प्रकार के तापमापक यन्त्रों से की जाती है। एक का नाम 'संेटीग्रेड थर्मामीटर' और दूसरे का 'फेहरन-हीट थर्मामीटर' है। वैज्ञानिक रसायनशाला में बहुधा पहले का उपयोग होता है और शरीर तथा वातावरण की गर्मी नापने के लिए दूसरा यन्त्र काम में लाया जाता है। बहुधा एक के अंक को दूसरे के अंकों में परिवर्तन करना पड़ता है, जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र काम में लाये जाते हैं।

सेण्टीग्रेड के मान को फेहरनहीट में बदलना

$$\frac{\text{डिग्री सेण्टीग्रेड} \times ९}{५} + ३२ = \text{डिग्री फे० हीट}$$

फेहरनहीट के मान को सेण्टीग्रेड में बदलना

$$\frac{(\text{डिग्री फेहरनहीट} — ३२) \times ५}{९} = \text{डिग्री सेण्टीग्रेड}$$

तापमान के न्यून, औसत और अत्यधिक ऐसे तीन अंक जलवायु की रिपोर्ट में पाये जाते हैं। बीज का उगना एक सीमित तापमान में होता है। उससे कम होने से बीज नहीं उगते और अधिक होने से अंकुर तो पैदा हो जाते हैं, पर बाढ़ ठीक नहीं होती और अंकुर मर भी जाते हैं।

उत्तमोत्तम तापमान पौधों की जाति के अनुसार पृथक्-पृथक् होता है। साधारणतया २८°-२९° से लेकर ३४°-३५° सेण्टीग्रेड ठीक होता है। बरसात में बोये-जानेवाले बीज के लिए तापमान कुछ ऊंचा होता है। स्मरण रहे कि बहुत ऊंचा ५०° से ऊपर का तापमान ठीक नहीं होता। इससे बीज अंकुरित होकर मर जाते हैं। दूसरी ओर १०°-१२° से. ग्रे. से कम होने पर मरते तो नहीं; परन्तु बीज देरी से अंकुरित होते हैं और बाढ़ भी धीरे-धीरे होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

६—वर्षा

वर्षा के जल का नाप इंच[1] और उसके दशमलव के रूपों में होता है। जो अंक वर्षा की रिपोर्टों में इंचों में दिये जाते हैं, उनका यह अर्थ होता है कि भूमि की सतह पर इतनी मोटाई की तह का जल गिरा। अर्थात् यह कहा जाय कि २.२५" वर्षा हुई तो उसका यह अर्थ हुआ कि सवा दो इंच मोटी तह जितना जल गिरा। कभी पूर्णांक को इंच और दशमलव को सेण्ट में भी लिखते हैं। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त अंकों को दो इंच पच्चीस सेण्ट कहेंगे।

वर्षा का जल नापने का जो यन्त्र होता है, वह एक टीप (Funnel) होती है और उसे एक बोतल पर खुले मैदान में रख देते हैं। टीप का व्यास ५ इंच का होता है। इस टीप के द्वारा जल बोतल में इकट्ठा होता है। उसे नाप लेते हैं। नापने का कांच का यंत्र होता है जिसपर एक इंच पानी के सौ भाग तक पढ़े जा सकते हैं और प्रत्येक भाग को सेण्ट कहते हैं। बोतल और टीप को खुले मैदान में ऐसे रखना चाहिए कि टीप का मुंह सीधा हो और वह भूमि से एक फुट से अधिक ऊंचा न हो। यदि अकस्मात् नाप का यन्त्र टूट जाय तो पानी की घन-इंच में गणना करके उसमें १९.६४ का भाग देने से इंचों में वर्षा निकल आयेगी। पांच इंच व्यासवाली टीप के मुंह का क्षेत्र-फल १९.६४ वर्गइंच होता है।

उपर्युक्त यन्त्र के अभाव में एक सीधी किनारवाला बड़ा बर्तन रख-कर भी नाप सकते हैं। लेकिन इस बर्तन को ऐसे रखना चाहिए कि इसका मुंह जमीन की सतह से एक फुट ऊंचा हो ताकि बाहर से उछलकर पानी उसमें न गिरे। इसे पक्की फर्श पर न रखकर छोटे-छोटे घासवाली भूमि पर रखना चाहिए ताकि पानी फर्श से उछलकर बर्तन में न गिरे। वर्षा बन्द होते ही पानी की गहराई इंचों में नाप लेनी चाहिए, ताकि उसमें से पानी उड़कर कम न हो जाय। यदि सीधी किनारवाला बर्तन न हो

[1] अब इंच में न होकर सेण्टीमीटर और उसके दशमलव के रूप में होता है। १ इंच = २.५४ सेण्टीमीटर।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो बाल्टीनुमा बर्तन से भी निम्नलिखित सूत्र से वर्षा का नाप किया जा सकता है—

(१) $$\frac{\text{पानी का नाप घन-इंचों में}}{\text{बाल्टी के मुंह का क्षेत्रफल वर्ग इंच में}} = \text{इंच वर्षा}$$

(२) बाल्टी के पानी का घनफल निकालने का सूत्र—

$$\frac{२२}{७} \times \frac{\text{पानी की ऊंचाई इंच में}}{३} \times \left\{ \left(\frac{\text{बाल्टी के पेंदे का व्यास}}{२} \right)^{२} + \left(\frac{\text{पानी की ऊपरी सतह का व्यास}}{२} \right)^{२} + \frac{\text{बाल्टी के पेंदे का व्यास}}{२} \times \frac{\text{पानी की सतह का व्यास}}{२} \right\}$$

(३) बाल्टी के मुंह का क्षेत्रफल—

$$\frac{२२}{७} \times \left(\frac{\text{बाल्टी के मुंह का व्यास}}{२} \right)^{२}$$

उपर्युक्त नाप इंच में होने चाहिए।

कई स्थानों पर बरफ गिरता है। वहां बरफ की तह मोटाई में नापी जाती है। साधारणतः ८-१० इंच बरफ की तह १ इंच वर्षा के बराबर मानी जाती है।

भारतीय कृषि अधिकतर वर्षा पर निर्भर है। परिशिष्ट नं० १ को देखने से ज्ञात होगा कि २९ करोड़ एकड़ भूमि में से ५.६ करोड़ एकड़ सींची गई अर्थात् १९ प्रतिशत भूमि में जल दिया गया और शेष ८१ प्रतिशत भूमि में वर्षा के आधार पर ही फसलें उपजाई गईं।

वर्षा के जल से भूमि को सिर्फ पानी ही नहीं मिलता, बल्कि वातावरण पर भी असर पड़ता है। जब फसल खड़ी हो, उस समय वर्षा आती है तो पत्ते वगैरा सब धुल जाते हैं, जिससे उनकी रासायनिक क्रियाएं बढ़ जाती हैं। तापमान और वातावरण की तरी वर्षा से घट-बढ़ जाती है। वायुमंडल से कुछ अंश तक नाइट्रोजन के पदार्थ भी गिरती हुई वर्षा के साथ भूमि में पहुंच जाते हैं।

वर्षा का असर खेतों की तैयारी तथा निराई पर भी काफी पड़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लगातार वर्षा से जुताई-निराई में काफी बाधा आती है। यदि बहुत जोरों की वर्षा हो तो भूमि-कण बह जाते हैं। वर्षा का असर फसलों के चुनाव पर भी पड़ता है। जैसे कि पिछले पृष्ठ पर दी गई सारणी में दिया गया है।

सिर्फ वर्षा के आधार पर उपजाई जानेवाली फसलों के हम चार भाग कर सकते हैं—

२० इंच से कम	२०-४० इंच	४० से ८० इंच	८० इंच से ऊपर
बाजरा	गेहूं	धान	धान
मोठ	जौ	गेहूं	पाट
मूंग	ज्वार	मक्का	गन्ना
ज्वार चरी	बाजरा	तिलहन	तिलहन
छोटे धान्य	धान		की
	मक्का	दलहन की	कुछ फसलें
	दलहन व तिल-	कुछ फसलें	धान के बाद
	हन की फसलें	गन्ना	होने वाली कुछ
	कपास		दलहन की
	बरसाती	अधिकांश	फसलें
	सब्जियां	सब्जियां	फल
	गन्ना	फल	कुछ सब्जियां
	फल		

७—वातावरण की तरी

वातावरण की हवा में कुछ अंश तक जलकण रहते हैं, जो वर्षा ऋतु में अधिक और गर्मी में बहुत कम रहते हैं। जब वातावरण में तरी अधिक रहती है तो कहते हैं हवा में नमी कुछ विशेष है। जब बहुत कम रहती है तो कहते हैं हवा सूखी है। समुद्र के किनारे अथवा पानी-भरे स्थानों के निकट तरी विशेष रहती है। कुछ फसलें अधिक तरीवाली हवा में अच्छी होती हैं तो कुछ ठीक नहीं होतीं। अधिक तरी और ठंडे वातावरणवाले स्थानों के फल अधिक रसवाले तथा पतले छिलके के होते हैं। जब तरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहुत अधिक होती है और तापमान गिर जाता है तो बरफ या पाला गिरने लगता है। जहां की हवा में तरी अधिक रहती है वहां सिंचाई भी कम करनी पड़ती है। यही कारण है कि कई स्थानों में गन्ना-जैसी फसल बिना सिंचाई के उपजाई जा सकती है। कपास-जैसी फसल के लिए उनके फलों के फटते समय ठंडा और सूखा वातावरण अच्छा होता है। मक्का-जैसी फसल के लिए उष्ण और तर वातावरण चाहिए।

वातावरण की तरी 'हाइग्रोमीटर' नाम के यंत्र से जानी जाती है। जब यह कहा जाय कि आज हवा में ५० प्रतिशत नमी थी तो उसका अर्थ यह होगा कि उस समय के तापमान में जितनी नमी हो सकती है, उससे आधी है।

८—वायु

वायु की गति नापने का एक यंत्र होता है जिसे 'एनेमोमीटर' कहते हैं। इसमें एक धुरी पर चार छड़ लगे होते हैं, जिनके छोर पर चार छोटी कटोरियां लगी रहती हैं। हवा के बहाव से कटोरियां धकेली जाती हैं और धुरी घूमती है। धुरी के नीचे एक यंत्र रहता है जिसपर हवा की गति के चिह्न बनते हैं। वायु की चाल के आधार पर उसके नाम रक्खे गये हैं।

नाम	गति प्रति-घंटा	पहचान के चिह्न
शान्त	एक मील से कम	वृक्षों के पत्ते शान्त, धुंआ सीधा ऊपर की ओर जाता है।
हलकी	१ से ७ मील	पत्ते खड़खड़ाते हैं।
हलकी से कुछ तीव्र	८ से १२ मील	पत्ते और छोटी टहनियां हिलती हुई दिखलाई देती हैं।
साधारण	१३ से १८ मील	धूल उठती है और टह-नियां डोलती हैं।
साधारणसे कुछ तेज	१९ से २४ मील	छोटे वृक्ष हिलने लगते हैं।
तेज	२५ से ३८ मील	बड़ी टहनियां और पेड़

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

		हिलते हैं।
आंधी	३९ से ५४ मील	पेड़ टूटने लगते हैं।
तेज आंधी	५५ से ७५ मील	पेड़ उखड़ जाते हैं।
तूफान	७५ से अधिक	बहुत हानि करता है, छप्पर उड़ जाते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से यह अनुमान किया जा सकता है कि किस-किस प्रकार की वायु से किस प्रकार की हानि की सम्भावना है। फलों के पेड़ों को कैसी हानि हुई होगी अथवा फसलें गिरी होंगी या खड़ी होंगी। इसका अनुमान हो जाता है।

वायु की दिशा—

वायु की गति के सिवाय वायु की दिशा जानने का भी एक यंत्र होता है। यह कार्य कपड़े की झंडी से भी किया जा सकता है।

तूफान, वायु और जल के आवागमन की सूचना—

'बेरोमीटर' नाम के यंत्र से जिस स्थान पर वह होता है वहां वातावरण में दबाव कैसा है यह मालूम होता है। जब दबाव कम होता है तो यह मालूम हो जाता है कि कहीं से उस स्थान पर वायु आयगी और यदि वह जलवाली हुई तो उसके साथ-साथ वर्षा की सम्भावना रहती है। यदि दबाव बहुत कम हो जाय तो तूफान आने की सूचना मिलती है।

९—मौसम के मानचित्रों का महत्व

मौसम-विज्ञानी उसके मानचित्र छापते रहते हैं जिनके अध्ययन से वातावरण में हलचल तथा वर्षा का अनुमान किया जा सकता है।

इन चित्रों में जो तीर के चिह्न होते हैं उनसे वायु की दिशा का ज्ञान होता है। तीर की पूंछ पर जो चिह्न होते हैं, उनसे वायु की गति जानी जाती है। मानचित्रों में कुछ रेखाएं होती हैं, जिन्हें आइसोबार्स कहते हैं, ये ऐसे स्थानों पर से जाती हैं जहां हवा का दबाव समान हो। उसी भांति समान तापवाले स्थानों पर से 'थर्मोबार्स' नाम की हलचल को दिखाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे चिह्न निम्नलिखित हैं :

○ साफ

Ⓡ वर्षा हो रही है

Ⓕ धूंधल

⊖→ पश्चिमीय वायु

↙∅ बादल : हवा उत्तर-पूर्व की है

Ⓢ→ बरफ पड़ रही है और हवा पश्चिम की है

(LOW) हवा का दबाव कम है, तूफान आने की संभावना है

(HIGH) हवा का दबाव अधिक है। हवा बाहर जायगी

◑ कुछ बादल

◉ बादल

Ⓜ रिपोर्ट नहीं मिली

R तूफान

१०—स्थानों की ऊंचाई

समुद्र के धरातल से स्थान की ऊंचाई का असर भी फसलों के चुनाव पर पड़ता है। कुछ फसलें या फल ऐसे हैं, जो पहाड़ों पर ही होते हैं। यदि मैदानों में वे बोये जाएं तो वे फलेंगे नहीं; उदाहरण के लिए लीजिये सेब। अच्छे बढ़िया सेब मैदानों में नहीं होते, पहाड़ों पर ही होते हैं। स्थानों की ऊंचाई 'वेरोमीटर' अथवा 'आल्टीमीटर' द्वारा जानी जाती है। कृषकों के लिए इन यंत्रों की आवश्यकता नहीं। परिशिष्ट नं० ३ में मुख्य स्थानों की ऊंचाई और वहां की वर्षा तथा तापमान का विवरण दिया है।

११—भूमि

कृषि के योग्य भूमि का वर्ग-निर्माण कई रीतियों से किया जा सकता है, जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं—

१. स्थाई या स्थानान्तरित;
२. मिट्टी के रंग के आधार पर, जैसे काली, भूरी, लाल इत्यादि;
३. मिट्टी की उपज-शक्ति पर, जैसे उपजाऊ या ऊसर;
४. मिट्टी में अम्ल या क्षार की मात्रा पर, जैसे अम्लदार या क्षारवाली;
५. कुछ विशेष नाम, जैसे गाँव के पासवाली को गोइंडा या सींची जाने-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाली को आबी इत्यादि;

६. मिट्टी के कणों के आधार पर—जैसे बलुआ, मटियार इत्यादि ;

स्थायी मिट्टी वह होती है जो भूमि की चट्टानों के ऋतु-क्षरण या छीजन (Weathering) से बनी हो और उसी स्थान पर स्थापित हो।

स्थानान्तरित—उसे कहते हैं जो विशेषतः जल द्वारा, कुछ अंश तक हवा द्वारा, या अन्य प्राकृतिक अथवा कृत्रिम युक्तियों द्वारा एक स्थान से लाकर दूसरे स्थान में छोड़ दी गई हो।

साधारणतः स्थायी की अपेक्षा स्थानान्तरित मिट्टी विशेष उर्वरा होती है, क्योंकि उसमें कई स्थानों की मिट्टी और कुछ कार्बनिक पदार्थ आकर जमा हो जाते हैं।

स्थायी मिट्टी में कुछ खास-खास फसलें अच्छी होती हैं; जैसे काली मिट्टी में कपास, जुवार इत्यादि। इसके विपरीत स्थानान्तरित मिट्टी में कई प्रकार की फसलें उपजाई जा सकती हैं।

स्थानान्तरित मिट्टी के हम दो विभाग कर सकते हैं। एक वह जो जल के प्रवाह द्वारा बनी हो; ऐसी को कछार या जल-स्थानान्तरित भूमि कहेंगे। जो वायु के वेग से बनी है, जैसे राजस्थान में बनती रहती है, उसे वायु-स्थानान्तरित कह सकते हैं। वायु-स्थानान्तरित की अपेक्षा जल-स्थानान्तरित भूमि विशेष उपजाऊ होती है।

मिट्टी के रंग के आधार पर—रंग के आधार पर हम भारत की भूमि को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—काली, भूरी और लाल। कहीं-कहीं पीली मिट्टी भी पाई जाती है, परन्तु बहुत कम। काली मिट्टी मध्यप्रदेश, मध्यभारत, गुज़रात, हैदराबाद, आंध्र देश और कहीं-कहीं मद्रास में पाई जाती है। ऐसी मिट्टी में कपास, जुवार, मूंगफली अच्छी होती है। सिंचाई का प्रबन्ध अच्छा हो तो गन्ना और कन्द को छोड़कर साग-भाजी और फ़ल भी अच्छे होते हैं।

भूरी मिट्टी पंजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार और बंगाल में पाई जाती है। ऐसी मिट्टी बहुधा जल-स्थानान्तरित होती है और इस कारण अच्छी उपजाऊ होती है, और उसमें सभी प्रकार की फसलें, सागभाजी और फल अच्छे होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लाल मिट्टी आसाम, बंगाल, दक्षिण बिहार, उड़ीसा, उत्तर-पूर्वी मध्य प्रदेश तथा मद्रास में अधिक पाई जाती है। उपर्युक्त दोनों की अपेक्षा यह कम उपजाऊ होती है। इसमें जहां जल का अभाव न हो वहां धान (चावल) की फसल अच्छी होती है।

मिट्टी की उपज-शक्ति के आधार पर—जिस भूमि से कई फसलें ली जा सकती हैं वह उपजाऊ और जिसमें बहुत कम या कुछ नहीं उपजता, वह ऊसर कहलाती है। ऊसर भूमि दो प्रकार की होती है: एक वह जिसमें लवणों की मात्रा अधिक होने के कारण पौधों का पोषण ठीक नहीं हो पाता; दूसरी वह जिसमें क्षार पैदा करनेवाले लवण जैसे सोडियम कार्बोनेट आदि लवण अधिक हों। ऐसी भूमि में पौधों की जड़ें कट जाती हैं या सड़ जाती हैं। ऊसर भूमि को सुधारने के विवरण में इसका अधिक वर्णन किया गया।

मिट्टी में अम्ल या क्षार की मात्रा के आधार पर—मिट्टी अम्लदार, बुझी हुई या क्षारवाली हो सकती है। इसके लिए वैज्ञानिक आधार पर १४ अंक माने गये हैं और उन्हीं अंकों से इसका संकेत होता है। ऐसे संकेत का नाम पी-एच (pH) रक्खा है। वैज्ञानिक रीति से जांच करने पर जिस भूमि का पी-एच ७ आता है वह बुझी हुई—सात से अधिकवाली क्षार की ओर और कमवाली अम्ल की ओर मानी जाती है। जिस भूमि का पी-एच ६ से कम हो, उसमें धान, पाट, आलू-जैसी फसलें अच्छी हो सकती हैं; दूसरी ओर पी-एच ८.५ से अधिक वाली मिट्टी अच्छी नहीं होती। जिसका पी-एच नौ-दस तक पहुंच जाय, उसमें कोई भी सफल नहीं होगी।

कुछ विशेष नामों के आधार पर—भिन्न-भिन्न प्रान्तों में भूमि के नाम उसकी बनावट, उपयोगिता, स्थान तथा रंग के अनुसार रख लिये जाते हैं; जैसे—जो मिट्टी नदी से बनी हो उसे 'कछार', जिसपर बरसात में नदी का पानी फिर जाता है उसे दियार, दियारा, खादड़ या सैलाबी, गांव के नजदीकवाली उपजाऊ को 'बाड़ा' या 'गहुंवा', बस्ती से दूरवाली, जिसमें बिना सिंचाई के फसलें उपजाई जाती हैं उसे 'बरानी', 'गैर आबपाश' या 'मालेतरू', नहर से सींची जानेवाली को 'नहरी', कुओं से सींची जानेवाली को 'चाही', तालाब से सींची जानेवाली को 'आबी',

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसमें रेह अधिक हो उसे 'रेहली', जिन खेतों में बरसात का पानी बांधा जाता हो उसे 'वधिया' कहते हैं।

उपर्युक्त नामों के अलावा कुछ नाम ऐसे भी होते हैं जिनसे कुछ अंश तक मिट्टी की भौतिक स्थिति का कुछ ज्ञान हो जाता है; जैसे पंजाब और उत्तरप्रदेश के पश्चिमी भागों में 'डाकर', 'रसौली', 'भूर', 'बलुआ', नाम पाये जाते हैं। इनमें से पहली महीन कणवाली और आखिरीवाली में मोटे कण अधिक होते हैं। इसी भांति बुन्देलखण्ड में उपर्युक्त मिट्टी के नाम 'मांड', 'काबर', 'राकड़' और मध्यप्रदेश में काली अब्वल, कन्हार, मोरड़ और राकड़ हैं।

मिट्टी के कणों के आधार पर—इनके आधार पर हम मिट्टी को मटियार, मटियार-दुमट, दुमट, बलुआ-दुमट और बलुआ कहते हैं। इस कार्य के लिए ५ नाम के कण माने गये हैं।

जिस मिट्टी के कण ०.००२ मम (milimeter) व्यास से कम के हों उसकी गणना मटियार (clay) में होती है। ०.००२ से ०.०२ मम वाली 'सिल्ट' कहलाती है। ०.०२ से २.० मम वाली बालू या रेत होगी। २.० मम से मोटे कण कंकर माने जाते हैं।

पूर्ण वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए २ मम वाली छलनी से मिट्टी छान कर उसे रासायनिक पदार्थों द्वारा ठीक करके भौतिक विश्लेषण करते हैं। उपर्युक्त कणों की मात्रा की जांच करके भूमि का नामकरण करते हैं। जिस मिट्टी में ८५ प्रतिशत से अधिक बालू हो, उसे बलुआ कहते हैं और जिसमें ३५ से अधिक भाग 'क्ले' का हो, उसे मटियार कहते हैं। इनके बीचवाली को दुमट कहते हैं इसमें १५ प्रतिशत तक 'क्ले' और ६५ प्रतिशत से अधिक बालू नहीं होनी चाहिए।

मोटे तौर पर कृषकों के लिए लेखक की 'खेती के साधन', पृष्ठ १२ पर दी हुई रीति से विश्लेषण कर मिट्टी को ५ भागों में विभाजित कर सकते हैं। जिसमें ८० प्रतिशत से अधिक बालू हो उसे बलुआ, ६० प्रतिशत से ८० प्रतिशत तक हो उसे बलुआ-दुमट, ४० प्रतिशत से ६० प्रतिशत वाली को दुमट, २० प्रतिशत से ४० प्रतिशत वाली को मटियार और जिसमें २० प्रतिशत से कम बालू हो उसे मटियार कहेंगे। इस रीति में मिट्टी के कणों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का जल-द्वारा भौतिक विश्लेषण किया जाता है। कोई रासायनिक पदार्थ काम में नहीं लाया जाता। इस रीति से विश्लेषण करने से भूमि में पानी रोकने की शक्ति का ज्ञान हो जाता है, जो व्यावहारिक दृष्टि से विशेष उपयोगी है।

अम्लवाली भूमि का सुधार

अधिक अम्लवाली भूमि का सुधार चूने से किया जाता है। कौन-सी भूमि के लिए कितना चूना चाहिए, यह रासायनिक परीक्षा से जाना जाता है। मोटे तौर पर हम यहां पर हेस्टर महोदय[1] के सुझाव के अंक दिये देते हैं ताकि कृषक कुछ लाभ उठा सकें।

नीचे एक सारणी देते हैं जिसमें चूने की जाति और प्रति-एकड़ चूने की मात्रा दी गई है, जिसके डालने से जमीन की किस्म पी-एच ६-७ तक आ जाय।

भूमि का पी-एच	बलुआ भूमि	बलुआ-दुमट भूमि	दुमट भूमि
	मन	मन	मन
४.५	१२	२४	४८
५.०	९	१८	२४
५.५	६	१२	१८
६.०	३	६	९

अगर चूना बुझा हुआ (Slaked lime) हो तो उपर्युक्त मात्रा में एक-तिहाई और बढ़ा देना चाहिए।

ऊसर भूमि का सुधार—भूमि ऊसर कैसे हो जाती है ?

१. जब भूगर्भ जल (Sub soil water) की सतह बहुत ऊपर आ जाती है तो उसमें के घुले हुए लवण भी ऊपर आ जाते हैं और जब पानी गर्मी में सूख जाता है तो ऊपर की भूमि में लवणों की मात्रा बढ़ जाती है। वह मात्रा इतनी अधिक हो जाती है कि फसलें नहीं हो पातीं। भूगर्भ जल

---

1. Hester J.B. and Shelton F. A. 1939. The soil side of tomato growing. Campbell soup Co. Res. (Bull) No. 1.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को सतह कम-से-कम आठ-दस फुट गहरी होनी चाहिए।

२. जहां सिंचाई आवश्यकता से अधिक की जाती है।

३. जहां सिंचाई का जल खारा हो।

४. जिस भूमि में नितार (Drainage) अच्छा न हो।

ऊसर भूमि लवणों की जाति के अनुसार दो प्रकार की होती है—एक काली ऊसर और दूसरी सफेद ऊसर—सफेद की अपेक्षा काली ऊसर विशेष हानिप्रद होती है। ऐसी भूमि में सोडियम कार्बोनेट और सोडियम बाई-कार्बोनेट की मात्रा अधिक होती है। इससे पौधे की जड़ें कट जाती हैं और भूमि की भौतिक स्थिति बिगड़ जाती है। सफेद ऊसर में सोडियम सलफेट, मैग्नेशियम सलफेट इत्यादि अधिक होते हैं। किसी-किसीमें खाने का लवण (सोडियम क्लोराइड) अधिक हो जाता है। ये तीनों लवण एक न्यूनतम मात्रा से अधिक होने पर हानिप्रद होते हैं।

जिस भूमि में सोडियम कार्बोनेट ०.२५ शतांश से अधिक हो तो उसमें फसल नहीं होती। सोडियम क्लोराइड ०.५ शतांश और सोडियम सलफेट १ शतांश तक हो सकते हैं। तीनों का मिश्रण ०.२५ प्रतिशत से कम ही होना चाहिए।

कभी-कभी ऐसा होता है कि उपकारी लवण भी अधिक मात्रा में होने से हानिप्रद हो जाते है, क्योंकि भूजल (Soil water) का घोल इतना गाढ़ा हो जाता है कि पौधों की जड़ें उसे नहीं ले सकतीं। बल्कि ऐसा होता है कि गाढ़ा घोल पौधों की जड़ों का पानी बाहर खींच लेता है और उन्हें सुखा देता है या कमजोर कर देता है। मैक जार्ज[1] महोदय लवणवाली भूमि के क्षारत्व को निम्न भागों में विभाजित करते हैं—

०.०७ प्रतिशत नहीं के बराबर; ०.७ प्रतिशत से ०.१५ प्रतिशत साधारण; ०.१५ से ०.३ प्रतिशत अधिक; ०·३ प्रतिशत से ०.८ प्रतिशत वहुत अधिक; ०.८ प्रतिशत से १.५ प्रतिशत अत्यधिक—कोई फसल नहीं होगी। ऊसर तथा क्षारवाली भूमि निम्नलिखित युक्तियों से सुधारी जा सकती है—

---

[1] Mc. George W. T. Arizona Expt. Sta. Circ. 108.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१. खेतों में बांध बांधकर उनमें पानी भरा जाय ताकि लवण उसमें घुल जाय और बाद में पानी को बहा दिया जाय।

२. भूमि से पानी के नितार (drainage) का प्रबन्ध करना, जो या तो खुली नालियों द्वारा हो या भूमि के अन्दर झिरझिरे नलों द्वारा।

३. गन्धक या कैलशियम सलफेट डालकर। लगभग ६०-७० मन कैलशियम सलफेट डालना चाहिए। इसके और सोडियम कार्बोनेट के मेल से सोडियम सलफेट और कैलशियम कार्बोनेट बन जाते हैं जो विशेष हानि नहीं करते।

(४) जब कोई साधन न हो तो क्षारत्व या ऊसरत्व की न्यूनाधिक मात्रा को सहन करनेवाली फसलें बोनी चाहिए। ऐसी फसलों में धान, बरसीम और शलजम-जैसी कंदवाली फसलें होती हैं।

(५) बीज बोने के पहले भूमि को सींच देना चाहिए ताकि लवण का घोल हानिकारक मात्रा से कमजोर हो जाय। जब बीज अंकुरित होकर पौधे जम जाते हैं तो फिर उनमें ऊसरत्व सहन करने की शक्ति बढ़ जाती है।

भूमि-संरक्षण

वर्तमान समय में भू-संरक्षण की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है क्योंकि यदि ऐसा नहीं किया गया तो कुछ काल बाद बहुत-सी खेती-योग्य भूमि हमारे हाथ से निकल जायगी। इसी उद्देश्य से पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा करोड़ों रुपये इस कार्य में लगाये जा रहे हैं।

मिट्टी का स्थानान्तर प्रकृति द्वारा जल तथा वायु (आंधी) द्वारा होता है। वर्षा जब होती है तो खेतों की ऊपरी मिट्टी बहकर चली जाती है और नीचे की कम उपजाऊ मिट्टी ऊपर निकल आती है। इसी भांति जब जोरों की हवा (आंधी) चलती है तो वह भी मिट्टी और महीन रेत उड़ाकर ले जाती है और दूसरी जगह जमा कर देती है। राजस्थान की तरफ से रेगिस्तान जो धीरे-धीरे आगे बढ़ता आ रहा है वह वायु द्वारा ही हो रहा है। अच्छे उपजाऊ खेतों में रेत आकर जम जाती है और उन्हें बिगाड़ देती है। कभी-कभी छोटी फसलें तो दब भी जाती हैं। ऐसी हानियों से बचने के लिए ही सरकारी योजनायें बनाई जा रही हैं; लेकिन जबतक कृषकों का पूर्ण सहयोग न हो, सफलता पूर्ण रूप से नहीं मिल सकती। कृषकों को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए कि वे अपने खेतों में होनेवाली हानियों की ओर ध्यान दें। सरकार के लिए बड़े भूखण्डों की रक्षा का कार्य छोड़ दें।

१. वर्षा द्वारा होनेवाली हानियां और उनको रोकने के उपाय—वर्षा द्वारा भूमि का (कटाव) दो प्रकार से होता है : एक में तो ऊपर से मिट्टी के तह-के-तह बह जाते हैं और दूसरे प्रकार में छोटी नालियां और बाद में धीरे-धीरे नाले बन जाते हैं। पहले को अंग्रेजी में 'शीट-कटाव' और दूसरे को 'गली-कटाव' कहते हैं। कहीं-कहीं नदियों के निकट तो 'गली-कटाव' ऐसे हो जाते हैं कि बड़े 'खमाड़' या खड्ड बन जाते हैं और लाखों एकड़ भूमि नष्ट हो जाती है। ऐसे बड़े-बड़े कटावों की रोक-थाम का प्रबन्ध तो सरकार ही कर सकती है, परन्तु छोटे-मोटे खेतों के कटाव चाहें तो कृषक भी रोक सकते हैं। भूमि के कटाव की न्यूनाधिकता निम्नलिखित बातों पर निर्भर है :

(१) वर्षा की न्यूनाधिकता—यह जानी हुई बात है कि जहां वर्षा अधिक होगी, कटाव भी विशेष होगा।

(२) खेतों की ढाल—ढालू खेतों में कटाव अधिक होता है क्योंकि ऐसे खेतों में पानी का बहाव जोरों से होता है।

(३) जमीन की जाति—कार्बनिक पदार्थ जिन खेतों में अधिक होते हैं उनमें कटाव कम होता है क्योंकि उसमें भूमि-कण कुछ अंश तक बंधे रहते हैं। हल्की मिट्टी में कटाव विशेष होता है। स्थायी भूमि की अपेक्षा स्थानान्तरित भूमि में कटाव अधिक होता है।

(४) घास-पात का अभाव—जिस भूमि पर घास-पात जमे रहते हैं उनकी जड़ों से मिट्टी के कण बंधे रहते हैं, सो जल्दी बहने नहीं पाते। घास-पात की ऊपरी बाढ़ भी बहाव में रुकावट डालती है।

(५) जंगलों का अभाव—जहां-जहां जंगल निरंकुशता से काटे जाते हैं अथवा पशु पौधों को खा जाते हैं वहां की भूमि भी जोरों से कटने लगती है क्योंकि जमीन खुल जाती है।

अंग्रेजी में कहावत है—Prevention is better than cure. अर्थात् 'चिकित्सा से रोक उत्तम है'। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त कारणों की ओर ध्यान रखना चाहिए। एक और कहावत है—A stitch in time saves

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

nine. अर्थात् फटने के साथ ही कपड़ा सीं दिया जाय तो कम सींना पड़ता है। इसलिए हमें चाहिए कि कटाव के प्रारम्भ में ही उसकी रोक-थाम की जाय।

(क) जिन खेतों में तह-की-तह कटती हो, उनमें ढाल से समकोण बनानेवाली पारियां बनानी चाहिए या यदि खेत ऊंचा-नीचा हो तो कॉण्टूर पर पारियां बनानी चाहिएं। ऐसा करने से दो लाभ होंगे : एक तो पानी जल्दी से वह नहीं जायगा बल्कि पारियों में सोख लिया जायगा; और जो अधिक होगा वह धीरे-धीरे नियंत्रित रूप से जिधर चाहें उधर निकाला जा सकेगा। चूंकि पानी धीरे-धीरे वहेगा, उसमें आनेवाले कण भी पारियों के पास बैठ जायंगे।

(ख) ऐसे खेतों में अधिक जड़ोंवाली या अधिक पत्तेवाली फसलें भी लाभदायक होती हैं। जैसे मक्का की फसल में जड़ें खूब होती हैं और कपास में कम, तो मक्कावाले खेत में कटाव कम होगा। मूंगफली जो जल्दी उग आती है और जिसके पौधे खड़े होते हैं, उसमें कटाव अधिक होगा। इसके विपरीत फैलनेवाली मूंगफली में पत्ते भी विशेष होंगे और वह भूमि पर ऐसी फैल जाती है कि ऊपर से गिरनेवाले पानी की बूंदों का जोश पत्तों पर ही बहुत अंश तक कम हो जाता है—वे भू-कण काटने नहीं पातीं।

(ग) यदि पारियां बनाने की सुविधा न हो और व्यय अधिक जंचे तो फिर 'सेड़ें' (मेंड़) अधिक बना देनी चाहिए। सेड़ों पर जो घास-पात जम जाता है वह भी कुछ अंश तक बहाव को रोकता है। ऐसी क्रिया से खेत कुछ छोटे हो जायंगे, लेकिन पानी के 'अपधाव' को तो रोकेंगे।

(घ) यदि सेड़े न छोड़े जायं तो एक एक फसल के बीच-बीच में दूसरी ऐसी फसल की कतारें बोई जायं (Strip Cropping) जो बहाव को रोकें।

(ङ) यदि ढाल अधिक हो, जैसाकि पहाड़ी स्थानों में होता है, तो वहां सीढ़ीदार खेती (Terracing) की प्रथा को अपनाना चाहिए। पहाड़ों में अब भी ऐसा किया जाता है।

२. नालीदार कटाव—जब खेतों में छापरे पड़ते दिखें तो उसी समय उनको रोकने की युक्ति अपनानी चाहिए; नहीं तो कुछ दिनों में वे नाले के रूप में हो जायंगे और फिर सुधारना अधिक कठिन होगा।

ऐसे कटाव को रोकने के लिए दो युक्तियां हैं—एक तो यह कि जहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से अपने खेतों में पानी आता है, वहां बांध बांधकर नाली द्वारा पानी एक ओर निकाल दिया जाय। दूसरी युक्ति यह होगी कि जहां से अपने खेत से पानी निकलता हो वहां कुछ घास-पात, पौधों की छोटी-मोटी टहनियां नाली में भरकर ऊपर पत्थर डलवा दिये जायं। पत्थर से वे टहनियां दब जायंगी और पानी का बहाव रुकेगा। अपधाव का पानी पत्थरों के ऊपर होकर बहेगा तो उसमें की बहुत-सी मिट्टी नीचे जम जायगी।

हवा (आंधी) द्वारा होनेवाली हानियों को रोकने के उपाय—

(१) आंधी द्वारा बहुधा कटाव तह के रूप में ही होते हैं। तह-के-तह उड़ते हैं और फिर कहीं जाकर तह-के-तह या छोटे-छोटे टीलों के रूप में जम जाते हैं। ऐसी क्रिया को रोकने के लिए पेड़ों द्वारा आंधी की राह में बाधा डालना है सो जहांतक बने पेड़ अधिक लगाने चाहिए। सरकार ने राजस्थान में ऐसी प्रयोगशालायें खोल रखी हैं जो इस बात की खोज करती हैं कि रेगिस्तान के योग्य कौन-कौनसे पेड़ या घास-पात हैं जो कम-से-कम पानी पर जम सकते हैं। उनकी सम्मति से पेड़ लगाने चाहिए।

(२) ऐसे पौधों या पेड़ों की रखवाली भी करनी चाहिए। मारवाड़ में कहावत है, "ऊंट छोड़े आकड़ों ने बकरी छोड़े कांकरों।" मरुभूमि में दोनों ही विशेषता से पाये जाते हैं और जो कोई वनस्पति सामने आये, खाते ही जाते हैं। सो उनसे रक्षा की ओर पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए।

(३) अगर हो सके तो छोटे-छोटे खेतों के आसपास तीन-चार फुट ऊंची मिट्टी की दीवारें बना देनी चाहिए। ऐसा कई जगह राजस्थान में किया भी जाता है। इससे हवा भी कुछ अंश तक रुकेगी और ऐसी दीवार वाड़ (घेरे) का भी काम देगी। भू-कटाव पानी से हो या आंधी से, उसे रोकने के लिए प्रकृति ने भी कुछ ऐसे पौधों का निर्माण किया है जो भू-संरक्षण में सहायक होते हैं। ऐसे पौधे समुद्र-किनारे, नदी-किनारे अथवा रेगिस्तान में वहां की भूमि की रक्षा के लिए बनाये हैं, सो उनकी रक्षा करनी चाहिए। उन्हें कटने नहीं देना चाहिए।

१२—खाद

उचित मात्रा में जल और यथोचित तापमान में बीज अंकुरित हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाते हैं। जो बीज भूमि में बोये जाते हैं उन्हें जल भूमि से ही मिलता है। तापमान ठीक रहा तो अंकुरित होकर पौधे और अन्त में पेड़ तक हो जाते हैं। बीज से उपजनेवाले पौधों का प्रारम्भिक पोषण बीज के संचित द्रव्यों से होता है। जब जड़ें निकल आती हैं तो पौधे अपना भोजन भूमि से प्राप्त करते हैं और यदि भोजन का कोई अंश पूरी मात्रा में नहीं होता तो पौधे जैसी चाहिए वैसी बाढ़ नहीं पा सकते और उपज कम हो जाती है। खाद द्वारा हम ऐसे पदार्थों की पूर्ति करते हैं, जिनके ऊपर पौधों की बाढ़ निर्भर है और जिनकी मात्रा भूमि में आवश्यकतानुसार नहीं होती।

पौधों को किन तत्वों की आवश्यकता है, यह उनके विश्लेषण से जाना जा सकता है। ऐसे तत्व दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। एक वे जो अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में चाहिए और दूसरे वे जिनकी मात्रा बहुत कम चाहिए। उदाहरण के लिए यहां गेहूं के विश्लेषण के अंक देते हैं :

अधिक मात्रा में पाये जानेवाले तत्व[1]	शतांश	कम मात्रा में पाये जानेवाले तत्व[2]	प्रति दस लाख भाग में
जल	१०.००	जस्ता	१००
कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सिजन	८६.०० लगभग	निकेल	३५
		लोहा	३१
		बोरान	१६
		मैंगनीज	२४
नाइट्रोजन	१.९३	तांबा	६
फासफोरस	०.८३	एल्युमिनियम	३
पोटेशियम	०.५४	ब्रोमीन	२

१. Hand-book for farmers & dairy men by Woll 1914 p. 80 पर जो अंक दिये हैं वे वारिंगटन महोदय के हैं और गणना १५ प्र० श० जल पर की गई है। उपर्युक्त मात्रा १० शतांश जल पर गणना करके दी है, क्योंकि हमारे यहां गेहूं में जल की मात्रा १० प्र० श० तक होती है।

२. Swanson c. o. Wheat and flour quality, p. 25.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कैलशियम	०.०६	आयोडीन	.००६
सोडियम	०.०४	संख्या	.१
मैग्नेशियम	०.२१	कोबाल्ट	.०१
गंधक	०.१६	फ्लोरीन	सूक्ष्म
क्लोरीन	०.००६	वेनेडियम	,,
सिलीकॉन	०.०४०	सेलेनियम	,,

उपर्युक्त सूची में पहले तीन तत्व वायुमंडल तथा जल द्वारा पौधों को मिल जाते हैं। साधारणतः नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटेशियम की विशेष मांग होती है। इनमें भी भारत की अधिकांश भूमि में पोटेशियम की आवश्यकता नहीं होती। अम्लदार भूमि में चूने की और ऊसर के लिए कैलशियम सलफेट की आवश्यकता होती है। शेष तत्व आवश्यकतानुसार भूमि से मिल जाते हैं; और यदि किसीकी कमी हुई तो उसके पहुंचाने का प्रबन्ध करना चाहिए। ऐसे तत्वों की कमी पौधों की बाढ़ और उनके रूप-रंग या उनकी व्याधियों से जानी जाती है। जो इस विषय के माहिर हों उनकी सम्मति से काम करना चाहिए; क्योंकि जिन तत्वों की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है वे यदि कुछ अधिक मात्रा में हो जायं तो भी हानि करते हैं।

विभिन्न तत्वों का गुण-धर्म—

कार्बन—पौधों के ढांचे की बनावट में इसका बहुत हाथ है। प्रत्येक कोष्ठ का कोष्ठज इसके तथा ऑक्सीजन और हाइड्रोजन के मेल से बनता है। पौधों के रस में शर्करायुक्त पदार्थ, आमिषजातीय पदार्थ, स्नेह और तन्तुयुक्त पदार्थ में यह पाया जाता है।

ऑक्सीजन और हाइड्रोजन—जल के रूप में पौधे इन्हें लेते हैं और सब अंगों में पाये जाते हैं।

नाइट्रोजन—इससे आमिषजातीय पदार्थ बनते हैं, पौधे शीघ्र बढ़ते हैं और गहरे हरे रहते हैं। इसके अभाव में पौधे पीले पड़ जाते हैं और धीरे-धीरे मर जाते हैं। बीज पतले और सिकुड़े हुए रह जाते हैं। इसकी बहुत अधिक मात्रा भी ठीक नहीं होती। अधिक होने से पत्ते और टहनियों की बाढ़ अधिक हो जाती है। फल कम आते हैं और व्याधियां भी अधिक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो जाती हैं।

फासफोरस—इससे जड़ों की बाढ़ अच्छी होती है। वे स्वस्थ और मजबूत होती हैं जिससे भूमि से खुराक अच्छी खींचती हैं। फसल पकती भी जल्दी है और बीज पुष्ट होते हैं। उपज भी अधिक होती है। पौधे हरे लेकिन छोटे रह जायं और कुछ बैंगनी रंग पर आ जायं तो समझना चाहिए कि इस खाद की कमी है। दलहन की फसलों के लिए और फलों के लिए इसका खाद बड़ा अच्छा होता है।

पोटेशियम—शर्करायुक्त पदार्थों की बनावट के लिए इसकी आवश्यकता होती है। पौधों के अम्ल की शांति इससे होती है; नहीं तो बाढ़ ही रुक जाय। क्लोरोफिल की बनावट में भी इसकी आवश्यकता होती है। यह नाइट्रोजन और फासफेट की अधिक मात्रा के असर को भी रोकता है। इसके अभाव से पत्ते पीले पड़ जाते हैं और सूख जाते हैं। चोटी मुर्झाना भी इसीके अभाव से होता है। फलों के सुन्दर आकार तथा उनके अच्छे स्वाद के लिए इसकी आवश्यकता होती है।

कैलशियम—इसकी उपस्थिति में पौधों के कोष अच्छे बनते हैं। कुछ अम्लों की शांति भी इसीसे होती है। अम्लवाली मिट्टी की शांति के लिए इसे काम में लाते हैं। भूमि में नाइट्रीकरण की क्रिया भी इसके रहने से अच्छी होती है।

मैग्नेशियम—इसके अभाव में कोष की बाढ़ अच्छी नहीं होती और पत्तों में क्लोरोफिल नाम का पदार्थ अच्छा नहीं बनता, जिसके द्वारा पत्तों में होनेवाली रासायनिक क्रिया होती है और पौधों का भोजन ठीक से तैयार नहीं होता। इससे पौधों को फासफोरस का उपयोग करने में सहायता मिलती है।

सिलिकॉन—एक दलवाली वनस्पति, जैसे गेहूं, जौ इत्यादि में यह अधिक पाया जाता है। इससे भी पौधों की बाढ़ अच्छी होती है और फसल एक साथ पकती है।

लोहा—इसके अभाव में पौधे पीले और अस्वस्थ हो जाते हैं। वायुमंडल से जो कार्बन लिया जाता है, उसका उपयोग लोहे के अभाव में ठीक नहीं हो पाता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसी भांति शेष तत्व भी काम के हैं; परन्तु मुख्य तत्व नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटेशियम हैं। कहीं-कहीं चूने की आवश्यकता होती है, इसलिए यहां इनपर विस्तार से विचार करेंगे।

खाद के वर्ग और उनमें तत्वों की मात्रा—

खाद का विभाजन निम्नलिखित वर्गों में हो सकता है :

(१) कार्बनिक (Organic) और अकार्बनिक (Inorganic)।

(२) फसलों पर असर के आधार पर—जल्दी लाभ पहुंचानेवाले या देरी से लाभ पहुंचानेवाले।

(३) तत्वों के आधार पर जैसे नाइट्रोजन-पूर्ता, फासफोरस-पूर्ता अथवा पोटेशियम-पूर्ता इत्यादि।

कार्बनिक खाद से हमारा अभिप्राय उन खादों से है, जिसमें वनस्पति या जीवधारियों के अंगों का अंश किसी-न-किसी रूप में हो।

अकार्बनिक खाद बहुधा खनिज और कृत्रिम होते हैं। कार्बनिक की अपेक्षा इनमें मुख्य तत्वों की मात्रा अधिक रहती है। पहले प्रकार के खादों में मात्रा भले ही कम हो, परन्तु वे विशेष उपयोगी और सस्ते होते हैं, यदि काफी मात्रा में मिल सकें। इतना भेद अवश्य है कि अकार्बनिक, कार्बनिक की अपेक्षा जल्दी लाभ पहुंचानेवाले होते हैं।

कार्बनिक—

नाइट्रोजन-प्रधान—जिन खादों में फासफोरस[1] और पोटेशियम[2] की अपेक्षा नाइट्रोजन की मात्रा अधिक हो—

---

[1]—[2] फासफोरस की मात्रा फासफोरस पेण्टॉक्साइड के रूप में दी जाती है और पोटाश की पोटेशियम आॅक्साइड के रूप में। इस पुस्तक में जहां फा० पे० लिखा हो वहां फासफोरस पेंटॉक्साइड और जहां पो० आ० लिखा हो, पोटेशियम आक्साइड मानना चाहिए। जहां फासफोरस से ही मतलब होगा वहां केवल फा० अक्षर लिखा रहेगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम खाद	खाद के तत्वों की मात्रा (लगभग)[1]			
	शतांश जल	शतांश नाइट्रोजन	शतांश फा. पे.	शतांश पो. श्रा.
पशुओं का मलमूत्र	%	%	%	%
गाय का गोबर	८०	०.३	०.१७	०.१५
गो-मूत्र	६०	०.८	०.०१	१.४०
घोड़े की लीद	७५	०.५	०.४	०.३
मूत्र	६०	१.५	—	१.३
भेड़ों की मींगणी	६०	०.७	०.६	०.३
,, का मूत्र	८५	१.५	०.०१	१.८
गोबर का सड़ा हुआ खाद (पशु-शालाओं का मलमूत्र तथा वहां का बिगाड़ा हुआ भूसा इत्यादि)	४०	०.५	०.३	०.२
मनुष्यों का मल	७०	१.०	१.१	०.२५
,, मूत्र	६५	०.६	०.२	०.२
स्लज—सूखी हुई	—	३ से ५	२ से ३	०.५से१.०
चमगादड़ की विष्ठा सूखी हुई	८.०	३.८	१.३	१.२
हरा खाद (फूल आने के समय पर कटे हुए पौधों में—पृष्ठ ४८ पर देखिए				

[1] ये मात्राएं उपर्युक्त दिये हुए अंकों के लगभग होती हैं। इन्हें पूर्ण निर्मित नहीं मानना चाहिए, क्योंकि जहां प्राणियों का संबंध है, खाद में तत्वों की मात्रा कई बातों पर निर्भर है; जैसे पशुओं की जाति, उनकी उम्र, उनके खान-पान की व्यवस्था इत्यादि। जिन पशुओं को दाना दिया जाता है उनके मल-मूत्र में खाद के तत्व विशेष पाये जायेंगे बनिस्बत उन पशुओं के जिन्हें खाद में दाना नहीं दिया जाता। इसके बाद खाद को रखने की रीति का भी काफी असर पड़ता है। खुले मैदान में रखा हुआ खाद गर्मी की तपन और बरसात की वर्षा से खाद-तत्वों की कुछ मात्राएं खो बैठता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूखे पत्तों का खाद[1]	१ से २

काम्पोस्ट जिन वस्तुओं से बनाया जाय, उनके तत्वों पर इसके तत्व निर्भर हैं। अच्छे सड़े हुए काम्पोस्ट में गोबर के खाद के बराबर गुण मान सकते हैं।

	मात्रा-तत्व (लगभग)		
खलियां	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. आ.
पशुओं को खिलाई जानेवाली :			
मूंगफली	७.६	२.३	२.२
कुसूम	५.८	१.३	१.२
सरसों	५.६	१.६	१.४
अलसी	५.०	१.६	१.६
तिल	५.०	१.१	१.०
रामतिली	४.५	२.०	१.६
नारियल	३.७	१.६	१.८
विनौला (कपास के बीज छिलका : सहित की खली)	२.६	१.२	१.१
पशुओं को नहीं खिलाई जानेवाली :			
एरंडी	५.०	१.८	१.६
नीम	४.४	१.०	१.४
करंज	३.५	०.७	१.३
महुआ	२.६	०.८	१.८
मछलियों का खाद	६–१०	४-८	
[2] पशुओं की खुर और सींग का चूर्ण	११–१५		
चमड़े के कारखाने का कूड़ा	६–१२		
ऊन के कारखाने का कूड़ा	३–८		

---

१. पेड़ की जाति, उनकी उम्र आदि कई बातों पर निर्भर है। दाल-वर्ग के वनस्पति के पत्तों में दूसरी जाति के वनस्पतियों के पत्तों की अपेक्षा नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है।

२. Hand-bhok of Fertilizers by Gustafeson, p.48

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	मात्रा-तत्व (लगभग)				
हड्डी का खाद	जल	नाइट्रोजन	फा. पे.	पो. ग्रा.	चूना
कच्ची हड्डी (Raw bones)	६.२	३.८	२२.३	०.२	२६.२
कच्ची हड्डी का चूरा (Crushed bones)	७.१	३.७	२२.१	०.१	३०.२
भाप द्वारा साफ की हुई हड्डी (Steamed bones)	५.२	१.६	३०.६	०.१	४१.८
हड्डी का चूरा (Bone meal)	६.०	३.८	२३.२	०.१	३१.३
हड्डी का चूर्ण (Bone dust)	१३.०	२.६	१७.६	०.१	२४.४
हड्डी का कोयला (Bone black)	६.०	१.०	३२.०	०.१	४३.३
हड्डी की राख (Bone ash)	६.०	—	३५.४	०.३	४६.०
पक्षियों की विष्ठा (Guano)	—	४–५	४–५	—	—
बरसात से धुला हुआ ग्वानो (Guano)	—	—	७–८	—	—
पोटेशियम-प्रधान कार्बनिक खाद					
तम्बाकू के डंठल	१.३	—	—	—	—
सेवार (जल में होने वाली बनस्पति)	—	१.०	०.४	२.०	—

1. Primrose Mc. Gonnel 1910 Agri. Facts & Figures, p. 129

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फासफोरस-प्रधान कार्बनिक खाद—वे खाद जिनमें नाइट्रोजन और पोटेशियम की अपेक्षा फासफोरस की मात्रा अधिक हो।

अकार्बनिक खाद

नाइट्रोजन-पूर्ता	शतांश नाइट्रोजन	
सोडियम नाइट्रेट	१५.०	
एमोनियम सलफेट	२०.०	
एमोनियम क्लोराइड	२५.०	
एमोनियम नाइट्रेट	३५.०	
कैलशियम नाइट्रेट	१३.० से १६.०	
कैलशियम सायनामाइड	२०.०	
[1] यूरिया	४४।४५	
एमोनियम सलफेट-नाइट्रेट	२६.०	(६.५ शतांश नाइट्रेट के रूप में) (१९.५ शतांश एमोनियम के रूप में)

फासफोरस-पूर्ता

सुपरफासफेट	सिंगल	शतांश फा० पे०
	डबल या	२०
	ट्रिपल	४०-४५
बेसिक स्लेग		१६-१८

पोटेशियम-पूर्ता	शतांश पो० आ०
पोटेशियम-सलफेट	४८ शतांश
" क्लोराइड	५० शतांश

नाइट्रोजन और फासफोरस-पूर्ता	नाइट्रोजन	फा० पे०
डाइमान फॉस	२१.० शतांश	५४.० शतांश

---

[1] ये नये खाद अमरीका से आये हैं। यदि अच्छे जँचे तो इनका उपयोग बढ़ जायगा। भारत में सिन्दरी-कारखाने में यूरिया और एमोनियम सलफेट बनाये जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एमोफास	१३.०	४८.० शतांश
ल्यूसोफास	२०.०	
नाइट्रोजन और पोटेशियम-पूर्ति	नाइट्रोजन	पो० आ०
पोटेशियम नाइट्रेट	१४ शतांश	४८ शतांश
फासफोरस और पोटेशियम-मिश्रित	फा० पे०	पो० आ०
राख	२	४–६
नाइट्रोजन फासफोरस और पोटेशियम-मिश्रित	नाइट्रोजन	फा० पे० पो० आ०
नाइट्रोफोस्का	१५	१५ २०
खदानी फासफेट (Rock phospate)		२०–२५
तालाव-कुंए आदि की मिट्टी		

कार्बनिक और अकार्बनिक खादों के गुण-दोष

कार्बनिक	अकार्बनिक
(१) फसलों पर असर धीरे-धीरे होता है।	(१) असर जल्दी होता है।
(२) दूसरी तथा तीसरी फसल पर भी गोवर जैसे खाद का असर रहता है।	(२) बहुधा पहली फसल में ही नाइट्रोजन के खाद का असर समाप्त हो जाता है।
(३) भूमि की भौतिक स्थिति अच्छी वनी रहती है।	(३) भूमि की दशा धीरे-धीरे बिगड़ती जाती है और कुछ वर्षों वाद उपज गिरने लगती है। खाद की जाति के अनुसार भूमि में अम्ल या क्षार की मात्रा वढ़ती जाती है।
(४) वहुत अंश तक न्यून मात्रावाले तत्वों की पूर्ति होती रहती है।	(४) न्यून मात्रावाले तत्व की पूर्ति नहीं होती, जवतक वे न मिलाये जायं।
(५) अधिक वर्षा हो जाय तो जल्दी बहते नहीं।	(५) अधिक वर्षा हो जाय तो कुछ बह जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

J: (P152;4)R
152K9

(६) अधिक मात्रा में देने पड़ते हैं।	(६) थोड़ी मात्रा में देने पड़ते हैं।
(७) सुभीते से फसल बोने से पहले दे सकते हैं।	(७) फसल बोने के साथ या खड़ी फसल को देना होता है।

चूंकि कार्बनिक खाद प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं जहांतक हो सके दोनों का साथ-साथ उपयोग करना चाहिए। जिन खादों द्वारा अम्ल बढ़ने की अथवा जिनके उपयोग से भूमि में चूने की कमी होने की सम्भावना हो, उन खादों का उपयोग किया जाय तो भूमि में चूना भी कभी-कभी देना पड़ता है। एमोनियम सलफेट, एमोनियम क्लोराइड, एमोफास, नाइट्रोफोस्का की तासीर अम्ल-वृद्धि तथा सोडियम नाइट्रेट की क्षार-वृद्धि की है।

प्रथम वर्ष में विभिन्न खादों की तुलनात्मक उपजाऊ शक्ति

नाइट्रोजनवाले		फासफोरसवाले		पोटेशियमवाले	
एमोनियम सलफेट	१००	सुपरफासफेट	१००	पोटेशियम सलफेट	१००
सोडियम नाइट्रेट[1]	९८	ग्वानो	९०	,, क्लोराइड	८०
खली का खाद	८०-१००	हड्डी का चूर्ण	८०[2]	राख	५०
गोबर का खाद	५०-६०	बेसिक स्लेग	३०		

उपर्युक्त अंकों का यह मतलब हुआ कि जितना नाइट्रोजन एमोनियम सलफेट के रूप में दिया जाय, उतना ही लाभ उठाने के लिए गोबर के खाद के रूप में नाइट्रोजन की दूनी मात्रा देनी चाहिए।

पशुओं को जो चारा-दाना दिया जाता है, उसमें से नीचे लिखा अंश मल-मूत्र के रूप में मिलता है :

नाइट्रोजन	७५ से ८० शतांश
फा० पे०	८५ से ९० ,,

---

[1] जहां पानी की कमी हो वहां सोडियम नाइट्रेट एमोनियम सलफेट से अच्छा साबित होता है; विशेषतः रबी की फसलों में। पूसा में लेखक ने अपने आलू के प्रयोगों में देखा था कि जिस साल सर्दी के दिनों में एक-दो बार वर्षा हो गई, उस साल तो एमोनियम सलफेट अच्छा रहा; वरना सोडियम नाइट्रेट अच्छा रहा।

[2] अम्लवाली मिट्टी में यह शक्ति १०० मानी चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी। 1837

पो० आ०	८५ से ९० ,,
कार्बनिक पदार्थ	४० से ५० ,,

पशुओं से सालाना कितना खाद मिल जाता है यह जानने के लिए नीचे लिखा सूत्र काम में लाना चाहिए।

पशुओं को जो चारा-दाना साल-भर में दिया जाता है, उसकी जल-रहित मात्रा गिन लेनी चाहिए। उस मात्रा का लगभग आधा पशु काम में ले आते हैं सो (उसका आधा + पशुशाला का बचाखुचा कूड़ा) × २ (साल भर के सड़े हुए खाद में सूखे खाद के बरावर पानी रहता है = साल-भर का खाद)

यह गणना सूत्रात्मक रूप से हुई। साधारणतः एक जोड़ी बैल से (जिसमें प्रत्येक बैल का वजन लगभग १०-१२ मन हो) पशुशाला का घास-पात-मिश्रित सौ सवा-सौ मन खाद प्रतिवर्ष मिल सकता है।

खाद में पशुओं का खाद उत्तम होता है. क्योंकि इस खाद से हमें पौधों के पोषणार्थ तत्व ही नहीं मिलते, बल्कि कुछ अंश तक भूमि की भौतिक स्थिति में परिवर्तन हो जाता है और सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा होनेवाली क्रियाएं अधिक होने लगती हैं, जिससे पौधों का पोषण अच्छा होता है।

क्या हमारे पास पशुओं का खाद काफी है ?

सन् १९६१ की गणना में हमारे यहां निम्नांकित पशु[1] थे :

		कुल
गाय जाति	१७,५६,७१,८४१	२२,६८,०९,१२०
भैंस जाति	५,११,३७,२७९	
भेंड़	४,०२,६२,८१८	१०,१०,७६,०६८
बकरी	६,०८,१३,२५०	

साधारणतः गाय-भैंस जाति के पशुओं में ३० प्रतिशत पशु तीन साल के या तीन साल से कम उम्र के होते हैं। यदि ऐसे दो पशुओं को एक बड़ा

---

[1] अनंतिम (Provisional) केन्द्रीय कृषि तथा खाद्य-मंत्रालय के सौजन्य से।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पशु मानकर गणना करें तो हमारे बड़े पशुओं की संख्या कुल पशुओं की संख्या का ८५ प्रतिशत भाग होगी, अर्थात् १९ करोड़ पशु होंगे।

साधारणत: औसत दर्जे हमें एक पशु से प्रतिदिन दस-बारह किलोग्राम गोबर मिल सकता है परन्तु चूंकि हमारे पशु चरने जाते हैं या खेतों में काम करने जाते हैं अत: लगभग एक-तिहाई भाग बाहर चला जाता है। शेष दो-तिहाई यदि पूरा-का-पूरा खाद के काम में लाया जा सके और यदि ११ कि० ग्रा० प्रति-पशु मानकर गणना करें तो ग्यारह का दो-तिहाई ७.३ कि० ग्रा० प्रतिदिन हुआ। परन्तु गोबर का ४० प्रतिशत भाग तो जलाने के काम आता है सिर्फ ६० प्रतिशत बचता है। सो ७.३ कि० ग्रा० का ६० प्रतिशत हुआ ४.३८ कि० ग्रा० प्रति-पशु प्रतिदिन। साल-भर में यह मात्रा १५.९९ क्विटल अर्थात् १६ क्विटल हुई।

इस हिसाब से १९ करोड़ पशुओं से १९ करोड़ × १६ क्विटल, अर्थात् तीन अरब चार करोड़ क्विटल, गोबर मिल सकता है।

भारत में प्रतिवर्ष लगभग ३० करोड़ एकड़ में खेती होती है। इस हिसाब से देखा जाय तो प्रति-एकड़ प्रतिवर्ष लगभग १० क्विटल गोबर पड़ता है। इसकी गणना नाइट्रोजन की मात्रा में की जाय तो .०३[1] क्विटल हुई अर्थात् ३ कि० ग्रा० हुई।

खाद के लिए, गन्ने-जैसी अच्छी रोक-सस्य के लिए लगभग ५० कि० ग्रा० और साधारण फसलों के लिए लगभग १० कि०ग्रा० नाइट्रोजन प्रति-

---

[1] लेंडर और धरनी ((P. E. Lander and L.C. Dharni Some Digestibility trials in indian Feeding stuffs Mam. Dept. agri. India Vol VII N0. 4, Sept. 1924) महोदय ने ११०० पौंड वजन के बैलों को (१) गेहूं का भूसा, (२) गेहूं का भूसा + चने की चूरी (३) भूसा + मक्का और (४) भूसा + शीशम के पत्ते खिला करके प्रयोग किये थे। ऐसे बैल से ११ सेर भूसे की खुराक के दिनों में, १६ सेर भूसे और चने की खुराक के दिनों में, १०.५ सेर भूसा और मक्का की खुराक के दिनों में और ११ सेर भूसा और शीशम के पत्तों की खुराक के दिनों में गोबर मिला। स्मरण रहे पंजाब के बैल ११०० पौंड वजन के थे। हमारे भारत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकड़ देते हैं। यदि १० कि०ग्रा० ही देना है यह मानकर गणना करें तो प्रति वर्ष प्रति-एकड़ हमें एक-तिहाई से कम मात्रा नाइट्रोजन की गोबर के रूप में मिल सकती है। गाय-भैंस वर्ग में लगभग तीस-शतांश पशु ऐसे होते हैं कि खाद की गणना के विचार से दो पशुओं को एक मानना उचित होगा। इस हिसाब से हमारे कुल २०,३५,६६,३८२ पशुओं में से यदि पन्द्रह-शतांश कम कर दिये जायं तो १७,३०,३१,४२५ बड़े पशु होंगे।

लेकिन हमारे यहां गोबर जलाया जाता है या ईंधन की कमी के कारण जलाना पड़ता है और यह अनुमान है कि लगभग ४०प्र०श०[1] भाग जलाया जाता है अर्थात् ६० प्र०श० भाग ही खाद के लिए मिल सकता है—इस हिसाब

से गणना करें तो $\frac{३५ \times ६०}{१००}$ = २१ मन प्रति-एकड़ पड़ा। नाइट्रोजन के

रूप में गणना करें तो $\frac{२१ \times .३}{१००}$ = .०६३ मन, अर्थात् २.५[2] सेर प्रति-

एकड़ नाइट्रोजन की मात्रा हुई।

हमें साधारण फसलों के लिए कम-से-कम ९ कि० ग्रा० (दस सेर)

में कई स्थान ऐसे हैं, जहां के पशु ५०० वजन पौंड के भी नहीं होते। ऐसी स्थिति में उनसे गोबर और भी कम मिलेगा। गणना के लिए हमने यहां पर १२ सेर प्रति-पशु लिया है ताकि हमारी गणना के अंक कम न माने जायं। इसके सिवाय यह भी होता है कि बरसात का गोबर पतला होता है और गढ़े बनवाने की सुविधा न होने से वे नहीं बनाये जाते, बल्कि खाद की ढेरी पर ही फेंक दिया जाता है। इसलिए ११ कि० ग्रा० लेना उचित ही है। ऐसे गोबर में लगभग ९० शतांश जल और बिना दाने की खुराकवाले पशु के गोबर में ०.२७ से .३ शतांश नाइट्रोजन की मात्रा रहती है। अमरीका में जहां चारे-दाने का पूरा-पूरा प्रबन्ध रहता है, यह मात्रा दुगनी से भी अधिक मिल जाती है।

[1] Stewert Report 1944; p. 27.

[2] १ सेर = ०.६३ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाइट्रोजन और अच्छी के लिए इससे दूनी मात्रा प्रति-एकड़ देनी होती है। गन्ने-जैसी फसल के लिए पचास-साठ सेर तक और दक्षिण भारत में इससे भी अधिक नाइट्रोजन की मात्रा देनी पड़ती है। यदि दस सेर प्रति-एकड़ हो तो हमें गोबर द्वारा लगभग २.५ सेर ही मिलती है। यदि ईंधन का दूसरा प्रवन्ध हो सके तो ४० प्रतिशत खाद गोबर से और मिल सकती है। इसके लिए हमें कृषकों को पेड़ लगाने का प्रोत्साहन देना चाहिए और वाद में विना रोक-टोक के जलावन की लकड़ी काटने की आज्ञा देनी चाहिए।

पशुओं का मूत्र भी अच्छा खाद होता है। उसे मिट्टी या घास में सोख कर खाद की ढेरी तक पहुंचाना चाहिए।

उपर्युक्त खाद के सिवा हमें घोड़े और भेड़-वकरी से भी खाद मिल सकता है, परन्तु घोड़े का खाद वहुधा शहर के कूड़े-कर्कट के खाद में चला जाता है। भेड़-वकरी का खाद मिल सकता है।

यदि एक पशु के पीछे १ कि० ग्रा० मानकर गणना करें तो दस करोड़ भेड़-वकरी की संख्या से सालभर में २७ करोड़ क्विटल खाद प्रतिवर्ष मिल सकता है। चूंकि ये पशु भी चरने जाते हैं, इसका दो-तिहाई हुआ १८ करोड़ क्विटल, जो प्रति-एकड़ ०.६ क्विटल पड़ता है। गाय-भैंस जाति तथा भेड़-वकरी का मिलाकर कुल खाद १०.६ क्विटल प्रति-एकड़ पड़ता है।

शेष खाद की पूर्ति के लिए खली या काम्पोस्ट जैसे कार्वनिक खाद का सहारा लिया जाय तो वे भी पूरे नहीं होते। अतः इनके साथ-साथ कृत्रिम खाद का प्रयोग करना ही होगा। आजकल एमोनियम सलफेट का मेल विशेष है। इस कारण खाद का आधा नाइट्रोजन के रूप में और आधा कार्वनिक खाद के रूप में देना चाहिए। कार्वनिक खादों में खली का खाद अच्छा है; परन्तु वह भी यदि न मिले तो गोवर का खाद इतना देना चाहिए जिसके द्वारा नाइट्रोजन की मात्रा एमोनियम सलफेट की नाइट्रोजन से दूनी पहुंच जाय।

---

[1] ताजे गोवर में लगभग ०.३ प्र०श० नाइट्रोजन होता है। जिन पशुओं का चारा-दाना बहुत अच्छा होता है उनके गोवर में यह मात्रा कुछ अधिक भी हो सकती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृत्रिम खाद के मिश्रण

कृत्रिम खाद फसलों की आवश्यकतानुसार मिश्रित रूप में दिये जाते हैं, क्योंकि अलग देने से विशेष खर्चा पड़ जाता है। साधारणतः पत्ते व फूल-वाली साग-भाजी के लिए ५-१०-५, जड़ व कन्दवाली के लिए २-८-१० और बीज तथा फलवाली के लिए ४-८-८ खाद दिये जाते हैं।

उपर्युक्त अंकों का अर्थ यह हुआ कि प्रत्येक एक-सौ भाग खाद के मिश्रण में पहले में ५ भाग नाइट्रोजन, १० भाग फा० पे० और ५ भाग पो० आ० मिलेंगे। इसी भांति दूसरे मिश्रण में २ भाग ना०, ८ भाग फा० पे० और १० भाग पो० आ० और तीसरे में ४ भाग ना०, ८ भाग फा० पे० और ८ भाग पो० आ० होंगे।

ऐसे मिश्रण और भी तरह के होते हैं और आवश्यकतानुसार साधा-रणतः एमोनियम सलफेट, सुपर फासफेट और पोटेशियम सलफेट से बनते हैं। इनके द्वारा खाद्य-तत्वों की मात्रा पूरी कर लेने पर शेष भाग ऐसी चीजों का मिलाकर बना देते हैं जिसमें खाद्य-तत्व न हो।

उदाहरण के लिए लीजिए, हमें पहला मिश्रण बनाना है। हमें यह भी ज्ञात है कि एमोनियम सलफेट में २० शतांश नाइट्रोजन, सुपरफासफेट में २० शतांश फा० पे० और पोटेशियम सलफेट में ४८ प्रतिशत पो० आ० है।

एमोनियम सलफेट की मात्रा

२० भाग नाइट्रोजन के लिए १०० भाग, तो ५ भाग नाइट्रोजन के लिए हमें २५ भाग एमोनियम सलफेट लेना होगा।

उसी भांति १० भाग फा० पे० के लिए ५० भाग सुपरफासफेट और ५ भाग पो० आ० के लिए १०.४ भाग पोटेशियम सलफेट लेना होगा।

यदि हम तीनों को मिला दें तो हमारे पास २५+५०+१०.४=८५.४ भाग माल बन गया। अब सौ भाग पूरा करने के लिए इसमें हमें १४.६ भाग दूसरी वस्तु मिलानी है जिसके लिए खड़िया मिट्टी मिला सकते हैं। इस हिसाब से जो मिश्रण बनेगा वह ५-१०-५ वाला मिश्रण बनेगा।

इसी तरह से हम जिस प्रकार का मिश्रण चाहें, बना सकते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक ही खाद में दो या तीन तत्व रहते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

।हैं जैसे एमोफास में नाइट्रोजन और फासफोरस तथा नाइट्रो फोस्क में ना०, फा० पे० और पो० आ० होता है। अथवा खली के खाद में थोड़ी-बहुत मात्रा में तीनों तत्व पाये जाते हैं।

ऐसे पदार्थों से भी गणना करके मिश्रण बना सकते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ मिलाकर खाद तैयार करते हैं। उस स्थिति में गणना निम्नलिखित रीति से होगी—

मान लो हमें २५ सेर नाइट्रोजन खली के रूप में और २५ सेर कृत्रिम खाद के रूप में देना है और मिश्रण ४-८-८ बनाना है तो उसकी गणना निम्नलिखित रीति से होगी :

मिश्रण के लिए खाद—खली	५.६% ना.	१.९% फा.पे.	१.४% पो. आ.
डबल सुपरफासफेट	—	४० % ,,	
पोटेशियम सलफेट	—	—	४८ % पो० आ०

५.६ ना० के लिए १००, तो २५ के लिए =४४६.४ सेर खली

उतनी खली से हमें =

$$\frac{४४६.४ \times १.९}{१००} = ८.५ \text{ सेर फा० पे०}$$

$$\frac{४४६.१ \times १.४}{१०} = ६.२ \text{ सेर पो० आ० मिला}$$

२५ सेर नाइट्रोजन के लिए एमोनियम सलफेट =१२५ सेर

उपर्युक्त मिश्रण से हमें ५० सेर नाइट्रोजन ८.४ सेर फा० पे० और ६.२ सेर पो० आ० मिले।

४-८-८ बनाने के लिए हमें ५० सेर ना०, १०० सेर फा० पे० और १०० सेर पो० आ० चाहिए, जिसमें से ५० सेर ना० खली और एमोनियम सलफेट से मिल गये। ८.५ सेर फा० पे० और ६.२ सेर पो० आ० खली के रूप में मिल गये। शेष सुपरफासफेट और पोटेशियम सलफेट से मिलाना चाहिए।

१००—८.५=९१.५ सेर फा० पे०

---

[1] सेर=०.९३३ कि० ग्रा०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

$$\frac{९१.५ \times १००}{४०} = २२८.५$$ सेर डबल सुपरफासफेट लेना होगा।

पो० आ०

१००—६.२=९३.८

$$\frac{९३.८ \times १००}{४८} = १९५.४$$ सेर पोटेशियम सलफेट हुआ

ऐसे मिश्रण का वज़न हुआ	खली	४४९.४
	एमोनियम सलफेट	२२८.५
	पोटेशियम सलफेट	१९५.४
	कुल	८७०.३
खड़िया मिट्टी		१२९.७
		१०००.०

ऐसे मिश्रण से हमें ५० सेर नाइट्रोजन भी मिल जायगी और नाइट्रोजन, फा० पे० और पो० आ० का अनुपात भी ठीक हो जायगा।

खाद कितना दिया जाय ?

यह भूमि की उर्वरा-शक्ति, फसल की जाति, सिंचाई का प्रवन्ध, वर्षा, तापमान, खाद देने की रीति इत्यादि बातों पर निर्भर है।

साधारणतः कमजोर भूमि में खाद का असर अधिक मालूम होता है। फसल की चाह भी देखी जाती है। जैसे दलहन जाति की अधिकांश फसलों को नाइट्रोजन का खाद, नहीं या बहुत कम, चाहिए; उन्हें फासफोरस के खाद की विशेष आवश्यकता होती हैं। सिंचाई का जहां प्रबन्ध होगा वहां खाद का असर अच्छा मालूम होगा। जहां वर्षा समयानुकूल और अच्छी होती है वहां भी खाद विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे। जहां के अत्यधिक और न्यूनतम तापमान में विशेष अन्तर नहीं होता वहां भी खाद विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगे। खाद देने की रीति पर भी खाद का असर बहुत निर्भर है। कृत्रिम खाद यदि भूमि के अन्दर बीज के नीचे या उनकी बगल पर दो-तीन इंच की दूरी पर रहे तो वह विशेष लाभप्रद होता है।

ऐसी स्थिति में कम-से-कम इतना तो अवश्य करना चाहिए कि नाइट्रोजन की मात्रा जितनी फसल द्वारा खेत से ली जाय उतनी अवश्य डालनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए। सरकार ने जगह-जगह कृषि-प्रयोग-फार्म खोल रखे हैं। वहां से, कौन-सी फसल के लिए कितना खाद देना चाहिए, इसकी जानकारी मिल जायगी। ग्राम-सेवकों द्वारा भी ऐसी माहिती मिल सकती है।

फसल के द्वारा नाइट्रोजन की मात्रा कितनी हटाई जाती है यह उपज से गणना करके निकाल सकते हैं। फसलों के बीज तथा भूसे में अथवा अन्य भागों में नाइट्रोजन की कितनी मात्रा रहती है यह शतांश के रूप में आगे दी गई है, जिससे गणना की जा सकती है। ऐसी गणना के पश्चात् यह देखना चाहिए कि यदि खाद कृत्रिम नहीं है तो मात्रा बढ़ानी होगी; क्योंकि गोबर जैसे कार्बनिक खाद के नाइट्रोजन का पूरा असर पहली फसल पर नहीं होता। ५० शतांश पहली पर, ३० शतांश दूसरी पर और शेष तीसरी फसल पर मिलेगा। इसलिए ऐसे खाद द्वारा दुगना नाइट्रोजन पहुंचे, इतना खाद पहली फसल को देना चाहिए।

फासफेट के खाद के विषय में यह कहा जा सकता है कि फसल की मांग से ढाई-तीन गुना डालना चाहिए। क्योंकि एक तो वह खाद जब भूमि में डाला जाता है तो बहुत-सा अघुलनशील हो जाता है; और दूसरी बात यह है कि फासफेट भूमि-कणों के साथ चिपक जाता है। जड़ों को उसके पास पहुंचना पड़ता है। नाइट्रोजन के लवण घुलनशील होने से भूजल के साथ स्थानान्तरित होकर जड़ों के पास पहुंच जाते हैं और पौधे लाभ उठा लेते हैं। फासफेट की प्राप्ति के लिए अधिकतर जड़ों को फासफेट के पास जाना पड़ता है, अथवा यों कहिये कि जड़ों के मार्ग में जो फासफेट आता है उसी से लाभ पहुंचता है।

पोटाश के खाद की अधिकांश स्थानों में आवश्यकता नहीं। लेखक के कई प्रयोगों में इस खाद का उलटा ही असर रहा।

चूना अम्लदार मिट्टी में और कैलशियम सलफेट क्षारवाली भूमि में डालना चाहिए।

खाद देने की रीति

खाद देने की रीति खाद की जाति और मात्रा पर निर्भर है। गोबर या कूड़े-कर्कट का खाद बहुत अधिक मात्रा में दिया जाता है। वे खेतों में छींटकर मिट्टी में मिला दिये जाते हैं। ऐसे खाद फसलों के बोने के पहले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही डाल दिये जाते हैं। खली जैसे खाद, जो कम मात्रा में दिये जाते हैं, उन्हें खेत में छींटकर या पौधों के आसपास देते हैं। ऐसे खाद फसल बोने के कुछ दिन पहले और कुछ खाद खड़ी फसल को भी देते हैं। रासायनिक खाद फसल बोते समय या खड़ी फसल को दोनों समय दिये जाते हैं। ऐसे खाद भूमि पर छींटकर या पौधों के आसपास बीज से दो-तीन इंच की दूरी पर या उतने ही गहरे दिये जायं तो विशेष लाभदायक सिद्ध होंगे।

हरे खाद की फसल पूरी-की-पूरी गाड़ दी जाती है।

हरे खाद की फसलें

खेत में उपजाई हुई हरी फसलें खाद के निमित्त गाड़ दी जायं या हरी फसलें तथा हरे पत्ते इत्यादि बाहर लाकर खेतों में गाड़े जायं तो उन्हें हरे खाद कहेंगे।

जो फसलें खेत में इस कार्य के लिए उपजाई जायं वे ऐसी हों कि उनकी बाढ़ जल्दी हो, उनके अंग ऐसे कोमल हों कि जल्दी-से-जल्दी सड़ सकें और वे ऐसी भी हों कि वायुमंडल की नाइट्रोजन का उपयोग अधिक मात्रा में कर सकें। ऐसी फसलें दाल-वर्ग की होती हैं। हरे खाद की सफलता भूमि की जाति तथा वर्षा पर निर्भर है। मटियार भूमि अथवा जिसमें कार्बनिक पदार्थ अधिक हों उसमें ये इतने लाभप्रद नहीं होते जितने हलकी भूमि में। वर्षा के विचार से देखा जाय तो हरे खादों का उपयोग विना सिंचाईवाले खेतों में वहीं सफल होगा जहां वर्षा चालीस इंच से अधिक हो। इससे कम वर्षा वाले स्थानों में यदि काम में लाये जायं तो उन्हें चार-पांच सप्ताह की आयु के होने पर ही गाड़ देना चाहिए या सिंचाई का प्रबन्ध होना चाहिए। हरे खाद के गाड़ने के बाद लगभग तीन इंच पानी हो जाय तो अच्छा है। हरे खाद के गाड़ने और दूसरी फसल के बोने में कम-से-कम दो माह का अन्तर उत्तम होगा।

हरे खाद के लिए हमारे देश में निम्नलिखित फसलें उपयोगी होंगी :

वर्षा के प्रारम्भ में बोई जानेवाली फसलें :

सन	Sannhemp	*Crotolaria juncea*
ढेंचा	Dhaincha	*Sesbania aculeata*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शेवरी	Shevri	*Sesbani aaegyptica*
ग्वार	Cluster bean	*Psymopsis proraliodes*
चवली	Cow pea	*Vigna catiang*
सेम	Sem	*Dolichoslablab*
उड़द	Urid	*Phaseolus mungo*

बरसाती फसलें लेने के बाद बोई जानेवाली हरे खाद के योग्य फसलें :

ये फसलें या तो बरसाती फसल की कटाई के बाद या धान-जैसी फसल जब पकने को होती है तो खेतों में हरे खादवाली फसलों के बीज छींट देते हैं।

ऐसी फसलों में सेंजी Senji *Melilotus parviflora*, पीली पसेरा Pillipesara *Phaseolus trilobus* और कुलथी Kulthi *Dolichos biflorus* की गणना की जा सकती है।

उपर्युक्त दलहनवाली फसलों के सिवाय भूमि में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि के विचार से सूरजमुखी Sunflower *Helianthus anus* और *Tithonia diversifolia* तथा सरसों Sarson *Brassica campestris* भी अच्छी होती है।

हरे पत्ते धान के खेतों में गाड़ने के लिए मद्रास की तरफ विशेष रूप से काम में लाते हैं। इसके लिए कुरंज, अकौन, आक आदि के पत्ते अच्छे होते हैं।

आजकल आधासीसी बरसात में जगह-जगह बहुत बढ़ रही है। इसके हरे पौधे खाद के लिए काम में लाने चाहिए।

इनके सिवाय लेखक ने पूसा में नदी में होनेवाले सेवार का भी प्रयोग खाद के लिए किया, तो लाभप्रद ही रहा। तालाब या नदी-नालों में जहां सेवार हो जाते हैं, उन्हें इकट्ठे कर कर खेतों में डाल देना चाहिए।

उपर्युक्त खाद की फसलों में से वर्षा में होनेवाली को साधारण जुताई के पश्चात् खेतों में बीज छींटकर बो सकते हैं। जब यह अनुमान हो जाय कि अब वर्षा तीन-चार इंच और हो जायगी, उस समय गाड़ देनी चाहिए। अथवा यदि बाढ़ बहुत अधिक हो रही है तो जल्दी भी गाड़ सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हरे खाद के काम में लाई जानेवाली मुख्य-मुख्य फसलों के बीज की मात्रा, वोने की रीति, फूलते समय की उपज, उसमें जल तथा अन्य खाद्य पदार्थ की मात्रा नीचे लिखी सारणी में देखिये :

नाम फसल	मात्रा बीज प्रति-एकड़	वोने की रीति	उपज प्रति-एकड़ हरे पदार्थ की	जल %	खाद्य पदार्थ सूखे पदार्थ में: ना० %	फा० पे० %	पो० श्रा० %	चूना %
सन	३० सेर से १ मन	छींट कर	१०० से ३०० मन	७५	२.५	०.५	२.०	२.५
ढेंचा (१)	१ मन	छींट कर	१०० से २५० मन	७५	१.६	०.४	१.८	१.६
ग्वार	१५ सेर	छींट कर या कतारों में	१०० से २०० मन	८०	३.०	०.५	१.८	०.४
चवली	२० सेर	कतारों में	१०० से २०० मन	८०	२.५	०.७	२.७	३.०
सेंजी	२० सेर	छींट कर	१५० से २०० मन	७५	३.०	०.४	२.५	—
पिली पसेरा	१५ सेर	छींट कर	१२५ से २०० मन	७५	०.५	—	—	—
उड़द	१० सेर	कतारों में	८० से १०० मन	७५	३.४			

[1] बीज के लिए जो ढेंचा वोया जाय, उसके बीज ८-१० सेर प्रति-एकड़ कतारों में वर्षारम्भ के समय वोना चाहिए। कतारों में डेढ़-दो फुट की दूरी उत्तम होगी। उपज बीज १२ से १५ मन तक तक हो जाती है। फसल ४ या ५ महीनों में तैयार हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निम्नलिखित अंगों से ज्ञात होगा कि हरे खाद की उपज पृथक्-पृथक् स्थान में पृथक्-पृथक् होती है।[1] खाद्य-तत्वों की मात्रा उपर्युक्त सारणी में सूखे पदार्थ में दी गई है ताकि पहले सूखे पदार्थ का अनुमान करके उससे खाद्य-पदार्थों की मात्रा निकाल सकें :

	धान-खण्ड	गेहूं या कपास-खण्ड
	मन[2]	मन
सन	५० से १२५	१६० से २७५
ढेंचा	४० से १००	१२५ से २५०
चवली	४० से ६०	१५० से २००

इतना ध्यान रहे कि दाल-वर्ग के हरे खाद द्वारा कुछ नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ वायुमण्डल से मिलते हैं, परन्तु फासफेट, पोटाश तथा चूना भूमि से ही लिये जाते हैं और भूमि में ही ऐसे खाद के साथ पहुंच जाते हैं। अन्तर यही होता है कि इनका रूप बदल जाता है, जिससे दूसरी फसल के पौधे कुछ अधिक मात्रा में इनका उपयोग करते हैं।

१३—कृषि-यंत्र और कृषि का यंत्रीकरण

यन्त्रीकरण से हमारा उद्देश्य उस खेती से है, जिसमें ट्रैक्टरों और उनसे चलनेवाले यन्त्रों द्वारा खेती की जा सके।

यंत्रीकरण के गुण-दोष

भारत की वर्तमान स्थिति में जबकि हमें ट्रैक्टरों और उनसे चलनेवाली कलों तथा उनके लिए तेल तक बाहर से मंगवाना पड़ता है, ट्रैक्टरों द्वारा खेती किस अंश तक सफल होगी, यह बतलाना कठिन ही है। वनखंड और ऊबड़-खाबड़ भूमि को खेती के योग्य बनाने में ट्रैक्टर ही काम के हैं; परन्तु जुताई-योग्य खेतों में तो पशु-शक्ति से ही काम लेना उचित है। भविष्य में जब मनुष्य अपने दैनिक कार्य के लिए भी यन्त्रों के अधीन हो

---

१ BAL, D. V. 1937 Proc. Board Agri & Animal Husbandry India, Crop & soil Wing 2nd meeting p. 195..

२ १ मन=३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जायगा, उस समय साधारण खेती का काम इनके विना नहीं चलेगा।

वर्तमान समय में इनके उपयोग में निम्नलिखित बाधाएं पाई जाती हैं:

(१) कृषक-वर्ग गरीब है और यंत्रों का मूल्य बहुत है।

(२) साधारण कृषकों को आवश्यकतानुसार पेट्रोल, तेल, गीयर का तेल आसानी से नहीं मिलता।

(३) हमें हमेशा गहरी जुताई की आवश्यकता नहीं। भूमि की सतह को उचित समय पर थोड़ी बहुत उलट-पुलट कर देने से प्रकृति स्वयं अपनी जलवायु और तापमान से भूमि को पका देती है और भूमि में पौधों के लिए खाद्य पदार्थ तैयार कर देती है।

(४) हमारे खेत बहुत छोटे हैं।

(५) हमें कार्बनिक खादों की विशेष आवश्यकता है, जो पशुओं से ही मिल सकते हैं।

(६) हमारे यहां एकांगी खेती बहुत कम होती है। अधिकतर मिश्रित ही होती है, जिसमें बैलों से चलनेवाले हल्के यन्त्र ही विशेष उपयोगी होते हैं।

(७) हमारे यहां सब जगह ऐसे कारीगर भी नहीं पाए जाते जो ऐसे यन्त्रों को ठीक से चला सकें। 'अल्पविद्या भयंकरी' वाला हिसाब है। अन्य देशों में कृषक स्वयं ही यन्त्रों को सुधार लेते हैं। हमारे कृषक को तो ड्राइवर महोदय की मर्जी पर चलना होगा।

(८) सरकार की वर्तमान नीति के अनुसार जब कोई भी व्यक्ति बीस, चालीस या पचास एकड़ से अधिक भूमि नहीं रख सकेगा तो ट्रैक्टर से कैसे काम ले सकेगा? सामूहिक कृषि-योजना को कार्यान्वित करना इतना सरल नहीं दिखता, जितना उसका मौखिक प्रचार।

चूंकि यह पुस्तक सिर्फ उन्हीं के लिए नहीं लिखी जा रही है जिनके विचार ऊपर-जैसे हों। हमें तो यन्त्रीकरण में श्रद्धा रखनेवालों के प्रति भी आवश्यकीय बातें यहां बताना है। जिन्हें वन-खंड या ऊबड़-खाबड़ भूमि सुधारना है, उन्हें सरकारी विभाग की सहायता लेनी चाहिए।

(१) जिनके पास चार सौ एकड़ से अधिक भूमि हो उन्हें दो ट्रैक्टर रखने होंगे; वरना यदि ठीक खेती के समय पर एक बिगड़ा, तो काम ठप्प

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो जायगा।

(२) इनके साथ उपयोगी यन्त्र भी सब मंगवाने चाहिए, ताकि सब काम अच्छी तरह समय पर हो सके।

(३) विशेषज्ञों की सम्मति से ही ट्रैक्टर और यन्त्र खरीदने चाहिए। विक्रेताओं की बातों पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए। क्योंकि बहुत-से विक्रेताओं को स्थानीय स्थिति का पूरा ज्ञान नहीं होता।

(४) आपकी भूमि बलुआ या बलुआ-दुमट है तो हलके ट्रैक्टरों और उनसे चलनेवाले यन्त्रों से काम चल जायगा। लेकिन मिट्टी मटियार और भारी है तो भारी और मजबूत ट्रैक्टर और उनसे चलनेवाले यन्त्र काम के होंगे।

(५) आपके ४०० एकड़ के फार्म पर दो ट्रैक्टरों के अतिरिक्त निम्न-लिखित यन्त्र अवश्य होने चाहिए—

(१) तीन फारवाले दो हल,

(२) दो डिस्क हैरो या कल्टीवेटर,

(३) बोने के लिए एक या दो 'सीड ड्रिल'

(४) एक 'मल्टी थ्रेशर' या 'विनोअर', ताकि फसल की तैयारी और उड़ावन का काम जल्दी हो सके।

(५) गन्ने की खेती की सुविधा हो तो उसे पीलने के लिए पावर-क्रशर (एंजिन द्वारा चलनेवाली चर्खी) भी होनी चाहिए।

(६) अवकाश के समय ट्रैक्टरों से काम लेने के लिए एक आटे की चक्की, दाल दलने की चक्की या तेल की घानी भी रखनी चाहिए, वरना ट्रैक्टर तथा खेती के यन्त्रों का घिसावन तथा ब्याज देना भारी हो जायगा।

(७) ट्रैक्टर चार प्रकार के होते हैं—१. रेंगनेवाले जो चेन पर चलते हैं। २. चार पहियेवाले। ३. चार पहियेवाले, लेकिन अगले दो पहिये नज़दीक रहते हैं। ४. छोटे ट्रैक्टर जो सागभाजी की खेती में थोड़ी भूमि के योग्य हों।

(८) चेन पर चलनेवाले ट्रैक्टर की अपेक्षा पहियेवाले अच्छे होते हैं, क्योंकि उनसे खाद, फसल और माल ढोने का काम लिया जा सकता है।

(९) पैट्रोल, तेल, मोबिल ऑयल और ट्रैक्टर तथा यंत्रों के कुछ ऐसे भाग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

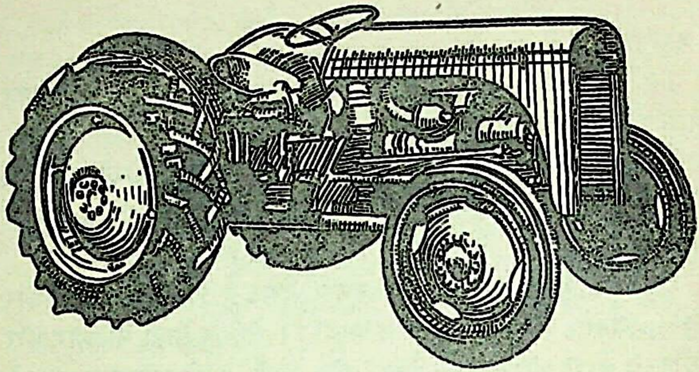

ट्रैक्टर—चित्र नं० २

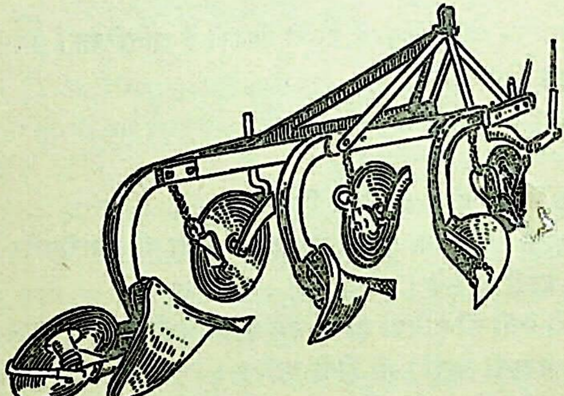

तीन फारवाला

चित्र नं० ३

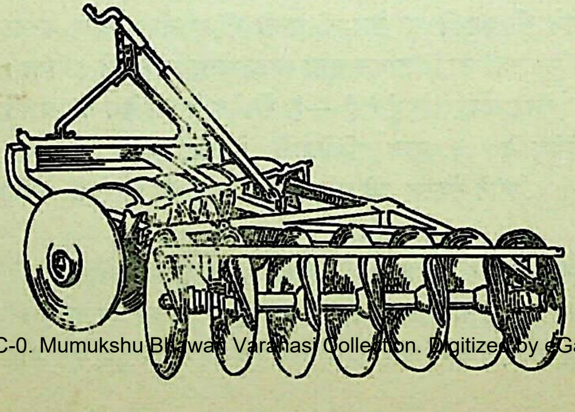

डिस्कहैरो

चित्र नं० ४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिनके जल्दी घिसने या टूटने की सम्भावना हो उनके मेल का प्रबन्ध रखना चाहिए।

(१०) सिर्फ ट्रैक्टरों पर ही निर्भर न रहें, कुछ बैल-जोड़ी भी छोटे-मोटे काम के लिए अवश्य रक्खें।

ट्रैक्टरों द्वारा खेती के लाभ

(१) शहरों के निकट जहां कारखानों की अधिकता के कारण मजदूर न मिलते हों वहां काम जल्दी और समय पर करने के लिए ट्रैक्टर काम की वस्तु है।

(२) खेत जोतने, बोने और माल की तैयारी के काम जल्दी हो जाते हैं।

(३) बैलों के चारे-दाने और उनके रहने के स्थान की सफाई में बहुत-सा समय लग जाता है, वह बच जाता है।

पशुशक्ति द्वारा काम में आनेवाले यंत्र और अन्य आवश्यकताएं—

हमारे यहां एकांगी कृषि करनेवाले कृषक बहुत ही कम हैं। बहुधा कृषक मिश्रित खेतीवाले हैं। ऐसे कृषक अनाज भी उपजाते हैं—साग-भाजी भी पैदा करते हैं—फलों के छोटे-मोटे बग़ीचे भी लगा देते हैं और पशु-पालन का काम भी साथ-साथ करते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें कई प्रकार के यन्त्र रखने पड़ते हैं।

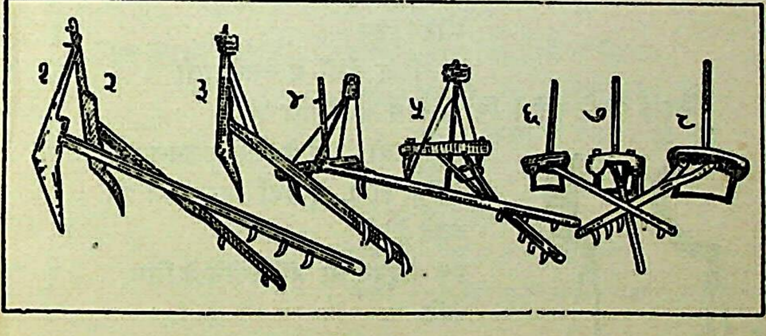

चित्र नं० ५

यन्त्रों की संख्या क्षेत्रफलानुसार होगी; परन्तु छोटे-से-छोटे २५ एकड़ के फार्म पर भी निम्नलिखित चीजें तो होनी ही चाहिए :

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माल, खाद और अन्य सामान ढोने के लिए बैलगाड़ी		१
खेतों में से घासपात फेंकने के लिए हाथ-गाड़ी		१
जुताई के लिए ज़मीन चीरनेवाले देशी हल		२
	ज़मीन चीरकर मिट्टी उलटनेवाले	
	(क) मैदानी भूमि के लिए	१
	(ख) पहाड़ी ढालू भूमि के लिए	१
	'टर्नरेस्ट टाइप' जिसमें भूमि उलटनेवाला भाग इच्छानुसार दाएं-बाएं किया जा सके	१
	(ग) नाली बनानेवाला हल	१
ढेले तोड़ने के लिए	हेंगा, पठार, पाटा या सोहागा। (यह एक मोटी लकड़ी का पाट-जैसा होता है। इससे हल चलाने से जो ढेले पड़ जाते हैं, वे तोड़ दिये जाते हैं)	
हल्की जुताई के यन्त्र	बखर	२
बोने के यन्त्र	नाई, एक चांसवाली हलकें हल-जैसी	२
	या दो ,, ,, ,,	१
	या अरगड़ा	१
	और टिफन	१
	या 'ड्रिल' बैलों से चलनेवाली	१
निंदाई या निराई के लिए बैल से चलनेवाले 'हो'		२
	खरीफ और रबी के लिए अलग-अलग (इन्हें डोरा, डूडियां या करपा भी कहते हैं)।	२
	एक-पहियेवाला 'हो' बगीचे के लिए	१
	कांटे	४
	खुरपी	६
खोदने के लिए	गैंतरी	२
	कुदाल या फावड़ा	४

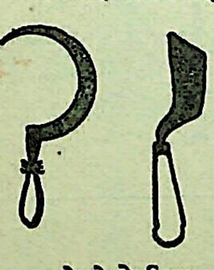

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

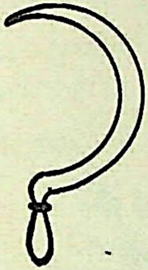

	सब्बल	१
सिंचाई के लिए	यदि कुएं से पानी देना हो तो चड़स, (मोट) चकरी-रस्से इत्यादि जिस प्रकार से सिंचाई की जाय वैसे यन्त्र रखने होंगे। (सिंचाई के स्तम्भ में यन्त्रों का वर्णन देखें।)	२
फसल काटने के लिए	हंसुग्रा, दरांता	६
	गंडासा	२
दोहनी के लिए	बहुधा बैलों से की जाती है, परन्तु यदि फार्म १०० एकड़ से ग्रधिक हो तो दोहनी ग्रौर उड़ानेवाली कल रखना ग्रच्छा होगा।	
उड़ावन के लिए	साधारणतः हवा से ही यह काम लिया जाता है, परन्तु हो सके तो दो-चार कृषकों को मिलकर एक उड़ानेवाली कल जिसके द्वारा दाना-भूसा ग्रलग हो जाता है, रख लेनी चाहिए, ताकि हवा के लिए ठहरना न पड़े ग्रौर काम समय पर हो जाय।	१
गुड़ बनाने के यन्त्र	चरखी—रस निकालने के लिए	१
	नाद—चरखी से गिरता हुग्रा रस इकट्ठा करने के लिए लोहे का बर्तन	१
	घड़े या बालटियां	४
	कड़ाह—रस उबालने के लिए	१
	खुरपे—उबलते हुए रस को चलाने के लिए	३
	झरने	२
	ग्रेट—भट्टी में लगाने के लिए	१
	छड़—भट्टी में जलावन हिलाने के लिए	१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	शावेल—राख निकालने के लिए	१
छोटा-मोटा बढ़ई का	कुल्हाड़ी	१
काम करने के लिए	आरी	१
	बसूला	१
	रुखानी	१
	हथौड़ा	१
बगीचे के लिए	छुरी या चाकू कलम बांधने के लिए	१
	कैंची बड़ी—पेड़ छांटने की, छोटी-	१
	छोटी टहनियां काटने के लिए	१
	'सीकी' पेड़ों पर से फल उतारने के लिए कांटा	१
	अन्य वज़न के लिए	१
	तगारी, घमेले, तसले	६
	टोकरियां	६

यन्त्रों के सिवाय अन्य—

यन्त्र रखने का स्थान एक ओर से खुला हुआ	३०′ × १०′	१
छोटा-मोटा सामान और बीज इत्यादि रखने के लिए घर		१
	१२′ × १०′	२
चौकीदार का घर	(१२′ × १०′)	२

मालिक के रहने का घर (छोटा-बड़ा इच्छानुसार)—

पशुशाला—२ जोड़ी बैल
१ गाय
१ बछड़ा
१ भैंस
१ बछड़ा
} १०′ × ४′ स्थान प्रत्येक बड़े पशु के लिए।

१४—जुताई

कितने कार्य में कितने मजदूरों की आवश्यकता होगी अथवा एक मज-दूर कितना काम कर सकेगा अथवा कितने पशु कितना कार्य कितने समय

CC-0. Nanaji Deshmukh Library, BJP, Jammu. Digitized by eGangotri

में कर सकेंगे, यह स्थानीय जलवायु, मनुष्यों के स्वास्थ्य, पशुओं के स्वास्थ्य और उनके खान-पान पर निर्भर है। पंजाब की जलवायु ऐसी है कि वहां मनुष्य तगड़े और पशु भी काफी बड़े होते हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि वहां के मनुष्य तथा पशु थोड़े समय में अधिक काम कर

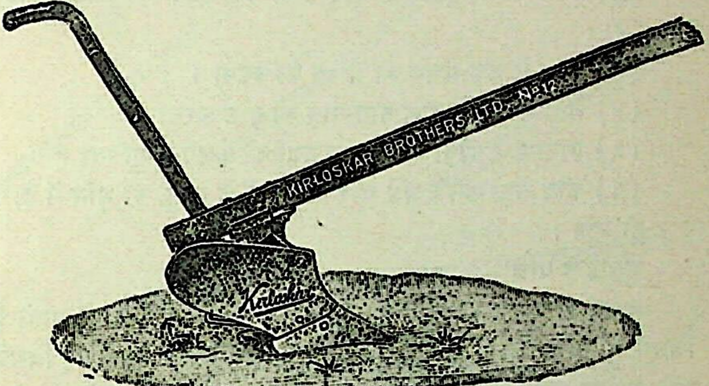

चित्र ६

सकेंगे। इसके विपरीत बंगाल के कृषक तथा वहां के छोटे-छोटे पशु उतना काम नहीं कर सकते। यहां पर मध्य श्रेणी[1] के व्यक्ति तथा पशुओं के काम का अनुमान दिया जायगा। इससे पाठक स्थानीय स्थिति के अनुसार कुछ बढ़ा-घटाकर अनुमान कर लें। इतना और ध्यान रहे कि खेती के काम में एक हलवाहा और एक जोड़ी बैल से जितना काम होता है, दो जोड़ी होने से दुगने से कुछ अधिक काम होता है, यदि दोनों हलवाहे एक समान उत्साही हों। कृषि-कार्य के प्रत्येक स्तम्भ में इन सबका अनुमान दिया है।

जुताई

भूमि की सतह को चीर-फाड़कर अनाज, साग-भाजी या फल-उत्पादन

---

[1] पुरुष लगभग दो मन वजनवाला, स्त्री लगभग सवा मन वजनवाली और पशु लगभग दस-बारह मन वजनवाला।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करने जैसी बनाने की क्रिया को जुताई कहते हैं।

जुताई के उद्देश्य—(१) जमी हुई भूमि की ऊपरी तह को बिखेरना ताकि उसमें हवा का आवागमन अच्छा हो और प्राकृतिक रासायनिक क्रिया द्वारा पौधों के लिए भोजन तैयार हो सके।

(२) धूप लगने से भूमि में भूमि-कणों का छेदन (Weathering) अच्छा हो।

(३) भूमि में जल-संचय की शक्ति का बढ़ना।

(४) खेतों में उपजनेवाले घास-पात को नष्ट करना।

(५) प्रारम्भ में पौधों की कोमल जड़ों को फैलने में सुविधा हो।

(६) कीट तथा उनके अंडे और व्याधियों के जन्तु, जो भूमि में हैं, वे नष्ट हो जायं।

जुताई के यन्त्र

जुताई दो प्रकार की होती है: एक वह जो देशी हलों से की जाती है जिसमें भूमि चिर जाती है और थोड़ी-बहुत उलटती है। दूसरी वह जिसमें भूमि कटकर उलट जाती है, अर्थात् ऊपर की तह नीचे और नीचे का भाग ऊपर आ जाता है।

देशी हल (देखिये चित्र ७, पृष्ठ ६७३) भारत के विभिन्न प्रान्तों में अलग-अलग वजन के होते हैं। सबसे भारी हल दक्षिण बम्बई की तरफ होता है, जो दो जोड़ी बैल से चलता है और सबसे हलका आसाम और बंगाल का होता है जिसे कृषक कंधे पर उठाकर आसानी से खेत तक ले जाते हैं। भारत में अब मिट्टी उलटनेवाले हल भी बनते हैं (देखिए चित्र ६, पृष्ठ ६६) और बैलों से आसानी से काम में लाये जाते हैं। ट्रैक्टर द्वारा फारवाले और तवे-नुमा हल काम में आते हैं। इनसे नौ-दस इंच गहरी जुताई हो जाती है। देशी हल से ४-५ इंच और मिट्टी उलटनेवाले हलों से ५-६ इंच तक की जुताई हो जाती है।

किस प्रकार के यन्त्र काम में लाये जायं यह भूमि की जाति, पशु की शक्ति, फसल की मांग और भूमि में उपजनेवाले घास-पात की जाति पर निर्भर है।

भूमि की जाति—साधारणतः कांस-रहित काली मिट्टी जो अपने-आप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

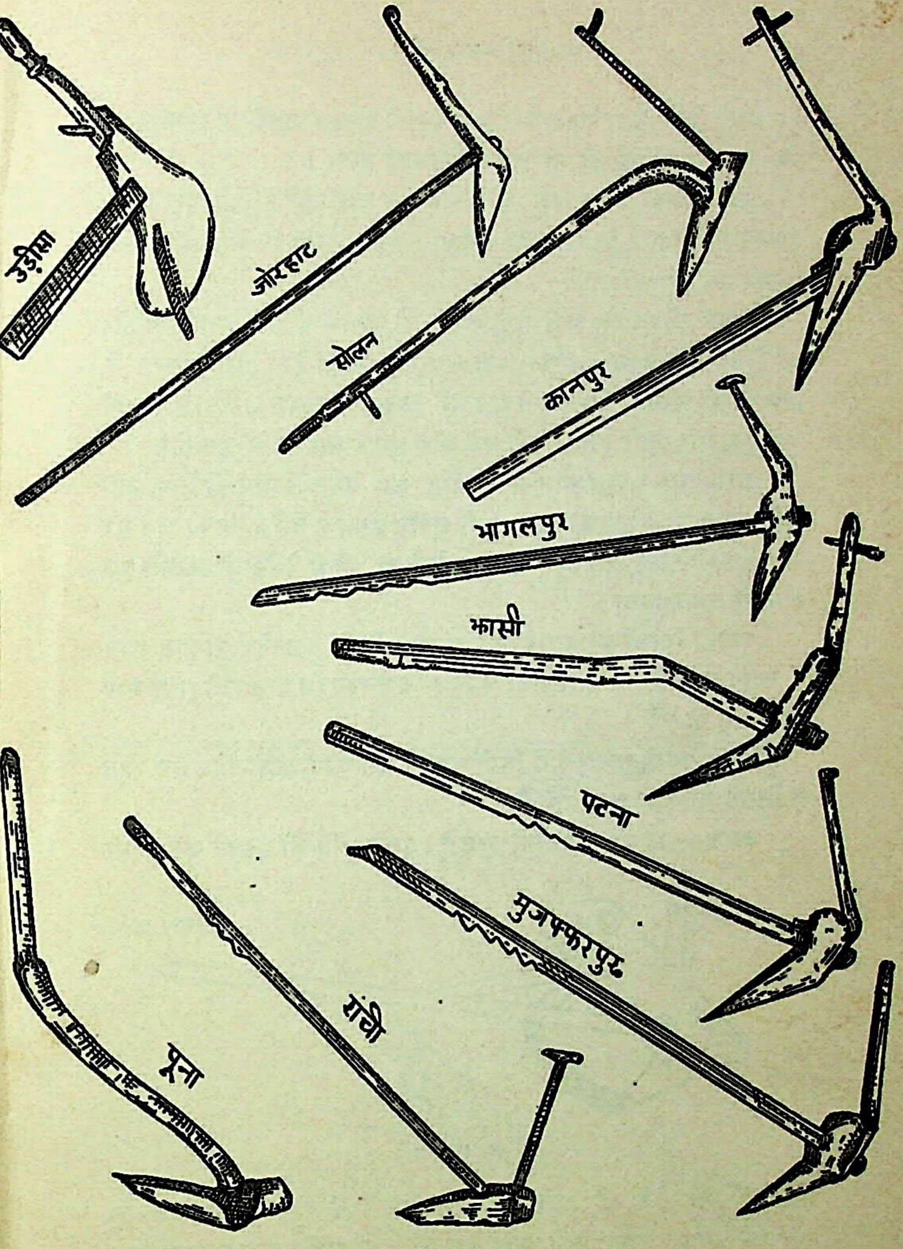

चित्र नं० ७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फट जाती है, के उलटने की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरीत भारी और न फटनेवाली मिट्टी को उलटना लाभप्रद होगा।

पशु-शक्ति—जहां पशु बहुत कमजोर और छोटे होते हैं, वहां मिट्टी उलटनेवाला हल नहीं खींचा जा सकेगा। ऐसी स्थिति में जुताई की संख्या बढ़ानी होती है।

फसल की मांग—धान-जैसी फसल, जो पानी में होती है—और पानी-भरे खेतों में ही बहुधा जुताई करना पड़ती है—वहां देशी हल ही काम के होंगे। जहां भूमि में बैठनेवाली जड़ या कन्दवाली फसल लगाना हो, वहां जुताई अच्छी गहरी होगी, तभी बड़े और सुन्दर आकार के कन्द होंगे।

घास-पात—जहां कांस-जैसी घास का जमाव विशेष हो जाय, वहां भूमि को गहरी जोतकर उलटना ही अच्छा होता है ताकि उनकी जड़ें मर जायं। कभी-कभी तो इसकी जमावट ऐसी हो जाती है कि ट्रैक्टरवाले हल काम में लाना पड़ता है।

पहाड़ी हिस्सों की जुताई के लिए यदि मिट्टी उलटनेवाला हल काम में लाया जाय तो वह ऐसा होना चाहिए कि उसका मिट्टी उलटनेवाला भाग दाएं-बाएं हो सके।

नाली बनानेवाले हल में मिट्टी उलटनेवाले भाग दोनों ओर लगे रहते हैं जिससे नालियां बन जाती हैं।

बखर—यह बड़ा उपयोगी यन्त्र है। इससे भूमि की हलकी जुताई भी

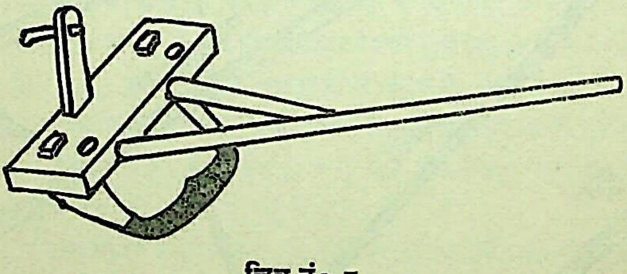

चित्र नं० ८

होती है और ढेले भी टूटते जाते हैं। भारत के बहुत-से भागों में यह काम में लाया जाता है। जहां ये न हों, वहां इन्हें अपनाना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हेंगा (सोहागा, पठार)—यह लम्बा लकड़ी का टुकड़ा होता है, जिसके दोनों छोरों पर कड़े या खूंटियों द्वारा रस्सी अटकाने की व्यवस्था होती है। दोनों छोरों पर एक-एक जोड़ी बैल जोतकर इसे खेतों में चलाते हैं। वज़न अधिक करने के लिए इसपर हांकनेवाले खड़े होते जा

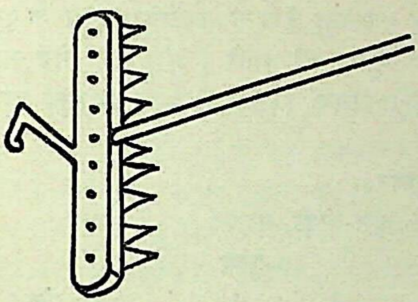

चित्र नं० ९

हैं। स्प्रिगटूथ नाम का 'हैरो', जो लोहे का बना होता है, वह भी ऐसे काम में

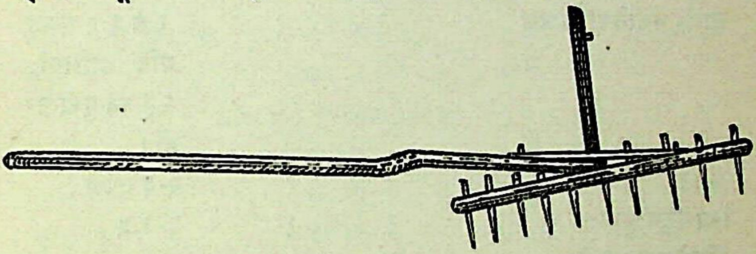

चित्र नं० १०

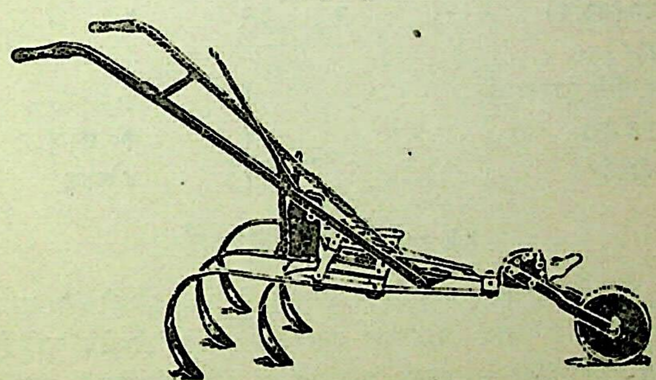

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्र नं० ११

आता है। जुती हुई जमीन में से घासपात इकट्ठा करने के लिए कीलों वाला हैरो (देखिये चित्र १०) काम में लाते हैं।

बहुत बड़े-बड़े खेतों में तवेवाला हैरो या कल्टीवेटर नाम के यन्त्र ट्रैक्टर द्वारा चलाकर हलकी जुताई की जाती है और ढेले तोड़े जाते हैं। छोटे खेतों में हलका हैरो (चित्र ११) बैलों द्वारा चलाया जाता है।

जुताई के कार्य का अनुमान

यंत्र	बैल-जोड़ी	मजदूर पुरुष	कार्य
देशी हल सादा	१	१	०.७५ एकड़
मिट्टी उलटनेवाला हलका हल	१	१	०.७५ एकड़
मिट्टी उलटनेवाला भारी हल	२	३	०.३ ,,
नाली बनानेवाला हल	१	१	१ से १.५ एकड़ यदि नालियां २½ की दूरी पर हों।
बखर	१	१	२-३ एकड़
स्प्रिंगटूथ हैरो	१	१	३-३.५ ,,
कीलोंवाला हैरो	१	१	५-६ ,,
हेंगा (पठार)	२	२	५-६ ,,
ट्रैक्टर			
हल, तीन फारवाला		१	२-३ ,,
डिस्क हैरो		१	१० एकड़
कल्टीवेटर		१	४ एकड़

१५—बीज और बोआई

बीज से यहां पर हमारा उद्देश्य उन अंगों से है, जिनके बोने या लगाने से नये पौधे मिल जायं। अधिकांश अनाजों के तो बीज ही बोये जाते हैं; वे ऐसे होने चाहिए कि उनका दाना एक-सा हो भारी हो और अधि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहित अथवा कीटों से हानि पहुंचाया हुआ न हो। कितने दिनों के बीज अच्छे हो सकते हैं इसका ब्यौरा आगे दिया गया है। बीज कितना, कितनी दूरी पर और किस रीति से बोना चाहिए, इसका वर्णन फसल की खेती के वर्णन में दिया गया है।

गन्ने के लिए गन्ने के टुकड़े बोये जाते हैं। ये व्याधिरहित होने चाहिए।

साग-भाजियों में कई के बीज बोये जाते हैं। कई के पौधों के अंग लगाये जाते हैं, जैसे आलू, लहसुन, सूरन, अदरक, हल्दी इत्यादि। किसी-किसीके बीज से नर्सरी में रोप तैयार करके लगाने होते हैं जैसे गोभी, धान इत्यादि। फलों के बीज भी बोये जाते हैं और उन्हें क़लम से भी तैयार करते हैं।

पौधे रोपने अथवा उनके अंग लगाने में प्रति-एकड़ मजदूरों की संख्या आम तौर पर इस हिसाब से होती है।

नाम फसल	कार्य	पुरुष	स्त्रियां
धान, रागी, इत्यादि	रोप लगाना	१०-१२	या १५-२०
गन्ना	टुकड़े करना,	२-३	
	और गन्ने के टुकड़े गाड़ना	३-४	
आलू, सुथनी, कच्चू	लगाना	७-८	या १०-१२
प्याज	रोपना	२५-३०	या ३०-४०
गोभी	रोपना	७-८	या १०-१२
हलदी	लगाना	७-८	या १०-१२
अदरक	लगाना	१०-१२	या १५-२०
सूरन, गराड़ू, रतालू	लगाना	६-७	या १०-१२
शकरकन्द, परवल	लता के टुकड़े लगाना	१०-१२	या १५-२०
टमाटर, बैंगन, मिर्च	रोपना	६-७	या ८-१०

बोआई

बोने की क्रिया तीन प्रकार की होती है: (१) बीज छींटकर, (२) यन्त्र द्वारा कतारों में (३) बीज नर्सरी में छींटकर जब पौधे तैयार हो जायं तो उनके रोप लगाना। कुछ जाति के बीज तो ऐसे होते हैं जिन्हें छींटकर ही बोया जाता है, जैसे बरसीम, खसखस इत्यादि। कुछ ऐसे होते हैं जिनके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रोप लगाना ही उत्तम होता है, जैसे गोभी, प्याज इत्यादि। कुछ ऐसे होते हैं जिन्हें छींटकर और कतारों में दोनों रीति से बो सकते हैं। ऐसे बीज अधिकतर कतारों में ही यन्त्रों द्वारा बोये जाते हैं; परन्तु कभी-कभी ऐसा होता है कि छींटकर बोना पड़ता है, जैसे पंकवाली (दियारा) भूमि में गेहूं। धान भी, जहां रोपने के लिए मजदूर नहीं मिलते, छींटकर ही बोना पड़ता है। छींटकर बोने में भारी असुविधा यह होती है कि निंदाई ठीक से नहीं हो पाती; साथ ही निंदाई तथा पौधों की छंटनी में खर्चा विशेष पड़ जाता है।

बोने के यंत्र

(१) हलका हल

(२) नाई एक या दो चांसवाली

(३) तीन चांसवाले यंत्र

अरगड़ा खरीफ के लिए।

तिफन रबी के लिए—हलका तिफन, खरीफ के लिए

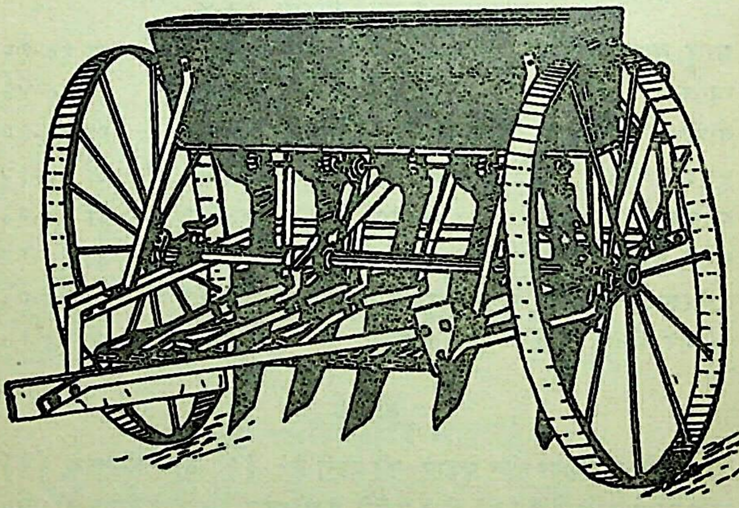

सीड ड्रिल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चित्र नं० १२

(२) सीड ड्रिल—बैलों से चलनेवाली पाच चांसवाली ड्रिल।

इस यंत्र से वोने की दूरी तथा गहराई आवश्यकतानुसार न्यूनाधिक की जा सकती है।

(१) हल—बहुत-से स्थानों में हल चलाकर उससे बनी हुई नालियों में एक व्यक्ति बीज गिराता जाता है। जब कतारों में दूरी कम रहती है तो

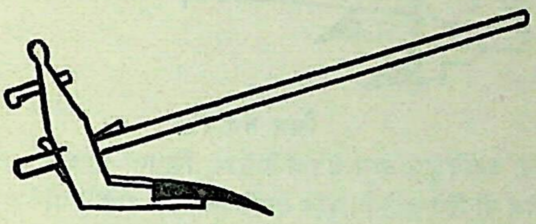

चित्र नं० १३

दूसरी नालें बनाते समय हल से जो मिट्टी उलटती है उससे बीज ढंक जाते हैं। यदि कतारों की दूरी विशेष रही तो बीज का ढकने के लिए हेंगे से अथवा किसी दरख्त की टहनी को रस्सी से जुए में बांधकर जमीन के ऊपर फिरा देते हैं जिससे बीज ढंक जाते हैं।

(२) नाई एक हलका-सा देशी हल होता है जिसके बगल में बांस की

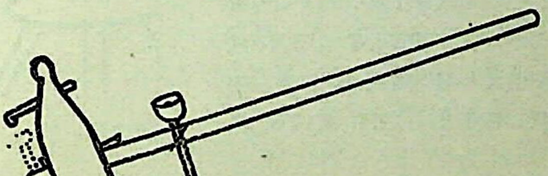

चित्र नं० १४

नली और नली के ऊपर टीप लगा देते हैं, जिसमें बीज गिराते हैं। बीज भूमि में गिरते जाते हैं और ढंक भी जाते हैं। कभी खरीफ की फसल बोने के लिए ऐसे दो यंत्र साथ जोड़कर लगा देते हैं ताकि काम जल्दी हो जाय।

(३) कहीं-कहीं खरीफ की फसल के लिए एक यंत्र (अरगड़ा) ऐसा होता है जिसमें तीन फार होते हैं और प्रत्येक फार में रस्सी बंधी रहती है। इस रस्सी के दूसरे छोर पर बांस का नल रहता है जिसका ऊपरी मुंह कुप्पा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कार होता है। बोनेवाला व्यक्ति कुप्पे में बीज गिराता है और उसका हाथ उस कुप्पे पर रहता है, इसलिए वह नल गिरने नहीं पाता। नीचे मुंहपर रस्सी रहती है। इससे वह

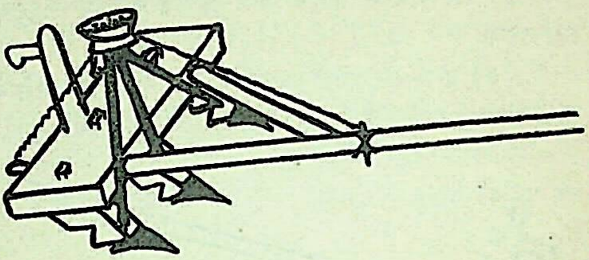

चित्र नं० १५

मुंह उस यंत्र द्वारा बनाये हुए बांस में हल के साथ खिचता रहता है। इस नली के द्वारा बीज बो दिये जाते हैं; चूंकि इसमें तीन फार होते हैं और बोने के नल अलग होते हैं, अतः अलग-अलग कतारों में अलग-अलग फसलें बो सकते हैं।

तिफन—इसमें तीन फार होते हैं। खरीफ के लिए हलका और रबी की फसलों के लिए भारी तिफन होता है। तीनों फालों में लोहे की नालियां लगाते हैं जिनका ऊपरी छोर एक कुप्पाकार पीपी में लगा रहता है। इसमें बीज डालने से तीन कतारें एक साथ बोई जाती हैं। अरगड़े में बोने के लिए जहां तीन मजदूर लगते हैं, तिफन में एक ही लगता है।

चित्र नं० १६

ड्रिल—ये बहुधा ट्रैक्टर से चलनेवाली होती है परन्तु ऐसी हलकी भी ड्रिल होती है जो एक या दो जोड़ी बैलों से चल सकती है। इसमें एक पेटी होती है जिसमें बीज भर दिये जाते हैं। पेटी के नीचे नल होते हैं जिनके द्वारा बीज भूमि में गिरते हैं। बीजवाली पेटी में ऐसा प्रबन्ध रहता है कि उस ड्रिल की चाल के अनुसार कुप्पियों में बीज गिरते रहते हैं। नैनी कृषि-विद्यालय (इलाहाबाद) ने ऐसी ड्रिल (देखिये चित्र १२, पृष्ठ ७८) बनाई है जिसमें पांच कतारें एक साथ बोने की व्यवस्था है। एक मजबूत बैल-जोड़ी से इस ड्रिल द्वारा लगभग चार एकड़ प्रतिदिन बो सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोने के यंत्रों के काम का अनुमान

नाम यन्त्र	बैल-जोड़ी	मजदूर पुरुष	मजदूर स्त्री	कार्य (आठ घंटा काम पर)
हल	१	१	१	एक एकड़
नाई एक चांसवाली	१	१	१	एक से डेढ़ एकड़
,, दो ,, ,,	१	१	२	ढाई एकड़
अरगड़ा	१	१	३	चार-पांच ,,
तिफन खरीफ	१	१	१	दो-ढाई ,,
,, रबी	१	१	१	डेढ़-दो ,,
सिड ड्रिल बैलवाली	१	१		तीन-चार ,,
,, ,, ट्रेक्टरवाली	–	–	–	दस-बारह ,,
बीज ढंकने के लिए (टहनियां द्वारा)	१	१	–	पांच-छः ,,

१६–निंदाई, निराई या सोहनी

यह क्रिया खेतों में से घास-पात निकालने के ,लिए की जाती है। घास-पात कृषक के लिए उन पौधों का नाम होगा जिनकी जहां आवश्यकता न हो वहां निकल आवें। इसका अर्थ यह हुआ कि एक पौधा कहीं उपयोगी वस्तु है तो कहीं घास-पात। जैसे गेहूं के खेत में बथुआ निकल आये तो उसे घासपात मानकर उखाड़ फेंकते हैं; और यदि वह सब्जी के लिए लगाया जाय तो उसकी रक्षा करनी होती है। उसी भांति जहांतक निंदाई का प्रश्न है उसी फसल के यदि पौधे घने हों तो उनमें से कुछ को निकालना पड़ता है। कुछ पौधे ऐसे भी होते हैं जो खेतों की मेढ़ों पर से धीरे-धीरे खेतों में बढ़ते जाते हैं।

खेत में होनेवाले घास-पात से होनेवाली हानियां

(१) ये मुख्य फसल के पौधों के साथ खुराक में हिस्सा बटाते हैं;

(२) जमीन से बहुत-सा पानी अपने पत्तों द्वारा उड़ा देते हैं;

(३) इनसे मुख्य फसल को काफी प्रकाश और हवा नहीं मिलती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(४) मुख्य फसल को हानि पहुंचानेवाले कीट और व्याधिकर्ता जंतुओं को संरक्षण देते हैं।

(५) इनके बीज अनाज के साथ मिल जाने से उनका मूल्य घट जाता है।

(६) कुछ घास-पात के बीज जहरीले या व्याधिकर्ता होते हैं। जैसे सरसों के बीज में धतूरे (*Agremone mexicana*) के बीज का मिल जाना, जिसके तेल से ऐसी व्याधि होती है कि मनुष्य मर भी जाते हैं। खिसारी में अटके (*Vicia sativa*) के मिल जाने से मनुष्य लंगड़े हो जाते हैं।

(७) कुछ घास-पात ऐसे कांटेवाले होते हैं कि पशुओं के बालों में चिपक कर उन्हें कष्ट पहुंचाते हैं जैसे आधासीसी। यह ऐसा पौधा है जो बड़े जोरों से बढ़ रहा है और चरागाह में काफी फैल रहा है।

(८) पानी की नालियों में जमकर पानी के बहाव में बाधा डालते हैं।

(९) ये यदि समय पर नष्ट न किये जायं तो मुख्य फसल की उपज को काफी गिरा देते हैं।

घास-पात दो प्रकार के होते हैं: एक वे जो प्रतिवर्ष बीज से उत्पन्न होकर बीज छोड़कर उसी साल मर जाते हैं; दूसरे वे जिनकी जड़ें (रूपान्तरित धड़) भूमि में बने रहते हैं और अनुकूल तापमान और जल मिल जाने से ऊपर पौधों के रूप में फिर निकल आते हैं। इन्हें ऊपर से कितना ही काटते रहो, परन्तु नीचे से निकलते ही रहते हैं।

पहले प्रकार के घासपात उचित समय पर जुताई और निंदाई से नष्ट किये जा सकते हैं। इनमें बीज न पड़ने के पहले नष्ट कर दिये जायं तो इनका आगे पनपना वन्द हो जाता है। यदि द्विदल वनस्पति के चौड़े पत्ते-वाले हुए तो इनका उन्हें रासायनिक औषधियां छिड़ककर नष्ट कर सकते हैं।

दूसरे प्रकार के घास-पात जब खेतों में जम जाते हैं, तो खेतों को बुरी तरह से खराब कर देते हैं और बड़ी कठिनाई से छुटकारा होता है। कांस, नागरमोथा आदि घासपात इसी वर्ग के हैं। इन्हें नष्ट करने के लिए बड़ी गहरी जुताई करनी पड़ती है जिसके लिए भारी यंत्रों की आवश्यकता होती है। घास-पात से पार पाने के साधारण उपाय निम्न प्रकार किये जाने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए—

(१) शुद्ध बीज बोना;

(२) जुताई समय पर और आवश्यकतानुसार गहरी होनी चाहिए,

(३) खड़ी फसल में निंदाई करके इन्हें निकालना चाहिए;

(४) फसल-चक्र द्वारा। जब खरीफ की फसल में घास-पात बहुत हो जाय तो उन खेतों को रबी के लिए छोड़ देना चाहिए ताकि बार-बार की जुताई से खरीफ के घास-पात नष्ट हो जायं;

(५) जलाकर—फसल उठाने के बाद खेतों में आग लगा देने से भी घास-पात, और उनके बीज जल जाते हैं।

(६) सिंचाई द्वारा—खेतों में पानी भरा रहने से बहुत-से पौधे निकलने नहीं पाते, जैसा जबलपुर की तरफ 'हवेली पृथा' की खेती में होता है।

(७) कीट द्वारा—जैसे नागफणी या थूहर का एक विशेष प्रकार के कीड़े द्वारा प्रायः समस्त भारत में नाश हो गया;

(८) फसल उठाने के बाद खेतों में भेड़-बकरियां चराना;

(९) औषधियों द्वारा—औषधियों से द्विदल वनस्पति के पौधे सरलता से मारे जा सकते हैं।

औषधियां कई प्रकार की होती हैं। उनका घोल बनाकर यन्त्र द्वारा छींटना पड़ता है। असाना महोदय लिखते हैं कि उनके एक प्रयोग में आधा सेर मीथाक्जोन (Methoxone) प्रति-एकड़ छिड़कने से गेहूं की उपज लगभग चार मन से अधिक आई।[1]

स्मरण रहे, औषधि की मात्रा घास-पात की जाति, उनकी संख्या तथा उनकी उम्र के अनुसार होनी चाहिए।

घासपातनाशक औषधियां

गंधक का तेजाब, नमक, कार्बन-बाई-सलफाइड, सोहागा, सोडियम आर्सेनाइट, सोडियम क्लोरेट, एमोनियम सल्फोनेट २-४ डी. (Dichlors phenaxy acetic acid) इत्यादि विष घास-पात नष्ट करने के काम में लाये जाते हैं। इनका उपयोग कृषि-विभागवालों की सम्मति से करना

---

[1] R. D. Asana 1951, Indian Farming Vol. I, 4.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए, क्योंकि इनमें कुछ ऐसे हैं जिनसे आग भी लग जाती है; जैसे सोडियम क्लोरेट, कभी-कभी विस्फोट भी हो जाता है।

विशेष हानिकर मुख्य-मख्य घासपात

(१) **कांस** (*Saccharum spontanium*)—इसका पौधा घास के पौधे जैसा तीन-चार फुट ऊंचा सफेद फूलवाला बरसात में होता है। भारी हलों की गहरी जुताई से ही इससे छुटकारा हो सकता है।

(२) **नागरमोथा**—(*Cyprus rotendus*) इसकी जड़ों में गांठें होती हैं, उन्हीं में से यह निकलता रहता है। इसकी ऊंचाई एक फुट के लगभग हो जाती है। गर्मी के दिनों में मिट्टी उलटनेवाले हल की जुताई से जड़ों की गांठें ऊपर निकलकर सूख जाती हैं।

(३) **आधासीसी**—(*Xanthium strumarium*; इसका पौधा चौड़े पत्तेवाला चार-पांच फुट ऊंचा हो जाता है। फूल नर-मादा अलग-अलग होते हैं। डाली की फुनगी पर नर फूल और उनके नीचे मादा फूल होते हैं। फल कांटेदार होने से कपड़ों में और पशुओं के बालों में चिपककर वितरित हो जाते हैं। बरसात में बीज से पौधे होते हैं। आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्तूबर) में फल पक जाते हैं। कुछ ही वर्षों से इनका फैलाव बहुत हो गया है। गोचर भूमि नष्ट करते-करते खेतों की मेड़ों पर होकर ये खेतों में बढ़ती जा रही हैं। इसे औषधि से नष्ट कर सकते हैं, परंतु यह काम सरकार ही कर सकती है। कृषकों को चाहिए कि फूल आने के पहले इन्हें काट दें। ग्रामीण जनता यह निश्चय करले कि घर से बाहर निकलते समय हाथ में एक ऐसी छड़ी लेकर निकले, जिसमें एक छोर पर फावड़े (स्पेड) जैसा यन्त्र लगा हो और चलते-चलते ही कुछ पेड़ अवश्य काट दिया करे। इसी तरह ग्रामीण स्कूल के बालकों को सप्ताह में एक-दो दिन कुछ समय के लिए इस काम में लगायें।

(४) **गोखरू** (*Tribulus terestris*)—इसका पौधा जमीन पर खेतों में और मेड़ों पर फैला रहता है। फल कांटेदार सिंघाड़े के आकार के बहुत छोटे-छोटे होते हैं जो बुरी तरह से पैरों में चुभते हैं। इसे भी फूल आने से पहले काटते रहना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(५) **पीले फूलवाला धतूरा** (*Agremone mexicana*)—

इसका पेड़ डेढ़-दो फुट ऊंचा पीले फूलवाला कांटेदार पत्तेवाला होता है। इसके बीज जहरीले होते हैं और सरसों के बीज के साथ मिल जाते हैं। इसे भी जहां खेतों में दिखे, काटते रहना चाहिए।

(६) पोहली (*Carthamus oxycentha*)—इसका पेड़ कांटेदार कुसूम के पेड़ जैसा होता है और रबी के मौसम में खेतों में बुरी तरह से फैलता है। इसे भी फूल आने के पहले काटते रहना चाहिए।

इसके सिवाय दूब (*Cynodo dactylon*), बथुआ (*Chenopodium album*) लेहवी, हिरनखुरी (*Convolvlus arvensis*), सेंजी (*Melilotus indica*), अकटा (*Vicia sativa*) आदि ऐसे हैं कि जिन्हें निंदाई से नष्ट करना चाहिए।

निंदाई के यन्त्र और उनके काम का अनुमान

यन्त्र	बैलजोड़ी	पुरुष	कार्य
३ डोरा डूंडिया	१	३	३ एकड़
हाथवाला हो	—	२	पाव से आधा एकड़
खुर्पी	—	८ या १२ स्त्रियां	१ एकड़। घासपात बहुत हो तो और अधिक की जरूरत होगी।

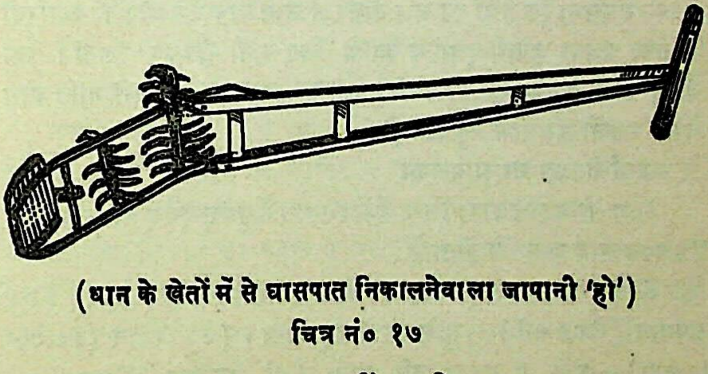

(धान के खेतों में से घासपात निकालनेवाला जापानी 'हो')

चित्र नं० १७

१७—सिंचाई

बीज का अंकुरण और पौधों की बाढ़ बिना जल के असम्भव है। इस-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए सफल कृषक वही होगा, जो खेती को अपनाने के पहले जल की व्यवस्था कर सके। जो कृषक वर्षा के जल पर निर्भर रहते हैं उनकी खेती डांवाडोल ही रहती है। सिंचाई कुओं से भी हो सकती है, परन्तु वर्षा कम होती है तो कुएं में भी पानी बहुत कम हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों से पार पाने का सरल मार्ग यही है कि नदियों का जल को, जो वृथा चला जाता है, बांधकर काम में लाया जाय। वर्तमान समय में भारत के विभिन्न स्थानों में दामोदर घाटी बांध, हीराकुण्ड बांध, भाकरा-नांगल बांध, चम्बल बांध इत्यादि बड़े-छोटे बांध बांधे गये तथा अन्य जो बांधे जा रहे हैं वे निकट-भविष्य में कृषकों के लिए कामधेनु का कार्य करेंगी; परन्तु इतने बड़े विशाल देश में प्राकृतिक झरनों, तालाब वगैरा से भी काम लेना चाहिए।

सिंचाई दो प्रकार की होती है, प्राकृतिक और कृत्रिम। प्राकृतिक में वर्षा, बरफ, ओस इत्यादि की गणना है; कृत्रिम में जल, नदी, नाले, झरने, तालाब और कुओं से जल प्राप्त किया जाता है। शहर की मोरियों से भी सिंचाई के लिए पानी मिल जाता है।

प्राकृतिक सिंचाई कृषकों के बस में नहीं, परन्तु कुछ प्रयत्नों द्वारा उससे लाभ उठाया जा सकता है, जैसे वर्षा का जल भूमि में ठीक से रंज जाय, इसलिए खेतों को समय पर जोतकर रखना अथवा खेतों की मेंड़ों को ऐसे बांधकर रखना कि वर्षा का जल बाहर न जाने पावे जैसे धान की क्यारियों के लिए अथवा 'हवेली पृथा' से गेहूं के लिए पानी रोककर रखना। जहां बरफ पड़ती है वहां गेहूं को उससे काफी लाभ पहुंचता है। उसी भांति ओस से भी फसलों को लाभ पहुंचता ही है।

वर्षा के जल का आय-व्यय

आय तो प्रकृति द्वारा भिन्न-भिन्न स्थान में पृथक्-पृथक् मात्रा में होती है। व्यय चार प्रकार से होता है:

(१) जल-वाष्पन (Evaporation)—भाप बनकर उड़ना, (२) अपधाव (Run off)—भूमि पर से बह जाना। (३) रिसान (Percolation)—भूमि में गहरा चले जाना, (४) उत्स्वेदन (Transpiralation)—पत्तों द्वारा उड़ना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरे प्रकार का जल जो नदियों में जाता है उसे बांध द्वारा रोककर

काम में ला सकते हैं। तीसरी प्रकार का जल केशाकर्षण द्वारा आता है और नीचे से ऊपर आकर काम में आता है। ऐसा जल कुएं में जाकर सिंचाई का काम भी देता है। चौथे प्रकार का पौधों को लाभ पहुंचाकर ही बाहर जाता है।

सिंचाई के जल के गुण-दोष

जल के गुण-दोष उनमें घुले हुए पदार्थों पर निर्भर हैं। इस विचार से वर्षा का जल स्वच्छ होता है। ऊपर से गिरते समय वायुमंडल के धूल के कण या कुछ वायुमंडल की गैसें उसमें थोड़ी-बहुत मिल जाती हैं। अन्य जलों में घुले हुए लवण या आलम्बित (Suspended) पदार्थ रहते हैं। नदियों के जल में विशेषतः बरसात में आलम्बित पदार्थ विशेष रहते हैं। ऐसा जल एक ओर भूमि को उपजाऊ करने में लाभप्रद है, तो दूसरी ओर घास-पात के बीज अपने साथ लाकर खेतों में छोड़ देता है इसलिए कुछ अंश तक हानिकारक भी होता है। झरने तथा कुओं के जल में लवणों के घोल की मात्रा विशेष होती है और कभी-कभी इतनी अधिक हो जाती है कि भूमि और पौधों के लिए हानिप्रद हो जाती है।

जल के गुण-दोष के लिए निम्नलिखित बातें देखी जाती हैं :

(१) जल में लवणों की कुल मात्रा;

(२) लवणों में क्लोराइड की मात्रा;

(३) जल में टांकण (Born) की मात्रा;

(४) सोडियम और दूसरी भस्मों (Bases) की निष्पत्ति क्या है?[१]

पृष्ठ ८८ की सारिणी के छठे खाने को देखने से ज्ञात होगा कि यदि हम चूने की मात्रा बढ़ा सकें तो हानिकर्ता जल का सुधार कुछ अंश तक हो सकता है। इसके लिए कैलशियम सलफेट कुएं में डाला जाता है।

उपर्युक्त विवरण को ध्यान में रखा जाय तो सिंचाई के लिए सबसे उत्तम जल मीठे कुएं का होता है। ऐसे जल से घास-पात के बीज भी नहीं आते। तीसरा कारण यह है कि ऐसा जल ऊपर उठाया जाता है तो वह

---

[१] Miller and Turk 1926 Fundamentals of soil Science P. 868

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धीरे-धीरे बहता है जिससे भूमि में तरी अच्छी आ जाती है। नहर के जल से भूमि क्षारवाली इसलिए हो जाती है कि कृषक मनमाना जल देते हैं।

प्रति एक लाख भाग जल में हानिकर्ता लवणों की मात्रा

	कुल लवण	क्लोराइड	टांकण	सोडियम × १०० / कैलशियम + मैग्नेशियम + सोडियम
साधारणत: उत्तम जल	७.५ से कम	७.५ से कम	०.०५ भाग से कम	६० से कम
कुछ फसलों के लिए हानि नहीं करता[1]	७.५ से ३०	७.५-२४.५	०.०५-०.२	६० से ७०
हानिकारक जल	३० से अधिक	२४.५ से अधिक	०.२ से अधिक	७० से अधिक

अधिक जल देने से भूगर्भ जल की तह (Water level) ऊपर आ जाती है और जमीन ऊसर हो जाती है। सावधानी से जल दिया जाय तब ही ऊसर होने से बच सकती है।

जलप्राप्ति की युक्तियां और उपयोग की रीतियां

यदि जल-भंडार खेतों की सतह से ऊपरवाले स्थानों में हुए तो वहां से बहाकर नहरों द्वारा खेतों में सरलता से पहुंचाया जा सकता है। इसमें इतना ध्यान अवश्य रखें कि बहाव इतना तेज़ न हो कि भूमि के कण बहने लगें।

---

[1] कुछ फसलें ऐसी होती हैं जैसे तम्बाकू, बरसीम इत्यादि, जिन्हें लवण कुछ अंश तक हानि नहीं पहुंचा सकते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जहां जल-भंडार खेतों की सतह से नीचे होते हैं, वहां कृत्रिम युक्तियों द्वारा जल ऊपर उठाकर काम में लाना पड़ता है। इसके लिए मनुष्य, पशु, वायु, विद्युत, भाप या तेल की शक्ति को काम में लाना पड़ता है।

विभिन्न शक्तियों से चलाये जानेवाले यन्त्र :

मनुष्य-शक्ति	पशु-शक्ति	वायु	विद्युत	भाप या तेल
टोकरी डोन ढेंकुली चेन पम्प सकशन या फोर्स पम्प किफायत रहट	चेन पम्प सक्षन पम्प रहट मोट या चड़स	एग्ररो मोटर	बिजली से चलनेवाले पम्प	भाप या तेल से चलनेवाले पम्प

टोकरी—सात-ग्राठ फुट गहरा पानी हो तो इस यन्त्र से उठा सकते हैं। दो मनुष्य ग्रामने-सामने ऊंची जमीन पर खड़े होकर एक सूपाकार टोकरी द्वारा (जिसमें रस्सियां बंधी रहती हैं) पानी बाहर फेंकते हैं। वह नाली में बहकर खेतों में चला जाता है। प्रति-मिनट करीब २० टोकरी पानी फेंका जा सकता है ग्रौर प्रत्येक टोकरी में लगभग २० सेर पानी ग्राता है।

डोन—पांच-छः फुट की गहराई तक का पानी इससे उठा सकते हैं ग्रौर एक घंटे में लगभग डेढ़ सौ मन पानी बाहर फेंक सकते हैं। यह नाव के जैसा एक वरतन होता है जिसका एक तरफ का मुंह पानी के बहाव के लिए खुला रहता है। बन्द मुंह की तरफ एक रस्सी रहती है जो एक बांस या बल्ली के मुंह से बंधी रहती है। इस बल्ली के बीच में एक ग्रोर छेद रहता है ग्रौर कील पर इस छेद के स्थान पर बल्ली घूमती है। एक व्यक्ति डोन की रस्सी पकड़कर उसे पानी में डुबो देता है ग्रौर फिर छोड़ देता है। बल्ली के दूसरे छोरवाले वजन से डोन ऊपर उठकर खुले मुंह की तरफ से नाली में फेंक देती है। डोन का मुंह दो खूंटियों से ढीली रस्सी से बंधा रहता है ताकि वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसी स्थान पर बना रहे।

ढेंकुली—इससे पन्द्रह फुट तक की गहराई का पानी उठाया जा सकता है और एक घंटे में पचास-साठ मन पानी उठा सकते हैं। इसमें नोकीली पेंदी का एक बर्तन रहता है जिससे ऊपर थाले पर रखते ही वह लुढ़ककर अपना पानी खाली कर देता है। इसे भी डोन-जैसी बल्ली से चलाते हैं।

चेन पम्प—आठ-दस फुट की गहराई से लगभग १५० मन पानी प्रति घंटा इसके द्वारा उठाया जा सकता है। इसमें एक नल लगभग ३ इंच व्यास का लगा रहता है। वह इतना लम्बा होता है कि उसका एक मुंह पानी में डूबा रहता है। दूसरा मुंह एक लकड़ी के चौखटे में खुलता है। नल में एक जंजीर रहती है वह चेन पर घूमती है। जंजीर में जगह-जगह कुछ लकड़ी के टुकड़े लगाये जाते हैं, जिनपर चमड़े के टुकड़े लगे हुए होते हैं। ये पानी को ऊपर लाते हैं और पीछे गिरने से उसे रोकते हैं। यह जंजीर चक्के पर घूमती हुई पानी में होकर आती है तो अपने साथ पानी लाकर चौखटे में फेंकती है जहां से वहकर वह खेतों चला जाता है।

सक्शन या फोर्स पम्प—पच्चीस-तीस फुट की गहराई से पानी उठाने के लिए पम्प अच्छे काम के हैं। इनमें मनुष्य पम्प के दस्ते को चलाया करता है जिससे पानी ऊपर उठ आता है। ऐसे पम्प कई प्रकार के होते हैं और नये बनते रहते हैं; इसलिए इनकी कार्य-क्षमता पम्प-विक्रेताओं से जानी जा सकती है।

किफायत रहट—यह यन्त्र किर्लोस्कर-बन्धु से प्राप्त किया जा सकता है। चालीस फुट की गहराई से एक घंटे में एक सौ मन पानी बाहर फेंका जा सकता है। छोटे बगीचों के लिए अच्छा उपयोगी यन्त्र है। इसमें सवा सेर जल समाये, ऐसी कई बाल्टियां लगी रहती हैं।

पशु-शक्ति से चलाये जानेवाले यन्त्र

चेन पम्प, सकशन या फोर्स पम्प और रहट मनुष्य-शक्ति से चलाये जानेवाले यन्त्र-जैसे ही होते हैं, परन्तु बड़े होते हैं, इसलिए पशु-शक्ति काम में लाई जाती है। रहट से तीस फुट तक का पानी उठाया जा सकता है।

मोट या चड़स—इससे २० फुट से लेकर ८० फुट तक की गहराई का पानी उठा सकते हैं। ये चमड़े के बने होते हैं; लेकिन कहीं-कहीं लोहे के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चद्दर के भी काम में लाये जाते हैं। चमड़े के मोट दो प्रकार के होते हैं: एक

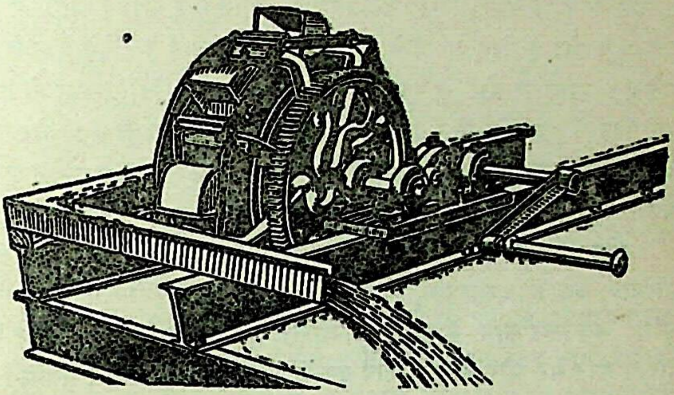

चित्र नं० १८

सूंडवाले, दूसरे बिना सूंड के। सूंडवाले में पानी आप-ही-आप निकलकर

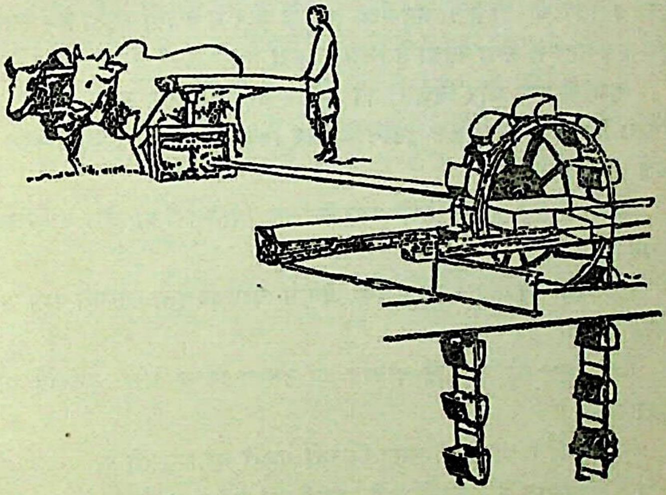

चित्र नं० १९

थाले पर गिर जाता है। बिना सूंडवाले को खाली करना पड़ता है। इसमें एक मनुष्य अधिक लगता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साधारण मोट में लगभग चार मन पानी आ जाता है, जिसमें से कुछ तो मोट के ऊपर आने तक हिलने-डुलने से वापस कुएं में गिर जाता है। कहीं-कहीं मोट के लिए दो जोड़ी बैल काम में लाये जाते हैं। ऐसे मोट बड़े होते हैं। साधारण मोट से पचीस-तीस फुट तक का पानी उठाना हो तो एक दिन में आधे से पौन एकड़ तक की सिंचाई हो सकती है। मोट के आकार, बैलों की चाल तथा जल की गहराई से पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं कि उन्हें कितना पानी मिल सकेगा।

मोट की देखभाल—जब मोट से काम लेना कुछ दिनों के लिए बन्द हो जाय, जैसेकि बरसात में, तो उसपर तेल लगाकर रखना चाहिए। उसी भांति जब फिर काम में लाना हो, तो तेल लगाना चाहिए। नये मोट में करीब चार सेर और काम में लाये हुए में दो सेर के लगभग तेल लगेगा।

वायु द्वारा चलनेवाले यन्त्र को 'एअरो-मोटर' कहते हैं। इसमें एक पंखा जमीन से पन्द्रह-बीस फुट ऊंचा लोहे के ढांचे में लगा रहता है। जब हवा बराबर चलती है तो यह पंखा हवा के जोर से चलता रहता है। इसका एक छड़ पम्प से लगा रहता है जिसके द्वारा पानी ऊपर उठता रहता है।

कुओं में पम्प और बिजली की मोटर लगाने से जल ऊपर उठाया जा सकता है। नलकूपों से जल उठाने के लिए बिजली की शक्ति बहुत काम में लाई जाती है।

भाप या तेल की शक्ति से पम्प के लिए 'बॉयलर' या 'तेल के एंजिन' लगाने पड़ते हैं।

निम्नलिखित ब्यौरे की सूचना देने से पम्प-विक्रेता उचित पम्प की सलाह दे सकते हैं :

(१) कुएं की लम्बाई-चौड़ाई या उसका व्यास और गहराई का ब्यौरा।

(२) गर्मी में पानी की सतह कितनी गहरी चली जाती है,

(३) बरसात में पानी कितनी ऊंचाई तक आ जाता है,

(४) कुएं से पानी कितना ऊपर फेंकना होगा,

(५) पम्प में मोड़ कितने होंगे,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) यदि एंजिन हो और पम्प लगाना हो तो एंजिन की शक्ति-संचा-

लक पहिये का व्यास और प्रति मिनिट वह कितने चक्कर लगाता है इसका ब्यौरा देना चाहिए। यदि पम्प ऐसे पहिये से चलनेवाला न मिले तो शक्ति-संचालक पहिये का व्यास घटाना-बढ़ाना होगा।

(७) प्रति मिनिट पानी कितना चाहिए ?

(८) सिंचाई के मौसम में कुएं में पानी कितना रहता है ?

पम्प का चुनाव साधारणत: दो बातों पर निर्भर है : जल-भंडार और सिंचाई की भूमि। कभी-कभी कुओं में जल काफी मात्रा में नहीं होता और बड़ा पम्प लगाना निरर्थक हो जाता है। उसके विपरीत पानी पूरा हो और भूमि कम हो, तो बड़ा पम्प लगाना वृथा होगा।

यहां पर गणना के लिए हम मान लेते हैं कि जल हमारे पास काफी मात्रा में है और भूमि ५० एकड़ है। यदि प्रति दसवें दिन पानी देने की आवश्यकता पड़े और ५ एकड़ पर नित्य पानी दिया जाय तो गणना निम्न-लिखित होगी :

एक एकड़ पर एक इंच पानी १०० टन होता है तो ५ एकड़ पर ५०० टन हुआ। पम्प से जो पानी निकलता है उसकी गणना गैलन में होती है और एक गैलन = ५ सेर का होता है। एक दिन में ५०० टन अर्थात् ११२००० गैलन पानी हुआ। मान लिया जाय कि हमारा पम्प अवकाश[1] का समय काट देने के बाद १० घंटा काम करता है तो प्रति-घंटा ११२०० गैलन पानी दे, ऐसा पम्प चाहिए।

कुछ आवश्यक बातें

(१) पम्प लगाते समय वह इतना गहरा होना चाहिए कि पानी घटने पर उसका मुंह पानी के बाहर न निकल आवे। लगभग १५ फुट पानी में रहना चाहिए।

(२) कितना पानी फेंकने के लिए नल का व्यास[2] कितना होना चाहिए,

---

[1] तेल के एंजिन को दो-तीन घण्टे चलने के बाद पन्द्रह मिनिट का अवकाश अवश्य देना चाहिए।

[2] Brown H. B. and Hutchinson S. S. Vegetable Science 1919 P. 130.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह निम्नलिखित सारणी से ज्ञात होगा :

गैलन पानी प्रति-मिनिट	नल का व्यास
३-४	०.७५ ,,
४-७	१.०० ,,
८-१४	१.२५ ,,
१४-२२	१.५० ,,
२३-३८	२.०० ,,
३६-६५	२.५० ,,
६६-११०	३.०० ,,
११०-१७७	३.५० ,,
१७७-२३०	४.०० ,,
२३० से ४२०	५.०० ,,
४२० से ७२०	६.०० ,,
७२० से १०००	७.०० ,,

(३) पम्प और एंजिन के बीच की दूरी १० फुट अवश्य होनी चाहिए।

(४) कैसे पम्प के लिए कितनी शक्ति (हार्स-पावर) वाला एंजिन चाहिए, उसकी गणना का सूत्र यह है :

$$\frac{\text{गैलन जल प्रति-मिनिट} \times \text{१० पौं.}^{1} \times \text{ऊंचाई फुटों में}}{\text{३३००}} \times \frac{\text{१००}}{\text{कार्यक्षमता}}$$

ऊंचाई—पानी की सतह से ऊपर के मुंह तक। इसमें दो बातों का विचार रखना चाहिए : एक तो यह कि जो पानी ऊपर चढ़ता है, उसपर पानी का दबाव पड़ता है; और दूसरा पम्प के साथ, जो पानी चढ़ता है तो उसके साथ रगड़ खाने में कुछ शक्ति घटती है।

कार्यक्षमता—एंजिन द्वारा जितनी शक्ति उत्पन्न हो सकती है, वह सब उपयोगी नहीं होती। सिर्फ ४०-५० शतांश तक काम में आती है। शेष एंजिन के चलने की रुकावटों को पार करने में नष्ट हो जाती है।

उदाहरण—मान लो, हमें दो इंच व्यास के पम्प द्वारा प्रति-मिनिट ६० गैलन पानी ऊपर फेंकना है और ऊंचाई ५० फुट है :

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[1] १ गै० = १० पौं० = ४.५४६ लीटर

$$\text{अश्वशक्ति एंजिन} = \frac{६० \times १० \times ५०}{३३००} \times \frac{१००}{४०} = २.५$$

अर्थात् हमें २.५ हार्स-पावर का एंजिन चाहिए।

आजकल खेती के काम में डीजल तेल का प्रयोग होता है। ऐसे तेल से चलनेवाले एंजिन ३ अश्वशक्ति से कम के नहीं मिलते। साधारणत: पांच-छः अश्वशक्ति के मिल जाते हैं। ऐसे एंजिन खरीदे जायं तो उनसे दूसरा भी काम लेना चाहिए।

खेती के लिए पम्पों में 'सेंट्रीफ्युगल' पम्प अच्छे होते हैं। ऐसे पम्पों में पंखे द्वारा रिक्त स्थान कर दिया जाता है, जिससे पानी कुएं में से ऊपर चढ़ता है। इन पंखों की चाल २००० से ३००० चक्कर प्रति-मिनिट होनी चाहिए। इनके द्वारा २० फुट तक की गहराई का पानी बाहरी हवा के दवाव के कारण ऊपर उठता है इससे अधिक गहराई का पानी नहीं उठता। यही कारण है कि जहां कहीं 'सेंट्रीफ्युगल' पम्प लगाये जाते हैं, कुओं के अन्दर पानी की सतह से कुछ ऊपर लगाते हैं ताकि पम्प से पानी की सतह २० फुट से कम न हो। सर्दी और गर्मी के दिनों में पानी की सतह में २० फुट से अधिक अन्तर नहीं होना चाहिए। ऐसी स्थिति में सर्दी के दिनों में जो पम्प पानी की सतह पर काम करता है उसी स्थान से गर्मी में भी पानी उठा सकेगा। जहां पानी पम्प के स्थान से ऊपर उठाने का प्रश्न है वहां वह एक सौ फुट तक चढ़ाया जा सकता है; इसलिए जो कुएं बहुत गहरे होते हैं उनमें बिजली की मोटर लगाते हैं, क्योंकि तेल के एंजिन कुएं के अन्दर नहीं लगा सकते। उन्हें हमेशा जमीन की सतह पर ही लगाना चाहिए।

जहां पानी बहुत गहराई से उठाना होता है उसके लिए 'टर्बाइन' पम्प काम में आते हैं। ये बड़े लम्बे लोहे के छड़ (Shaft) से चलाये जाते हैं और ये छड़ जमीन पर लगे हुए एंजिन या बिजली की मोटर से चलते हैं।

पम्प के अंग—जो मुंह जल के अन्दर रहता है उसपर एक जाली रहती है ताकि कोई मोटी वस्तु पानी के साथ खिचकर पम्प में न घुस जाय और पम्प को बन्द कर दे। इसके बाद एक पाद-कपाट (Foot valve) होता है, जो पानी को अन्दर तो आने देता है, लेकिन उसे फिर से कुएं में नहीं जाने देता। मिट्टी के तेल के पीपे में से तेल निकालने के लिए घरों में जो यन्त्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होता है उसमें भी पाद-कपाट होते हैं। उन्हें देखने से यह ज्ञात हो जायगा कि उसमें कहीं से हवा न जाय। नहीं तो पानी ऊपर नहीं उठेगा।

पंखे घुमानेवाला पहिया—यह पहिया एंजिन के शक्ति-संचालक पहिये से घुमाया जाता है! इसलिए इन दोनों के व्यास में एक अनुपात होता है ताकि पहिये विशिष्ट गति से चलें। पम्प का पहिया बहुधा स्थायी होता है। एंजिन का पहिया ही बदला जा सकता है जिसकी गणना निम्न-लिखित सूत्र से की जा सकती है :

$$\frac{\text{पम्प के पंखों की गति} \times \text{पम्प के पहियों का व्यास इंच में}}{\text{एंजिन के पहिये के फेरे}} = \text{एंजिन के पहिये का व्यास}$$

एंजिन के पहिये से पम्प के पहिये में शक्ति का संचालन पट्टे द्वारा होता है। यदि पम्प और एंजिन ऐसी दशा में स्थापित हों कि पम्प के घूमने की दशा उलटी पड़े तो पट्टे में मोड़ डाल देते हैं।

पम्प से नीचे पानी उठाने का जो नल रहता है उसका व्यास, ऊपर को पानी फेंकनेवाले नल से अधिक रहता है।

नलों में जितने मोड़ कम होंगे, उतना ही पानी अधिक फेंका जायगा।

मोट, रहट और पम्प की तुलनात्मक उपयोगिता

	८ घंटे दिन में पानी प्राप्त	सिंचाई[1]	दिन में कितना क्षेत्रफल सींचा जा सकता है
मोट	६००० गैलन	०.२५	२-३ एकड़
रहट	१५००० ,,	०.५	५-६
पम्प २"	२४००० ,,	०.७५	८-१०

(३ अश्वबल शक्तिवाले एंजिन से चलाया गया)

	मूल्य	लगाने का खर्च	खर्चा: रोजाना खर्च रु०	न०पैसे	खर्चा: प्रति एकड़ रु०	न०पैसे
मोट	५० रु०	१० रु०	५	५०	२२	००
रहट	६५० रु०	२०० रु०	१०	००	१५	००
पम्प	४००० रु०	५०० रु०	८	५०	१५	५०

[1] Bull. N. 42, 1953. Issued by M. P. Govt. The village level worker's Guide and Calender.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त गणना तीस फुट गहरे पानी के आधार पर है। कृषक अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार कुएं में पानी की आय के अनुसार यन्त्र चुन सकते हैं। ऐसा न हो कि उत्साह में आकर पम्प लगाये और कुएं में पानी उसके चलाने इतना न हो तो पूंजी बेकार लगी रहे।

सिंचाई की रीति—पानी की प्राप्ति के बाद उसके उपयोग की रीति जानना आवश्यक है, क्योंकि इस कार्य में असावधानी से भूमि बिगड़ जाती है। लाखों एकड़ भूमि इसीसे नहरी सिंचाईवाले क्षेत्रों में ऊसर बन गई है। पानी आवश्यकतानुसार ही काम में लाना चाहिए। बहुत अधिक पानी देने से लवण घुलकर ऊपर आ जाते हैं। सिंचाई के पानी का खेतों में बहाव भी ऐसा होना चाहिए कि भूमिकण बहने न पावें।

सिंचाई साधारणतः निम्नलिखित रीति से की जाती है :

(१) ऊपर से जल का छिड़काव,

(२) क्यारियों में जल भरना,

(३) नालियों में जल भरना,

(४) मिट्टी में दबाकर झिरझिरे नलों द्वारा।

(१) ऊपर से जल-छिड़काव की रीति हमारे यहां अभी सिर्फ हजारे द्वारा बगीचों में काम आती है। कुछ देशों में विशेषतः अमरीका में खेतों में पांच-छः फुट की ऊंचाई पर बड़े-बड़े नल लगाये जाते हैं। इन नलों में महीन छिद्र होते हैं जिनके द्वारा जल फव्वारे की भांति महीन धाराओं में उड़ता रहता है। ये नल इतनी दूरीपर लगाये जाते हैं कि उनसे उड़नेवाली धाराओं से दोनों ओर के नलों के बीच की भूमि का सींचन भली-भांति हो जाता है। चूंकि जल वातावरण से होकर भूमि पर गिरता है इससे कुछ भाप के रूप में बनकर उड़ जाता है। परन्तु लाभ यह होता है कि पौधे धुल जाते हैं जिससे उनमें रासायनिक क्रियाएं अच्छी होती हैं और बाढ़ भी अच्छी होती है। तुलनात्मक दृष्टि से वातावरण में जो ठंडक आ जाती है उससे भी पौधों को लाभ पहुंचता है। इस रीति में विशेष लाभ यह होता है कि यदि खेतों की मिट्टी ऊंची-नीची हुई तो उसमें सिंचाई अच्छी हो जाती है।

(२) क्यारियों में जल भरना—इस रीति में छोटी-छोटी नालियों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा क्यारियों में जल भर दिया जाता है। क्यारियां जमीन के ढाल के अनुसार लम्बी-चौड़ी बनाई जा सकती हैं।

(३) नालियों में जल भरना—इस रीति से सिंचाई वहां उत्तम होगी जहां की भूमि में ढाल विशेष हो। नालियां ढाल से समकोण बनाती हुई बनाई जाती हैं और उनमें पानी भर दिया जाता है। साग-भाजी की खेती में बहुधा ऐसा करते हैं कि पानी की नाली के दोनों ओर तरकारियां लगा दी जाती हैं और नालियां पानी से भर दी जाती हैं। फलों के पेड़ों में भी, जहां पेड़ कम ऊंचाई के होते हैं, नालियां भर दी जाती हैं जिससे दोनों ओर के पेड़ पानी लेते रहते हैं। फलों के बगीचों में बड़े पेड़ों के धड़ के आसपास गमले (क्यारियां) बनाकर उनमें पानी भर देते हैं। ऐसा करने की अपेक्षा कुछ दूरी पर गोल-गोल नालियां बनाना उत्तम होता है, क्योंकि ऐसा करने से पानी जड़ों के निकट पहुंचता है। जहां दीमक का भय अधिक हो वहां पौधों के पास पानी भरना उत्तम होगा, ताकि दीमक दूर हट जाय, वरना पेड़ों के धड़ के पासवाली सूखी मिट्टी की तरफ आकर पेड़ों को हानि पहुंचायेगी।

(४) भूमि के अन्दर झिरझिरे नल लगाकर सींचना—इसमें प्रारम्भिक खर्चा तो विशेष होता है; परन्तु जहां जल की कमी हो वहां लाभप्रद होगी। नल भूमि में रहने से उनके आसपास की भूमि में तरी बनी रहती है।

जल की मात्रा—पानी कब और कितना देना—यह भूमि की जाति, वायुमंडल की तरी तथा फसल की जाति पर निर्भर है; वैसे फसलें अपनी मांग आप दरसा देती हैं।

साधारणतः यह कहा जा सकता है कि जिस भूमि में खाद दिया जाता है उसमें पानी विशेष देना चाहिए।

जल-उपज अनुपात—(Transpiration Ratio)—फसलों की तैयारी में कुल कितना जल उनके पत्तों द्वारा उड़ जाता है, इसकी परीक्षा भारत में लेदर महोदय[१] ने की थी। यह अनुपात पृष्ठ ९९ पर है। ज्यों-ज्यों

---

[१] Leather J. W. Mem. Dept Agri. Vol. I, No 8, P. 182.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपज बढ़ती जाती है यह अनुपात कम होता जाता है। एक भाग उपज के लिए कितने भाग जल चाहिए, यह यहां दिखलाया है।

निम्नलिखित अंकों में अन्न और भूसा मिले हुए हैं:

	उपज लगभग १२ मन[1]	उपज लगभग ४८.५ मन[2]	
चना	१४००	११००	
अरहर	११००	७२०	
अलसी	१०००	१०००	९०५
जई	८७०	६३०	५९७
गेहूं	८५०	६२५	५१३
मटर	८३०	६००	
सरसों	७४०	६५०	
जौ	६८०	५३०	४३४
मक्का	४५०	३६०	३६८
जुवार	४००	४००	३२२
कोदों	३००	३००	
रागी	२५०	२५०	
कपास			६४८
धान			७१०
अलफालफा			८३१

सिंचाई-सम्बन्धी कुछ परिभाषाएं

'ड्यूटी आफ वाटर' यह उस क्षेत्रफल की एकड़ में गणना है, जिसकी सिंचाई दी हुई जल-राशि के विशेष नाप के बहाव से हो सकती है। यह बहाव एक सेकण्ड में एक घनफुट का होता है।

---

[1] मन = ३७. ३२४ किलोग्राम

[2] काक्स और कोकसन १९४८ (Crop Management and Soil Conservation) पृ० १३४। चौथे कालम के अंक अमरीका के हैं। यहां पर तुलना के लिए दिये गए हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पानी का नाप—पानी के बहाव में डूबे हुए छिद्र-मार्ग द्वारा जो पानी बहता है उसकी गणना 'क्यूसेक' अर्थात् घनफुट प्रति सेकण्ड में गिनी जाती है और उसे निम्नलिखित सूत्र से निकालते है:

क्यू=ऐ.×वी.—ए×५√एच Q=A×V—A5√H

क्यू=क्यूसेक (घनफुट जल) क्यूसेक।

ए=छिद्र-मार्ग का क्षेत्रफल वर्गफुट में।

एच=छिद्र के बीचोंबीच से ऊपर के जल तक की सतह।

वी=बहाव का औसत दर प्रति-सेकण्ड।

कभी-कभी छिद्र द्वारा पानी न बहाकर तख्ते के ऊपर से बहाया जाता है। उस स्थिति में गणना निम्नलिखित सूत्र से की जाती है:

क्यू=एच×एल×वी।

क्यू=प्रति-सेकण्ड घनफुट में बहाव।

एच=तख्ते के ऊपर के पानी की मोटाई फुट में।

एल=तख्ते की लम्बाई फुट में।

वी=औसत बहाव।

पानी का औसत बहाव—यह सतह के बहाव का $\frac{४}{५}$ होता है और सतह का बहाव सतह पर तैरते हुए पदार्थ से जाना जा सकता है। एक निर्धारित दूरी तक वह पदार्थ बहने दिया जाता है और फिर समय में सेकण्ड का भाग देने से प्रति-सेकण्ड का हिसाब निकल आता है।

कच्ची नहर या नाली में पानी का बहाव एक फुट प्रति-सेकण्ड से अधिक और तीन फुट से कम होना चाहिए। यदि एक फुट से कम होगा तो मिट्टी नीचे बैठने लगती है और यदि तीन फुट से अधिक होगा तो मिट्टी तह पर बहने लगेगी।

सकशन पम्प द्वारा उठाये जानेवाले पानी की गणना—$\frac{२२}{७}$×बेरेल का अर्ध व्यास[1] फुट में×स्ट्रोक की लम्बाई फुट में×संख्या स्ट्रोक प्रति-

[1] पांच अश्व-बल की मोटर ४ इंच घास का सकशन पम्प और ३ इंच का डिलिवरी पम्प १५ फुट से जल उठाने के लिए अच्छे होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आगत क्रमांक......................................
दिनांक..

सेकण्ड = घनफुट जल प्रति-सेकण्ड। इसे ६.२५ से गणा करने से गैलन निकल आवेंगे।

बिजली से चलनेवाले यंत्र में एक मोटर रखनी पड़ती है। मोटर आवश्यकतानुसार अश्वशक्ति की खरीदी जा सकती है।

बिजली से चलनेवाले पम्प में यह लाभ है कि जब चाहे स्विच दबाया और चल पड़ा, और चाहे जितने घंटे चला सकते हैं। खर्च भी इसमें कम पड़ता है। जहां १० अ० ब० की मोटर काम देती है वहां १५ अ० ब० का एंजिन रखना होता है।

१८. फसल के शत्रु और उनसे बचाव के उपाय

फसल के शत्रु निम्नलिखित हैं :

(१) आवश्यकता से अधिक पौधे,
(२) घासपात,
(३) घातक पौधे—अमरलता, बांझी, अगिया ठोकरा आदि,
(४) मनुष्य,
(५) पालतू और जंगली पशु,
(६) पक्षी,
(७) कीट,
(८) सूक्ष्म जन्तुओं-द्वारा होनेवाली व्याधियां

पहले और दूसरे का वर्णन निंदाई के स्तम्भ में दिया गया है।

घातक पौधे—अमरलता, बांझी, अगिया, ठोकरा इत्यादि पौधे पौधों या पेड़ों पर अपना निर्वाह कर, उन्हें निर्बल कर देते हैं और मार भी देते हैं। अमरलता, जिसकी बेल पीली होती है, बहुधा पेड़ों पर पाई जाती है। कभी-कभी फसलों पर भी आ जाती है। यह एक विशेष अंग द्वारा पौधे के अंगों का रस चूसती है। बांझी नाम का लाल फूल का पौधा बहुधा आम के पेड़ों पर हो जाता है और उनसे रस चूस लेता है। अगिया जुवार के खेतों में जुवार की जड़ से रस चूस लेता है। यह छोटा-सा पौधा सफेद फूल का होता है। जब पानी की कमी होती है तो जुवार के पौधे वैसे ही कम-जोर हो जाते हैं और जब अगिया लग जाता है तो जुवार की बालें (भुट्टे)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही नहीं निकल पातीं। खेत-के-खेत बरबाद हो जाते हैं। ठोकरा अधिकतर तम्बाकू के खेत में पाया जाता है और तम्बाकू की जड़ से अपना पोषण कर तम्बाकू को काफी हानि पहुंचाता है।

इनमें से पहले दो से बचाने का यही उपाय है कि जिन टहनियों पर ये दिखाई दें, उन्हें काटकर जला दें। अगिया को नींदकर निकाल सकते हैं अथवा 'फ्लेम थ्रोअर'[1] से जला सकते हैं। झाल ऐसे फेंकनी चाहिए कि जिससे जुवार के पौधों को हानि नहीं पहुंचे। ठोकरे को निकालते ही नष्ट कर देना चाहिए। बिहार में इसे भैंसों को खिला देते हैं।

(४) **मनुष्य**—सभी स्थानों में कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं, जिनकी आदत ऐसी पड़ जाती है कि चलते-चलते खेतों में से बाल, सब्जी या फल तोड़ लेते हैं। ऐसे लोगों से बचाने के लिए कांटेदार घेरा या रखवाला ही काम दे सकता है।

(५) **पालतू और जंगली पशु**—पालतू पशुओं में गाय, बैल, भैंस, बकरी, घोड़े, गधे इत्यादि शाकाहारी पशु अवसर पाते ही खेतों में घुस पड़ते हैं। सो उनसे बचाने के लिए घेरा या रखवाला ही उपयोगी हो सकता है। जंगली पशुओं में बन्दर, सूअर, स्याही, नीलगाय, हिरन, हाथी आदि जानवर भी काफी हानि पहुंचाते हैं। विशेषतः रक्षित जंगलों के आसपास के खेतों में तो इनसे फसलों को बचाना बड़ा कठिन हो जाता है।

इनसे बचाने के लिए कुत्ते, बन्दूक की आवाज या कांटेदार तार के घेरे अच्छे होते हैं। बन्दरों से बचाने के लिए कुत्ते तथा बन्दूक की आवाज या गुलेल काम दे सकती है। जंगली पशु आग से भी डरते हैं, सो रात को खेतों के आसपास आग जलाना भी लाभप्रद होगा। कभी-कभी मनुष्य अथवा मांसाहारी पशुओं की नकली आकृतियां भी अच्छा काम देती हैं। लकड़ी गाड़कर उसपर चूने से सफेद की हुई हंडिया लगा देनी चाहिए। हंडियों पर आंख, मूंछ, नाक इत्यादि काले रंग से बना देने चाहिए। हंडिया के नीचे

---

[1] फ्लेम थ्रोअर—स्टोव जैसे लैम्प डंडों पर लगे हुए होते हैं। ये जलाये जायं तो आग की झाल फेंकते हैं, जिससे अगिये के पौधे जलाये जा सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समकोण बनाती हुई लकड़ी बांधकर उसमें फटे-पुराने कपड़े पहना दिये जायं तो काम चल जाता है।

चूहे—ये जब खेतों में लग जाते हैं तो पौधों को काटकर नीचे गिरा देते हैं। दाना खा जाते हैं। नारियल-जैसे पेड़ पर चढ़कर हरे नारियल काटकर नीचे गिरा देते हैं। गन्ने के खेतों में भी काफी हानि पहुंचाते हैं। इनकी वंश-वृद्धि भी बहुत होती है। एक जोड़े की औलाद एक साल में ८०० तक हो जाती है। इन्हें विष से ही मार सकते हैं, जिसके लिए चने की चूरी, कुछ सब्जी तथा ज़िक फासफाइड का मिश्रण काम में लाते हैं। चूहे खेतों में ही नहीं; गोदामों में भी बहुत हानि पहुंचाते हैं। गोदाम ऐसे होने चाहिए, जिनमें चूहे न पहुंच पायं।

एक भाग औषधि (ज़िक फासफाइड) को बीस भाग चूनी (चने का चूरा या किसी अनाज का चूरा) में मिलाकर उसमें एक भाग तिल या सरसों का तेल मिला देना चाहिए। इस मिश्रण को चूहों के बिल में अथवा उनके आने-जाने की जगह पर रखने से चूहे खाकर मर जाते हैं। स्मरण रहे, यह औषध विष है, इसलिए सावधानी से काम में लानी चाहिए।

(६) पक्षी—इनमें नीलकंठ-जैसे कीटभक्षी पक्षी तो फसलों को कीट से बचाने में उपयोगी होते हैं; परन्तु अधिकांश पक्षी बादल, सुग्गा, मैना और अन्य छोटी-छोटी चिड़ियां फसलों को बहुत हानि पहुंचाती हैं। बादल और सुग्गा तो फलों के पक्के दुश्मन होते हैं। मैना मटर की फलियों में से दाना निकालकर खा जाती है। चिड़ियां दाना पकने के साथ गेहूं-ज्वार आदि को बहुत खाती हैं। इन सबसे बचाने के लिए टीन की आवाज, गुलेल, रखवाले इत्यादि द्वारा काम में लाना ही उत्तम है। एक अमरीकन महोदय लिखते हैं कि फल पकने लगे, उस समय बिल्ली को पींजड़े में बन्द करके टांग दें तो उससे भी पक्षी डर जाते हैं।

(७) कीट—कीट कई जाति के होते हैं, जिनमें से टिड्डे की जाति के कीट जब खेतों में उतर जाते हैं तो एकदम सफाया कर देते हैं।

कहावत है कि 'चिकित्सा से व्याधि का आगमन रोकना अत्युत्तम है।' इस कथन के अनुसार निम्नलिखित नियमों की ओर ध्यान रखा जाय तो कीट तथा व्याधियों से बहुत अंश तक बचाव हो सकता है:

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(१) जुताई—जुताई ऐसी होनी चाहिए कि जिससे भूमि में रहनेवाले कीट और अण्डे ऊपर आ जायं और वे धूप से मर जायं या कीटभक्षी पक्षी उन्हें खा जायं।

(२) कीट और व्याधि-रहित बीज बोने चाहिए। कीट-रहित बीज तो आसानी से पहचाने जा सकते हैं; परन्तु व्याधि-रहित हैं या नहीं, यह पहचानना थोड़ा कठिन है। इसलिए कुछ उपचार, जिनका वर्णन आगे दिया है, करके ही बोना चाहिए।

(३) भूमि को कीट या जन्तु-रहित करना—बहुमूल्य बीज जब नर्सरी में बोये जाते हैं और यदि वहां पौधे व्याधि-ग्रस्त हो जायं तो फसल के लिए रोप प्राप्त करना असम्भव हो जाता है। इसके लिए नर्सरी की भूमि पर बड़ी कढ़ाई उलटकर उसके नीचे भाप छोड़नी चाहिए। दो घंटे तक इस रीति से जो भूमि गरम की जाती है वह बहुत अंश तक व्याधिकर्ता जन्तुओं से रहित हो जाती है।

(४) फसलों का हेर-फेर—लगातार प्रतिवर्ष एक ही प्रकार की फसल बोने से उसको हानि पहुंचानेवाले कीट बढ़ते जाते हैं। उनकी बाढ़ रोकने के लिए फसल का हेर-फेर आवश्यक है।

(५) कूड़ा-कर्कट—खेतों के आसपास कूड़ा-कर्कट और फसलों के डंठल नहीं होने चाहिए।

(६) घास-पात—छोटी क्यारियों के आसपास या नर्सरी के आस-पास घासपात नहीं होना चाहिए, क्योंकि इनमें कीट घुसे रहते हैं।

(७) घातक कीट का संरक्षण—कुछ कीट ऐसे होते हैं, जो दूसरे कीटों को खाते हैं। ऐसे कीट की रक्षा करनी चाहिए।

(८) कीटभक्षक पक्षी—कीट-भक्षक पक्षियों की भी रक्षा करनी चाहिए।

(९) नर्सरी में रक्षा—छोटी नर्सरी में मलमल की या तार की जाली लगाकर भी रक्षा कर सकते हैं। यदि नर्सरी बड़ी हो तो उसके पौधों पर राख में थोड़ा-सा मिट्टी का तेल मिलाकर छिड़कना चाहिए।

(१०) रोशनी पर आकर्षित करना—खेतों में किसी चौड़े बर्तन में पानी डालकर उसपर थोड़ा मिट्टी का तेल डाल दिया जाय और उस बर्तन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर रोशनी रखी जाय तो बहुत-से पतंग आकर बर्तन में गिर जाते हैं और तेल से मर जाते हैं। खेतों के आसपास रात को आग जलाई जाय तो उसपर भी कई कीट आकर मर जाते हैं।

कीट की संक्षिप्त जीवन-प्रणाली

किसी प्राणी की जीवन-प्रणाली का ज्ञान हो, तो उससे मुक्ति पाना सरल होता है। इस जानकारी से किस समय और किस प्रकार के विष का प्रयोग होना चाहिए, इसका ज्ञान हो जाता है।

कीट सब अंडज अर्थात् अंडे से उत्पन्न होते हैं।

खाने की प्रणाली के अनुसार कीट दो प्रकार के होते हैं—एक काटकर खानेवाले, दूसरे रस चूसनेवाले। कुछ कीट ऐसे भी होते हैं, जिनके बाल-कीट काटकर खाते हैं और तरुण-कीट रस चूसते हैं। तितली-वर्ग के कीट इसी जाति के होते हैं।

रूपांतर के विचार से भी कीट दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं: एक वे, जिनके बालकीट का रूप तरुण-कीट के रूप से भिन्न होता है और दूसरे वे जिनमें रूप नहीं बदलता, आकार बढ़ता है और पर आते हैं।

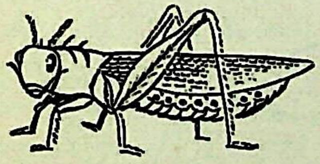

चित्र नं० २०

हानिकर्ता कीट के मुख्य वर्ग—

(१) टिड्डे की जातिवाले कीट—Grass-hopper, Cricket, Locust टिड्डे, झिंगुर, टिड्डी इस वर्ग के कीट बाल्य-अवस्था से तरुण-अवस्था तक पौधों के हरे अंगों को खाते हैं। इनके अंडे भूमि में दिये जाते हैं, जिन्हें जुताई से नष्ट कर सकते हैं। बाल्यावस्था में ये कीट उड़ नहीं सकते, फुदकते हैं। उस समय इन्हें कपड़े की थैली में, जिसका वर्णन आगे दिया है, पकड़कर मार सकते हैं। टिड्डी के बालकीट के लिए थोड़ी-थोड़ी दूर पर नालियां खोदकर उन्हें एक ओर से भगाते जायं, तो वे नालियों में गिर जाते हैं। उसमें से फुदककर बाहर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं निकल सकते। उन्हें वहां गाढ़कर या औषधि छिड़ककर मार सकते हैं। तरुण-कीट विष-प्रयोग से मारने चाहिए। जब घने रहते हैं तो 'फ्लेम थ्रोअर' से जलाकर मार सकते हैं।

(२) तितलियां और पतंग—तितलियां दिन में और पतंग रात्रि में उड़ते हैं तथा पौधों पर अंडे दे देते हैं, जिनसे बालकीट निकलकर पौधे खाना प्रारम्भ कर देते हैं। ये इल्ली के रूप में रहते हैं। पूर्ण बाढ़ पाने पर एक कोष बन जाता है, जिसमें कीट का रूपांतर होता है और कुछ दिनों बाद तितली या पतंग के रूप में बाहर निकल आते हैं। तरुण कीट तो हानि-कर्त्ता नहीं होते, क्योंकि ये फूलों के रस पर रहते हैं; परन्तु अंडे देकर बालकीट की वृद्धि करते हैं, इससे हानिकर हैं।

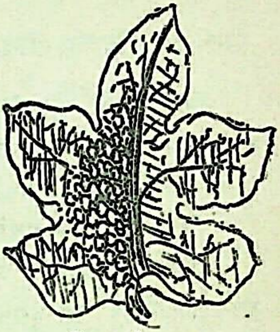

चित्र नं० २१
पत्ते पर अंडे

चित्र नं० २२
बालकीट

चित्र नं० २३
कोष

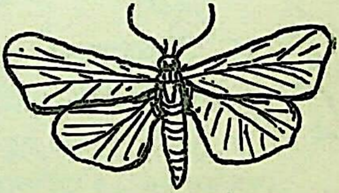

चित्र नं० २४
पतंग (तरुण कीट)

इनके बालकीटों को चुनकर या पौधों पर विष छिड़ककर मार सकते हैं। तरुण कीट में तितलियों को जाली में पकड़कर और पतंग को रोशनी पर आकर्षित कर मार सकते हैं।

(३) गोबरीले कीट की जातिवाले कीट—इस वर्ग के कीट के पंख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कठोर होते हैं, इससे इन्हें कवच-पंखी भी कहते हैं। इस वर्ग के कीट अधिकतर पौधों के अंगों में छेदकर, उनमें अंडे दे देते हैं, जिनसे बालकीट निकलकर पौधों को खाने लग जाते हैं। कुछ पौधों के अन्दर घुसकर रहते हैं; और जब हानि विशेष हो जाती है तो टहनियां या बढ़ती हुई कोंपलें सूख जाती हैं। ऐसे मरे हुए अंग को चीरकर देखने से उनमें इल्ली-जैसा बालकीट दिखाई देता है। ऐसे व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए, ताकि उनकी वहां वृद्धि रुके।

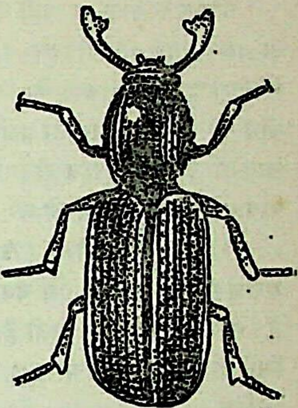

चित्र नं० २५
कवच-पंखी कीट

(४) दीमक (White-ants)—जिन खेतों में बिना सड़ा हुआ या कम सड़ा हुआ कार्बनिक पदार्थ पाया जाता है, उनमें यह विशेष रूप से पाई जाती है। जब खेतों में पानी कम रहता है तो यह आक्रमण करती है। गन्ने के बोये हुए टुकड़े, गेहूं के छोटे-छोटे पौधे, मक्का इत्यादि कई फसलों को यह बहुत हानि पहुंचाती है। इसकी उत्पत्ति जिस मादा से होती है, उसका नाम कीट-वैज्ञानिकों ने रानी रखा है। यह एक स्थान पर बैठी अंडे दिया करती है। इसके नगर में कुछ नर होते हैं, जो सिवाय इससे मेल के कुछ काम नहीं करते। इसी रानी के अंडों में से कुछ कीट ऐसे होते हैं, जो काम ही करते रहते हैं और सेवक कहलाते हैं; और कुछ ऐसे होते हैं, जिनके सुपुर्द रक्षा का काम रहता है और रक्षक कहलाते हैं। दीमक का घर बनाना और उसके सब नगर-निवासियों के लिए भोजन लाने का काम सेवक करते हैं। रानी जहां अंडे देती है वहां से अंडों को इनके नगर के दूर स्थान पर ले जाकर उनका सेवन ये ही करते हैं। रक्षक तो बाहर से किसीका आक्रमण हो तो सेवा का कार्य करते हैं। इसी नगर में कुछ मादाएं ऐसी मोटी हो जाती हैं कि वे रानी का स्थान लेने योग्य हो जाती हैं और सभी प्रकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के कुछ कीट ले जाकर दूसरी जगह अपना साम्राज्य जमा लेती हैं।

दीमक के नाश का यही उपाय है कि इनके नगर में विषैली गैस भर दी जाय, नगर को खोदकर रानी मार दी जाय, खेतों में सिंचाई ठीक से की जाय और सिंचाई के जल में थोड़ा तारकोल मिला दिया जाय या नीम की खली के खाद का प्रयोग किया जाय। डी० डी० टी० खेतों में डाली जाय तो उससे भी लाभ होता है। इनके टीलों में कैलशियम सायनामाइड पम्प द्वारा फूंकने से भी ये मर जाती हैं।

(५) **लाही, मोला (Aphis)**—इस जाति के कीट रस चूसकर अपना पोषण करते हैं। ये चंवली और सरसों पर बहुतायत से पाये जाते हैं। फलियां ऐसी ढक जाती हैं कि काली-काली दिखती हैं। इनसे बचाने के लिए पौधों पर सूखी या कुछ मिट्टी के तेल से भीगी हुई राख छिड़कनी चाहिए।

तम्बाकू का काढ़ा भी इनसे छुटकारा पाने के लिए अच्छा विष है। सोनपांखरा (Lady bird beetle) नाम का कीट इसका पक्का शत्रु है। जहां ये होती हैं वहां वह पहुंच जाता है। यह कवच-पंखी कीट होता है। इसका तरुण कीट बड़ी रहर के जैसा पीले रंग का, जिसके परों पर छः काले धब्बे होते हैं, खेतों में दिखलाई देता है। ऐसा कीट नज़र आये तो उसे नहीं मारना चाहिए। इसी कीट के बालकीट लाही को नष्ट करते हैं। दो और भी कीट होते हैं, जिन्हें लेस विंग फ्लाई (Lace wing fly) और सिरफस फ्लाई (Syrphus fly) कहते हैं। इसके बालकीट भी लाही को नष्ट कर देते हैं। पहला लाही के कीट का रस चूसकर उनके खोखलों को अपनी पीठ पर लादे फिरता है। दूसरे का बालकीट दृष्टिहीन होता है और वह लाही को टटोलकर रस चूसता है।

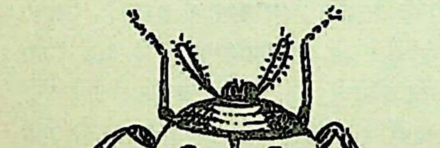

चित्र नं० २६—सोनपांखरा

(६) **खटमल की जाति के कीट (Bugs)**—इस जाति के कुछ कीट

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पौधों का रस चूसते हैं। यदि विशेष संख्या में हों तो उन्हें चुनवा कर नष्ट करा देना चाहिए।

(७) फलों की मक्खी (Fruit fiy)—यह मक्खी साधारण मक्खी के आकार की होती है और फलों में छेद करके उनमें अंडे दे देती है, जिनसे बालकीट निकलकर फलों के गुच्छे से अपना पोषण करते हैं। ऐसे फलों को काटा जाय तो कई सफेद-सफेद बालकीट नजर आते हैं। ये कीट अपना रूपान्तर फलों से बाहर निकलकर करते हैं। जिन फलों में ये पाये जायं, उन्हें इधर-उधर फेंकना नहीं चाहिए, बल्कि जला देना चाहिए, ताकि आगे वंश-वृद्धि न हो। मादा पके हुए फलों पर ही अंडे देती है, सो बहुत पके हुए फल खेतों में या पेड़ों पर नहीं रहने देने चाहिए।

विभिन्न फसलों के तथा साग-भाजी और फलों के कीट उपर्युक्त वर्गों में से ही होते हैं। प्रत्येक का वर्णन यहां असंभव है। आशा है पाठक उपर्युक्त वर्णन को ध्यान रखकर कीट का वर्ग पहचान लेंगे और तदनुसार उपचार कर सकेंगे। वैसे खास-खास कीटों का आगे वर्णन दिया गया है।

हरी फसलों को हानि पहुंचानेवाले मुख्य कीट

नाम फसल	कीट	उपचार
गेहूं	दीमक: छोटे-छोटे पौधों को काट देती है।	पृष्ठ १०५ पर
धान	चरका—टिड्डे वर्ग का—इसके अंडे महीनों तक जमीन में पड़े रहते हैं। बरसात आते ही उनसे छोटे-छोटे टिड्डे निकलकर पौधों पर धावा करते हैं।	पृष्ठ १०४ पर
	कोस—(Rice hispa)—पाव इंच लंबी पर छोटे-छोटे कांटेवाली, कवच-पंखी मादा धान के पत्तों के अन्दर अंडे देती है, बालकीट अन्दर-ही-अन्दर खाते रहते हैं।	नर्सरों में पत्तों का ऊपरी भाग काटकर जला देना चाहिए।
	गांधी (Bug)—धान के पत्तों पर कतारों में अंडे पाये जाते हैं, जिनसे कीट निकलकर रस चूसते हैं।	चुनकर नष्ट करना चाहिए।
	माही—यह भी रस चूसनेवाला कीट है।	रात को खेतों की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	बालों का रस चूस जाता है, जिससे दाना नहीं बन पाता।	पास आग जलाकर तरुण कीट को मारना चाहिए।
	स्वार्मिंग केटरपिलर—यह पतंग की जाति का कीट होता है। बालकीट झुंड-के-झुंड चलते रहते हैं और एक खेत खा चुकते हैं तो दूसरे में जाते हैं।	धान की पानी भरी क्यारियों में थोड़ा मिट्टी का तेल डालकर पौधों पर रस्सा फिराया जाय तो कीट पानी में गिरकर मर जाते हैं।
जई, जौ	विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नहीं।	
जुवार, बाजरा, मक्का और छोटे धान्य	टिड्डे की जाति के अथवा पतंग की जाति के कुछ कीट हानि पहुंचाते हैं; परन्तु वह जाति ऐसी नहीं होती कि जिसके लिए विशेष ध्यान दिया जाय।	
उड़द	—देखिये मूंग	
किराओ कुलथी खिसारी	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	
ग्वार	—कीट तो नहीं परन्तु 'माइट्स'[1] नाम के जन्तु पत्तों का रस चूसकर उन्हें टेढ़े-मेढ़े कर देते हैं और बढ़ती हुई कोंपल की बाढ़ सूखकर वह काली हो जाती है।	पत्ते के नीचे वी और गन्धक का भुरकना।

[1] ये जन्तु कीट-वर्ग के नहीं होते। मकड़ी-चिचड़ी आदि वर्ग के हैं। इस वर्ग के जन्तुओं को नाश करनेवाली औषधियां 'एकेरेसाइड्स' (Acaracides) कहलाती हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चना	ग्राम केटरपिलर—पतंग की जाति का कीट है, जिसका बालकीट फलों में छेद करके अन्दर से बीज खा जाता है।	हाथ से चुनवा-कर मार देना चाहिए।
	ग्राम सेमी लूपर—यह कीट भी पतंग की जाति का है, जिसके बालकीट पत्ते खाते हैं। एक-एक मादा पौधों पर चार सौ से पांच सौ तक अण्डे देती है।	अण्डे इकट्ठे पाये जाते हैं,सो चुन-वाये जा सकते हैं।
चवली	—लाही (Aphis) फलियों पर लग जाती है और उनका रस चूस लेती है। फलियां गन्दी-सी काली-काली हो जाती हैं।	पृष्ठ १०६ देखें
तूर	—पतंग की जाति के बालकीट फलियों में से बीज खा जाते हैं।	विशेष नहीं
	—कवचपंखी कीट खेतों में भी लग जाते हैं, परन्तु गोदाम में विशेष हानि पहुंचाते हैं।	बीज राख में मिलाकर रखने चाहिए। बोने के बीज नेपथलीन की गोलियों के साथ रख सकते हैं।
मसूर	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं।	साधारण उपचार
मटर	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं।	यदि कोई दिखाई दे।
मूंग	पत्तों में छेद करनेवाले छोटे-छोटे कवच-पंखी कीट	मिट्टी के तेल में भीगी हुई राख छींटकर
	पतंग की जाति के बालकीट, जिनपर बहुत से बाल होते हैं। प्रारम्भ में बहुत-से इकट्ठे पाये जाते हैं	चुनवाकर मार देने चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मोठ सोयाबीन सेम	विशेष ध्यान की आवश्यकता नहीं	साधारण उपचार, यदि कोई आ जाय
अलसी	—कीट से हानि नहीं होती	
एरण्डी	'केस्टर सेमीलूपर'—पतंग की जाति का बालकीट—छोटा, काले रंग का, ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है, स्लेटी रंग का होता जाता है। एरण्डी के पौधों को पत्ते-रहित कर देता है।	जहां दिखे तुरन्त चुनवाकर मार देना चाहिए।
कुसूम	कवच-पंखी कीट पत्ते खा जाता है—तितली की जाति के बालकीट	चुनवाकर मार देना चाहिए।
खसखस	विशेष नहीं	
तिल	'तिल हाकमाथ'—पतंग की जाति का छोटी उंगली जितना मोटा दो-तीन इंच लम्बा। पत्ते खाता है।	चुनवाकर मार देना चाहिए।
	पतंग की जाति का बालकीट, आध इंच लम्बा—बढ़ती हुई कोंपल और फूल खा जाता है।	मुड़े हुए पत्तों को खोलकर कीट चुनवा सकते हैं।
मूंगफली	दीमक	पृष्ठ १०५ देखें
	पतंग के जाति का बालदार कीट। प्रारंभ में इकट्ठे पाये जाते हैं।	चुनवाकर मार देना चाहिए।
रामतिली	विशेष नहीं।	
तारामीरा तोरिया दार सरसों	लाही बुरी तरह से लगती है।	पृष्ठ १०६ देखें
	सरसों की मक्खी (Mustard saw fly) बालकीट रात को कोमल पौधे या पत्ते काटकर खाते रहते हैं। दिन में पौधों के पास मिट्टी में छिपे रहते हैं। ये रंग में काले-काले होते हैं।	कटे हुए पेड़ों के नीचे मिट्टी में से निकाल कर मारना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गीनी घास बरसीम लूसन शफताल सेंजी हाथी- कांडा	ये हरे चारे की फसलें हैं। इनमें ऐसे कीट नहीं होते, जिसके लिए विशेष उपचार किये जायं।	
तागेवाली फसलें अम्बाडी	विशेष नहीं	
कपास	छोटे पौधों के पत्ते भूरे रंग के टिड्डे खा जाते हैं।	साधारण
	लीफ रोलर (Leaf Roller) पतंग की जाति का बालकीट। चौड़े पत्तेवाली कपास में विशेष होता है। पत्तों को मोड़ कुप्पाकार बना देता है।	मुड़े हुए पत्तों से कीट चुनवाकर
	घड़-छेदक—कवच-पंखी काला कीट। पौधा मर जाता है। घड़ चीरने से सफेद बालकीट दिखलाई देता है।	मरे हुए पौधे उखाड़कर जला देना।
	फल, बीज और कपास को हानि पहुंचानेवाले पिंकबॉल वर्म—(Pink boll-worm) पतंग की जाति का बालकीट गुलाबी रंग का, एक-एक मादा फलों पर दो सौ तक अण्डे देती है। जिनसे बालकीट निकलकर फलों में घुसकर बीज खा जाते हैं। कोष बीज में ही बनाते हैं।	अच्छे सुखाये हुए कीट-रहित बीज बोने चाहिए। यदि बीज पानी में डाले जायं तो कीट-रहित बीज थोड़ी देर में डूब जाते हैं। उन्हें ही बोना चाहिए
	स्पाटेड बॉल-वर्म (Spotted Boll	आक्रान्त फल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	worm) ये दो जाति के होते हैं और दूसरे के परों पर त्रिभुजाकार हरी धारियां होती हैं। बालकीट भूरे रंग के बालदार होते हैं। ये पहले पत्ते, फिर फूल और बाद में जब फल आ जाते हैं तो फलों में घुस जाते हैं। छोटे फल तो गिर जाते हैं और बड़ों की रुई खराब हो जाती है।	चुनवाकर नष्ट कर देने चाहिए।
	फल और बीज का रस चूसनेवाले खटमल वर्ग के दो कीट होते हैं। एक लाल और दूसरे भूरे। ये फल या बीज का रस चूस लेते हैं।	साधारण
पाट	पतंग की जाति के दो-तीन बालकीट हानि पहुंचाते हैं।	तरुण कीट को रोशनी पर आकर्षित कर मार देना चाहिए।
सन	कुछ पतंग की जाति के बालकीट	''
तंबाकू	रोपे हुए छोटे पौधों को कुछ टिड्डे काट देते हैं।	क्षेत्रफल थोड़ा हो तो प्रत्येक पौधे पर मिट्टी का नल रख देना चाहिए। अधिक हो तो कपड़े की थैली में पकड़कर मार देना चाहिए।
	पतंग-जाति के बालकीट	बालकीट को चुनवाकर और तरुण को रोशनी पर आकर्षित कर मारना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ईख	दीमक	पृष्ठ १०५ देखें।
	जड़-छेदक, धड़-छेदक और फुनगी-छेदक : ये तीन पतंग की जाति के कीट हैं। इनके बालकीट उपर्युक्त स्थानों में छेद करके रहते हैं। जड़-छेदक से पौधा मर जाता है। धड़-छेदक से गन्ना बिगड़ जाता है और फुनगी-छेदक से बाढ़ रुक जाती है और उस स्थान से दौजियां निकल आती हैं।	जड़-छेदक कीट के एक शत्रु कीट ट्रायकोगामा नाम के होते हैं जो जड़-छेदक कीट के अंडों में अपने अंडे देते हैं, जिससे उनके अंडे नष्ट हो जाते हैं। इनमें से घातक कीट निकलते हैं। फुनगी-छेदक से बचाने के लिए गन्ना कुछ जल्दी बोना चाहिए, ताकि बरसात तक पौधे मजबूत हो जायं और कीट का आक्रमण न हो।
	पायरेला (Pyralla) खटमल की जाति के हरे रंग के छोटे-छोटे कीट होते हैं, जो पत्तों में छिपे रहते हैं। ये पत्तों का रस चूसकर उन्हें कुम्हला देते हैं और पौधों को कमजोर कर देते हैं।	यदि आक्रमण अधिक हो तो पत्ते छील देने चाहिए।

मुख्य तरकारियों को हानि पहुंचानेवाले कीट

नाम फसल	कीट	उपचार
आलू	पौधे काट देने वाला (Greasy face catarpillar) पतंग की जाति	भोज्य पदार्थ में संखया मिलाकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	का—जो चना, मटर गोभी आदि पर पाया जाता है।	खेतों में रखने से तरुण कीट को रोशनी पर आकर्षित कर चुनवाकर।
	(Tobacco caterpillar) तितली की जाति का—पत्ते खाता है; बालकीट प्रारम्भ में पत्तों पर इकट्ठे पाये जाते हैं।	
	गोदाम में हानि पहुँचानेवाला पतंग की जाति का (Potatao moth) बालकीट जौ के बराबर सफेद काले मुंह का होता है, मादा आलू की आंखों में अंडे देती हैं जिनसे बालकीट निकलकर गूदा खाते हैं। खेतों में भी यदि आलू खुले रह जायं तो वहां भी मादा अंडे देती है। कभी-कभी गोदाम में सब-के-सब आलू नष्ट हो जाते हैं।	बालू या लकड़ी के कोयले के चूर्ण से ढककर रखने से।
शकरकंद	शकरकंद का घुन—घुन-जैसे चमकीले कवचपंखी कीट का बालकीट। मादा कंद को काटकर उसमें अंडे देती है। बालकीट निकलकर गूदा खाते हैं।	खेतों में कंद को मिट्टी से ढककर रखना चाहिए।
	तितली और पतंग की जाति के कुछ कीट ऐसे होते हैं जो पत्ते खाते हैं।	साधारण उपचार से।
प्याज, लहसुन आदि	कभी-कभी टिड्डे पौधे काट देते हैं	कपड़े की थैली में पकड़कर मार देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पत्ते, डंडी और फूल वाली फसलों के कीट	लाही—	पृष्ठ १०६ देखें
	सरसों की मक्खी—	पृष्ठ १११ देखें
	टिड्डे	
	तितली और पतंग की जाति के बालदार कीट	साधारण उपचार
फलीदार पौधों को हानि पहुंचानेवाले कीट	पतंग या तितली की जाति के बालकीट	साधारण उपचार
कद्दू, तोरी, खीरा इत्यादि	१२ और २८ धब्बे वाले 'एपिलेकना' कवच-पंखी लाल और काले रंग के पाव इंच लम्बे	चूने का चूर्ण अथवा चूने-तम्बाकू के मिश्रण का चूर्ण छिड़ककर
फलों की मक्खी		पृष्ठ १०७ देखें

फलों को हानि पहुंचानेवाले मुख्य कीट

नाम फल	कीट	उपचार
अंगूर	पतंग की जाति का पूर्ण बाढ़ पाया हुआ बालकीट डेढ़-दो इंच लम्बा, हरे रंग का, जिसकी दुम पर सींग का-सा आकार होता है, पत्ते खा जाता है।	चुनवाकर नष्ट कर दें।
	कवच-पंखी छोटे कीट पत्तों में छेद कर देते हैं।	काट-छांट के पश्चात् यदि केले के सूखे पत्ते लताओं पर रख दिये जायं, तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

		कीट उन पत्तों पर चढ़ जाते हैं। दिन में दो-तीन वार पांच-छः दिन तक ऐसा करने से वहुत-से कीट चुने जा सकते हैं।
अनार	तितली की जाति का वाल कीट फलों को विगाड़ देता है। तितली अनार की पेंदी में जहां फूलों की पंखड़ियां होती हैं, अंडे देती है; पंखड़ियों से निकलकर वालकीट फलों में घुस जाते हैं।	आक्रांत फलों को जला देना चाहिए। थोड़े फल हों तो कागज या कपड़े की थैली में वांध देने चाहिए।
आम	भूरे रंग की एक मक्खी, जिसपर काली-पीली धारी होती है, फलों के छिलकों में छेद करके अंडे दे देती है। तीन ही दिन में अंडों से वालकीट निकलकर फलों में घुस जाते हैं।	आक्रांत फलों को जला देना चाहिए। मक्खी को विष पर आकर्षित करके मार देना चाहिए।
आम	धड़-छेदक कवच-पंखी की जाति का एक कीट होता है, जिसकी मादा छाल के नीचे अंडे दे देती है और वालकीट निकलकर धीरे-धीरे अन्दर घुसता जाता है। यह कीट कई साल तक पेड़ में रह जाता है।	छेद में ठंडा या गरम तार डाल कर वालकीट को मार दीजिये। छेद में अकलतरा (Coaltar) डालकर। क्रियो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

		सोट और क्लोरोफार्म का मिश्रण बराबर भाग में मिलाकर, उसमें रुई भिगोकर छेद में भर दें और ऊपर से छेद बंद कर दें।
	मधुआ-मौर चूषक कीट। इनकी मादा मौर आने के समय कोंपलों पर अंडे देती है और कीट कोंपलों का और मौर का रस चूस लेते हैं, जिससे फल नहीं बैठ पाते। इनके शरीर से मीठा रस निकलकर पत्तों पर और टहनियों पर गिरता रहता है। इस रस पर एक प्रकार की फफूंद लग जाती है, जिससे टहनियां काली पड़ जाती हैं।	गंधक का चूर्ण तीन-चार बार आठ-दस दिन के अंतर पर भुर-भुराना अच्छा होता है। पच्चीस-तीस फुट ऊंचाई वाले पेड़ के लिए एक सेर गंधक का चूर्ण काफी होता है। यह यन्त्र से छिड़का जाता है।
नारियल	नारियल का घुन कवच-पंखी की जाति का घुन-जैसा लगभग डेढ़ इंच लम्बा होता है। इसकी मादा नारियल के पेड़ पर घाव में अंडे देती है, जहां से बालकीट निकलकर अन्दर का गूदा खाते हैं।	पेड़ पर कोई घाव खुला नहीं छोड़ना चाहिए। उसपर तारकोल लगा देना चाहिए
नीबू-संतरा की जाति के धड़-छेदक कीट	कवच-पंखी	आम के छेदक कीट-जैसा उपचार करें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोंपल-भक्षक	तितली-वर्ग का बालकीट कोंपल खा जाता है। तितली बहुत-से पीले धब्बों से युक्त काले रंग की होती है। पत्तों पर बालकीट पक्षियों की बीट-जैसे नज़र आते हैं।	चुनकर नष्ट कर दें।
बेर	फलों की मक्खी	पृष्ठ १०७ देखें

सूखे अनाजों को हानि पहुँचानेवाले कीट और उनसे बचाव के उपाय—अनाजों में रागी (मडुवा), कोदों, सावां, चीना, बाजरा आदि ऐसे हैं जिन्हें कीट से हानि नहीं पहुंचती। दूसरे अनाजों को गोदाम में हानि पहुंचानेवाले कीट पन्द्रह-बीस प्रकार के हैं, पर मुख्यत: निम्नलिखित हैं—

घुन—कवचपंखी जाति के कीट में से ये तीन कीट होते हैं—खपरा, सूंडवाला और बिना सूंड का घुन।

खपरा—*(Tragoderma granaria)*—इस कीट से गेहूं के कोठों में गेहूं की ऊपरी तह को ही विशेष हानि पहुंचती है। ऊपर के पांच-छः इंच से लेकर एक फुट तक के गेहूं का तो यह चूर्ण ही बना देता है। इसका तरुण कीट लगभग $\frac{1}{5}$ इंच लम्बा होता है। कार्तिक (अक्तूबर) से वैशाख-ज्येष्ठ (अप्रैल-मई) तक अपना जीवन-काल बालकीट के रूप में काटते हैं। बाद में रूपान्तर कर तरुणकीट बन जाते हैं और अगले चार-पांच महीनों में इनकी चार-पांच पीढ़ियां हो जाती हैं। एक-एक मादा सौ-सवा सौ तक अण्डे देती है।

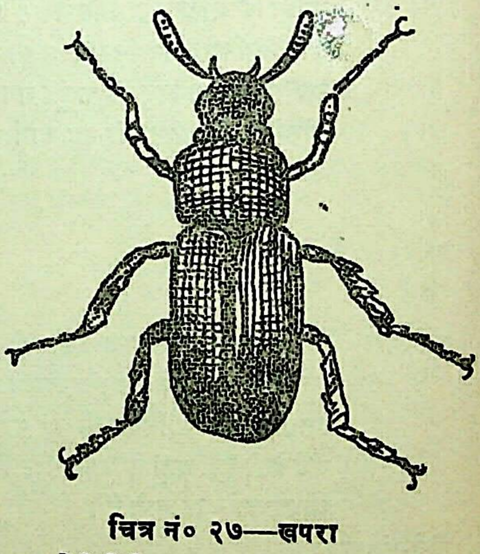

चित्र नं० २७—खपरा

बिना सूंडवाला घुन—*(Rhizopertha dominica)*—यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कीट 1/६ इंच लम्बा भूरे या काले रंग का होता है। यह गेहूं, जव, ज्वार, मक्का, चावल में पाया जाता है। गर्मी आते ही यह कर्म-रत हो जाता है। सालभर में इसकी चार-पांच पीढ़ियां हो जाती हैं। शीतकाल बालकीट के रूप में ही पूरा होता है। यह सूखे फल, काष्ठादिक औषधियों तथा कागज में भी पाया जाता है।

सूंडवाला घुन *(Silophylus oryza)*—इसका मुंह सूंड के आकार का होता है। यह कीट लगभग 1/८ इंच लम्बा होता है। गेहूं, ज्वार, मक्का, चावल को बहुत हानि पहुंचाता है। तरुण कीट सर्दी के दिनों में हानि पहुंचाते रहते हैं। दूसरी और तीसरी प्रकार के कीट अनाज के अन्दर से गूदा खाकर बीज को खोखला कर देते हैं। पहले की भाँति चूरा नहीं बनाते और उसकी भांति सिर्फ ऊपरी तह को ही नहीं बल्कि सभी तहों में पाये जाते हैं। इन तीन में पहला कीट काफी तगड़ा, दूसरा बीच में से पतला और तीसरा सूंडवाला होता है।

इन तीनों कीटों से बचाव के लिए गोदाम कीटरहित करने चाहिए तथा औषधियां भी काम में लानी चाहिए, जिनका वर्णन आगे दिया है।

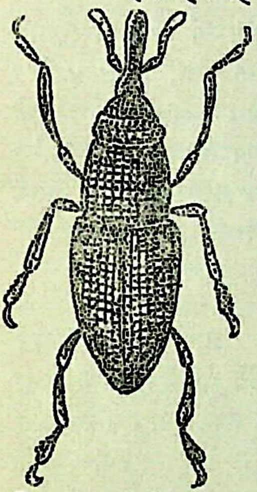

चित्र नं० २८ सूंडवाला घुन

सूजी का घुन *(Tripolium castaneum)*—आटा, सूजी, मैंदे में लाल रंग के खपरे-जैसे कीट हो जाते हैं। इनके बालकीट सफेद रंग के पतले होते हैं। इनकी एक-एक मादा ४५० तक अण्डे देती है। ये बरसात में बहुत हानि करते हैं। सूजी-आटे को सूखे स्थान में रखने से बचाव हो सकता है।

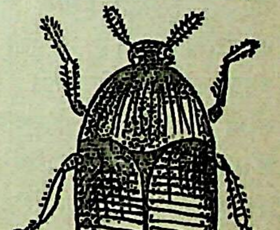

चित्र नं० २९, सूजी का घुन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पतंग की जाति का एक कीट (*Sitotroza cereatella*)—जुवार में बहुत हानि पहुंचाता है। कीटरहित गोदामों में भरने तथा औषधियों से इस कीट से बचाव हो सकता है। चावल में एक कीट (*Corcyra cephalonica*) ऐसा होता है, जो रेशमी तन्तुओं में रहता है। इसके ऊपर बहुत-से चावल चिपक जाते हैं। चावल को राख में मिलाकर रखने से इस कीट से बचाव हो सकता है। बहुत संख्या में हों तो गोदाम को कीटरहित करनेवाली औषधि का उपयोग करना चाहिए।

दाल-वर्ग को हानि पहुंचानेवाले कीट—इस वर्ग को हानि पहुंचाने वाले कवचपंखी कीट दो प्रकार के होते हैं, परन्तु इनमें से *Bruchis chinensis* नाम का कीट विशेष हानि करता है। मादा बीज पर अण्डे देती है, जिससे बालकीट निकलकर बीज में का गूदा खा जाते हैं और बीज को खोखला बना देते हैं। इसके बालकीट विशेष हानि पहुंचाते हैं। अन्य बीजों की रक्षावाले उपाय इनमें भी काम में लाने चाहिए।

अनाज के गोदाम—

कुछ देशों में, जहां अनाज विशेष होता है, रक्षा के लिए एलेवेटर्स (Elevators) बने हुए होते हैं। ये एक बैंक-जैसे होते हैं। कृषक अपना माल वहां ले जाते हैं और एलेवेटर्सवाली कम्पनी उनका माल साफ करके सुखाकर जिस श्रेणी का होता है उस एलेवेटर में भर देती है। अनाज भरते समय ही कलों द्वारा साफ होकर गर्म हवा से सूख जाता है। कम्पनी माल की रसीद दे देती है, जो हुंडी या चेक का काम देती है। आप अपना माल वजन कराये या दिखलाये बिना उस रसीद के आधार पर कहीं भी बेच सकते हैं। ऐसे एलेवेटर्स सीमेंट के बने हुए होते हैं और उनके नीचे जाकर अनाज की मालगाड़ी के डिब्बे खड़े कर दिये जाते हैं, जहां से अनाज ऊपर चढ़ जाता है। ये जमीन से इतने ऊपर होते हैं कि रेल के डिब्बे इनके नीचे जाकर खड़े हो जाते हैं। इस सम्हाल के लिए कम्पनियां अपना कमीशन ले लेती हैं। भारतवर्ष में भी हापुड़ में ऐसे एलेवेटर्स बन गए हैं।

भारत में अभी इनका प्रचार बहुत कम है। यहां कोठे भरे जाते हैं। गृहस्थ भखारियों में भी भरते हैं। गेहूं भरने के लिए भखारी के चारों तरफ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गेहूं और दीवाल के बीच में भूसे की तह देकर अनाज भरना चाहिए। गेहूं के नीचे और ऊपर भी भूसा रखकर मिट्टी से छाव देना चाहिए। यदि गेहूं अच्छे सूखे हों तो इस युक्ति से अच्छे बने रहते हैं।

जहां सील अधिक होती है वहां भखारी को लकड़ी के खम्भों पर बनाना उत्तम होगा। दीवालें बांस या अरहर के डंठल इत्यादि की बनाकर उनकी बगल में भूसा रखकर अनाज भरना चाहिए।

सरकारी अनाज-रक्षा-विभाग निम्नलिखित प्रकार के गोदाम का प्रचार करते हैं :

तीन हजार बोरे, अर्थात् लगभग ७५०० मन, अनाज रखने के लिए ७०'×२०' लम्बे-चौड़े तथा २० फुट ऊंचे गोदाम होने चाहिए। ऐसे गोदाम को चार भागों में बांटकर बोरों की थप्पियां लगानी चाहिए। प्रत्येक थप्पी में ७५० बोरे होंगे और थप्पियों के चारों ओर दो-ढाई फुट का मार्ग छोड़ना चाहिए। गोदाम की कुर्सी स्थानीय जलवायु के अनुसार ऊंची-नीची रख सकते हैं। दीवालें १३॥ इंच और दरवाजे चार फुट चौड़े होने चाहिए।

कीटनाशक उपचार और औषधियां—

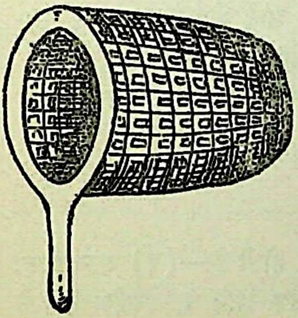

चित्र नं० ३०
कपड़े की छोटी थैली

कपड़े की छोटी थैली—एक लोहे के कुण्डल पर एक जालीदार कपड़े की थैली सीं दी जाती है और कुण्डल में एक लकड़ी का दस्ता लगा देते हैं। उड़ते हुए कीट पकड़ने के लिए इस थैली को झटके से कीट की तरफ बढ़ाते हैं। ऐसा करने से थैली फूल जाती है और कीट उसमें फंस जाता है। बाद में जल्दी से मोड़ देने से थैली में गया हुआ कीट बाहर नहीं निकल पाता।

कपड़े की बड़ी थैली—बांस के चौखटे में आयताकार कपड़े का थैला सीं दिया जाता है। छोटे टिड्डे, जो खेतों में बहुतायत से पौधों को हानि पहुं-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाते हैं, वे ऐसी जाली में पकड़े जा सकते हैं। दो व्यक्ति बांस के चौखटे के छोर पकड़कर खेतों में दौड़ते हैं तो वे उड़कर इस थैले में फंस जाते हैं और मारे जा सकते हैं।

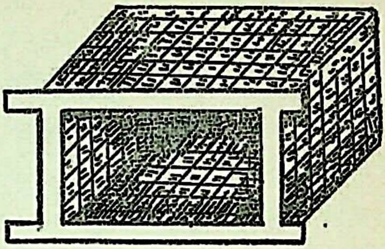

चित्र नं० ३१
कपड़े की बड़ी थैली

ओषधियां छिड़कने या भुरभुराने के यंत्र—

औषधियां सूखी तथा तरल होती हैं। सूखी औषधियां भुरभुराने के लिए छोटे पौधों पर या नर्सरी में महीन कपड़े में भरकर भुरभुरा सकते हैं। टीन में छेद करके उनके द्वारा भी भुरभुरा सकते हैं। पिचकारी-जैसा यंत्र भी इस काम के लिए होता है। विशेष क्षेत्रफल में हवाई जहाज द्वारा यह कार्य हो सकता है।

तरल पदार्थ के लिए बर्तन होते हैं, जिनमें औषधि का घोल और हवा भर देते हैं। इसके नल और उसके मुंह पर महीन छेद होते हैं, जिसमें से फुहार के रूप में औषधि उड़ती है। ऐसे यंत्र छोटे क्षेत्रफल से लेकर बड़े-बड़े बगीचों में फलों के वृक्ष पर छिड़कने के जैसे होते हैं।

औषधि छिड़कने के यंत्रों को काम में लाने के पश्चात् तुरन्त ही साफ करके रखना चाहिए।

प्रधान कीटनाशक औषधियां—

ये औषधियां (विष) तीन प्रकार की होती हैं—(१) आन्तरिक, (२) स्पर्शक और (३) गैस। आन्तरिक विष खाने से, स्पर्शक छूने से और गैस सूंघने से कीट मर जाते हैं। (४) कुछ औषधियां ऐसी भी होती हैं जिनकी गंध से कीट दूर भाग जाते हैं। ऐसी औषधियों को घृणात्मक औषधि कहते हैं।

आन्तरिक विष किसी खाद्य वस्तु में मिलाकर खेतों में रख दिये जाते हैं, उन्हें खाकर कीट मर जाते हैं अथवा वे पौधों पर घोल के रूप में छिड़कते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं अथवा चुर्ण के रूप में भुरभुराये जाते हैं। स्पर्शक विष ऐसे समय पर छिड़के जाते हैं, जब कीट पौधों पर पाये जाते हैं। ये विष सीधे कीटों पर गिरते हैं, जिससे कीट मर जाते हैं।

गैसवाले विष दीमक को मारने व बीज तथा बीज-भंडार अथवा कांच-घरों[1] को कीट-रहित करने के काम में लाये जाते हैं, जैसे फार्मेलिन इत्यादि।

कुछ औषधियां ऐसी भी हैं, जो स्पर्शक और गैस दोनों का काम देती हैं—जैसे कार्बन-बाई-सलफाइड—गंधक की धूनी।

आन्तरिक विष—

ये बहुधा संखिया के लवण होते हैं और घोल तथा चूर्ण के रूप में काम में लाये जाते हैं। आजकल नये-नये कार्बनिक विष भी निकले हैं और नये-नये निकलते रहते हैं। सो कीट-विज्ञानी की सम्मति से काम करना चाहिए; अन्यथा कभी लाभ की अपेक्षा हानि भी हो जाती है। कीट-नाशक विष मनुष्य तथा पशुओं के लिए भी हानिकर होते हैं, इसका भी ध्यान रखकर काम करना चाहिए। संखिया के विष में विशेष रूप से लेड आर्सिनेट (Lead arsenate) का सफेद चूर्ण होता है। इसकी मात्रा निम्नलिखित होती है—

घोल		चूर्ण	
मात्रा औषधि १ भाग	जल २५० भाग	मात्रा औषधि १ भाग	अन्य वस्तु बुझा हुआ चूना ८ भाग

टिड्डी के लिए—

१ भाग सोडियम-फ्लुओ-सीलीकेट (Sodium fluosilicate)।
२ भाग चोआ (Molasses)
३० भाग चोकड़ (Wheat bran)

[1] विदेशों में विशेषतः अधिक ठंडे स्थानों में ऐसे कांच-घर बने हुए होते हैं कि जिनमें खेती होती है। उनमें साग-भाजियां पैदा की जाती हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त मिश्रण की छोटी ढेरियां आवश्यकतानुसार जल से गीली करके खेतों में जगह-जगह रखने से टिड्डियां खाकर मर जाती हैं।

फलों की मक्खी को आकर्षित करने का विष—

पानी १ मन, गुड़ ३ सेर, लेड आर्सिनेट २० तोला का घोल बनाकर पेड़ों पर या तख्तों पर लगाकर रखने से मक्खियां खाकर मर जाती हैं।

स्पर्शक विष—तम्बाकू का काढ़ा, तेल-साबुन का मिश्रण इत्यादि स्पर्शक विष हैं।

तम्बाकू का काढ़ा—एक सेर तम्बाकू को दस सेर पानी में चौबीस घंटे भिगोकर या आध घंटे तक पानी में उबालकर काढ़ा बना लेना चाहिए। इसे छानकर उसमें पाव-भर साबुन मिला देना चाहिए, क्योंकि इससे विष का फैलाव अच्छा होता है। उपयोग के समय उसमें सात भाग पानी और मिलाना चाहिए।

निकोटीन सलफेट (Nicotine Sulphate)—यह तम्बाकू के सत्त का बना हुआ होता है। इसके एक भाग को हजार भाग जल के साथ मिलाकर काम में लाना चाहिए।

लाही (मोला) और छोट-छोटे पौधों के पत्तों में छेद करनेवाले कवच-पंखी वर्ग के कीट के लिए उपर्युक्त औषधि बड़े काम की हैं।

तेल-साबुन का मिश्रण—दस सेर गरम पानी में आधा सेर साबुन घोल-कर उसमें आधा टीन (दो गैलन) मिट्टी का तेल मिला लेना चाहिए। उप-योग के समय इसमें बीस भाग पानी और मिलाना चाहिए।

पायरेथ्रम घोल—तीन छटांक साबुन और एक सेर पानी गरम करके धीरे-धीरे उसमें एक सेर मिट्टी का तेल मिलाना और बाद में आधी छटांक पायरेथ्रम का सत मिलाकर उपयोग के समय लगभग १६ सेर पानी मिलाना चाहिए।

गैस तथा स्पर्शक विष—के रूप में काम आनेवाली औषधियां—

डी०डी०टी०तीन-शतांश औषधिवाला तरल पदार्थ अथवा तीन-शतांश औषधिवाला चूर्ण काम में लाया जाता है। अनाज को गोदाम में बचाने के लिए एक हजार भाग चूर्ण मिलाना चाहिए। औषधि मिलाने के पश्चात् कम-से-कम छः-सात सप्ताह तक अनाज काम में नहीं लाना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गोदाम की दीवालों पर छिड़कने के लिए पांच-प्रतिशतवाला तरल पदार्थ काम में लाना चाहिए।

गेमेक्सीन (वी० एच० सी०)—आठ-दस हजार घनफुट जगह के लिए आधा सेर औषधि लगती है। यह विष आन्तरिक, स्पर्शक तथा गैसीय तीनों प्रकार का है। इसको छिड़कने से एक तेज-सी गंध निकलती है, जिससे नाक में जलन-सी होती है। इसको छिड़कने के बाद एक-दो दिन तक उस कमरे में अधिक समय तक नहीं ठहरना चाहिए। खेतों में बुरकने के लिए डी० डी० टी० अथवा वी० एच० सी० का चूर्ण काम में लाया जाता है। लगभग दस सेर प्रति-एकड़, बुरकने के यन्त्र द्वारा, बुरका जाता है।

क्लोरोसाल (Chorosol or E. D. C. T. Inisiture)—पचीस भाग कार्बन टेट्रा क्लोराइड और पचहत्तर भाग ईथलीन-डाई-क्लोराइड के मिश्रण से यह औषधि बनती है। चालीस मन अनाज के लिए एक भाग औषधि काम में लानी चाहिए।

कार्बन-बाई-सलफाइड (Carbon-bi-sulphide)

प्रति हजार घनफुट में ढाई सेर औषधि डालनी चाहिए। औषधि अनाज पर छिड़ककर बर्तन का मुंह बंद कर देना चाहिए। यह औषधि आग बड़ी जल्दी पकड़ती है, अतः इसके उपयोग के समय किसी प्रकार की आग पास में नहीं रहनी चाहिए। औषधि डालने के अड़तालीस घंटे बाद थोड़ी देर के लिए बर्तन का मुंह खोल देना चाहिए ताकि औषधि उड़ जाय और बाद में आग पकड़ने का भय न रहे।

घृणात्मक औषधि—फिनाइल, नेपथलीन, कपूर, क्रियोसोट आदि। दो से चार तोला फिनाइल से दीमक दूर भाग जाती हैं।

गोदाम कीट-रहित करना—

आग से—एक हजार घनफुट क्षेत्र के लिए सात सेर लकड़ी का कोयला जलाकर गोदाम बन्द कर दिया जाय तो उससे होनेवाली गर्मी से कीट मर जाते हैं।

गोदाम कीटरहित करने के लिए गेमेक्सीन भी काम में आता है। गेमेक्सीन के एक पौंड के डिब्बे मिलते हैं। ८००० घनफुट जगह के लिए एक पौंड गेमेक्सीन जलाना चाहिए। जलाने की रीति डिब्बे के साथ रहती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गोदाम के दरवाजे-खिड़कियां आदि गेमेक्सीन जलाने के बाद खूब अच्छी तरह से वन्द कर देने चाहिए। चौबीस घंटे बाद गोदाम खोलना चाहिए।

नैपथलीन की गोलियों से थोड़े-से बीज सुरक्षित रख सकते हैं। प्रति-मन अनाज में तीन गोलियां काफी होंगी।

कापर कार्बोनेट—(Copper Corbonate) नाम की औषधि भी बीज सुरक्षित रखने के लिए अच्छी औषधि है। एकसौ मन अनाज में आधा मन औषधि मिलानी चाहिए। मिलाते समय औषधि नाक में न जाय, इसलिए मुंह पर कपड़ा बांध लेना चाहिए।

पारा—घुन से बचाने के लिए पारे का उपयोग भी किया जाता है। गोबर की टिकिया में पारे को रखकर सुखा करके गेहूं में रख देने से भी कीट नहीं लगते। एक मन गेहूं के लिए लगभग ४ तोला पारा लगेगा।

बीज सुरक्षित रखने के लिए जहां पारा, तांबा अथवा ऐसी दूसरी औषधि का उपयोग किया जाय वहाँ उस बीज को खाने के काम में नहीं लाना चाहिए। क्लोरोसाल धूप दिखाने से उड़ जाता है, इसलिए हानिप्रद नहीं है।

साधारण गृहस्थी लोग नीम के पत्ते अथवा सूखी राख मिलाकर भी अनाज में रखते हैं। ऐसे बीज खाने में किसी प्रकार की हानि नहीं है।

बोरे कीट-रहित करना—अनाज बोरों में भरा जाता है जिनमें हानि-कर्ता कीट के अंडे, उनके बालकीट और तरुण कीट लगे रहते हैं। और इनका प्रसार बोरों द्वारा भी होता है। यदि बोरों को अनाज भरने के पहले गैस द्वारा कीट-रहित कर दिया जा सके तो उत्तम होगा। ऐसे बोरों को किसी बर्तन या कोठे में बन्द करके गेमेक्सीन अथवा कार्बन-बाई-सलफाइड से भी कीट-रहित कर सकते हैं।

खेतों, गोदामों और घरों में चूहे बहुत नुकसान पहुंचाते हैं, इनको मारनेवाली औषधियां 'रोडेण्टीसाइड्स' कहलाती हैं। वर्तमान समय में 'ज़िंक फासफाइड' चूहे मारने के लिए अच्छा विष सिद्ध हुआ है। इसे आटे या चोकर में मिलाकर या मूंगफली के दानों पर थोड़ा गीला करके लपेटकर चूहों के बिल में या जहां वे आते हों, वहां रखने से वे खाकर मर जाते हैं। यह विष बड़ा घातक है, इसलिए खाद्य-पदार्थों में न मिल जाय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए। यदि आटे में या चोकर में मिलाना हो तो एक भाग औषधि उन्नीस भाग आटे में मिलाना चाहिए चूहे के बिलों में फूंकने के लिए केलशियम साइना माईड भी अच्छा विष है। यन्त्र द्वारा बिलों में फूंककर बिलों के मुंह वन्द कर देते हैं। इसमें से एक विषैली गैस निकलती हैं जिससे चूहे मर जाते हैं।

सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा होनेवाली व्याधियां

ऐसे व्याधिकर्ता जन्तु दो जाति के होते हैं—एक फफूंद-जाति के और दूसरे जीवाणु-जाति के।

फंगस या जीवाणु की पहचान सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से ही हो सकती है, और व्याधियों की पहचान उनके लक्षण से।

गेहूं की व्याधियां—

हरदा, गेरू या कंगी—(Rust) इस व्याधि के लगने से दाना बहुत पतला पड़ जाता है। यह तीन प्रकार की होती है—पीला हरदा, नारंगी हरदा और काला हरदा—पौधों के अंगों पर उपर्युक्त रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। नारंगी रंग का पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में पत्तों पर, पीला कुछ दिन वाद पत्तों और डंडियों पर और काला गेहूं के पकते समय पाया जाता है। उत्तरप्रदेश, विहार, मध्यप्रदेश, मध्यभारत में पहले दो जाति के और काला पंजाव तथा वम्बई की तरफ विशेष रूप से पाया जाता है। वातावरण में विशेषतरी रहने अथवा वादलोंवाले दिन इनका फैलाव वहुत होता है। ये व्याधियां इनके 'वीजाणुओं' (spores) द्वारा फैलती हैं।

इन व्याधियों से वचाव का यही उपाय है कि ऐसी जातियां वोई जायं जिनपर व्याधि का आक्रमण कम हो। ऐसी जातियों में एन० पी० ७१०, १६५ और १११ हैं।

बण्ट (Bunt)—इस व्याधि से गेहूं में मैदा न बनकर काला वदबूदार पदार्थ वन जाता है। ऊपर से तो दाना अच्छा ही दिखता है, परन्तु वहुत ध्यान से देखने पर आधा गेहूं काला नजर आता है। बहुधा ऐसा होता है कि एक ही वाल में कुछ दानों में यह व्याधि होती है। अच्छे गेहूं में इस व्याधि वाले गेहूं मिल जायं तो रोटी का स्वाद बिगड़ जाता है। इसके वचाने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए बीज पर फार्मेलिन या कापर कार्बोनेट का प्रयोग करके बोना चाहिए। आधा सेर फार्मेलिन को सवा मन पानी में घोलकर जो मिश्रण बनेगा, वह ८० मन गेहूं के लिए काफी होगा। गेहूं को फैलाकर औषधि छिड़कने के पश्चात् गीले बोरों से दो घंटे तक ढककर रखना चाहिए। ऐसा करने से वण्ट के बीजाणु (Spores) मर जाते हैं।

कापर कार्बोनेट मिलाकर बीज बोना भी लाभप्रद होता है। सवा मन बीज में २ छटांक औषधि काफी होगी।

तूतिया (Coper Sulphate) भी काम में ला सकते हैं। एक मन बीज में लगभग डेढ़ छटांक चूर्ण डालना चाहिए।

एक मन गेहूं के बीज में १० तोला सिरासान मिलाकर बोने से भी लाभ होता है।

कायमा—(Smut) इसमें गेहूं के बीज की जगह काला चूर्ण-सा पदार्थ बन जाता है। इससे बचाने के लिए गर्मी के दिनों में सुबह चार घंटे तक गेहूं को भिगोकर दोपहर को चार घंटे तक धूप में सुखा लेना चाहिए। ऐसे बीज बोने के समय तक सुरक्षित रखकर बोने चाहिए। बोने के पहले बीज की अंकुर फेंकने की शक्ति देख लेनी चाहिए और यदि कम हो तो बीज की मात्रा उसी अनुपात में बढ़ा देनी चाहिए।

धान की व्याधियां—

वण्ट—गेहूं-जैसा वण्ट इसमें भी होता है, परन्तु विशेष नहीं होता। बोते समय बीज को पानी में डालकर देख लेना चाहिए। जो बीज डूब जायं उन्हें बोना चाहिए। व्याधिवाले बीज तैर जाते हैं।

खड़ा सिर—इसमें धान की बालें खड़ी रह जाती हैं, क्योंकि चावल ठीक न बनने से वे भारी नहीं होतीं। ऐसी स्थिति में पानी बहा देने से कुछ लाभ होता है।

'टिपबर्न' (बढ़ती हुई फुनगी सूख जाना)—यह किसी सूक्ष्म जन्तु से नहीं होता; परन्तु भूमि में लवण विशेष होने पर होता है। ऐसे खेतों में जिन में यह व्याधि दीखे, सजीव खाद देने से लाभ होता है। पानी को भी बहा देना चाहिए।

जई—कायमा वाली व्याधि इसमें भी पाई जाती है। गेहूं में जैसे फार्मे-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिन का उपचार किया जाता है, इसके लिए भी वैसा करना चाहिए।

ज्वार—कायमावाली व्याधि ज्वार को बहुत हानि पहुंचाती है। दस सेर बीज में दो तोला 'एग्रोसान जी० एन०' या गंधक, तूतिया या कापर कार्बोनेट मिलाकर बोना अच्छा होगा।

बाजरा—इसमें कभी-कभी बालों में दाने न आकर छोटे-छोटे पत्ते आने लगते हैं। ऐसा दीखे तो व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

ग्वार—इसके पत्तों में 'माइट्स' नाम के जन्तु लग जाते हैं, जो रस चूसकर पत्ते को सिकोड़ देते हैं, पत्तों का रंग काला पड़ जाता है। बढ़ती हुई कोंपल काली पड़ जाती है और बाढ़ रुक जाती है। पत्तों के नीचे की ओर उन्हें कुछ गीले करके गंधक का चूर्ण लगाया जाय तो ये जन्तु तुरन्त मर जाते हैं। गंधक का चूर्ण मलमल के कपड़े में बांधकर भुरकाया जा सकता है। सब्जीवाली ज्वार के लिए ऐसा उपचार लाभप्रद सिद्ध होगा।

चना—इसको उक्ठा (विल्ट) नाम की व्याधि बुरी तरह से लगती है। इसमें पौधे एकाएक सूख जाते हैं। व्याधि से बचाववाले चने बोने चाहिए।

रहर या तूर—उक्ठा नाम की व्याधि इसमें भी लगती है। कृषि-विभाग वालों की सम्मति से ऐसी जाति बोनी चाहिए, जिसमें रक्षा की शक्ति अधिक हो।

अलसी—हरदावाली व्याधि कहीं-कहीं लगती है। फसल का हेर-फेर करके ऐसी जाति बोनी चाहिए, जिसपर व्याधि का असर कम हो।

कपास—फूलों की कलियों के झड़ने अथवा फलों के गिरने के रूप में आवश्यकता से अधिक जल से और खाद्य-तत्वों के असमान अनुपात से यह व्याधि होती है। अतः पानी आवश्यकतानुसार ही देना चाहिए। लायड महोदय[1] लिखते हैं कि सोडियम नाइट्रेट के खाद से कलियां कम झड़ती हैं।

तिड़क—इससे कपास के पत्ते लाल होकर जल्दी गिर जाते हैं और फल पकने से पहले ही फट जाते हैं। दस्तूर महोदय[2] की खोज यह बतलाती है

---

[1] N. Y. Acad. Sci. Vol. 39, 1921.

[2] Dastur, R.H.—1944 Sci. Monograph No. 2, Indian Cotton Committee.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि भूमि में नाइट्रोजन की कमी अथवा भूगर्भ-जल में घुलनशील लवण की मात्रा अधिक होने से ऐसा होता है। इसके लिए नाइट्रोजन का खाद देना चाहिए।

उक्ठा—इसमें पौधे सूख जाते हैं। व्याधिग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। कुछ व्याधिरोधक जातियां[1] भी हैं उन्हें बोना चाहिए।

गन्ना, ईख—

लाली—गन्ने में लाल रंग के धब्बे हो जाते हैं और रस कम हो जाता है। इसके लिए बोते समय यह देखकर बोना चाहिए कि बीज के टुकड़े लाली रोग से मुक्त हों। जिन टुकड़ों में लाल या सफेद धब्बे नजर आयें, उन्हें नहीं बोना चाहिए।

कायमा, कडवा—इसमें आखिरी पत्ता चाबुक-सा निकलता है और काले बुरादे से भरा रहता है। व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। गन्ने के टुकड़ों को दो-शतांश फार्मेलिन में डुबोकर दो घंटे तक कपड़े के नीचे दबाकर रख करके लगाना चाहिए।

उक्ठा—गन्ना सूखकर अन्दर से भूरे रंग का हो जाता है।

साग-भाजी में होनेवाली कुछ व्याधियां

'डेम्पिग आफ'—नर्सरी में बहुधा ऐसा होता है कि छोटे-छोटे पौधे बीच में से या जमीन के पास से झुककर मर जाते हैं। इस व्याधि को अंग्रेजी में 'डेम्पिग आफ' कहते हैं। यह व्याधि अधिक तरी से होती है, सो ज्योंही दिखलाई दे, पानी कम कर देना चाहिए।

'मोजेक'—यह व्याधि ऐसी होती है कि इससे पत्तों में पीले-पीले धब्बे पड़ जाते हैं। जब अधिक हो जाती है तो पत्ते मुर्झा जाते हैं, पौधों की बाढ़ रुक जाती है। भिंडी में यह विशेष रूप से दिखाई देती है। वैसे टमाटर, आलू, तोरी, इत्यादि बहुत-सी तरकारियों में पाई जाती है। अधिक

---

[1] निम्नलिखित जातियां उक्ठा-रोधक पाई गई हैं। सुयोग (सूरत), विजय (भडौंच और बड़ोदा), कल्याण उत्तर गुजरात) जरीना, एच० २० (मध्यप्रदेश) और जयवंत (कर्नाटक)।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फैलने न पावे, इसलिए व्याधिग्रस्त पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। यह व्याधि कीट द्वारा फैलाई जाती है, जैसे मलेरिया मच्छर द्वारा फैलाया जाता है।

'मिलड्यू'—इसमें पत्ते भूरे होकर मुर्भाकर गिरने लगते हैं।

'अंगमारी' (ब्लाइट)—इसमें पत्तों पर भूरे धब्बे हो जाते हैं और वाद में काले होकर मुर्भा जाते हैं।

'मिलड्यू' और 'ब्लाइट' के लिए बोर्डो-मिक्सचर का छिड़काव उत्तम होता है।

मटर में 'मिलड्यू' के लिए सात-आठ सेर गंधक का चूर्ण बुरकाना भी अच्छा है।

उपर्युक्त साधारणतः होनेवाली व्याधियां फफूंद-वर्ग की हैं।

वैक्टीरिया द्वारा होनेवाली व्याधियां भी कुछ हैं; परंतु इनमें से आलू में होनेवाली कुछ विशेष हानि करती है। इसका नाम है 'रिंग डिसीज'। जब आलू को काटा जाय तो उसमें लाल रंग का चक्कर दिखलाई देता है। वैसे बोते समय आलू काटकर देख लेना चाहिए और व्यधिवाले नहीं बोने चाहिए।

फूलों की व्याधियां—व्याधियां फलों में भी होती हैं, परन्तु अधिकतर पेड़ों पर कम होती हैं। पके हुए फलों में गोदामों में उन्हें अधिक दिनों तक रखने से हो जाती हैं। चूंकि वे पेड़ों पर बहुत अधिक नहीं होतीं, अतः यहां पर विषय बढ़ाना उचित नहीं जंचता। यदि कोई व्याधि हानिकारक दिखलाई दे तो कृषि-विभागवालों की सलाह से काम लेना चाहिए।

कवकवाली व्याधियों की कुछ औषधियां—इन्हें 'फंगी साईड्स' कहते हैं।

'बोर्डो-मिक्सचर'—एक लकड़ी या मिट्टी के वर्तन में बीस सेर पानी भरकर उसमें आधा सेर तूतिया (Copper sulphate) एक कपड़े में बांधकर डाल दो ताकि वह धीरे-धीरे घुलकर जल में मिल जाय।

एक दूसरे बर्तन में लगभग पांच छटांक चूना लेकर उसे पानी में बुझाकर गाढ़ा घोल बना लें। फिर घोल को भी बीस सेर बनाकर दोनों का मिश्रण कर लें। इस मिश्रण में फिर लोहे की पत्ती या चाकू डालकर देखो।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदि उसपर तांबा जम जाय तो उसमें तबतक और चूना मिलाते जायं जबतक कि तांबा जमना बन्द न हो जाय। ऐसा घोल पिचकारी या 'स्प्रेअर' द्वारा छिड़का जा सकता है।

फफूंद द्वारा पत्ते पर या पौधों पर होनेवाली व्याधियों के लिए गंधक-चूने का घोल भी उत्तम होता है। एक छटांक चूना और एक छटांक गंधक का गाढ़ा घोल बनाकर उसे ढाई सेर पानी में डालकर खूब हिलाओ। स्प्रेअर या पिचकारी द्वारा यह औषधि छिड़की जा सकती है।

पारे का नमक (Mercuric chloride)—एक मन पानी में आधी छटांक औषधि डालकर घोल बना लेना चाहिए। कटे हुए आलू इसमें डुबोकर बोने से वे सड़ने नहीं पाते। यह औषधि बीज को जन्तुरहित करने में भी काम की है; परन्तु जहरीली होती है अतः हाथ से नहीं छूना चाहिए। इसे धातु के बर्तन में भी नहीं बनाना चाहिए।

१९. फसल की तैयारी

बीजवाली फसलें पूर्ण पकने और सूख जाने पर, साग-भाजी उपयोग के योग्य होने पर, फल अधिकांश पकने पर और गन्ने-जैसी फसल को रस तथा चीनी की मात्रा अधिक हो जाने पर ही काटा जाता है या उठाया जाता है।

फसलों को उठाने और उपयोग में लाने के लिए छोटे-मोटे यन्त्रों तथा मजदूरों की आवश्यकता होती है।

इन यन्त्रों में सबसे प्रधान हँसुआ है, जिसे हँसिया व दरांती भी कहते हैं। अधिकांश सूखी हुई फसलें इसीसे काटी जाती हैं। बहुत अधिक क्षेत्रफल होने से कुछ फसलों के लिए विशेषतः चरी वगैरा के लिए बैलों द्वारा चलनेवाली 'रीपर' नाम की कल काम में लाई जाती है। जहां और भी अधिक क्षेत्रफल हो और ट्रैक्टर हों तो बड़ी काटनेवाली कलें, जिनसे कटकर पूले तक आपसे-आप बंध जाते हैं, काम में लाई जाती हैं। जहां मजदूरों का बहुत अभाव हो, वहां गेहूं-जैसी फसल काटने के लिए ऐसी भी कल होती है कि जिसके एक मुंह पर गेहूं कटता है—उसीमें उसकी गहाई और उड़ाई भी हो जाती है और साफ गेहूं बोरों में भरते जाते हैं। उन्हें सिर्फ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सीना पड़ता है। ऐसी कलों से भूसा, ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ती जाती हैं, खेतों में पीछे गिरता जाता है।

खोदनेवाली फसलों के लिए खुर्पी विशेष उपयोगी है। अधिक गहरा खोदना हो तो कुदाल (फावड़ा) काम में लाया जाता है। साधारणतः साग-भाजी की फसलों के उपयोगी अंग हाथ से ही तोड़े जाते हैं। फल भी हाथ से तोड़े जाते हैं। पतली टहनियों पर से सींकी से उतारा जाता है।

काटने के पश्चात् अनाज की फसलें खलिहान में तैयार की जाती हैं। अधिकांश का दाना-भूसा बैलों के पांव-तले कुचलवाकर पृथक् किया जाता है। बाद में हवा में उड़ाकर साफ कर लेते हैं। हवा के अभाव में उड़ानेवाली कल (winnower) भी अच्छी उपयोगी होगी।

डेढ़ अश्व-बल की शक्ति से चलनेवाली ऐसी कल भी होती है, जो ८ घंटे में २२ मन गेहूं की गहाई और उड़ाई का काम पूरा कर देती है।

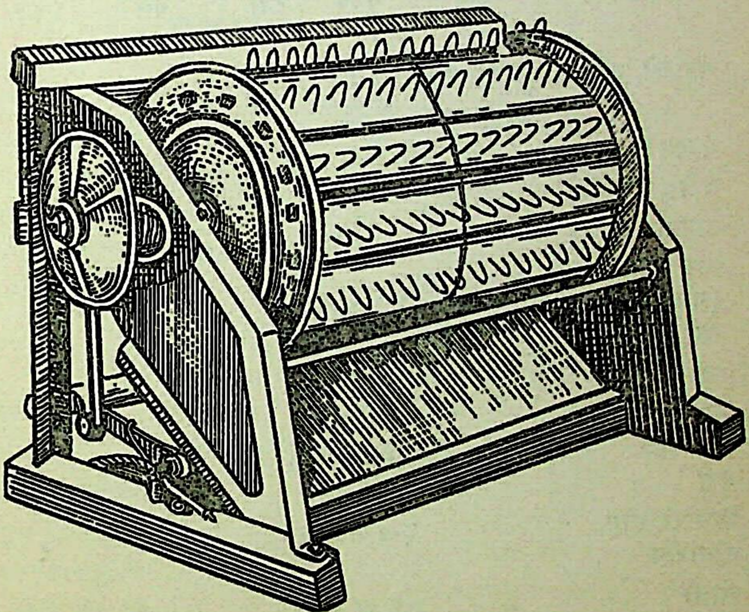

चित्र नं० ३२, उड़ानेवाली कल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधिक अनाज हो तो 'थ्रेशर और विनोअर' नाम की कलें भी ट्रैक्टरों से चलाकर काम में लाते हैं। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, कलें ऐसा भी होती हैं जो खेतों में चलते-चलते ही सब काम कर देती हैं।

कुछ फसलों के बीज डंडों से पीटकर अलग किये जाते हैं जैसाकि मक्का या अरहर में होता है। धान अधिकतर बैलों द्वारा गहाई से और नहीं तो तख्ते पर पीटकर अथवा पैरों से कुचलकर छुड़ाते हैं। धान छुड़ाने के लिए चित्र में दी हुई कल भी काम में आती है, जो पैर से चलती है। तिल-जैसी फसल की फलियां फट जाती हैं, सो सारे ढेर को उलटकर धीरे-धीरे पतले डंडे से पीटने से बीज नीचे गिर जाते हैं। कपास को वैसे ही चुनना होता है। धागेवाली फसलों सन और पटुआ के सूखे पौधों को पानी में गलाकर ही रेशा छुड़ाना होता है।

फसल की कटाई में मजदूरों की आवश्यकता का ब्योरा

नाम फसल	कार्य	पुरुष	स्त्री	बैल जोड़ी	एकड़ प्रतिदिन
गेहूं, जौ, जई	काटना और इकट्ठा करना	५-६ या ८-१०			१
मक्का या ज्वार	,,	३-४ या ५-६			१
चरी (रीपर से)	,,	२-३ या ५-६		२	६-७
बाजरा	,,	६-७ या १०-१२			१
धान, रागी (मडुवा) या छोटे धान	,,	३-४ या ६-७		—	१
रहर या तूर		३-४ या ६-७		—	१
मसूर, मूंग, उड़द मोठ-मटर, कुल	,,	३-४ या ६-७		—	१
खिसारी, सोम, सोयाबीन	,,	६-७ या ८-१०		—	१
चवली चना	,,	५-६ या ८-१०		—	१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलसी (तीसी)	,,	४-५ या ७-८	—	१
कुसूम	,,	५-६ या ८-१०	—	१
तिल, रामतिली	,,	६-७ या ८-१०	—	१
सरसों		६-७ या १०-१०	—	१
मूंगफली	खोदना और	१०-१२ और	—	१
	चुनना	२५-३०	—	१
कपास	चुनना (बहुधा ठेके से चुना जाता है और तीन बार चुनना होता है)	—२०-२५	—	१
सन, पाट	काटना और इकट्ठा करना	८-१० या १०-१२	—	१
तम्बाकू	,,	३-४ और ७-८	—	१
गन्ना	काटना	२५-३० - -	—	१
साग-भाजी				
आलू, अर्वी, रतालू, कच्चू, हल्दी, अदरक	खोदना और इकट्ठे करना	२०-२२ या २५-३०	—	१
शकरकन्द	—	१५-१६ और २०-२५	—	१
		१ या २०-२५	१	१
प्याज	उखाड़ना पत्ते काटना	२०-२२ या २५-३०		१
अन्य तरकारियां बहुत-सी तो ज्यों-ज्यों तैयार होती जाती हैं, तोड़ ली जाती हैं।				

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खलिहान में—फसल काटने के बाद खलिहान में लाई जाती है और वहां पर बैलों के पांव-तले गहाई की क्रिया होती है अथवा दूसरी रीतियों से फसल तैयार करते हैं। बहुत-से स्थानों में ऐसी रीति है कि ज्वार, बाजरा, मक्का इत्यादि की बालें खेतों में पहले तोड़ या काट ली जाती हैं और बाद में कड़वी काट लेते हैं। कुछ स्थानों में ऐसा होता है कि भुट्टे-सहित फसल काट ली जाती है और फिर खलिहान में भुट्टे छुड़ाये जाते हैं। गहाई के स्थान में चारों ओर मजदूर हँसुआ लेकर बैठ जाते हैं। एक या दो पुरुष उनके सामने ढेर लाकर डालता जाता है और वे काटकर खलिहान में फेंकते रहते हैं। जब सब बालें कट जाती हैं तो फिर कड़वी का पूला बांधकर एक ओर जमा कर दिया जाता है। भुट्टे तोड़ने या काटने की क्रिया को 'वेड़ना' भी कहते हैं। 'वेड़ने' के पश्चात् बैलों को गोल चक्कर में घुमाते हैं, जबतक कि दाना नहीं छूट जाता। इसके बाद उड़ाकर दाना-भूसा अलग किया जाता है। गेहूं, जौ, जई, धान, चना इत्यादि में 'वेड़ने' की क्रिया नहीं होती; समूचे पूले ही खलिहान में फैला दिये जाते हैं।

खलिहान में मनुष्य तथा पशु-शक्ति की आवश्यकता—

फसल	कार्य	पु.	स्त्री	बैल जोड़ी	
ज्वार, बाजरा	बाल काटना	१	५-६		दो एकड़
	और गाहना	२	—	४	की उपज
गेहूं, जौ[1],	,,	२	—	७	,,
जई	,,	१	—	४	,,
धान, रागी[2]	,,	२	—	८	,,
छोटे धान	,,	१	—	४	,,
चना	,,	१	—	४	,,

---

[1] गेहूं, जौ की गहाई दोपहर के बाद करते हैं ताकि वे सूख जायं और भूसा जल्दी टूट जाय।

[2] धान—इसको विशेष सूखने नहीं देते, बल्कि कहीं-कहीं विशेष सूख जाय तो पानी छींटते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मसूर, मूंग, उड़द[1]					
सायवीन, मटर					
चंवली, सेम	,,	१	—	४	,,
तीसी, अलसी	,,	१		४	तीन एकड़ की उपज
तिली[2]	बीज गिराना	४ या ६			प्रति एकड़
कुसुम	पीटना	५-६ या ८-१०			,,

उड़ावन—गहाई के वाद दाना-भूसा पृथक्-पृथक् किया जाता है, थोड़ी फसल सूप से और अधिक के लिए प्राकृतिक वायु अथवा कलों द्वारा यह काम करना होता है। हवा में उड़ाने के लिए यदि हवा काफी रही तो जमीन पर खड़े-खड़े ही टोकरियों में भरकर अनाज गिराया जाता है, जिसमें दाना भारी होने से नीचे गिर जाता है और भूसा कुछ दूर उड़ जाता है। अनाज की ढेरी पर जो कूड़ा गिरता है, उसे रहर के डंठल या झाड़ू से बुहार देते हैं। हवा कम होती है तो तिपाई पर चढ़कर दाना गिराते हैं। यदि हवा अच्छी रही तो एक दिन में गेहूं-जैसी फसल का ४०-५० मन अनाज साफ किया जा सकता है। इस कार्य के लिए एक व्यक्ति टोकरी भरनेवाला, एक गिरानेवाला और एक अनाज पर जो कूड़ा-कर्कट गिरता है, उसे बुहार निकालनेवाला—इस प्रकार तीन व्यक्ति लगते हैं।

यदि यह कार्य उड़ानेवाली कल से, जो मजदूरों से चलाई जाती है, किया जाय तो ८० मन माल तैयार हो जायगा। ऐसी कल में अनाज छन भी जाता है और साफ भी हो जाता है।

यदि इंजिन द्वारा चलनेवाली कल का जिसमें गहाई और उड़ावन दोनों कार्य होते हैं, प्रयोग हो तो उसकी योग्यतानुसार प्रति-घंटा २५-३० मन अनाज मिल जाता है।

धान से चावल निकालना—एक स्त्री एक दिन में पन्द्रह सेर धान कूट

---

[1] बहुधा पीटकर ही छुड़ा लेते हैं क्योंकि क्षेत्रफल कम ही होता है।

[2] तिल के ढेरों को उलटकर हल्के अण्डों से पीटा जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकती हैं। यदि दो हुईं तो एक मन तक कूटा जा सकता है। ढेकुली काम में लाई जाय तो दो मजदूर मिलकर तीन-चार मन तक कूट देंगे। कहीं-कहीं

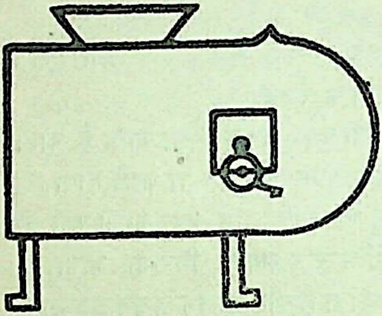

चित्र नं० ३३—उड़ावन की कल

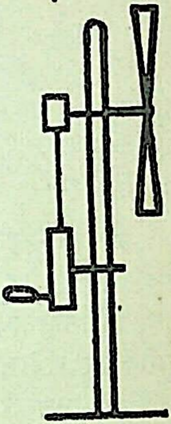

चित्र नं० ३४—उड़ावन का पंखा

चक्की भी काम में लाई जाती है, जिसके लिए ऊपर का पाट मिट्टी के भूसे के मिश्रण का होता है। धान से चावल निकालने के छोटे-बड़े कारखाने भी होते हैं, जिन्हें 'राइस मिल्स' कहते हैं।

२०. वितरण और व्यवसाय

कृषकों की कड़े परिश्रम से उपजाई हुई वस्तुओं का वितरण और व्यवसाय कैसे होता है, इसका संक्षिप्त वर्णन फसलों के वर्णन में दिया गया है। यहां पर यह बतला देना उचित होगा कि बीज से उपजाई जानेवाली फसलों की उपज का कुछ भाग बोने के लिए रखना पड़ता है और शेष दूसरे कामों में आता है।

व्यवसाय को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं :

(१) ऐसी वस्तुओं का व्यवसाय, जो सूखी हों, सम्हालकर आसानी से रखी जा सकें और चाहे जब बेच सकें या काम में लाएं; जैसे धान्य, कपास इत्यादि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(२) ऐसी वस्तुएं, जिनका उपयोग ताजी स्थिति में ही होता हो; जैसे साग-भाजी और फल।

पहली प्रकार की वस्तुएं कृषकों से ग्रामीण व्यवसायी, उनसे नगरवाले, उनसे बड़ी मंडीवाले और उनसे निर्यात-कर्त्ता मोल लेते हैं और अपना-अपना नफा चढ़ाते रहते हैं। जो माल बाहर नहीं जाता, उसकी धारा मंडी वाले व्यापारियों के यहां से फिर उलटी बहती है और उपयोग-कर्त्ता के पास कई व्यापारियों द्वारा जाता है। उत्पादन-कर्त्ता से उपयोग-कर्त्ता तक भांति-भांति की वस्तुओं पर जितने मध्यस्थ होंगे, मूल्य उतना ही बढ़ता जायगा। अब कुछ बड़े-बड़े कृषक स्वयं मंडी तक ले जाते हैं और उन्हें विशेष लाभ होता है। वरना छोटे-छोटे कृषकों को तो उपयोग-कर्त्ता जो मूल्य देते हैं, उसका ७० से ८० शतांश तक ही मिलता है, शेष मध्यस्थ ही ले लेते हैं। जहां तक तैयार माल का संबंध है जैसे रुई से कपड़ा या गन्ने से चीनी, वहां तो उन्हें बहुत ही कम मिलता है।

जो माल मंडियों में जाता है, उसपर कृषकों को बहुत-से कर अथवा मेहनताना देना पड़ता है जैसे चुंगी, तुलाई, पल्ले-भराई, हम्माली, चौकी-दारी, मेहतर (मंडी झाड़नेवाले), पक्के आढ़तियों के रसोईवाले, पानी वाले इत्यादि। इनके अलावा चुकारा तुरन्त लेना हो तो आढ़तिये उसपर अपना ब्याज चढ़ा देते हैं। हिसाब के समय धर्मादा, गौशाला, मन्दिर इत्यादि का खर्चा पड़ जाता है। ऐसी देन वस्तु तथा नाणे के रूप में होती है।

दूसरे प्रकार के माल, सब्जी, फल इत्यादि की बिक्री चार प्रकार से होती है:

(१) खेतों या बगीचों की फसल बेचना।

(२) अपनी ओर से माल बाजार भेजकर थोकबन्द व्यापारी के हाथ बेचना।

(३) स्वयं अपनी दूकान खोलकर अपने आदमी द्वारा बिकवाना।

(४) सहकारी मंडल, जिसके सदस्य स्वयं भी हों, उसके द्वारा बेचना।

पहली रीति से बेचने में आय तो कुछ कम होती है, परन्तु रखवाली, छंटनी तथा बाजार तक माल भेजने की झंझट से बचाव हो जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरी रीति से वेचने में साग-भाजी या फल ऐसी स्थिति में और ऐसी रीति से भेजने पड़ते हैं कि उनका रूप, रंग और आकार उत्तम बना रहे।

तीसरी रीति काम में लाई जाय तो परिश्रम विशेष करना पड़ता है। तरकारी या फलों की भिन्न श्रेणियां बनानी पड़ती हैं। उनको दूकानों में सजाने की ओर ध्यान रखना पड़ता है और बेचनेवाला व्यक्ति भरोसेवाला, व्यवहार-कुशल, मधुरभाषी रखना होता है ताकि ग्राहकों को अपने व्यवहार से मोहकर माल उनके हाथ वेच ही दे।

चौथी रीति से वेचने में लाभ अधिक होता है, क्योंकि भाव ठीक बना रहता है। चढ़ा-ऊपरी नहीं होने से यथार्थ मूल्य प्राप्त हो जाता है। यदि माल बाहर भेजना हुआ तो उसको पैक करने तथा भेजने की विशेष सुविधा हो जाती है।

उपयोग और गुण

फसलों के विभिन्न भागों का कैसा उपयोग होता या हो सकता है, इसपर भी फसलों के साथ-ही-साथ प्रकाश डाला गया है। गुण में औषधिक गुणों के सिवाय पौधों के विशेष उपयोगी अंगों का विश्लेषण[1] पोषक पदार्थ के नाम से दिया गया है।

---

[1] एकरायड महोदय (Aykroyd W. R. 1941) के स्वास्थ्य-बुलेटिन नं० २३ के आधार पर।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूसरा खण्ड

विभिन्न फसलों की खेती

१—अन्नों की खेती

(१) गेहूं Wheat *Triticum-Varieties*

गेहूं का पौधा बरानी खेती में भूमि की उर्वरा-शक्ति के अनुसार दो-ढाई फुट से लेकर तीन-चार फुट तथा सिंचाईवाले खेतों में पांच फुट और उससे अधिक ऊंचा भी हो जाता है।

वैज्ञानिक मतानुसार गेहूं 'बलगारी' और 'ड्यूरम' ऐसी दो मुख्य जाति के हैं। 'बलगारी' से 'ड्यूरम' का बीज बड़ा और भारी होता है। इनमें आमिषजातीय पदार्थ की मात्रा भी कुछ विशेष होती है। उपर्युक्त दो वर्गों के सिवाय 'ट्रिटिकम डायकोकम' नाम का एक वर्ग और भी है जिसके गेहूं खापली कहे जाते हैं। ये बम्बई की तरफ होते हैं।

भारत में होनेवाले गेहूं के व्यावसायिक नाम—

'बलगारी सफेद'—सफेद फारम (फार्म के), शरबती (शरबती रंग के समान दानेवाले), दर्रा—(मिश्रित तथा कुछ टूटे गेहूं मिले हुए) सफेद पिस्सी (उत्तरप्रदेश के पूर्वीय भाग में तथा मध्यप्रान्त में ऐसे गेहूं होते हैं), पूसा (पूसा के बीज से उपजाये हुए साफ-सुथरे), चन्दौसी—कलकत्ते में अच्छे सफेद गेहूं चन्दौसी के नाम से कहे जाते हैं।

'बलगारी लाल'—लाल कनक—कनक शब्द पंजाब की तरफ गेहूं के लिए आता है। लाल रंग के गेहूं को लाल कनक कहते हैं। उत्तरप्रदेश में लाल पिस्सी भी होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'ड्यूरम'—ये गेहूं अधिक ताकतवर होते हैं। इनकी रोटी बड़ी स्वादिष्ट होती है। इनसे सूजी और सेवैंयां भी अच्छी बनती हैं। ये सूखे वातावरण वाली भूमि में अच्छे होते हैं। अधिक तरीवाली भूमि में बोये जायं तो ये गुण नहीं रहते। मध्यप्रदेश, हैदराबाद और बम्बई प्रान्त की काली मिट्टी इनके लिए अच्छी है।

बंसी—मोटा कठोर दानेवाला चमकीला।

जलालिया—बंसी-जैसा, परन्तु कुछ पीले रंग का।

खंडवा—खंडवे के निकट का।

मालवी—इसे एकदानिया भी कहते हैं। मालवे का होने से इसका मालवी नाम पड़ गया है।

डायकोकम—छोटा पतला, लाल दानेवाला।

जलवायु—पच्चीस इंच से कम वर्षावाले स्थान में बिना सिंचाई के गेहूं अच्छे नहीं होंगे। इनके पकते समय यदि गरम हवा चल जाय तो दाना ठीक नहीं बैठता, वह पतला रह जाता है। इसलिए जहां गरम हवा मार्च से ही चलनी शुरू हो जाय जैसे मध्यप्रदेश या बम्बई की तरफ होता है, तो वहां जल्दी पकनेवाली जाति के गेहूं बोने चाहिए।

भूमि और जुताई—इनके लिए मटियार दुमट भूमि अच्छी होती है। जुताई जितनी अधिक की जाय लाभ ही होगा। कम-से-कम दो बार हल और दो बार बखर तो अवश्य चलना चाहिए। जहां एक ही फसल ली जाती है, वहां बरसात में खेतों में घासपात न जमे इसलिए आवश्यकतानुसार जुताई करते रहना चाहिए।

गेहूं में खाद्य पदार्थ—	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०	पो० आ०
बीज	१०	·१.९३%	०.८३%	०.५४%
भूसा	१०	०.५१%	०.२३%	०.६६%

खाद—गेहूं के बीज में नाइट्रोजन की मात्रा १.५% से लेकर दो-ढाई शतांश तक जाति-अनुसार हो सकती है। खापली में तो ३ शतांश तक भी नाइट्रोजन मिलती है। लेखक को अपने प्रयोगों में १.५४% से २.१४% तक नाइट्रोजन बीज में और ०.२६% से लेकर ०.८२% तक भूसे में मिली। औसत मात्रा १.९% बीज में और ०.५% भूसे में मानकर खाद्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की मांग की गणना करनी चाहिए। उपज को उपर्युक्त मात्रा से गुणा करके सौ से भाग दे दिया जाय तो मात्रा प्रति-एकड़ निकल आयगी। उपज सेर या पौंड में हो तो नाइट्रोजन की मात्रा भी सेर या पौंड में होगी। यदि कृत्रिम खाद देना हो तो उपर्युक्त गणना द्वारा आयी हुई मात्रा पहुंचानी चाहिए। गोबर जैसा खाद देना हो तो इतना देना चाहिए कि नाइट्रोजन की मात्रा दूनी हो जाय। इसी भांति फासफोरस की गणना ०.८५% बीज में और .१२% भूसे में मानकर करनी चाहिए।

चूंकि उपज पृथक्-पृथक् स्थानों में पृथक्-पृथक् होती है और सिंचाई तथा खाद से उपज में काफी बढ़ती हो जाती है, इसलिए अपने-अपने यहां के अनुमान पर गणना कर लेनी चाहिए।

यदि गेहूं की उपज १५ मन और भूसे की २७ मन[1] प्रति-एकड़ मान लें और नाइट्रोजन की मात्रा मोटे तौर पर २% दाने में और ०.५ शतांश भूसे में मानकर गणना करें, तो हमें लगभग १५ सेर नाइट्रोजन चाहिए। खाद के स्तम्भ में दिये हुए वर्णन का विचार रखते हुए हम देखें तो हमें १७५ मन गोबर का खाद या साढ़े आठ मन खली का या डेढ़ मन एमोनियम सलफेट देना होगा।

फासफोरस की गणना द्वारा जितना निकले, उससे लगभग तिगुना फासफोरस पहुंचे, इतना देना होगा।

गेहूं के लिए जहां वर्षा ४० इंच से अधिक हो, वहां सन का हरा खाद भी अच्छा सिद्ध होगा। इसलिए सन के बीज ३० सेर से ४० सेर प्रति-एकड़ तक डालने चहिए। जहां वर्षा ४० इंच से कम हो, ग्वार के बीज २० सेर प्रति-एकड़ बोकर उसका खाद देना भी अच्छा होगा। ऐसी फसल जब आठ सप्ताह की हो जाय तब गाढ़ देनी चाहिए।

जो कृषक नाइट्रोजन के रूप में खाद की गणना न कर सकें उन्हें ऐसा करना चाहिए कि प्रति-मन उपज के लिए १० मन गोबर का खाद अथवा ५ शतांश नाइट्रोजनवाली आधा मन अथवा ५ सेर एमोनियम सलफेट देना चाहिए। नाइट्रोजन के खाद के साथ दो-ढाई मन सुपरफासफेट या

---

[1] मन = ३७.३२ कि० ग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हड्डी का चूरा डालना भी उत्तम होगा।

इतना कह देना अनुचित नहीं होगा कि कम वर्षावाले क्षेत्र में, जहां सिंचाई का प्रवन्ध न हो, अधिक खाद लाभप्रद नहीं होंगे। सिंचाईवाले क्षेत्रों में ही खाद का प्रयोग करना चाहिए।

हेरफेर—गेहूं के साथ दलहन की फसलों का हेरफेर उत्तम होता है। जहां दो फसलें ली जायं वहां पहली फसल को खूब खाद देना चाहिए ताकि गेहूं को नहीं देना पड़े। कपास-जैसी गहरी जड़वाली फसल के साथ भी हेरफेर अच्छा होता है—यदि मिश्रण बोना हो तो गेहूं-चना या गेहूं-मटर का बोना चाहिए।

बीज और बोआई—अधिकांश स्थानों में बीज नाई, तिफन य सीड-ड्रिल से वोये जाते हैं। कुछ स्थानों में हल से चांस बनाकर उनमें बीज गिरा देते हैं और कहीं-कहीं छींटकर भी वोते हैं। बीज की मात्रा जमीन की जाति, वोने की रीति तथा बोने के समय पर निर्भर है। कमजोर भूमि में अपेक्षाकृत बीज अधिक डालना होता है, क्योंकि ऐसी भूमि में बीज दौंजी कम फेंकते हैं। जहां छींटकर वोना होता है वहां भी कुछ अधिक ही गिराना होता है। उसी भांति जब भूमि में तरी कुछ कम हो तो वहां भी कुछ अधिक ही बोना होता है ताकि कुछ वीजों के न अंकुरने से जगह खाली न रह जाय। साधारणतः प्रति-एकड़ एक मन के हिसाब से बोना अच्छा होता है, परन्तु पंजाब में बीस-पचीस सेर ही काफी माना जाता है। उत्तरप्रदेश में पश्चिम से पूर्व की ओर ज्यों-ज्यों बढ़ते जाते हैं, पचीस-तीस सेर से लेकर डेढ़ मन तक भी बोते हैं। कतारों में बोया जाय तो कतारों का अन्तर ९ इंच का होना चाहिए।

बीज की कुछ चुनी हुई जातियां[1]—

पंजाब—सी० ५१८ सिंचाईवाले खेतों में और ५९१ बरानी के लिए।

---

[1] समस्त भारत में बीज की उन्नत जातियां अलग-अलग फसलों की कई हैं और नई-नई निकलती जाती हैं, इसलिए अपने स्थानीय ग्राम-सेवकों से अथवा कृषि-विभागवालों से पूछकर बोना चाहिए। इस पुस्तक में कुछ विशेष प्रचलित जातियां दी गई हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तर प्रदेश—पश्चिमी भाग में सी० ५१८, सी० ५९१, एन० पी० ७१९, एन० पी० १२५, पूर्वीय भाग में एन० पी० ५२, सी० १३।

बिहार—एन० पी० ५२ और एन. पी० ७१०, ७६१।

बंगाल—एन० पी० ५२ और ७१०।

बम्बई—निफाड़ ४ और निः ८१ और मोतिया बंसी १६८।

मध्यप्रदेश—शरबती ११५, जबलपुर के हवेली वाले[1] खेतों में ए० ०९७, एन० पी० ४,१२,५२ और सी० ५९१।

मध्यभारत और राजस्थान[2]—एन० पी० ७१० और ७१८ सी ५९१, बंसी ११६ एन० पी० ४२।

सौराष्ट्र—एन० पी० १६५ और एन० पी० ७१०।

बोने का समय—उत्तर भारत में ज्यों-ज्यों पूर्व से पश्चिम की ओर जाते हैं, बोने का समय आगे-आगे बढ़ता जाता है। विहार तथा उत्तरप्रदेश में आश्विन-कार्तिक में, तो पंजाब में मार्गशीर्ष तक भी बोते हैं। उधर बम्बई की तरफ आश्विन (सितंबर-अक्तूबर) में ही बोने का काम समाप्त हो जाता है। असली अभिप्राय यह है कि कुछ सर्दी गिरना शुरू हो जाय, तब बोना चाहिए। जल्दी बोने से पौधे लम्बे और पतले रह जाते हैं।

निंदाई, निराई या सोहनी—बरानी खेतों में बहुधा नहीं करनी पड़ती। सिंचाईवाले खेतों में एक-दो बार करनी होगी। कभी-कभी अधिक उपजाऊ भूमि में या अधिक खाद से पत्ते बड़े-बड़े हो जाते हैं जिससे पौधों के गिरने का भय रहता है। ऐसी स्थिति में कुछ पौधे ऊपर से काट देने चाहिए। जब बालें निकलने लगें तब दूसरी जाति के गेहूं के अथवा दूसरे पौधे हों तो उन्हें और व्याधिग्रस्त पौधों को उखाड़ देना चाहिए।

सिंचाई—जहां बीस इंच से कम वर्षा हो वहां दो-तीन सिंचाई में कुछ

---

[1] खेतों को बांधकर बरसात का पानी रोक लिया जाता है और बाद में उसे निकालकर गेहूं बोते हैं।

[2] भटनागर महोदय लिखते हैं कि हरदेवाले सालों में एन० पी० ७१० और ७१८ स्थानीय गेहूं से अच्छी उपज देते हैं। Indian Farming Vol. 2, p. 27, 1953.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिलाकर करीब नौ-दस इंच पानी पहुंच जाय, तो अच्छा है। पचास-साठ इंच वर्षावाले स्थानों में सिंचाई से विशेष लाभ नहीं होगा। बीच के वर्षा वाले स्थानों में एक-दो सिंचाई लाभप्रद होगी।

कीट—प्रारम्भ में दीमक बहुत हानि पहुंचाती है। यदि विशेष हानि कहीं दिखाई दे तो पांच सेर डी० डी० टी० पहुंचे, इतना इसका चूर्ण प्रति-एकड़ के हिसाब से मिट्टी में मिला देना चाहिए। वैसे सिंचाई से भी दीमक से रक्षा हो सकती है। गोदाम में हानि पहुंचानेवाले कीट का वर्णन (पृष्ठ-१२०) पर देखिये।

फसल की तैयारी और उपज—गेहूं सुबह के समय काटना अच्छा होता है, क्योंकि दोपहर के बाद काटने से नमी कम हो जाती है और गेहूं झड़ते बहुत हैं। इसी कारण से बादलोंवाला दिन भी काटने के लिए उत्तम होता है। गेहूं की कटाई दक्षिण भारत में माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) में, मध्य प्रदेश, मध्यभारत, बिहार तथा उत्तरप्रदेश के पूर्वीय भागों में चैत्र (मार्च) से प्रारम्भ होकर वैशाख (मध्य अप्रैल) तक चलती रहती है। पश्चिमीय उत्तरप्रदेश तथा पंजाब में ज्येष्ठ (मई) तक भी कटाई चलती रहती है। कांगड़ा की घाटी में ज्येष्ठ में बोकर आश्विन में काटते हैं।

फसल हँसुए से काटी जाती है। खेत समतल और क्षेत्रफल अधिक हो तो ट्रैक्टर और 'हारवेस्टर' नाम के यंत्र से भी काम लिया जा सकता है। परन्तु जहां पशुओं को भूसा खिलाने का प्रश्न हो, जिसके लिए उसके छोटे-छोटे टुकड़े करना होते हैं तो खलिहान में पशुओं से दौनी कराना ही उत्तम है। गेहूं के पूले बांधने के लिए कहीं-कहीं रस्सी तथा खजूर के खोड़ (पत्ते-वाली टहनी, चीरकर काम में लाते हैं। कहीं-कहीं पलाश की जड़ों पर से तंतु निकालकर उनसे भी पूले बांधते हैं। इन्हें बाकड़े के बन्द कहते हैं। खलिहान में पूलों को सुखाने के पश्चात् बैलों से दौनी करना होता है। आठ-दस बैल दोपहरी के बाद चलाने से दो एकड़ (तीस-चालीस मन) के गेहूं तैयार हो जाते हैं। बाद में हवा में या उड़ावनवाली कल से दाना-भूसा अलग कर लेते हैं। गेहूं के लिए अब तो ऐसी कलें भी बन चुकी हैं जिनसे गेहूं खेतों में ही कट जाते हैं, साथ-ही-साथ उसी कल में दौनी और उड़ावन का काम भी होकर बोरे भर जाते हैं। ऐसी कलें एक घंटे में पचीस-तीस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन गेहूं तैयार कर देती हैं।

उपज—बरानी से औसत उपज १० मन और सिंचाई १५ मन प्रति-एकड़ मिल जाती है। वैसे कृषि-पंडितों ने खाद और सिंचाई के आधार पर साठ-सत्तर[1] मन तक भी पैदा की है। भूसे की उपज बरानी खेतों में बीज से ड्योढ़ी और सिंचाईवाले खेतों में पौने दो गुनी तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का लगभग बारह-तेरह शतांश भाग बीज के काम आता है, शेष खाने के काम आता है और वह भारत में हा खप जाता है। व्यवसाय देखा जाय तो साधारण मध्यम श्रेणी के व्यापारियों द्वारा बड़ी मंडियों में जाता है और वहां से फिर उपयोगकर्त्ताओं के पास पहुंचता है।

उपयोग और गुण—हरे पके गेहूं की बालें आग में भूनकर खायी जाती हैं। सूखे गेहूं का दलिया, सूजी, आटा, मैदा मनुष्यों के खाने के काम में आता है। चोकड़ और भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। गेहूं शीतल, पुष्टिप्रद, कफनाशक तथा दस्तावर होता है। नया गेहूं गरम और कफकारक होता है, इसलिए नये गेहूं जबतक दो-तीन महीने के न हो जायं, तबतक काम में नहीं लाने चाहिए। मधुमेह और वायु-विकार में चोकर की रोटी अच्छी मानी जाती है। लू लग जाने पर चोकर और घी पांव के तलवों में मला जाता है।

गेहूं के पोषक द्रव्य शतांश में—

	जल	आमिष-जातीय	स्नेह	शर्करा-युक्त	कैल०	फास०	लोहा
आटा	१२.२	१२.१	१.७	७२.२	०.०४	०.३२	०.००७३
मैदा	१३.३	११.०	०.६	७४.१	०.०२	०.०८	·०००१

(२) धान, चावल, Paddy *Oryza sativa*

धान को कूटकर छिलका हटा देने से चावल प्राप्त होते हैं।

---

[1] १९५४-५५ में ग्राम खुरई, जिला सागर, मध्यप्रदेश के सेठ ऋषभकुमार जी ने ७२ मन प्रति-एकड़ की उपज प्राप्त की—उन्नत कृषि-चयनिका १९५६, पृ० २२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारतवर्ष में धान की खेती का महत्त्व विशेष है। गेहूं की खेती से धान की खेती का क्षेत्रफल तिगुना और उपज चौगुनी है। धान का पौधा गेहूं के पौधे जैसा ही होता है। बालें निकलने पर उनकी कई शाखाएं निकलती हैं, जिनपर धान के कण चिपके रहते हैं। पौधों की ऊंचाई दो फुट से लेकर आठ-दस फुट तक की होती है। सबसे ऊंचे पौधे 'बोरो' धान के होते हैं जो गहरे पानी में होते हैं। ज्यों-ज्यों पानी बढ़ता है, पौधे भी बढ़ते जाते हैं।

जलवायु—धान के लिए पानी जितना मिल सके अच्छा है, परन्तु पौधों को धूप भी साथ-साथ मिलनी चाहिए। बिना सिंचाई के सब धान उन स्थानों में हो जाते हैं जहां वर्षा ६० इंच से अधिक हो। ४० से ६० इंच वाले स्थानों में कुछ जातियां होती हैं। मोटे दानेवाला धान २५ से ४० इंच-वाले स्थानों और २५ इंच से कमवाले स्थानों में तो धान बिना सिंचाई के होगा ही नहीं। सिंचाई भी नहर की होनी चाहिए।

भूमि और जुताई—धान की इतनी जातियां हैं कि ढूंढ़ने से प्रत्येक प्रकार की भूमि के लिए मिल जाती है। लेकिन अच्छे पतले चावलों के लिए मटियार-दुमट भूमि अच्छी होती है। जिस ऊसर भूमि में दूसरी फसलें नहीं हो सकतीं, उनमें होनेवाली धान की जाति मिल जाती है। बरसात आने से पहले खेतों को जोतकर खाद दे देना चाहिए। जिन खेतों में रोप लगाये जाते हैं उन खेतों की पानी-भरी गीली मिट्टी में हल चलाना पड़ता है।

खाद और हेरफेर—धानमें खाली नाइट्रोजन के खाद अधिक नहीं देने चाहिए। यदि ऐसा किया जायगा तो दाना कम बैठेगा और पुआल अधिक हो जायगा। प्रति-मन धान की उपज के लिए लगभग ८ मन गोबर का खाद या १६ सेर खली या ४ सेर एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

धान के लिए हरा खाद भी अच्छा होगा। जहां साठ इंच से अधिक वर्षा हो वहां ढेंचा और साठ से कमवाली में सन का खाद ठीक होगा। इसके लिए मई में हरे खाद के बीज बोकर आषाढ़ (जून) के अन्त में गाड़ देना चाहिए। इसकी सफलता वहीं होगी, जहां वर्षा जल्दी शुरू हो जाती है अथवा सिंचाई से खाद उपजाया जाय। ढेंचे की बाढ़ कभी-कभी इतनी हो जाती है कि एक एकड़ की उपज से दो एकड़ को खाद दे सकते हैं। मद्रास की तरफ पेड़ों के हरे पत्ते भी खाद के काम में लाये जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धान में खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)—

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०	पो० आ०
धान	१२.६५%	१.०८%	०.५४%	०.२५%
भूसा	९.०९%	८.५६%	०.२२%	२.५०%

फासफोरस के खाद के लिए सुपरफासफेट और हड्डी का चूरा दोनों उत्तम हैं। अम्लदार भूमि में हड्डी का चूरा और दूसरी में सुपर फासफेट लगभग २० सेर फारफोरस पहुंचे, इतना देना चाहिए।

हेरफेर—जिन खेतों में तरी अच्छी हो, धान की फसल के बाद जल्दी होनेवाली मूंग, मसूर, चना, मटर इत्यादि दलहन की फसलें ले लेनी चाहिए। **मिश्रण**—कहीं मक्का के साथ भी मोटे चावलवाला धान वो दिया जाता है।

बीज और बोआई—धान के नम्बरी बीज कृषि-विभाग की सम्मति से चुनने चाहिए। वैसे कुछ मुख्य जातियों के नंबर यहां दिये जाते हैं—

आसाम—नं० १३६-६ के एम० जे० ए० ३ एम० १२२।

बंगाल—बांकुड़ा नं० १ चिनसुरा १ और २।

बिहार—बी० आर० १६, १७ और बी० आर० १ से ८ तक।

उत्तरप्रदेश—टी० ४३ सीकंवाली पश्चिमीय तथा मध्य भाग टी० १२, २१, २२, १७, १९ पूर्वीय भाग ए ६४ और १३६।

मध्यप्रदेश—आर० १०, आर ११ (रूनराज), आर १२ (बासपतरी), आर १५ चिनूर, आर १४ बादशाहभोग।

उड़ीसा—कुजगं १२६, बी० डी० १, बेहरामपुर एन ९, ४०, ४४, ४८।

मद्रास—ए० डी० टी० ३, ९, सीओ १९, सीओ १२, १५ जी ई बी २४ एम० टी० यू० १५।

बम्बई—महीन-के ५४०, के १८४, के २२, जिनिया १४९ मध्य श्रेणी भाऊस ७९, मुराध १४१, उन्तरसाल २०० दोड़्ग्या १२२, हडुग २४४, मोटा पानवेल ६१, पटनी ६, आम्बेमोहर १५७

पंजाब—झोना ३४९, बासमती ३७०, मुश्का एन ७

बीज की मात्रा—छींटकर बोने में पंजाब में लगभग १० सेर, आसाम और उत्तरप्रदेश में लगभग ३० सेर और अन्य प्रांतों में ४० सेर से ५०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेर प्रति-एकड़ छींटते हैं। कहीं हलके तीफन से भी बोते हैं, रोप लगाने में पौधों की संख्या प्रति स्थान पर लगाने की रीति के अनुसार मध्यप्रदेश और उड़ीसा में लगभग ४० सेर और अन्य प्रांतों में १० सेर से २० सेर धान प्रति-एकड़ के हिसाब से नर्सरी में गिराना होता है। पंजाब की तरफ पांच-छः सेर ही लगता है। रोप लगाने के लिए अच्छी उपजाऊ भूमि में लगभग आठ इंच और कमजोर में छः इंच की दूरी अच्छी होती है। जापानी पद्धति के अनुसार, जिसमें रोप १० इंच की दूरी पर लगाये जाते हैं और प्रत्येक स्थान पर दो-तीन पौधे लगाते हैं (और चूंकि पौधों की देखभाल नर्सरी में अच्छी की जाती है, जहां से स्वस्थ पौधे मिलते हैं), लगभग आठ-दस सेर बीज काफी हो जाता है।

रोप तैयार करना—रोपने के समय से एक महीना पहले बीज नर्सरी में गिराना चाहिए, क्योंकि एक महीने की आयु के रोप अच्छे होते हैं। एक एकड़ के रोप के लिए उसका दसवां भाग नर्सरी के लिए रखना चाहिए। नर्सरी में खाद काफी देना चाहिए। बंबई की तरफ नर्सरी की भूमि पर कुछ जलावन जलाकर बाद में उससे नर्सरी बनाते हैं, जिसे 'राबिंग' कहते हैं। जापानी पद्धति के अनुसार नर्सरी निम्नलिखित रीति से बनानी चाहिए। नर्सरी चार फुट चौड़ी और तीन इंच ऊंची होनी चाहिए। एक एकड़ के लिए १।२० एकड़ नर्सरी चाहिए। ऐसी नर्सरी में दस सेर बीज बोने होंगे। नर्सरी में २० मन गोबर का खाद या कम्पोस्ट और १० सेर सुपर फासफेट और एमोनियम संलफेट का मिश्रण डालना चाहिए। बीज स्वस्थ और व्याधिरहित हो। नर्सरी में से घासपात निकालते रहना चाहिए। जब पौधे में छठा पत्ता आये, तब पौधे उखाड़ने चाहिए।

बोने तथा रोपने का समय—पहली फसल बरसात के प्रारम्भ में बोई जाती है और बरसात के अन्त तक तैयार हो जाती है। दूसरी कुछ दिनों बाद बोई या रोपी जाती है और हेमन्त ऋतु (पौष-माघ) तक तैयार हो है और तीसरी गर्मी में तैयार होती है। बंगाल में पहली को आोस (आसू, जल्दी पकनेवाली), दूसरी को आमन (हेमंत का अपभ्रंश) और तीसरी को बोरो कहते हैं। पहली वैशाख-जेठ में, दूसरी ज्येष्ठ-आषाढ़ में और तीसरी मार्गशीर्ष से माघ तक बोई जाती है। आसाम में आोस ऊंची भूमि में, सेल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक फुट पानी में और आसरा एक फुट से सात फुट गहरे पानी में होती है। उत्तरप्रदेश में ओस, आमन और बोरो को साठी, अगहनी और जेठी कहते हैं। मध्यप्रदेश में बोने या रोपने का समय तो करीब-करीब एक ही है, परन्तु जाति-अनुसार जल्दी पकनेवाली 'हरई', बीचवाली मझोल और देरीवाली जेठी कहलाती है। दक्षिण भारत में बरसाती फसल आषाढ़-श्रावण में और गर्मीवाली पौष-माघ में बोते हैं या रोपते हैं।

निंदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से जाति-अनुसार ढाई-तीन महीने से लेकर अधिक पानी में होनेवाली जाति को दस महीने लग जाते हैं। साधारणतः ओस तीन महीने में, आमन पांच महीने में और बोरो चार महीने में तैयार हो जाती है। बालियां निकलने के बाद से तीन-चार सप्ताह में धान पक जाता है। धान की कटाई अधिकांश स्थानों में ठेके से होती है। खलिहान में लाने के बाद जब समय मिले, गहाई कर सकते हैं। अन्य फसलों की भांति तुरन्त गहाई नहीं करनी पड़ती। कहीं-कहीं धान के फूलों को लकड़ी के तख्तों पर पीटकर छुड़ाते हैं, तो कहीं-कहीं मजदूर पैरों से कुचलकर ही छुड़ा लेते हैं। कहीं-कहीं रोलर भी चलाते हैं तो कहीं बांसों के मचान पर लम्बा रस्सा बांध देते हैं जिसे पकड़कर मजदूर खड़े होते हैं और पांव से कुचलते हैं तो बीज नीचे गिर जाता है और पुआल ऊपर रह जाता है। यदि हवा कुछ चलती रही तो धान का कूड़ा-कर्कट भी उड़ जाता है। साधारणतः जिनके पास बैल होते हैं वे बैलों के पैरों से कुचलवाकर गहाई करते हैं। इसके लिए छोटी-छोटी कलें भी होती हैं। धान के साथ थोड़ा भूसा आता है उसे हवा से उड़ाकर साफ कर लेते हैं। धान की उपज[1]

---

[1] सोमर पेर, कुर्ग में श्री जंगम्मा सी०.सांगपा ने लगभग १३६ मन उपज धान की दिखलाई और कृषि-पंडित की उपाधि प्राप्त की।

Indian Farming, July, 1953 Supplement.

१९५१-५२ में कुर्ग में एक प्रतियोगिता में चावल की उपज ९०.५ मन आई—यदि धान से चावल ६०% प्राप्ति मानकर गणना करें तो धान की उपज १५०.८ मन हुई।

Indian agri. in brief. 1956, P. 36

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोरो से ओस की और ओस से आमन की अधिक होती है। उत्तम भूमि में आवश्यकतानुसार जल मिल जाय तो बंगाल में आमन की उपज चालीस-पचास मन और ओस की पचीस-छब्बीस मन प्रति-एकड़ हो जाती है। वैसे बंगाल में ओस और बोरो की पन्द्रह-सोलह मन और आमन की बीस मन तक औसत उपज ली जा सकती है। उत्तरप्रदेश में रोपवाले की पन्द्रह-बीस मन और छींटे हुए की दस-बारह मन हो जाती है। भूसे की उपज यदि धान अच्छा बैठ जाय तो उसके बराबर हो जाती है, अन्यथा उससे दूनी तक हो जाती है। गहरे पानी में होनेवाली धान के भूसे की उपज से कई गुना अधिक होती है और धान काटने के बाद वह भाग सड़ जाता है। ऐसी जगह में धान छोटी नावों में बैठकर भी काटा जाता है।

धान, चावल का अनुपात—धान से लगभग ६० से ७० प्र० श० तक चावल और शेष छिलका और भूसा निकल जाता है।

धान के बीज को सुरक्षित रखना—बीज के लिए जो धान रखा जाता है, प्राय: सब प्रांतों में धान को पुआल के रस्से बनाकर उसमें रखा जाता है। कहीं-कहीं मटकों में भी रखा जाता है; लेकिन पुआल में रखा हुआ धान अच्छे अंकुर फेंकता है। चावल बहुधा बोरों में रक्खे जाते हैं। गृहस्थ लोग राख में मिलाकर भी रख लेते हैं ताकि कीट न लगे।

वितरण और व्यवसाय—धान का लगभग नौ-दस शतांश भाग बीज के काम में आता है, शेष का चावल बनता है। चावल निकालने की कई रीतियां हैं। जो चावल धान को उबालकर निकाला जाता है, उसे ऊसना कहते हैं। जो वैसे ही कूटकर निकाला जाता है, उसे सैला कहते हैं। मज-दूर, ढेकी या कलों द्वारा धान से चावल निकाला जाता है।

जो चावल ओखल, मूसल, ढेकी या चक्की से छुड़ाया जाता है वह हाथ-छटा कहलाता है। और जो कारखानों में कलों से छांटा जाता है वह कलछटा कहलाता है। कल से छांटने में कुछ खाद्योज नष्ट हो जाते हैं। स्वास्थ्य के लिए हाथछटा चावल उत्तम होता है। उबाले हुए धान से निकाले हुए धान में टूट कम होती है। चावल बाजार में कृषकों की स्त्रियां कूटकर लाती हैं और बेचकर आवश्यकीय पदार्थ ले जाती हैं। बड़े कार-खानों से बोरों में भेजा जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—धान से चावल के सिवाय चिवड़ा, परमल, मुर्री और लाही ऐसे पदार्थ भी बनाते हैं। धान को ठंडे अथवा गरम पानी से कुचल करके छिलका निकाल दिया जाय, तो चिवड़ा बन जाता है। मुर्री खास साति के चावल की अच्छी बनती है। लाही धान को भूनकर बनाई जाती है। चावल या उसके पदार्थ खाने के काम आते हैं। भूसा और पुआल पशुओं को खिलाया जाता है। चावल के भी कई पकवान बनते हैं। नये चावल से पुराने चावल अच्छे होते हैं। वैद्यक मतानुसार—जल्दी पकने-वाले चावल हलके, चिकने और त्रिदोषनाशक होते हैं। आमन वादी और कफकारक होते हैं; परन्तु बलदायक और स्वर को उत्तम करनेवाले होते हैं। लाही और मुर्री वैसे ही खाई जाती है। चिवड़ा पानी में भिगोकर दूध, दही या चीनी के साथ खाया जाता है अथवा उससे आलू के साथ नम-कीन पदार्थ भी बनाते हैं जिसे 'आलू पोहा' कहते हैं। छिलका जलाने के काम आता है। एक खास रीति से जलाया जाय तो इसका कोयला बन जाता है जो ऊख का रस साफ करने के काम आता है।

चावल की कनी और भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। सर्दी के दिनों में गरीब लोग भूसा बिछाकर इससे गद्दे का काम लेते हैं। इससे चटा-इयाँ और जूतों के तले भी बनते हैं। कम्पोस्ट बनाकर खाद का काम भी लेते हैं।

चावल के पोषक पदार्थ (प्रतिशत)—

	जल	आमिष-जातीय	स्नेह	कैल-शयम	फास-फोरस	लोहा	खनिज
हाथ-छटा	१४.५	६.८	१.४	०.०१	०.२१	.००३६	१.१
कल-छटा	१४.४	०.७०	०.७	०.०१	०.०१६	००१९	०.८

चावल की खेती की जापानी रीति—इसका बहुत प्रचार हो रहा है।

नर्संरी—एक एकड़ के लिए १/२० एकड़; तीन इंच ऊंची, चार फुट चौड़ी।

खाद—२० मन गोबर या काम्पोस्ट और दस सेर सुपर फास्फेट और दस सेर एमोनियम सल्फेट का मिश्रण उपर्युक्त नर्संरी में डालना चाहिए।

बीज—उपर्युक्त नर्संरी में दस सेर बीज डालना चाहिए, जिनसे एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकड़ के लिए पौधे मिलेंगे। वीज नमक के २.५ प्रतिशत पानी में डाल दो। जो डूवें वे ही वोने चाहिए। वोने के पहले वीज को Paranox (पेरेनाक्स) औषधि के ०.०५ प्रतिशत के घोल में २० मिनट तक रखना चाहिए। बीज गिराने के वाद उन्हें $\frac{1}{2}$ इंच मिट्टी की तह से ढककर पानी आवश्यकतानुसार देना चाहिए और घास-पात निकालते रहना चाहिए। जव पौधों में छः पत्ते आ जायं तो रोप उखाड़ना चाहिए।

खेत में बीस गाड़ी गोवर का खाद या कम्पोस्ट और सवा मन सुपरफासफेट और सवा मन एमोनियम सलफेट प्रति-एकड़ डालना चाहिए।

रोपना—प्रत्येक स्थान में तीन-चार से अधिक पौधे नहीं लगाना और उनमें दस इंच की दूरी होनी चाहिए।

रोपने के एक महीने वाद सवा मन सुपर फासफेट और सवा मन एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

घास-पात वरावर निकालते रहना चाहिए।

(३) जई Oats *Avena sterilis*

इसका पौधा गेहूं-जैसा होता है; परन्तु बाल में वीज झूमर-जैसे लटके रहते हैं। ठंडे नमीवाले वातावरण में इसकी उपज अच्छी होती है।

जमीन और जुताई—दुमट और मटियार-दुमट मिट्टी में जौ के लिए जैसी जुताई की जाती है, वैसी करनी चाहिए।

जई में खाद्य-पदार्थ (प्र० श०)—

	जलांश	नाइट्रोजन	फा० पे०	पो० आ०
वीज	१०.४३	१.३७	०.५४	.४०
भूसा	९.८८	०.४३	०.२८	१.६३

खाद—अच्छी उपज के लिए दो सौ मन गोबर का खाद अथवा दस मन खली या ढाई मन एमोनियम सलफेट देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—जल्दी पकनेवाली फसल में एन पी नं० १ और देरी से पकनेवाली में एन पी नं० ३ उत्तम है। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्तूबर) है। लगभग बीस सेर बीज प्रति-एकड़ वोना चाहिए। इसे छींटकर भी बो सकते हैं; परन्तु ९ इंच की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूरी पर कतारों में बोना अच्छा है। हेरफेर दलहन की फसल या कपास के साथ उत्तम होगा।

निदाई—आवश्यकता नहीं।

सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—चैत्र-वैशाख (मार्च-अप्रैल) तक हो जाती है। हरे चारे के लिए माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) से काम में लाते हैं। बीज की उपज लगभग २० मन और भूसे की बीज से दूनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अधिकतर हरी फसल काटकर घोड़ों को खिलाई जाती है। व्यवसाय जव-जैसा।

उपयोग और गुण—हरा चारा घोडे और दूध देनेवाले पशुओं के लिए उत्तम होता है। अंग्रेज लोग बीज से चिवड़ा-जैसा पदार्थ (Quaker oats) बनाकर खाते हैं।

(४) जौ, जव Barely *Hordeum valgare*—

ये पौधा गेहूं-जैसा है लेकिन उससे कम ऊंचा। बीज, बालों पर दो-चार या छः कतारों में होते हैं। दो कतारवाले जौ उत्तम होते हैं।

जौ में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फा०	फो० आ०
बीज	१४-५१	१.६०	०.५६	०.२७
भूसा	१४.३	०.६४	०.१६	१.०७

परन्तु उपज दूसरों की अच्छी होती है।

जलवायु—अपेक्षाकृत गेहूं से इसमें शीतोष्णता सहन करने की शक्ति अधिक होती है। पानी भी कम लगता है।

भूमि, जुताई और खाद—गेहूं की जैसी भूमि मिले तो अच्छा होता है; लेकिन उससे हलकी में भी जौ हो जाते हैं। गेहूं की अपेक्षाकृत कुछ ऊसर भूमि में जौ अच्छे हो जाते हैं। जुताई गेहूं-जैसी लगभग पौने दो सौ मन गोबर का खाद अथवा नौ मन खली या दो मन एमोनियम सलफ़ेट देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीज, बुआई, मिश्रण और हेरफेर—एन०पी० २१ बहुत अच्छी जाति हैं। टी ३५।८४ और ३५।८६ सिंचाईवाली भूमि में और ३५।४४ तथा ३४।२४ वरानी खेतों में बोना चाहिए। पंजाब में टी० ४ और टी० ५ राजस्थान और बिहार में एन० पी० १३ और एन० पी० २१ अच्छी उपज देती है। लगभग ३० सेर बीज प्रति-एकड़ छींटकर या कतारों में बोना चाहिए। कतारों में बोना अच्छा होता है। कतारों की दूरी नौ इंच की रखनी चाहिए। यह रबी की फसल है। आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्टूबर) में बोना चाहिए।

हेरफेर—गेहूं-जैसा।

जव के साथ किराओं, सरसों या चना बोना उत्तम है।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। गेहूं की भांति इसके वीज झड़ते नहीं, इसलिए पूरी वाढ़ पाने पर दिन में दोपहर के बाद भी काट सकते हैं। वरानी में आठ-दस मन तथा सिंचाईवाली भूमि में चौदह-पन्द्रह मन तक उपज हो जाती है। भूसे की उपज ड्योढ़ी लेनी चाहिए।

वितरण और व्यवसाय—गेहूं के समान।

उपयोग और गुण—वीज से शराब वनाते हैं—आटे से मनुष्यों के लिए रोटियां भी वनती हैं। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। इसके आटे का सत्तू भी बनता है, जो गेहू-चने के सत्तू से ठंडा होता है।

जौ के पोषक पदार्थ (प्रतिशत)—

जल	आमिषजातीय	स्नेह	खनिज	तंतुयुक्त	शर्करा-युक्त
१२.५१	११.५१	१.३	१.५	३.६	६९.३

कैलशियम	फा०	लोहा
०.०३	०.२३	.००३७

(५) जुवार Jowar *Sorghum vulgare*

भूमि की उर्वरा-शक्ति और जलवायु के अनुसार इसका पौधा पांच फुट से लेकर दस फुट तक ऊंचा हो जाता है। बालें जाति-अनुसार बिखरी हुई या ठोस जमी हुई दानेवाली होती हैं। जुवार खानेवाली और चरीवाली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अलग-अलग होती है। खानेवाली का दाना सफेद, मोतिया या पीले रंग का होता है। चरी का दाना छोटा और भुट्टा बिखरा हुआ होता है। चरीवाली के बीज के साथ पुटपत्र चिपके हुए अधिक रहते हैं और इसकी कड़बी पतली होती है।

जुवारों के प्रचलित नाम—रामकेल, सावनेर, धामण, लाभकन्सी, डेथा, वेथरा इत्यादि मध्यप्रदेश में; साठी, चपटी, पीलियो, मोगर, आम्बे मोहर, दगड़ी बम्बई की तरफ; गूगल, सफेद, चिकनी मध्यभारत में पाये जाते हैं। चरीवाली में पवन वन्दी आगढ़, मोतीचूरा, सूंडिया, लंगूर कालबोंडी, उतावली, मध्यप्रदेश के नाम हैं। बम्बई की तरफ शालू नाम की जुवार चरी के लिए बोई जाती है।

मध्यप्रदेश में रामकेल और सावनेर विशेष होती है। पहली का दाना सफेद और दूसरी का मोतिया रंग का होता है। पकने में पहली दूसरी से दो सप्ताह पहले तैयार हो जाती है।

खाने में सफेद की अपेक्षा गूगल अच्छी होती है। गुजरात की तरफ पीलियो का दलिया अच्छा बनता है।

चरीवाली में सूंडिया जल्दी पकनेवाली उत्तम जुवार है। इसे पशु बड़े चाव से खाते हैं।

जलवायु—अच्छी वितरित तीस-पैंतीस इंच वर्षावाले स्थान जुवार के लिए उत्तम होते हैं। यदि प्रारम्भ में लगातार कुछ दिनों तक वर्षा हो जाय तो पौधे पीले पड़ जाते हैं और छोटे रह जाते हैं। बालें निकलने के पहले यदि कुछ वर्षा हो जाय तो बड़ा लाभ होता है। फूल आने पर हो जाय तो फसल बिगड़ जाती है।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए काली, अच्छे नितारवाली भूमि अच्छी होती है। जिसमें पानी लगता हो, उसमें जुवार अच्छी नहीं होती। जुताई गर्मी के दिनों में करनी चाहिए। वर्षा होने पर एक बार बखर चलाकर जुवार बोनी होती है। दक्षिण भारत की तरफ रबी जुवार भी होती है सो वहां पर आश्विन के पहले खेत तैयार कर लेने चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जुवार में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फा०	पो० ग्रा०
बीज	१०.८६	१.६६	०.६४	०.५
कड़वी	१२.६४	०.७८	०.२३	२.१७
चरी	१०.१७	०.५०	०.२३	२.१७

जुवार की उपज दस मन और कड़वी की ८० मन प्रति-एकड़ मान-कर गणना की जाय तो हमें दो मन के लगभग एमोनियम सलफेट, नौ मन के लगभग खली या १८० मन के लगभग गोबर का खाद देना होगा; परन्तु जुवार चूंकि सस्ती बिकती है इतना खाद देना आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं होगा। इसलिए इससे पहलेवाली फसल को खाद देना चाहिए या इसे ही दिया जाय तो १०० मन के लगभग गोबर का खाद या कूड़ा-ककंटवाला खाद मिले तो अच्छा होगा।

मिश्रण—जुवार के साथ मूंग और तूअर दोनों बो सकते हैं। मूंग नीचे, तूवर जुवार के पौधों की आधी ऊंचाई पर और जुवार ऊपर हो जाती है। कहीं-कहीं तिल और कुलथी भी डाल देते हैं।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसके लिए बीज की मात्रा पांच सेर से लेकर ८ सेर तक है। चरीवाली जमीन में दस सेर से लेकर पच्चीस सेर तक बोते हैं। उपजाऊ जमीन में दस सेर काफी है। चरी की जुवार छींटकर और खाने की अरगड़ा, नाई या हलके तिफन से बोते हैं। कतारों में डेढ़ फुट से दो फुट का अन्तर काफी होता है। जुवार वर्षा प्रारम्भ होने के कुछ ही दिन बाद बो दी जाती है। दक्षिण भारत में जहां रबी-जुवार भी होती है वहां उसे आश्विन में बोते हैं। कहीं-कहीं माघ-फाल्गुन में भी बोते हैं, पर उसे सींचना होता है।

बोने योग्य जातियां—मध्यप्रदेश में सफेद बीजवाली रामकेल और मोतिया रंग की सावनेर अच्छी है। चुनी हुई जातियों में ई० बी० १ और नं. १२३ ए० उत्तम है।

उत्तरप्रदेश—नं० ५, १६, २३, ४५ और ४७।

मद्रास—१०३, नन्दयाल २६/६८, २२३, २२४ टी चरी के लिए ७५, टी० १२।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मध्यप्रदेश—इन्दौर ३ और इन्दौर ६, ग्वालियर १२-२, ई वी ३४, १९३ ए, चरी के लिए ६८ और सूंडिया।

बम्बई—एम ३५-१ पीलियो नं० ५३ पी जे के ४ और के ८।

हेरफेर—कपास या मूंगफली के साथ।

मिश्रण—तूअर और मूंग के साथ।

निंदाई—यह कार्य पौधों की कतारों के बीच कडपा (डोरा) चलाकर किया जाता है। कतारों में ये घने पौधे निकालकर उनमें एक-एक फुट का अन्तर कर देना चाहिए।

सिंचाई—जहां आवश्यकता हो वहां करनी चाहिए। रबी और गर्मी में बोई जानेवाली फसल को सींचना होता है।

फसल की तैयारी और उपज—चरीवाली फसल उस समय काटनी चाहिए जब बाल में दूध भरा हो। खानेवाली जुवार पूर्ण पकने पर ही काटी जाती है। यह जाति-अनुसार चार महीने से लेकर ६ महीने में तैयार होती है। कहीं-कहीं खड़ी फसल के भुट्टे काट लेते हैं और कहीं कहीं फसल काटकर भुट्टे खलिहान में छुड़ाते हैं, जहां बैलों से गहाकर जुवार तैयार की जाती है। भूसा हवा में उड़ाकर ही दाना साफ करते हैं। अच्छी भूमि में जुवार की उपज[1] पन्द्रह मन तक हो जाती है। कड़वी की उपज ६० मन तक ले सकते हैं।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद बाक़ी जुवार की खपत देश में ही हो जाती है। व्यवसाय साधारण रीतियों द्वारा होता है।

उपयोग और गुण—अनाज खाने के काम में आता है और कड़बी या चरी पशुओं को खिलाई जाती है। जबतक फूल न आ जाय; हरा जुवार पशुओं को नहीं खिलानी चाहिए; क्योंकि इसमें एक प्रकार का विष होता है जो फूल आने तक नष्ट हो जाता है। सूखे हुए पौधों में विष नहीं रहता।

वैद्यक-मतानुसार जुवार हलकी, शीतल, वीर्यवर्धक, पित्तनाशक तथा रुधिर के विकार को दूर करनेवाली होती है।

---

[1] १९५४-५५ की प्रतियोगिता में बम्बई प्रान्त में एक जगह ८८ मन २२ सेर प्रति-एकड़ की उपज आई थी। कृषिक-पत्रिका १९५७, पृ० २३।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जुवार के पोषक पदार्थ (प्र० श०)—

जल	आमिषजातीय	स्नेह	खनिज
११.९	१०.४	१.६	१.८
शर्करायुक्त	कैलशियम	फासफोरस	लोहा
०.७४	०.०३	.०२८	.००६२

(६) बाजरा Bajra *Pennisetum typhoidis*

बाजरे का पौधा जुवार के पौधे-जैसा, लेकिन उससे कुछ छोटा और पतला होता है। बालें आठ-नौ इंच से लेकर दो फुट लम्बी होती हैं। बाजरा दो प्रकार का होता है : एक हरे रंग का और दूसरा कुछ भूरे रंग का।

बाजरे के व्यावसायिक नाम—काठियावाड़ी, भावनगरी, जामनगरी, जवलपुरी इत्यादि। मद्रास में इसे कुम्बु कहते हैं। 'अर्सी कुम्बु' नाम की जाति के बीज बालों से बहुत जल्दी छूट जाते हैं। दूसरे बाजरे को कूटना पड़ता है।

जलवायु—बाढ़ के लिए तरीवाला उष्ण वातावरण चाहिए। जुवार की अपेक्षा कम वर्षावाले स्थानों में बाजरा हो जाता है।

भूमि, खाद और जुताई—जुवार के लिए जिस प्रकार की भूमि चाहिए उससे हल्की अर्थात् बलुआ-दुमट में बाजरा अच्छा हो जाता है। जुताई जुवार-जैसी होनी चाहिए।

बाजरे के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)

	जल	नाइ०	फा० पे०	पो० आ०
बीज	११.३	१.६९	०.६८	०.४२

इसकी कड़बी के अंक प्राप्त नहीं हुए हैं। परन्तु चूंकि बीज के अंक करीब जुवार के बीज के समान हैं, अतः बाजरे की कड़बी के अंक भी उतने ही मान लेने चाहिए। यदि सात मन उपज बीज की और तीस मन कड़बी की मानकर उपर्युक्त अंकों के आधार पर गणना की जाय तो लगभग साढ़े दस सेर नाइट्रोजन पड़ती है। इसकी पूर्ति के लिए सवा मन एमोनियम सलफेट, पांच मन खली, और गोबर द्वारा दुगनी मात्रा पहुंचाने के लिए एक सौ मन गोबर का खाद चाहिए। आर्थिक दृष्टि से प्रयोगों द्वारा देखा गया तो इतना खाद अधिक होता है। इसके लिए एक सौ मन गोबर का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खाद देना ही उचित है; ताकि यदि इससे विशेष लाभ न हो तो दूसरा फसल को लाभ पहुंचे। हेरफेर कपास या तूग्रर के साथ उत्तम होगा। जहां मिश्रित फसल लेनी होती है वहां अरहर, कुलथी, मूंग, तिल अम्बाड़ी इत्यादि लेते हैं।

बीज, बोग्राई, मिश्रण और हेरफेर—वर्षारम्भ के समय ही बोना चाहिए। परन्तु जब अन्य फसलें बोने का काम विशेष हो तो उनके बाद भी बाजरा बो सकते हैं। इसे छींटकर भी बो सकते हैं, परंतु कतारों में बोना अच्छा है। बोने के लिए बाजरे की बाल के बीचवाले बीज अच्छे होते हैं। कतारें डेढ़ फुट की दूरी पर होनी चाहिए। छींटकर बोया जाय तो लगभग पांच सेर और कतारों में बोया जाय, तो ढाई-तीन सेर बीज काफी होंगे। नंम्बरी जातियों में नं० ७००, २२२६, ३६७, ७०१ मद्रास की तरफ की अच्छी जातियां हैं। बाजरे का हेरफेर कपास, मूंगफली आदि के साथ अच्छा होता है।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई के लिए कतारों के बीच कड़पे चला देते हैं। सिंचाई की आवश्यकता हो तो करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—जुवार से पहले पकता है। कहीं-कहीं तीन महीने में ही फसल तैयार हो जाती है। चरी के लिए बोया जाय तो कभी भी काट सकते हैं। बाजरे की उपज[1] चार-पांच मन से लेकर आठ-दस मन प्रति एकड़ हो जाती है। कड़बी की उपज बीज से चौगुनी और चरी की उपज अस्सी से एक सौ मन तक ली जा सकती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद शेष की खपत देश में ही हो जाती है। व्यवसाय अन्य अन्नों की भांति होता है।

उपयोग और गुण—बाजरे के साथ जो पुष्पपत्र चिपके रहते हैं उन्हें ओखली में कूटकर छुड़ाना पड़ता है। बाद में बीज का दलिया या आटा खाने के काम आता है। हरी बालें आग में भूनकर भी खाते हैं। कड़बी

---

[1] कृषि-पण्डित श्री वामन रामचन्द्र मराठे ने बाजरे की लगभग २८ मन उपज प्रति-एकड़ दिखलाई। Indian Farming, July 1953 Supplement.

१९५१-५२ में बम्बई प्रान्त में एक प्रतियोगिता में बाजरे की उपज २९.२ मन दिखाई।—Indian Agriculture in brief 1950, p. 38

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और चरी पशुओं को खिलाई जाती है। बाजरा गर्म होता है।

बाजरे के पोषक पदार्थ (प्रतिशत)

जल	आमिषजातीय	स्नेह	खनिज	शर्करायुक्त	कैलशियम	फा० पे०	लोहा
१२.४	११.६	४.०	२.७	६७.१	०.०५	.३५	०.००८८

(७) मक्का Maiz *Zea mays*

मक्का का पौधा अजीब-सा है। धान्यवाली सब फसलों की बालें पौधों के सिर पर आती हैं; परन्तु इसके नर-फूल सिर पर और बालें बीच धड़ पर आती हैं। इसका पौधा चार फुट से लेकर भूमि की उर्वरा-शक्ति के अनुसार सात-आठ फुट ऊंचा हो जाता है। बालें एक, दो और किसी-किसीमें तीन तक भी आती हैं। अच्छी खादवाली भूमि में अधिकांश पौधे दो भुट्टेवाले ही मिलेंगे।

व्यावसायिक जातियां—सफेद, पीली, मोटे-छोटे दानेवाली, जौनपुरी, आजमगढ़ी इत्यादि। अमरीकन जाति के छः वर्ग हैं। 'डेण्टकार्न'—दांत के आकार के बीज; 'फ्लिण्ट कार्न'—गोल और कठोर बीज; 'स्वीट कार्न'—मीठी मक्की; 'साफ्ट कार्न'—आसानी से पीसी जानेवाली; 'पॉप कार्न'—फ़ूले या धानी के लिए; और 'पाडकार्न'—इसमें प्रत्येक बीज छिलके से ढका रहता है।

जलवायु—मक्का पचीस से पचास इंच वर्षावाले स्थानों में हो जाती है। परन्तु वह वितरित होनी चाहिए और धूप भी निकलनी चाहिए। प्रारम्भ में ऐसी धूप निकलती रहे कि घासपात समय पर निकाल सकें तो मक्का पचीस-तीस मन प्रति-एकड़ हो जाती है, अन्यथा तो पांच मन की उपज भी कठिन होती है।

भूमि, जुताई और खाद—सर्वोत्तम भूमि दुमट है। मक्का ऐसी अम्ल-वाली मिट्टी में भी हो जाती है, जिसमें गेहूं नहीं हो पाता। जुताई गर्मी में काफी करनी चाहिए, क्योंकि वर्षा के आते ही मक्का बोनी पड़ती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मक्का के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)

	जल	नाइ०	फा० पे०	पो० श्रा०
बीज	१४.४	१.६०	०.५७	०.३७
कड़वी	१५.०	०.४८	०.३८	१.६४

यदि मक्का की उपज १२ मन, कड़बी की ५० मन और डूडियों की चार मन मानकर गणना की जाय तो हमें १७ सेर नाइट्रोजन पहुंचे इतना खाद देना होगा, जिसके लिए दो मन एमोनियम सलफेट या ८ मन खली या दूनी मात्रा के लिए १६० मन गोवर का खाद देना चाहिए। चूंकि मक्का सस्ती बिकती है अतः इतना खाद आर्थिक दृष्टि से ठीक नहीं जंचता। किंतु मक्का के बाद दूसरी फसल जल्दी ही बोई जाती है, जिसके लिए खाद देने का, विशेषतः गोवर का खाद देने का समय नहीं मिलता। सो मक्का को जितना अधिक खाद दिया जायगा, फायदा ही करेगा; क्योंकि दूसरी फसल भी अच्छी होगी। कुछ प्रयोगों से भी ऐसा ही सिद्ध होता है।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—कतारों में बोने से पांच सेर बीज काफी होते हैं। पंक्तियां डेढ़ फुट के अन्तर पर होनी चाहिए और पंक्तियों में भी अच्छी खादवाली भूमि में पौधे डेढ़ फुट कर देना चाहिए। कमजोर भूमि में एक फुट अच्छा होगा। इसके बोने का समय वर्षारम्भ का है परन्तु कहीं-कहीं बारहों महीने हरे भुट्टे मिलते रहते हैं सो कभी भी बो सकते हैं।

नम्बरी जातियां उत्तरप्रदेश में नं० ८, १३, १९, ४१ और बिहार में जौनपुर, तीन पंखियां, केलिम्पांग इत्यादि अच्छी जातियां पाई गई हैं।

हेरफेर जहां अफीम की खेती होती है, वहां उसके साथ किया जाता है; वरना ये भी गेहूं आदि के साथ करना चाहिए। मिश्रण में मक्का के साथ उड़द-कपास आदि वो देते हैं। जब कपास के साथ बोते हैं, मक्का बहुत कम बोई जाती है और उसे काटने पर कपास लेते हैं। कहीं-कहीं धान, मरुवा, कंगनी इत्यादि के बीज भी मक्का के साथ बोते हैं; परन्तु मक्का के साथ उड़द बोना अच्छा रहता है। वैसे कपास के खेतों में भी मक्का कुछ बोई जाती है।

निदाई और सिंचाई—पहले खुर्पी से नींदना होता है और मक्का के लिए यह क्रिया अत्यन्त आवश्यक है। जब पौधे एक फुट के करीब ऊंचे हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जायं तो कड़पे चलाकर निंदाई कर सकते हैं। सिंचाई बरसाती फसल को तो नहीं करनी पड़ती, दूसरी को करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—-बोने के समय दो-तीन महीने में फसल तैयार हो जाती हे। कहीं-कहीं कुछ समय अधिक लगता है। आषाढ़ (जून) में बोई जानेवाली भादों (अगस्त) के अन्त तक तैयार होती है। माघ (फरवरी) वाली वर्षा के पहले तैयार हो जाती है। पकने पर कहीं-कहीं भुट्टे खेत में ही तोड़ लेते हैं और कहीं-कहीं फसल काटकर खलिहान में लाकर बाल से दाना लाठियों से पीटकर छुड़ाते हैं। मक्का की उपज का अनुमान कठिन है। लेखक के प्रयोगों में किसी साल प्रति-एकड़ ३२ मन बीज और १६० मन कड़वी प्रति-एकड़ आई और किसी साल ५ मन बीज भी मुश्किल से आये। जैसाकि पहले बताया गया है, इसपर जलवायु का बड़ा प्रभाव पड़ता है। प्रारम्भ में घास-पात समय पर निकाले जाने का अवसर मिल जाय, तो उपज काफी अच्छी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज के लिए रखने के बाद इसकी भी खपत देश में ही होती है। व्यवसाय अन्य अन्नों की भांति होता है।

उपयोग और गुण—मक्का के हरे भुट्टे बड़े स्वादिष्ट होते हैं जिन्हें आग में भूनकर या उबालकर खाते हैं। हरे बीज से नमकीन हलवा भी अच्छा बनता है। बीज से दलिया और आटा बनाकर खाते हैं। मक्का से फुटाण (फूले), सत्तू और स्टार्च भी बनाते हैं। कड़वी पशुओं को खिलाई जाती है। इसे चरी के लिए भी बोते हैं। डूंडिये जलाने के काम आते हैं।

हरी मक्का पुष्टिकारक, सूखी, मल-रोधक और रूखी होती है। बाल के रेशों का सत्त्व अमेरिका में दिल तथा पेशाब की व्याधियों में काम में लाया जाता है।

मक्का के पोषक पदार्थ (प्र० श०)

	जल	आमिष-जातीय	स्नेह	शर्करा-जातीय	खनिज	कैल०	फा०	लोह
सफेद	१३.४३	९.१२	३.६२	७०.५	१.२२	०.०१	०.३३	.०२१
पीली	१३.८७	९.१६	४.१०	६८.८८	१.३४			

(८) मड़वा, रागी Marua, Ragi, *Eleusine Coracana*

रागी की खेती मद्रास में अधिक होती है। समस्त भारत के क्षेत्र-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फल का आधा हिस्सा मद्रास और आंध्र में पड़ता है। साधारण भूमि में कम परिश्रम से मरुवा अच्छी उपज दे देता है। इसके पौधे तीन-चार फुट ऊंचे और बालें चार या छः पंखड़ियोंवाली होती हैं।

जलवायु—पचीस-तीस इंच वर्षावाले स्थान अच्छे होते हैं। वर्षा अधिक होने से उपज गिर जाती है।

जमीन, जुताई और खाद—वैसे सब प्रकार की भूमि में हो जाता है; परन्तु इसका मान कम होने से हलकी भूमि में ही लगाते हैं। जुताई भी साधारण होनी चाहिए।

रागी के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)

जल	नाइट्रोजन	फास्फेट
१२.५	०.६४	०.४

बीज की उपज पन्द्रह मन और भूसे की पच्चीस मन मानकर गणना की जाय तो लगभग ग्यारह सेर नाइट्रोजन होगी जिसके लिए पांच-छः मन खली या मन-सवा मन एमोनियम सल्फेट और दूनी मात्रा के लिए सौ-सवा सौ मन गोबर का खाद देना ठीक होगा।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसे छींटकर भी बोते हैं और रोप लगाकर भी। रोप लगाना अच्छा होता है, क्योंकि स्वस्थ पौधे रोपे जाते हैं। परन्तु जहां मजदूरों का अभाव हो, वहां छींटकर ही बोना होता है। रोप के लिए एक एकड़ के बीसवें भाग में यदि तीन सेर बीज गिरा दिये जायं तो एक एकड़ के लिए काफी होंगे। बीज बोने के समय से लगभग चार सप्ताह में रोप तैयार हो जाते हैं। वर्षारम्भ से कुछ दिन पहले ही नर्सरी में बीज गिरा देना चाहिए, ताकि शुरू बरसात में रोप लगाये जा सकें। पौधों में लगभग चार-पांच इंच का अन्तर रखना चाहिए। जहां छींटकर बोना हो वहां चार-पांच सेर बीज मिट्टी या आलू में मिलाकर छींटना चाहिए। जब पौधे छंटनी के योग्य हो जायं तो उन्हें चार-पांच इंच की दूरी पर करना चाहिए। मद्रास की तरफ पहली फसल के लिए आषाढ़ (जून-जुलाई) और दूसरी के लिए पौष-माघ (जनवरी) में बोते हैं। हेरफेर जव-किराओं के मिश्रण, मूंगफली, कपास या रहर के साथ होना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो, करनी चाहिए। मद्रास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की तरफ जो फसल गर्मी के दिनों में तैयार होती है, सींचनी होती है।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। इसकी बालें ज्यों-ज्यों पकती जाती हैं काट लेते हैं। साधारणतः दो बार काटना पड़ता है। थोड़ी फसल पीटकर और अधिक हुई तो बैलों से गहाई कर तैयार करते हैं। अनुकूल स्थितियों में उपज बीस मन प्रति-एकड़ तक हो जाती है। सिंचाईवाले खेतों में इससे ड्योढ़ी भी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—साधारण व्यवसाय द्वारा वितरित होकर देश में ही खपत हो जाती है।

उपयोग और गुण—मरुवा को खाने-योग्य बनाने के लिए इसे पहले ओखली में कूटना पड़ता है। इसके आटे से रोटी, हलवा इत्यादि बना सकते हैं।

मरुवे के पोषक पदार्थ (प्र० श०)—

जल	आमिष-जातीय	स्नेह	खनिज	शर्करा-जातीय	कैल०	फा०	लोहा
१३.१	७.१	१.३	२.२	७६.३	०.३३	०.२७	०.००५४

(६) अन्य छोटे धान्य

उपर्युक्त धान्य के सिवाय कुछ ऐसे छोटे धान्य हैं, जिनकी खेती भारतवर्ष में हलकी भूमि में होती है। ऐसे धान्य निम्नलिखित हैं :

कंगनी राला—Italian Millet *Setaria italica*

कोदों, कोदरा—Kodon *Paspolumscrobiculatium*

चीना, वारी—Chenna Common Millet *Panicun miliaceum*

शमई, कुटकी, गुंडलो सावा Sava *panicun miliare*

कंगनी का पौधा तीन-चार फुट ऊंचा, सात-आठ इंच लम्बी बालोंवाला होता है। कंगनी पीली, सफेद और स्लेटी रंग की होती है।

कोदों—इसका पौधा दो-तीन फुट ऊंचा होता है और बालें पकते समय तक अन्तिम पत्ते में छिपा रहता है। बीज सरसों जितना बड़ा लेकिन चपटा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होता है।

चीना—इसका पौधा दो-ढाई फुट से लेकर तीन-चार फुट ऊंचा होता है। इसकी वालें विखरी हुई होती हैं और एक ही ओर झुकी रहती हैं। बीज पीले रंग के, चिकने और चमकीले होते हैं।

सावा—इसका पौधा भी तीन-चार फुट ऊंचा होता है। पत्ते कंगनी-जैसे होते हैं, चौड़ाई में कुछ अधिक चौड़े लेकिन लम्बाई में कुछ कम होते हैं। दूर से देखने से इसकी वालें जुवार की बालों-जैसी नजर आती हैं, लेकिन लंबी आठ-दस इंच होती हैं। एक जाति ऐसी भी होती है जिसकी बालें विखरी हुई होती हैं। इसे झालरिया सावा कहते हैं, बीज सफेद या स्लेटी रंग के गोल होते हैं। उत्तरप्रदेश में टाइप २५ और टाइप ४६ उन्नत जातियां हैं।

जलवायु—साधारणत: बीस-पच्चीस इंच वर्षावाले स्थान इनके लिए उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इन्हें हलकी भूमि में ही स्थान मिलता है और जुताई भी साधारण-सी ही की जाती है।

इन्हें तो खाद साधारणत: नहीं दिया जाता; परन्तु अच्छी फसल पाने के लिए पचास-साठ मन से लेकर एक सौ मन तक गोबर का खाद देना अच्छा होगा। उससे दूसरी फसल को भी लाभ पहुंचेगा।

छोटे धान्यों में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)

	जल	नाइट्रोजन
कंगनी	१०.४६	१.७६
कोदों	८.७८	१.०२
चीना	६.७८	१.५४
सावा	१२.६८	१.४५

हेरफेर—कंगनी के वाद रबी की कोई भी फसल ले सकते हैं। विहार में प्राय: शकरकन्द लगाते हैं।

कोदों देरी से पकता है, इसलिए जहां कोदों लेना हो वहां गर्मी में चरी-जैसी फसल ले सकते हैं।

चीना के वाद रबी की कोई भी फसल ली जा सकती है, यदि यह आषाढ़ में बोया जाय। जब माघ में बोयें तो खरीफ की फसल ले सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सावा के बाद रबी की कोई भी फसल ली जा सकती है।

जहांतक बने, उपर्युक्त सब फसलों के बाद मटर, चना-जैसी दलहन की फसल उत्तम होगी।

मिश्रण—कंगनी का छींटा कपास या मक्के में डाल सकते हैं।

कोदों और सावा को कपास या जुवार के खेतों में स्थान मिल जाता है। चीना खरीफ की अन्य फसलों के साथ बोया जा सकता है।

बीज और बोआई

कंगनी—छींटकर बोना हो तो पांच सेर और यदि कतारों में बोना हो तो तीन-चार सेर बीज प्रति-एकड़ बोना होगा। इसे आषाढ़-श्रावण में बोते हैं।

कोदों—इसे वर्षारम्भ के साथ बोते हैं। लगभग सात-आठ सेर बीज प्रति-एकड़ बोया जाता है और छींटकर ही बोते हैं।

चीना—पहली फसल आषाढ़ (जून). दूसरी भाद्रपद (अगस्त), और तीसरी माघ-फाल्गुन (जनवरी-फरवरी) में बोते हैं। इसे छींटकर बोते हैं। गर्मी में जो फसल बोई जाय उसे बोने के बाद जल्दी से बीज मिलाकरके पानी दे देते हैं। प्रति-एकड़ चार-पांच सेर बीज छींटना चाहिए।

सावा—खरीफवाली फसल के लिए तीन-चार सेर बीज और रबी के लिए चार-पांच सेर बीज प्रति-एकड़ छींटकर बोना होता है। पहली फसल के लिए आषाढ़ (जून) में और दूसरी के लिए फाल्गुन (फरवरी-मार्च) में बोना चाहिए।

निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार। गर्मी में जो फसलें उपजाई जायं, उन्हें सींचना होगा।

फसल की तैयारी और उपज (प्रति-एकड़)

	कंगनी	कोदों	चीना	सावा
बोने के समय से तैयारी	तीन-चार महीने	चार महीने	तीन-चार महीने	तीन से पांच महीने
उपज बीज	चार-पांच मन से दस-बारह मन तक	चार-पांच मन से दस-बारह मन तक	तीन-चार मन से छः-सात मन तक	चार-पांच मन से आठ-दस मन तक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूसा—बीज से दुगुनी-तिगुनी उपज भूसे की आ जाती है।

वितरण और व्यवस्था—इसकी खपत देश में ही हो जाती है।

उपयोग और गुण—अधिकतर गरीब लोग ही इनका उपयोग करते हैं। कंगनी को ओखली में कूटकर बीज का पुटपत्र छुड़ाकर काम में लाना होता है। इसे कच्ची भूनकर पीसकर आटा बनाते हैं, जिससे रोटी बन सकती है। बहुधा दलिया पकाकर ही खाते हैं। यह शीतल, दाहनाशक और पित्त के विकारों को दूर करनेवाली होती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

कोदों—इसे भी कूटना पड़ता है या मिट्टी के पाट की चक्की से दलकर छिलका छुड़ाते हैं। पचास-साठ शतांश तक उपयोगी पदार्थ मिलता है। इसे चावल की भांति उबालकर या खीर बनाकर खाते हैं। इसके बीज में कुछ मादकता होती है, भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

चीना—इसे भी कूटकर इसका भात बनाकर खाते हैं। रोटी भी बनाई जाती है। खीर भी बनाते हैं। यह शीतल, हलका और मलरोधक होता है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

सावा—शीतल और कफ-पित्तनाशक तथा मलरोधक होता है। इसे भी कूटकर तैयार करना होता है और लगभग दो-तिहाई भाग ही उपयोग के योग्य होता है।

कंगनी, कोदों, चीना, सावा के पोषक पदार्थ (प्र० श०)—

	कंगनी	कोदों	चीना	सावा
जल	११.२	१२.८	११.९	११.५
आमिषजातीय	१२.३	८.३	१२.५	७.७
स्नेह	४.७	१.४	१.१	४.७
खनिज	३.२	२.९	३.४	४.८
शर्कराजातीय	६०.६	६५.६१	६८.९	६३.७
कैलशियम	०.०३	०.०४	०.०१	०.०२
फासफोरस	०.२९	०.२४	०.३३	०.३६
लोहा	०.००६३	०.००५२	५.७	०.०००१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सावा की एक जाति (*Paniceum crusgalli var frumentacea*) और होती है जो छः-सात सप्ताह में तैयार होती है। इसके बीज फलाहार के काम आते हैं।

२—दलहन की खेती

भारत-जैसे शाकाहारी देश के लिए आमिषजातीय पदार्थ (Proteins) प्रचुर मात्रा में दालों से ही मिलते हैं। इनकी खेती से भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ती है। इनकी जड़ों पर भूरी-भूरी गठानें होती हैं, जिनमें एक प्रकार के सूक्ष्म जन्तु रहते हैं जो वायुमंडल की नाइट्रोजन का उपयोग कर उसे पौधों को देते हैं, जिससे उस फसल की नाइट्रोजन की मांग का असर भूमि पर बहुत कम पड़ता है। फसल का जो अंग भूमि के ऊपर रहता उसका नाइट्रोजन वातावरण से ही सूक्ष्म जन्तु द्वारा प्राप्त होता है। इस वर्ग की फसलों को फासफोरस के खाद की विशेष आवश्यकता होती है, सो सुपरफासफेट या हड्डी के चूर्ण के रूप में देना चाहिए।

(१) उड़द Urid *Phaseolus mungo*

इसका पौधा डेढ़-दो फुट ऊंचा और फलियां डेढ़-दो इंच लम्बी रोएंदार होती हैं। काले उड़द मोटे दानेवाले और हरे या भूरे रंग के छोटे दानेवाले होते हैं। मूंग और छोटे दानेवाले उड़द की पहचान यह है कि मूंग की दाल पीली और उड़द की सफेद होती है।

जलवायु—पच्चीस-तीस इंच वर्षावाले स्थान, जहां का वातावरण तर और उष्ण हो, अच्छा होता है।

भूमि, जुताई और खाद—दुमट जमीन, जिस फसल के साथ बोई जाय, उसकी जुताई और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना चाहिए।

उड़द के खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइ०	फा० पे०	पो० आ०
बीज	९.९३	३.६८	०.८५	—
भूसा	९.८९	१.३०	०.३५	२.६५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी बीज में एन० पी० ४, ६, ७ और १४, ई० बी० ११० एन ५५ और एन ६३ अच्छे हैं। अकेली फसल के लिए ५ सेर बीज प्रति-एकड़ बोना चाहिए। बोने का समय वर्षारम्भ है। कहीं-कहीं नीची तरीवाली भूमि में माघ (फरवरी) में भी बो देते हैं। अकेली फसल हो तो इन्हें कतारों में, जिनका अन्तर डेढ़ फुट का हो, बोना चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर एक फुट उत्तम होगा। इसे बहुधा मक्का के साथ बोते हैं। हेरफेर के लिए गेहूं के साथ अच्छा होगा। जहां धान के बाद बोते हैं, वहां धान के साथ हेरफेर हो जाता है।

निंदाई और सिंचाई—चूंकि प्रायः मक्का के साथ बोया जाता है और उसके लिए निंदाई काफी करनी होती है अतः वही इसके लिए भी हो जाती है। सिंचाई जहां आवश्यक हो करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—वर्षारम्भ के समय बोये जानेवाले काले उड़द की फसल भाद्रपद-आश्विन (सितम्बर) में तैयार हो जाती है। देरी से बोई जाने वाली उड़दी (छोटे दानेवाले उड़द) कार्तिक (अक्तूबर) तक और धान के बादवाली फसल बोने के समय से तीन-चार महीने में तैयार होती है। फलियां पकने पर सूखकर तड़क जाती हैं और बीज फेंक देती हैं। सो तड़कने के पहले सावधानी से फलियां तोड़ लेनी चाहिए। बीज की उपज चार-पांच मन और भूसे की लगभग बीज से तिगुनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—साधारण व्यवसाय की रीति से वितरण और खपत देश में ही हो जाती है।

उपयोग और गुण—बहुधा दाल के रूप में उपयोग होता है। दाल से पापड़, दहीवड़ा, इमरती आदि बनाते हैं। मद्रास की तरफ चावल के साथ मिलाकर अनेक पदार्थ बनाते हैं। उड़द भारी और बलदायक होता है। उड़द का भूसा पशुओं को खिलाया जा सकता है।

उड़द की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)—

जल	आमिष-जातीय	स्नेह	शर्करा-युक्त	खनिज	कैल०	फास०	लोहा
१०.६	२४.०	१.४	६०.३	३.४	०.२	.३७	०.००६८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(२) किराओ Kirao *Pisum arvense*

इसके बीज हरे-पीले रंग के धब्बेदार होते हैं और खेती देशी मटर की खेती के समान होती है।

(३) कुलथी Horsegram *Dolichos biflorus*

इसकी लता फुट-डेढ़ फुट लम्बी और फलियों की नोंक मुड़ी हुई होती है। बीज चपटे, चमकीले और भूरे, लाल, काले आदि रंगों के होते हैं और प्रत्येक फली में पांच-छः बीज होते हैं।

जलवायु—पचीस-तीस इंच वर्षावाले स्थानों में खरीफ और अधिक इंच वालों में रवी के मौसम में बोना चाहिए।

भूमि, जुताई और खाद—हलकी भूमि और साधारण जुताई तथा दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट मिल सके तो दे देना चाहिए।

कुलथी के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०
बीज	१०.२	३.४०	०.८१
भूसा	५.६	१.०९	

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—लगभग दस सेर बीज प्रति-एकड़ आषाढ़-श्रावण (जून-जुलाई) या आश्विन-कार्तिक (सितंबर-अक्तूबर) में कतारों में, जिनका अन्तर एक फुट का हो, बोना चाहिए। चरीवाली फसल के लिए बीज की मात्रा ड्योढ़ी होनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो वहां करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—चार-पांच महीने में तैयार हो जाती है। खलिहान में बैलों से गहाई कर हवा में दाना साफ किया जाता है। बीज की उपज लगभग पांच मन और भूसे की उससे दूनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज तथा घर-खर्च इतनी रखकर शेष का साधारण व्यवसाय की रीति से देश में ही वितरित होकर खपत हो जाती है। यह दाल और बीज दोनों के रूप में मिल जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—हरे बीज की सब्जी और सूखे की दाल बनाते हैं। पशुओं को दी जाय तो उबालकर देनी चाहिए, वरना छिलका कठोर होने के कारण बीज वैसे ही निकल जाते हैं। भूसा और हरी फसल पशुओं को खिलाई जाती है।

कुलथी के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

जल	११.८	आमिषजातीय	२२.०
स्नेह	०.५	शर्कराजातीय	५७.३
खनिज	३.१	कैलशियम	०.२८
लोहा	.००७६		०.३९

(४) खिसारी, लाख, लांग Khisari *Lathyrus sativus*

इसकी लता डेढ़-दो फुट लम्बी और बीज तूअर के बीज-जैसे चपटे, पीले या भूरे रंग के धब्बेदार होते हैं। फलियां रोएंदार, चार-पांच बीज वाली होती हैं।

जलवायु—लगभग तीस इंच वर्षावाले स्थान इसके लिए उत्तम हैं।

भूमि, जुताई और खाद—यह हर प्रकार की भूमि में यहां तक कि कुछ ऊसर भूमि में भी हो जाती है। जुताई साधारण-सी करनी होती है। जब धान के बाद बोते हैं तो धान काटने के कुछ दिन पहले ही बीज छींट देते हैं। ढाई-तीन मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना उत्तम होगा।

खिसारी के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०
बीज	१२	३.९४	१.१२
भूसा	१०	१.८७	—

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर) में लगभग बीस सेर प्रति-एकड़ के हिसाब से बीज छींटने चाहिए। वैसे कतारों में बोना हो तो कतारें एक-एक फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में १५ सेर बीज प्रति-एकड़ काफी होंगे। धान के बाद बोने से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसके साथ हेरफेर हो जाता है। वैसे किसी भी खरीफ की फसल के साथ हेरफेर कर सकते हैं। इसे जव या अलसी के साथ भी बोते हैं।

निराई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) तक तैयार हो जाती है। उपज दस-बारह मन बीज की तथा उससे सवाई भूसे की हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बीज तथा घर-खर्च इतनी ही उपज की जाती है। अधिक हो तो व्यवसाय की साधारण रीति द्वारा देश में ही खप जाती है।

उपयोग और गुण—इसकी दाल काम में लाई जाती है। बीज पशुओं को खिलाये जाते हैं। खिसारी की दाल हलकी और बलदायक होती है। इसमें कभी-कभी अटके (जंगली पौधे) के बीज मिल जाते हैं जिन्हें निकाल देना चाहिए; वरना अधिक सेवन से खानेवाले लंगड़े हो जाते हैं।

खिसारी की दाल के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

जल	आमिष-जातीय	स्नेह	शर्करा-युक्त	खनिज	कैल-शियम	फास-फोरस	लोहा
१०	२७.२	०.६	५८.२	३.०	०.११	०.५	.००५६

(५) ग्वार Guar *Cyamopsis psoraloides*

इसके पौधे भूमि की उर्वरा-शक्ति अनुसार चार फुट से लेकर आठ-दस फुट तक ऊंचे हो जाते हैं। फलियां डेढ़-दो इंच लम्बी खुरदरी होती हैं। सब्जीवाली ग्वार की फलियां साफ कोमल तथा चार-पाच इंच लम्बी होती है। इसकी फलियां चिकनी, लम्बी और मुलायम होती हैं।

जलवायु—तीस-पैंतीस इंच वर्षावाले स्थान तथा उष्ण-तर जलवायु इसके लिए अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—यह हर प्रकार की भूमि में हो जाती है। तरकारीवाली ग्वार के लिए दुमट मिट्टी अच्छी होती है। बरसात के पहले साधारण जुताई से खेत तैयार कर लेना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना अच्छा होगा।

ग्वार में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

जल ८.४ नाइट्रोजन ४.४३

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—हरे खाद के लिए १५ सेर बीज प्रति-एकड़ छींटकर बोना चाहिए। कतारों में बीज के लिए बोना हो तो कतारें दो फुट के अन्तर पर रखना उत्तम होगा।

हेरफेर जुवार या कपास के साथ किया जा सकता है। हरे खाद के लिए बोई जाय तो इसके बाद रबी की फसल ले सकते हैं। हरे खाद के लिए १५ सेर बीज प्रति-एकड़ छींटकर बोना चाहिए। कतारों में बीज के लिए बोना हो तो कतारें दो फुट के अन्तर पर रखना उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—तरकारी वाली ग्वार को दो बार नींदना आवश्यक होगा और पौधों की छंटनी करके उन्हें एक-एक फुट की दूरी पर कर देना चाहिए। इसके पौधों में एक प्रकार के माईट नाम के जन्तु लग जाते हैं, अतः पृष्ठ ११० पर दिये हुए उपचार का ध्यान रखना चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—तरकारी वाली ग्वार से मार्गशीर्ष (अक्तूबर-नवंबर) से फलियां मिलना शुरू हो जाती हैं। लगभग पचास-साठ मन फलियां प्रति-एकड़ मिल जाती हैं। खादवाली फसल भाद्रपद (अगस्त) में गाढ़ देनी चाहिए। पकी हुई फसल पौष तक काट ली जाती है और पीटकर दाना छुड़ाना पड़ता है।

वितरण और व्यवसाय—इसका व्यवसाय भी अन्तर्प्रान्तीय व्यवसाय की साधारण रीति द्वारा होता है।

उपयोग और गुण—ग्वार की हरी फलियों की तरकारी बनाई जाती है। हरी फसल खाद के लिए या पशुओं को खिलाने के काम आती है। सूखे बीज उबालकर पशुओं को खिलाये जाते हैं। ग्वार की तरकारी गर्म और दस्तावर होती है।

ग्वार की हरी फलियों के पोषक द्रव्य प्र० श०—जल ८२.५, आमिष-जातीय ३.७, स्नेह ०.२, शर्करायुक्त ९.९, खनिज १.५, कैलशियम ०.१३, फास्फेट ०.०५, लोहा .००५८।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) चना Gram *Cicer arietinum*

दालवर्ग की फसलों में चने का विशेष महत्व है, क्योंकि इससे नमकीन तथा मीठे कई प्रकार के पकवान बनते हैं। चने का पौधा फुट-दो फुट ऊंचा होता है। प्रत्येक फल में एक या दो बीज रहते हैं। चने लाल, पीले, हरे, सफेद, काले और गुलाबी रंग के होते हैं। परन्तु दाल सबकी पीली या हलकी पीली होती है।

जलवायु—इसके लिए पच्चीस से चालीस इंच वर्षावाले स्थान अच्छे होते हैं। चने को पाले से बहुत हानि पहुंचती है, इसलिए इन्हें ऐसे स्थानों में बोना चाहिए जहां पाले से बचाव हो सके।

भूमि, जुताई और खाद—बलुआ को छोड़कर सब प्रकार की भूमि में चने हो जाते हैं। इसके लिए गेहूं-जैसी महीन जुताई नहीं करनी पड़ती। चने ढेलों में बो दिये जायं तो वहां भी निकल आते हैं, लेकिन एक-दो बार हल और एक-दो बार बखर अवश्य चलाना चाहिए।

चने को खाद नहीं दिया जाता। इससे पहलेवाली फसल को देते हैं। वैसे मिल सके तो प्रति-एकड़ एक सौ मन गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना चाहिए।

चने के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पो० आ०
बीज	१०.३५	२.८८	०.५५	—
भूसा	६.४	०.६६	०.१	२.८

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—तिफन या नारीवाले हल से पंजाब की तरफ पंद्रह सेर, उत्तरप्रदेश में बीस-पच्चीस सेर, मध्यप्रान्त में पच्चीस-तीस सेर और बम्बई की तरफ लगभग पच्चीस सेर बोते हैं। इसके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) है। कहीं-कहीं छींट-कर भी बोते हैं। कतारों में नौ इंच से एक फुट का अन्तर रहना चाहिए।

उत्तम बीज—उत्तरप्रदेश और बिहार—एन० पी० १७, २५, ५३, ५८ टी ८५, काबुली २ बड़ा दाना, काबुली ६ छोटा दाना, एस० ४.।

मध्यप्रदेश–मध्य भारत—ए० डी० ५, ६, डी० ८ (गुलाबी) धार २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(गुलावी) इन्दौर ४ और ७०७.

बम्बई–चाफा (निफाड़) ८१६ दोहद पीला।

खरीफ के साथ हेरफेर करना हो तो जुवार या कपास और रवी के साथ हो तो गेहूं या अलसी ठीक होंगे। गेहूं, जव, सरसों या अलसी के साथ चने वो सकते हैं।

निंदाई और सिंचाई–निंदाई साधारण और सिंचाई जहां आवश्यक हो।

फसल की तैयारी और उपज—हरे चने वोने के समय से चार-पांच महीने में तैयार हो जाते हैं। पके हुए चने उस समय उखाड़े जाते हैं जब वे करीव-करीव सूखने लगते हैं, क्योंकि पूर्ण सूखने पर उखाड़ने से फल गिर जाते हैं। चने कहीं-कहीं उखाड़े न जाकर काटे जाते हैं। इनकी गहाई खलिहान में वैलों से कराई जाती है। चने की उपज[1] आठ-नौ मन और सिंचाईवाले खेतों से इससे ड्योढ़ी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—बहुत-से स्थानों में चने के हरे खेत ही विक जाते हैं और व्यापारी शहरों में ले जाकर वेचते हैं। उपज का १२ प्रतिशत के लगभग वीज में लग जाता है। शेष देश में ही खप जाता है। व्यवसाय अन्तर्प्रान्तीय है।

उपयोग और गुण—छोटे-छोटे पौधों की कोंपलें साग के काम आती हैं। हरे चने कच्चे, आग में भूनकर या उनकी सब्जी वनाकर खाते हैं। सूखे चने के कई पदार्थ वनते हैं। इन्हें वालू में भूनकर भी खाते हैं और सत्तू भी वनाया जाता है। चने पशुओं को विशेषतः घोड़ों के दाने के रूप में दिये जाते हैं। चना खून को साफ करनेवाला, दस्तावर तथा ज्वरनाशक होता है।

चने के पोषक द्रव्य (प्र० श०)

जल	आ० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त	खनिज	कै०	फा०	लो०
९.८	१७.९	०.१९	६१.२	२.७	०.१९	०.२४	.००७८

---

[1] कृषि-पंडित श्री वलायतीराम नम्बरदार, जिला लुधियाना ने लगभग ४६ मन उपज दिखाई : Indian Farming, July 1953 Supplement.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(७) चवली, बोरा, बरबटी Cowpea *Vigea Catiang* और *Vigna sinensis*

इसका पौधा लता-सा होता है। फलियां आठ-दस इंच से एक फुट लम्बी होती हैं।

जलवायु—उष्ण और तर तथा तीस-पैंतीस इंच वर्षावाले स्थान उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—वलुआ-दुमट में यह अच्छी होती है। जुताई के लिए एक बार हल और दो बार बखर चलाना चाहिए।

चवली में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)

	जल	ना०	फास्फेट	पो० आ०	चूना
बीज	१२	३.९३	१.१३	—	०.९८
भूसा	१०	२.००	०.५०	१.४७	—

बीज, बुआई, मिश्रण और हेरफेर—सब्जी के लिए 'फिलीपाईन्स अर्ली' उत्तम जाति है। आठ-दस सेर बीज प्रति-एकड़ के हिसाब से वर्षारम्भ के समय कतारों में, जिनमें फुट-डेढ़ फुट का अन्तर हो, बोना चाहिए। यदि हरे खाद के लिए बोना हो तो बीज डचौढ़ा डालना चाहिए और छींटकर बो सकते हैं। बीज के लिए नं० ३८७ अच्छी होती है। हेरफेर जुवार वा कपास के साथ अच्छा होगा। यदि खाद के लिए उपज लेनी है तो इसके बाद गेहूं लेना चाहिए। इसे कहीं-कहीं मक्का के साथ बोकर हरे चारे के काम में लाते हैं।

निंदाई और सिंचाई—साधारण निंदाई और जहां आवश्यकता हो, वहां सिंचाई करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—जाति-अनुसार बोने के समय से तीन महीने से लेकर पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। इसे उस समय काटना चाहिए जब अधिकांश फलियां पक गई हों, लेकिन फटी न हों। इसे भी खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। बीज की उपज दस मन तथा उससे दूनी उपज भूसे की हो जाती है। हरी फलियां तरकारी के लिए तोड़ी जायं तो लगभग ४० मन हो जाती हैं। हरी लताएं चारे के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए काटी जायं तो लगभग २०० मन मिल जायंगी।

वितरण और व्यवसाय—हरी फलियां तरकारी के लिए बिकती हैं। बीज का व्यवसाय साधारण रीति से होता है। इसकी खपत देश में ही हो जाती है।

उपयोग और गुण—हरी फलियों की तरकारी बनाई जाती है। सूखे बीजों की दाल बनाते हैं। पशुओं के दाने के लिए भी यह काम में आती है। चवली की तरकारी हल्की, दस्तावर, परन्तु कुछ बादी करती है।

चवली के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा०	स्नेह	शा० जा०	खनिज	कै०	फा०	लोहा
१२.०	२४.६	०-७	५५.७	३.२	०.०७	०.४६	०.००३८

(८) तूवर, रहर, अरहर Tur *Cajanas cajan*

जाति-अनुसार इसके पौधे खड़े या फैलनेवाले, गुच्छेदार या फैली हुई फलियोंवाले होते हैं। इनके बीज सफेद, बादामी, काले या भूरे होते हैं। पौधे चार-पांच फुट से लेकर सात-आठ फुट ऊंचे हो जाते हैं।

जलवायु—बीज उष्ण और तर वातावरण में अच्छे अंकुरते हैं। तूवर के फूलते समय यदि धूप अच्छी रहे तो फल अधिक बैठते हैं। उन दिनों में बादल हो जायं और कहीं वर्षा अधिक हो जाय तो फूल झड़ जाते हैं। वर्षा के विचार से तीस-चालीस इंच वर्षावाले स्थान उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए कछार-दुमट मिट्टी अच्छी होती है। तूवर जहां जुवार-बाजरे के साथ बोई जाती है वहां तो जैसी उनके लिए जुताई होगी वही तूवर के लिए होगी। जहां अकेली बोना हो, वहां गर्मी की जुताई के बाद और पहली वर्षा के बाद एक बार हल और एक बार बखर चलाकर बो देना चाहिए। तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट भी देना चाहिए।

तूवर के खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइट्रोजन	फास्फेट	पो० आ०
बीज	१०	३.३८	०.६	२.२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूसा	१०	१.७८	—	—
डंडिया	—	०.४६	—	—

इसकी एक साल में एक ही फसल होती है। सो दूसरे साल मक्का, जुवार या गेहूं-जैसी फसल लेना उत्तम होगा। मिश्रित फसल जुवार और बाजरे के साथ होती है। कहीं-कहीं कपास के साथ भी कुछ कतार लगा देते हैं।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—खड़ी जाति में टी ५१ और फैलनेवाली टी ८०, उत्तरप्रदेश में सी. १७, ६६ और १३२, मध्यप्रदेश में ई० बी० ३ (सफेद) और ई० बी० ३८ (बादामी) तथा बम्बई प्रान्त में ८४ अच्छी है। अरगड़ा या नालीवाले हल से छः-सात सेर बीज प्रति-एकड़ बोना चाहिए। छोटी जाति की तूर के लिए कतारों में अन्तर डेढ़ फुट का और अधिक ऊंची तथा फैलनेवाली के लिए दो फुट रखना चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर फुट-डेढ़ फुट का ठीक होगा।

निंदाई और सिंचाई—प्रारम्भ में पौधों की बाढ़ बड़ी धीरे-धीरे होती है, सो उस समय दो-तीन बार निंदाई होनी चाहिए; बरना घासपात इसके पौधों को दबा देंगे। सिंचाई जहां आवश्यक हो करनी चाहिए। साधारणतः नहीं करनी पड़ती।

फसल की तैयारी और उपज—जल्दी तैयार होनेवाली पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) तथा देरीवाली चैत्र (अप्रैल) तक होती है। इसे काटकर पूले बांध दिये जाते हैं और खलिहान में ले जाकर पीट करके बीज छुड़ाते हैं। छोटे पौधेवाले तूवर की उपज छः-सात मन तथा बड़े पौधे-वाली की, जो देरी से पकती है, उपज बारह से पन्द्रह मन तक हो जाती है। अच्छी उर्वरा भूमि में बीस-बाईस मन तक भी आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—आवश्यकतानुसार बीज तथा घर-खर्च के लिए रखकर शेष का वितरण अन्तर्प्रान्तीय बहुत होता है। बिहार तथा उत्तरप्रदेश की दाल कानपुर की दाल के नाम पर बहुत बिकती है।

उपयोग और गुण—दाल खाने के काम आती है—चूरी पशुओं को खिलाई जाती है। तूवर की डंडियां जलाने तथा टोकरियां बनाने के काम आती हैं। तूवर की दाल खून को साफ करनेवाली होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तूवर की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा० युक्त	स्नेह	शर्करा	खनिज	कैल०	फास०	लोहा
१५.२१	२५.३	१.७	५७.२	३.६	०.१४	०.२६	०.००८८

(६) मसूर Lenti *Lens Culinasis (esculenta)*

मसूर का पौधा व्याधिग्रस्त चने के पौधे-जैसा नजर आता है। फल चने के फल-जैसे लेकिन कुछ लम्बे होते हैं। बीज का छिलका भूरा, लेकिन दाल सिन्दूरी रंग की होती है।

जलवायु—इसमें चना की अपेक्षा सर्दी सहन करने की शक्ति विशेष होती है।

जमीन, जुताई और खाद—मटियार दुमट मिट्टी में यह अच्छी होती है। खाद पहली फसल को अच्छा दिया हो तो इसे देने की जरूरत नहीं। वैसे दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना अच्छा होगा। जुताई साधारण करना होता है। जहां धान के बाद इसे लेते हैं वहां तो धान के काटने के पहले इसके बीज छींट देते हैं अतः जुताई नहीं करनी पड़ती।

मसूर के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०
बीज	८.०३	३.७४	१.५८
भूसा	१०.२३	०.८६	

बीज, बुआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी बीजों में एन० पी० ११ और एन० पी० हरिब्रिड नं० १ अच्छी उपज देती हैं। बंगाल में पांच-छः सेर, बिहार व उत्तरप्रदेश में दस-बारह सेर तथा पंजाब में लगभग पन्द्रह सेर के करीब बीज छींटकर बोते हैं। इसे कतारों में भी बो सकते हैं, जिनकी दूरी छः से नौ इंच हो। इसे कार्तिक-पौष (अक्टूबर-नवम्बर) में बोना चाहिए। इसे जव, सरसों, गेहूं इत्यादि के साथ भी बो सकते हैं; जहां धान के बाद बोई जाती है वहां उससे हेरफेर हो जाता है।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—फाल्गुन (फरवरी) में चने की भांति उखाड़कर खलिहान में तैयार की जाती है। भूमि के अनुसार पांच-छः मन से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दस-बारह मन तक उपज हो जाती है। भूसे की उपज लगभग बीज के बराबर आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अन्तर्प्रान्तीय।

उपयोग और गुण—इसकी दाल दो प्रकार की होती है—एक खड़ी, यानी दोनों दल चिपके हुए हों, और दूसरी दर्रा, यानी जिसके दोनों दल अलग-अलग हों। ऊपर का भूरा छिलका दोनों में से निकल जाता है। दाल खाने के काम आती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। इसकी दाल में आमिषजातीय पदार्थ की मात्रा काफी रहती है। यह सूखी, गरम तथा मलरोधक होती है। कफ-पित्त का नाश करती है।

मसूर की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त
१२.४	२५.१	०.७	५९.७
खनिज	कै०	फो०	लोहा
२.१	०.१३	०.२५	.००२

(१०) मटर, वटाला, वटाणा Peas *Pisum sativum*

मटर दो प्रकार की होती है। एक छोटी सफेद दानेवाली, दूसरी मोटे दानेवाली, जिसके बीज पर झुर्रियां पड़ी हुई होती हैं। दूसरी मटर सब्जी के काम में अधिक आती है। यह पहली से मीठी होती है। इसके पौधे जाति के अनुसार एक फुट से लेकर चार-पांच फुट ऊंचे होते हैं।

जलवायु—तीस-पेंतीस इंच वर्षावाले स्थान उत्तम होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—बलुआ और भारी मटियार को छोड़कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाती है। जुताई कुछ महीने करनी होती है। दो बार हल और दो बार बखर अवश्य चलाना चाहिए। डेढ़ सौ मन के लगभग गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट, विशेषतः विलायती मटर के लिए, अवश्य देना चाहिए।

मटर के खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०	पो० आ०
बीज	१०.१२	५.५२	०.८४	१.०१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूसा	१०.००	२.४२	०.७२	१.२४

बीज, बोग्राई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जाति में ए० पी० २९ अर्ली बेजर, 'बोनी विली बहुत अच्छी जातियां हैं। सब्जीवाली मटर के बीज उसकी बाढ़ के अनुसार पन्द्रह से तीस सेर और दूसरी के लगभग बीस सेर प्रति-एकड़ बोने चाहिए। बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अ० न०) है। कतारें एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। मटर गेहूं और जौ के साथ भी बोई जाती है। हेरफेर मक्का के साथ हो सकता है।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई दो-तीन बार करनी होगी। जिस मटर के लिए सहारे की आवश्यकता हो उसके लिए वैसा प्रबन्ध करना चाहिए। सब्जीवाली मटर के लिए सिंचाई अवश्य करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल काटने योग्य हो जाती है, परन्तु हरी फलियां तीसरे महीने से ही मिलना प्रारम्भ हो जाती हैं। सूखी मटर बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। मटर की उपज बरानी खेतों में सात-आठ मन और सिंचाईवाले में इसकी ड्योढ़ी हो जाती है। इतना ही भूसा भी हो जाता है। सब्जीवाली मटर से तीस-चालीस मन हरी फलियां मिल जाती हैं।

वितरण और व्यवसाय—अन्तर्प्रांतीय।

उपयोग और गुण—हरे दाने सब्जी के काम में आते हैं। सूखे की दाल बनती है। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है। वैद्यों के मतानुसार मटर मधुर, बलदायक, पित्तनाशक और दस्तावर होती है।

मटर की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त	खनिज	कैल०	फा०	लो०
१६	१९.७	१.५	५६.६	२.१	०.०७	००.३	०.००४

(११) मूंग Moong *Phaseolus radiatus*

इसका पौधा एक फुट से लेकर अच्छी जमीन में दो ढाई-फुट तक ऊंचा होता है। फलियां साफ, पतली और चार-पांच इंच लम्बी होती हैं।

जलवायु, भूमि जुताई और खाद—उड़द-जैसा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मूंग के खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइट्रोजन	फा० पे०
बीज	१०.६४	३.८२	०.८६
भूसा	१०.९७	१.०७	०.७२

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में एन. पी. १८, २८ और ३६, कानपुर नं० १ कृष्णा नं० ११ (मध्य भारत) उत्तम है। बीज की मात्रा पांच सेर प्रति-एकड़। बोने का समय—वर्षारम्भ या धान के बाद आश्विन-कार्तिक में धान के खेतों में। हेरफेर धान के साथ हो जाता है। खरीफ मूंग की फसल के बाद रबी की कोई भी फसल ले सकते हैं। मिश्रण बहुधा जुवार के साथ होता है। जुवार के साथ मूंग और रहर दोनों बो देते हैं। अकेली फसल बोई जाय तो कतारों में डेढ़-दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। निंदाई और सिंचाई आवश्यतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—जाति-अनुसार तीन महीने से लेकर छः महीने में तैयार होती है। खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। उपज पांच मन से लेकर दस मन तक हो जाती है। भूसे की उपज बीज से दूनी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अन्तर्प्रान्तीय।

उपयोग और गुण—सब दालों में जल्दी पकनेवाली दाल मूंग की होती है। इससे पापड़ भी बनते हैं तथा अन्य पकवान भी बनाये जाते हैं। भूसा पशुओं को खिलाया जाता है।

मूंग की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा०	स्नेह	श० यु०	खनिज	कैल०	फा०	लो०
१०.४	२४.०	१.३	५६.६	३.६	.१४	.२८	.००८४

(१२) मोठ, माथ, मटकी Kidney Bean

Phaseolus aconitifoluis

इसके पौधे एक फुट ऊंचे, लेकिन फैलनेवाले होते हैं। पौधों पर रोएं बहुत होते हैं। फलियां मूंग की फली-जैसी, लेकिन लम्बाई में छोटी और प्रत्येक दो-दो बीज के बाद सिकुड़ी हुई होती हैं। बीज का रंग, भूरा होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलवायु, भूमि, जुताई और खाद—मोठ, उड़द और मूंग की अपेक्षा कम वर्षावाले स्थानों में हो जाती है। इसके लिए भूमि भी हल्की ही उत्तम है। जुताई और खाद उड़द-जैसा।

बीज, बोआई, हेरफेर और मिश्रण—नम्बरी जाति में नं० ८८ और १३५ (मध्यप्रदेश) अच्छी है। अकेली वोना हो तो चार सेर बीज प्रति-एकड़ काफी होंगे। वहुधा जुवार-बाजरे के साथ ही बोते हैं, अतः दो सेर बीज डालना चाहिए। अकेली बोई जाय तो कतारों में डेढ़ फुट का अन्तर उत्तम होता है। हेरफेर रवी की फसल के साथ उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—कार्तिक-मार्गशीर्ष (अक्तूबर-नवम्बर) में तैयार हो जाती है। खलिहान में मूंग की भांति तैयार करते हैं।

उपयोग और गुण—इसे चने के समान भूनकर भी खाते हैं, दाल खाने के काम में आती है। पापड़ भी वनाये जाते हैं। इसकी दाल मूंग की दाल के समान शीतल और जल्दी पचनेवाली होती है। कफ-पित्त के विकारों को दूर करती है।

(१३) सोयाबीन Soybean *Lycine max (Hispida)*

इसकी खेती चीन और जापान में अधिक होती है। जाति-अनुसार पौधों की ऊंचाई डेढ़-फुट से लेकर चार-पांच फुट तक होती है। फलियां रोएंदार एक इंच से लेकर ढाई इंच तक होती हैं। बीज हरे, पीले, भूरे और काले—ऐसे कई रंग के होते हैं।

जलवायु—ठंडा वातावरण और तीन से पचास इंच वर्षावाले स्थान अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—दुमट या मटियार-दुमट इसके लिए अच्छी होती है। गर्मी में एक वार हल से जोतकर खाद दे करके वरसात आते ही बखर से तैयार करके बो सकते हैं। लगभग डेढ़ सौ मन गोवर का खाद और लगभग तीन मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना चाहिए।

सोयाबीन में खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)—

	जल	नाइ०	फा० पे०	पो० आ०
बीज	४.७७	६.५१	१.३६	१.८२
भूसा	—	०.६	०.१२	०.८६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—वर्षारम्भ के समय आठ-दस सेर बीज प्रति-एकड़ के हिसाब से बोना चाहिए। जाति-अनुसार कतारें डेढ़-दो फुट दूर होनी चाहिए। हरे खाद के लिए बोना हो तो लगभग पन्द्रह सेर बीज गिराना होगा। हेरफेर के लिए दूसरे वर्ष में कपास या रबी की फसल लेनी हो तो गेहूं बोना उचित होगा।

निदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—जब पत्ते पीले पड़कर बहुत-से झड़ जायं तब काट लेना चाहिए। माघ (जनवरी) में तैयार हो जाती है। इसे खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। उपज लगभग पन्द्रह मन तक हो जाती है। बीज से ड्योढ़ी उपज भूसे की आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अभी इसकी खेती बहुत कम होती है। व्यवसाय भी नहीं के बराबर है। अन्य देशों में इसके कई पकवान बनाते हैं।

उपयोग और गुण—पोषक द्रव्यों की मात्रा के हिसाब से देखा जाय तो इसकी दाल सब दालों से उत्तम है। परन्तु न तो यह जल्दी पकती है, और न अच्छी स्वादिष्ट है। हरे पौधे खाद के लिए अथवा पशुओं को खिलाने के काम आते हैं। हरी फलियां तरकारी के काम आ सकती हैं। बीज से रोटी-बिस्कुट इत्यादि बना सकते हैं। इनसे तेल भी निकाला जाता है, जिसका उपयोग तिल, मूंगफली या अलसी के तेल की भांति होता है।

सोयाबीन के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	आ० जा०	स्नेह	श० यु०	खनिज	कैल०	फो०	लोहा
८.१	४३.२	१९.५	२०.९	४.६	७.२	०.६९	०.११५

(१४) सेम, पोपट, वालवलोर Sem *Dolichos Lablab*

इसकी खेती गुजरात तथा दक्षिण भारत में होती है। उत्तर भारत में अधिकांश लोग वाडियों के घेरों पर अथवा घरों के आसपास मचानों पर कुछ लताएं चढ़ा देते हैं, जिनसे तरकारी के लिए फलियां मिल सकती हैं। ये कई प्रकार की होती हैं। किसीके बीज चपटे तो किसीके गोल, किसीके बड़े तो किसीके छोटे। गुजरात में सूरती और पापड़ी नाम की सेम तरकारी के लिए अच्छी मानी गई है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलवायु—तीस-चालीस इंच वर्षावाले स्थान अच्छे होते हैं।

सेम में खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइट्रोजन	फास्फेट
बीज	९.६	३.९८	१.०३
भूसा	१०.०	.०९१	—

भूमि, जुताई और खाद—मटियार-दुमट जमीन इसके लिए अच्छी होती है। गर्मी की जुताई के बाद वर्षारम्भ के समय बखर से भूमि तैयार करके बोते हैं। हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट भी लगभग तीन मन प्रति-एकड़ के हिसाब से देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—वर्षारम्भ के समय इसके बीज बोये जाते हैं। थोड़े बीज तो खुर्पी से गढ़े खोदकर बो सकते हैं और लताएं घेरे या मचान पर चढ़ा देते हैं। खेतों में नारीवाले हल से या अरगड़े से बो सकते हैं। खरीफवाली फसल के लिए लगभग पन्द्रह सेर और रबीवाली के लिए बीस सेर बीज प्रति-एकड़ लगता है। पंक्तियों में खरीफवाली के लिए चार फुट और रबीवाली के लिए दो-ढाई फुट का अन्तर उत्तम होगा। इसे जुवार-बाजरे के खेतों में भी बो देते हैं। हेरफेर के लिए दूसरे साल रबी के अनाज की फसल लेनी चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी और उपज—खरीफवाली से मार्गशीर्ष (नवम्बर) में फलियां मिलना प्रारम्भ हो जाती हैं। रबीवाली से चैत्र में फलियां मिलती हैं। सूखी फसल पांच-छः महीने में तैयार होती है, जिसे काटकर खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार कर लेते हैं। बीज की उपज दस-बारह मन और उतनी ही भूसे की हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—साधारण अन्तर्प्रान्तीय।

उपयोग और गुण—इसकी फलियों से सब्जी बनाते हैं। सूखे बीज से दाल बनाई जाती है। इसकी तरकारी सूखी, मंदाग्नि करनेवाली होती है। वायु-विकार भी बढ़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेम की दाल के पोषक द्रव्य (प्रतिशत)

जल	ग्रा० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त	खनिज	कैल०	फा०	लोहा
९.६	२४.९	०.८	६०.१	३.२	०.०६	०.४५	·००२

३—तिलहन की खेती

तिलहन उन फसलों की खेती को कहते हैं जिनसे तेल निकाला जाता है। ऐसी फसलों में अलसी, एरंडी, कुसूम, खसखस, तिल, मूंगफली, रामतिली, सरसों, तोरिया, राई और तारामीरा की गणना है। वैसे तेल खोपरे और कपास का भी होता है, परन्तु इनमें से पहले की गणना वार्षिक फसलों में न होकर फलों में होती है। इसलिए इसका वर्णन 'फलों की खेती और व्यवसाय' में दिया गया है और चूंकि कपास का सम्बन्ध अधिकतर रूई या कपड़ों से है इसलिए इसका वर्णन ताग की फसलों में दिया है। इनके सिवाय करंज और महुए से भी तेल निकाला जाता है; परन्तु इनके बीज पेड़ से प्राप्त होते हैं। इनके लिए जिसे खेती कहना चाहिए, नहीं की जाती।

तिलहन की खेती से हमें बीज के सिवाय तेल और खली भी मिलती है। कुछ दिन पूर्व तेल का उपयोग खाने, जलाने, उबटन लगाने, इत्र बनाने, गाड़ियों के पहियों और चरखे या अन्य यंत्रों में लगाने, चमड़े की चीजों को मुलायम रखने अथवा किवाड़-पाट इत्यादि लकड़ी की वस्तुओं पर लगाने के लिए ही किया जाता था और खली पशुओं को खिलाई जाती थी।

वर्तमान समय में उपर्युक्त सूची बहुत बड़ी हो गई है। तेलों से साबुन भी बनाया जाता है, ग्लिसरीन प्राप्त करते हैं, मोमजामा (oil cloth) बनाते हैं और सबसे अधिक तो वनस्पति घी के लिए इनका उपयोग किया जाता है। खलियां पशुओं को खिलाने या जलाने के काम में लाई जाती हैं।

बीज से तेल निकालने के लिए अधिकतर देशी घानी ही काम में लाई जाती है। कहीं कहीं कोल-भील आदि जातियां बीज को कुचलकर गरम करके दबाव देकर तेल निकालते हैं। वर्तमान समय में कई कारखाने भी तेल निकालने के खुल गए हैं; परन्तु खाने के लिए तो देशी घानी का तेल ही उत्तम होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेल निकालने की घानी के सिवाय दूसरी युक्तियां—

(१) रोटरी घानी—यह देशी घानी-जैसी ही होती है परन्तु खूंट और लाठ दोनों लोहे के होते हैं; और देशी घानी में जैसे लाठ घूमती है वैसे इसमें लाठ और खूंट दोनों ही घूमते हैं। यह एंजिन से चलाई जाती है। इसमें कई घानियां एक साथ लगी रहती हैं। दस घानियों से दस घण्टे में करीब ६० मन बीज का तेल निकाला जाता है। देशी घानी की अपेक्षा रोटरी घानी से दो-चार शतांश तेल भी अधिक निकलता है।

(२) हाइड्रोलिक प्रेस—इसमें बीज को कुचलने या दलने के पश्चात् भाप से गरम करके कपड़ों में (जो इसके लिए एक खास प्रकार के होते हैं) दबाकर तेल निकालते हैं। दबाने से तेल निकल जाता है और खली कपड़ों में रह जाती है जिसे बाद में निकाल लेते हैं।

(३) एक्सपैलर—इनमें बीज कुचलकर या वैसे ही डाल देते हैं। यंत्र द्वारा बीज दबाये जाते हैं। यंत्र एक जालीदार बेलन (Cylinder) में रहता है। सो तेल इसके छिद्रों से बाहर निकल आता है और खली यंत्र के दूसरे मुंह की तरफ से बाहर निकल जाती है।

(४) रासायनिक उपचार—इसमें तेल के कुचले हुए बीजों पर ऐसा रासायनिक पदार्थ डाला जाता है कि जिसमें तेल घुल जाता है। इसके लिए बहुधा बेनजीन (Benzene) काम में लाते हैं। इसके उपयोग से करीब-करीब सब तेल निकल आता है। कहीं-कहीं खलियों से तेल निकालने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। जब तेल बेनजीन-मिश्रित निकल आता है तो उसे अर्क खींचने की भांति गरम करके बेनजीन को अलग कर लेते हैं।

इस रीति से तैयार किया हुआ तेल खाने के काम में नहीं आता, क्योंकि उसमें कुछ बेनजीन रह जाता है। खली भी पशुओं को खिलाने के काम की नहीं रहती, क्योंकि उसका स्नेह सब खींच लिया जाता है। वह बेकार हो जाती है। केवल खाद के लिए अच्छी रहती है।

(१) अलसी, तीसी Linseed *Linum usitatissimum*

अलसी का पौधा नीले या सफेद फूलवाला दो-ढाई फुट ऊंचा होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसके दो वर्ग हैं। एक के पौधे दौंजी अधिक फेंकते हैं और दूसरे वर्ग के कम। अच्छी तरीवाली भूमि में जैसी बिहार में होती है दौंजी फेंकनेवाली अलसी अच्छी होगी। मध्यप्रदेश तथा राजपूताने की तरफ कम दौंजी फेंकनेवाली बोनी चाहिए। अलसी के बीज भूरे, पीले और सफेद ऐसे तीन रंग के होते हैं। बीज के आकारानुसार अलसी, छोटी-बड़ी, ऐसी दो प्रकार की होती है।

जलवायु—तीस-पैंतीस इंच से लेकर पचास-साठ इंच वर्षावाले स्थान अलसी के लिए अच्छे होते हैं। फूलते समय बादल आ जायं तो गर्भाधान ठीक नहीं होता।

भूमि, जुताई और खाद—मटियार दुमट मिट्टी में अलसी अच्छी होती है। जुताई गेहूं-जैसी महीन होनी चाहिए। खाद गोबर का दो सौ मन के लगभग देना अच्छा होगा। खली या एमोनियम सल्फेट का खाद देना हो तो लगभग १० मन खली या ढाई मन एमोनियम सल्फेट देना चाहिए।

अलसी में खाद्य पदार्थ (प्रतिशत)

	जल	नाइ०	फा० पे०	पो० आ०
बीज	६·३	३·६८	१·५३	१·१३
भूसा	—	१·१६	०·१९	२·८२

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में उत्तरप्रदेश के लिए कानपुर ४७७ और ११९३; मध्यप्रदेश के लिए ई० बी० ३; ५५ और (मालवे के लिए) बुन्देलखंड के लिए टी ६अच्छी सिद्ध हुई है। एन पी १२,१२१ १२४ और ४५ भी अच्छी जातियां हैं। नं० ४५ पर हरदे का असर नहीं होता। विहार के लिए बीहार नं० १ अच्छी है। अलसी कार्तिक (अक्तूबर) में बोई जाती है। कहीं-कहीं छींटकर भी बोते हैं। इसे नाई या तिफन से बोयें तो कतारों में नौ इंच का अन्तर रखना चाहिए। लगभग छः सेर बीज प्रति एकड़ बोना होगा। जब गेहूं, जौ, चना के साथ बोई जाय तो दो सेर बीज प्रति-एकड़ काफी होंगे। हेरफेर—जुवार, कपास, चना या मक्का के साथ उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई प्रायः नहीं की जाती। सिंचाई जहां आवश्यकता हो वहां करनी चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फसल की तैयारी और उपज—इसे उस समय उखाड़ना चाहिए जब फल पक जायं; लेकिन पौधे टूटने-जैसे न हों। कहीं-कहीं पौधे हँसुए से काटे भी जाते हैं। बाद में खलिहान में बैलों से गहाकर तैयार करते हैं। अलसी छः-सात मन प्रति-एकड़ की उपज अच्छी माननी चाहिए। वैसे कहीं-कहीं बीस-बाईस मन तक की उपज भी आई है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का तीन-चार शतांश भाग बीज के लिए रखकर शेष का अन्तर्प्रांतीय वितरण और कुछ का निर्यात भी होता है। इसका व्यवसाय बीज, तेल और खली तीन पदार्थों में होता है। शुद्ध अलसी में ३९ से ४८ प्र०श० तक तेल रहता है, परन्तु देशी घानी से पचीस-तीस शतांश तक निकलता है। रोटरी घानी या प्रेस से तैंतीस से छत्तीस शतांश तक निकल आता है। अलसी का आयात तो नहीं, लेकिन निर्यात काफी है।

उपयोग और गुण—अलसी के बीज और खली पशुओं को खिलाये जाते हैं। तेल खाने और जलाने के काम आता है। लकड़ी पर लगाने तथा छापे की रोशनाई में भी इसका उपयोग होता है। खली खाद के काम भी आती है। अलसी बलकारक, पित्तनाशक और वात को दूर करनेवाली होती है। उबाली हुई अलसी जुलाब का काम करती है।

पशुओं के लिए अलसी के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

	बीज	खली
जल	६.६	८.७
आमिषजातीय	२०.३	२७.०
स्नेह	३७.१	१३.२
शर्कराजातीय	२८.८	३७.६
खनिज	?.४	६.८

(२) एरंडी Caster *Ricinus communis*

खरीफ में होनेवाली एरंडी के पौधे आठ-दस फुट ऊंचे और रबी वाली के चार-पांच फुट ऊंचे होते हैं। बीज कठोर छिलकेवाले और कई रंग के होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलवायु—पचीस-तीस इंच से लेकर पचास-साठ इंच वर्षावाले स्थानों में एरंडी हो जाती है।

भूमि, जुताई और खाद—खरीफवाली के लिए वलुआ-दुमट या दुमट, और रबीवाली के लिए दुमट या मटियार-दुमट अच्छी होती है। खरीफ की फसल अकेली कम बोई जाती है, अतः जिस फसल के साथ बोते हैं उसके लिए जो जुताई होती है, वही इसके लिए भी है। रबी की फसल अकेली लगाई जाती है, साधारण जुताई करनी होती है। खाद लगभग एक सौ मन प्रति-एकड़ देना चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नंबरी जातियों में बंबई एन २० और मद्रास में आर. सी. २१५ अच्छी हैं। खरीफ एरंडी की कतारें जुवार, बाजरा, कपास या तूअर के साथ लगा देते हैं। रबी में धान काटने के बाद जल्दी से जमीन तैयार करके एरंडी और सेम बो देते हैं। अकेली बोई जाय तो खरीफ के लिए सात-आठ सेर और रबी के लिए दस सेर बीज प्रति-एकड़ लगेंगे। सिंचाई की सुविधा हो तो खरीफवाली एरंडी को जेष्ठ (मई) में, और नहीं तो वर्षा होने पर बोना चाहिए। रबी की फसल आश्विन (अक्तूबर) में बोई जाती है। खरीफ की कतारें सात-आठ फुट तथा रबी की दो फुट की दूरी पर होनी चाहिए। कतारों में पौधे तीन फुट और दो फुट की दूरी पर होने चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—खरीफवाली पौष-माघ (दि. ज.) से पकना शुरू होती है। सो ज्यों-ज्यों फल पकते जायं, उन्हें तोड़ते जाना चाहिए। उसी भांति रबी की फसल फाल्गुन (फरवरी) से पकना शुरू होती है। एरंडी की उपज छः मन से लेकर दस मन प्रति-एकड़ तक पाई जाती है। रबी की अपेक्षा खरीफ की उपज अधिक होती है।

वितरण और व्यवसाय—छिलकासहित बीज पर तेल की गणना की जाय तो ४० से ४४ प्र० श० तक रहता है लेकिन घानी से चार-पांच शतांश कम ही निकलता है। इसका व्यवसाय बीज, तेल और खली ऐसे तीन पदार्थों के रूप में होता है।

उपयोग और गुण—एरंडी के बीज में एक प्रकार विष रहता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इससे इसकी खल पशुओं को नहीं खिला सकते। भाप द्वारा निकाला हुआ तेल जुलाब के काम आता है। जलाने, कलों में देने तथा लिनोलियम (Linolium) बनाने इत्यादि के काम भी आता है। खली खाद के काम में आती है। एरंडी का तेल दस्तावर और बालों को मुलायम करनेवाला होता है।

(३) कुसूम, करड़ी Safflower *Carthamus tinctorious*

वैसे कुसूम की अनेक जातियां हैं, परन्तु दो मुख्य हैं। एक फूलवाली, जिसकी पंखड़ियों से रंग निकाला जाता है और दूसरी वह, जिससे तेल लेते हैं। कुसूम का पौधा जाति-अनुसार डेढ़ फुट से लेकर तीन फुट तक ऊंचा होता है। बीज सफेद होते हैं।

जलवायु—इसके लिए पचीस से चालीस इंच वर्षावाले स्थान और ठंडा जलवायु उत्तम होता है।

भूमि, जुताई और खाद—हलकी बलुआ-दुमट भूमि इसके लिए अच्छी होती है। साधारण जुताई और लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद उत्तम होगा। खली देना हो तो सात-आठ मन देनी चाहिए।

कुसूम में खाद्यपदार्थ—बीज में २.१२ प्रतिशत नाइट्रोजन; भूसे में १.४० प्रतिशत नाइट्रोजन।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—एन. पी. १ नम्बर बीज के लिए अच्छी है। एन. पी. १, बम्बई गड़ग २-१०-१, म. प्र. एन ७, निफाड़ ६.३० अच्छी जातियां हैं। आठ-दस सेर बीज प्रति-एकड़ कतारों में बोना चाहिए। कतारों में डेढ़ फुट का अन्तर उत्तम होगा। बोने का समय आश्विन-कार्तिक है। हेरफेर कपास या मूंगफली के साथ अच्छा होगा।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो। निंदाई के समय सागवाले पौधों को छः-छः इंच की दूरी पर और बीजवालों को एक-एक फुट की दूरी पर कर देना अच्छा होगा।

फसल की तैयारी और उपज—रंग निकालने के लिए आजकल कुसूम की खेती नहीं होती, तेलवाली जाति की ही होती है। बीज की उपज दस-बारह मन तक हो जाती है। जब पौधे सूख जाते हैं तो खलिहान में पीट

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर बीज छुड़ाना होता है, क्योंकि इसमें कांटे होते हैं। फसल फाल्गुन-चैत्र तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—फूल, बीज, तेल और खली ऐसे चार पदार्थों के रूप में इसका व्यवसाय होता है। रंगरेज फूलों का रंग निकालकर कसूमी रंग तैयार करते हैं। बीज में २५ से ३० शतांश तक तेल रहता है। घानी से तेल निकालने में तीन-चार शतांश कम आता है।

उपयोग और गुण—छोटे पौधों की तरकारी बनाई जाती है। यदि बीज के छिलके निकालकर तेल निकाला जाय तो वह साफ और पीले रंग का होता है। उबालकर ठंडे पानी में डाला जाय तो एक प्रकार का सीमेंट बन जाता है, जिससे कांच और 'टाइल्स' जमाते हैं। बीज भूनकर भी खाये जाते हैं। खली पशुओं को खिलाई जाती है और खाद का काम भी देती है। बीज दस्तावर होते हैं। गठियावात और लकवे में इसका उपयोग किया जाता है।

कुसूम की खली में पशुओं के लिए पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

जल	आ० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त	खनिज
६.८३	४२.१३	६.७२	३४.५१	५.४३

(४) खसखस पोस्त Poppy *Papaver somniferum*

इसकी खेती अफीम के लिए की जाती है, परन्तु बीज का उपयोग भी बहुत होता है। बीज राजगिरे के आकार के परन्तु बहुत छोटे होते हैं। पौधे दो-ढाई फुट से लेकर तीन-चार फुट ऊंचे हो जाते हैं। इसके फूल कई रंग के होते हैं। फल डोडे कहलाते हैं।

जलवायु—तीस से पचास इंच वर्षावाले स्थान में अफीम अच्छा होता है। पाले से इसको हानि पहुंचती है। जब फलों से दूध (अफीम) निकालने का समय हो उस समय रातें ठंडी रहें तो दूध फलों पर अच्छा जम जाता है और उसे इकट्ठा करने में सरलता होती है।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए दुमट या बलुआ-दुमट जमीन अच्छी होती है। खसखस रबी की फसल है और सिचाई से ही हो सकती है। इसके पहले मक्का की फसल ली जाती है जिसे बहुत-सा खाद देते हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ताकि खसखस को नहीं देना पड़े। यदि इसे ही देना हो तो सात-आठ मन खली या दो मन एमोनियम सलफेट प्रति-एकड़ देना चाहिए। जुताई काफी अच्छी करनी होती है। अन्तिम जुताई के बाद क्यारियां और पानी देने की नालियां बना लेनी चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफर—बीज पिछली फसल के ही बोने चाहिए। प्रति एकड़ दो-ढाई सेर बीज काफी होंगे। इन्हें छींटकर बोते हैं। इनके बोने का समय आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर) है। इसकी पारियों पर लहसुन लगा देते हैं। धनिया और ज़ीरा भी थोड़ा छींट दिया जाता है। अगली फसल के लिए बीज रखना हो तो चुने हुए फल ही रख लेने चाहिए।

निंदाई और सिंचाई—दोनों काफी करनी पड़ती हैं। हर निंदाई के समय कुछ पौधे उखाड़े जाते हैं ताकि पौधों में दूरी बढ़ाई जा सके और उखाड़े हुए पौधों से सब्जी बनाई जाय। अन्तिम निंदाई तक पौधे छः-छः इंच की दूरी पर कर दिये जाते हैं, सिंचाई साधारणतः चार-पांच बार और कहीं-कहीं अधिक भी करनी होती है। फल जब दूध निकालने की स्थिति पर पहुंचें तो दस-पन्द्रह दिन पहले पानी बन्द कर देना चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—फाल्गुन-चैत्र में फल ऐसे आकार के हो जाते हैं कि उनसे दूध निकाला जा सकता है। फलों पर जब भूरा-भूरा पदार्थ जम जाय और वे कठोर मालूम पड़ने लगें, तब उनमें तीन नोकवाले यन्त्र से चीरा दिया जाता है। यह कार्य दोपहर-बाद होता है। फलों से निकला हुआ दूध रात-भर में फलों पर जम जाता है और दूसरे दिन सुबह छरपले (दूध इकट्ठा करने के यन्त्र) से प्रत्येक डोडे पर से इकट्ठा किया जाता है। दो-चार दिन बाद उसी फल में फिर चीरा देकर दूध निकालते हैं। वैशाख तक फल सूख जाते हैं, अतः उन्हें तोड़ लेते हैं और पीटकर दाना छुड़ाते हैं। अफीम की उपज आठ-दस सेर प्रति-एकड़ और बीज की दो-तीन मन तक हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—अफीम सरकार ही खरीदती है। बीज का वितरण अन्तर्प्रान्तीय होता है। इनमें चलीस शतांश तक तेल रहता है। अफीम का निर्यात भी होता है।

उपयोग और गुण—छोटे-छोटे पौधों की तरकारी बनती है। इन्हें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखाकर भी रख लेते हैं और बाद में सब्जी बना लेते हैं। अफीम औषधि के काम आता है। बीज खाये जाते हैं। उनसे तेल भी निकाला जाता है। चित्र-कारों के रंग के लिए खसखस का तेल उत्तम माना गया है। अफीम पेचिश, क़ै, आंखों के रोगों में तथा पेट-दर्द में भी काम आता है। खली पशुओं को खिलाई जाती है। मनुष्य भी इसे खाते हैं।

(५) तिल Til Ginjelly *Sesamum orientale*

इनमें कुछ जातियां फैलनेवाली और कुछ खड़ी होती हैं। पौधों की ऊंचाई जाति-अनुसार दो से पांच फुट तक होती है। तिल लाल, सफेद, काले और भूरे ऐसे चार रंग के होते हैं।

जलवायु—पचीस से पैंतीस इंच वर्षावाले स्थान तिल के लिए अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—तिल अधिकतर हलकी भूमि में ही बोये जाते हैं, वैसे दुमट मिट्टी भी अच्छी होती है। इन्हें अधिकतर ज्वार, कपास, बाजारा आदि के खेतों में भी बो देते हैं। यदि अकेला बोना हो तो एक बार हल और दो बार बखर चलाकर बो देना चाहिए। खाद इससे पहली फसल को देना अच्छा है, या जिस फसल के साथ बोया जाय उसके लिए जो खाद दिया जाय, वह इसके भी काम आवेगा।

तिल के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	जल	नाइ०	फा०पे०	पो० आ०
बीज	५.१	२.६३	१.३	—
पत्ते और डंडी	—	०.५७	०.३	१.१७

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—नम्बरी जातियों में एन. पी. ३, ७, २६ और मद्रास में एस. आई. ८६ अच्छी पाई गई हैं। २६ की अपेक्षा नं० ३ और ७ जल्दी पकती हैं और नं०३ नं० ७ की अपेक्षा कम फैलनेवाली है। तिल छींटकर बोये जाते हैं। लगभग तीन सेर बीज प्रति-एकड़ काफी होंगे। मध्यभारत और गुजरात की तरफ आषाढ़ (जून-जुलाई) में बोते हैं। मध्यप्रदेश, उड़ीसा और दक्षिण की तरफ तथा उत्तरप्रदेश के तराईवाले भाग में खरीफ और रबी दोनों फसलें होती हैं। खरीफ वर्षारम्भ के समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रौर रबी ग्राश्विन में बोना चाहिए। बंगाल की तरफ जिस जमीन में पानी बहुत रहता है, माघ-फाल्गुन (ज. फ.) तक बोते हैं। तिल जुवार-कपास के साथ भी बोये जाते हैं। इस स्थिति में ये मुख्य फसल की कतारों में ग्रा जाते हैं। हेर-फेर जल्दी ग्रानेवाले तिल के बाद चने के साथ ग्रच्छा होगा। खरीफ की फसल के साथ हेर-फेर करना हो, तो बाजरा या छोटे धान के साथ करना चाहिए।

निंदाई ग्रौर सिंचाई—जहां ग्रावश्यकता हो।

फसल की तैयारी ग्रौर उपज—जाति-ग्रनुसार बोने के समय से साढ़े तीन महीने से पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है। जब इनके कुछ फल फटने लगें, तब काट लेना चाहिए। बाद में पूले बांधकर खलिहान में खड़े रख देने चाहिए। ऐसा करने से कुछ दिनों में सब फल फट जायंगे। फिर पूलों को उलटाकर डंडे से पीटकर बीज नीचे गिरा लेते हैं ग्रौर साफ कर लेते हैं।

वितरण ग्रौर व्यवसाय—तिल, तेल ग्रौर खली ऐसे तीन पदार्थों का व्यवसाय होता है। इसके तेल का कुछ निर्यात होता है।

उपयोग ग्रौर गुण—तिल खाने के काम ग्राते हैं। इनसे गजक ग्रौर रेवड़ी बहुत बनाई जाती है। तेल से कई सुगन्धित तेल बनाते हैं। तेल खाने तथा जलाने के काम भी ग्राता है। खली मनुष्य तथा पशु खाते हैं। इसे खाद के काम भी ला सकते हैं। तिल बलदायक, उष्ण, कफकारक, बाल तथा त्वचा के लिए हितकारी हैं। खूनी बवासीर में मक्खन के साथ पीस कर दिये जायं तो लाभ होता है।

तिल के पोषक पदार्थ (प्र० श०)—

	बीज	खली
जल	५.१	१०.०७
ग्रा० ज०	१८.३	३१.६६
स्नेह	४३.३	१०.९
शर्करायुक्त	२५.२	२९.५९
खनिज	५.२	५.७०
कैलशियम	१.४५	—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फा० पे०	०.५७	—
लोहा	०.०१	—

(६) मूंगफली, भुईमूंग, चीना बादाम

Groundnuts *Arachis hypogea*

मूंगफली खड़ी और फैलनेवाली ऐसी दो प्रकार की होती है। खड़ी में फलियां छोटी होती हैं। मूंगफली का फूल तो ऊपर खिलता है, लेकिन गर्भाधान के बाद वह जमीन में चला जाता है जहां फलियां बनती हैं। खड़ा पौधा डेढ़-दो फुट ऊंचा होता है।

जलवायु—यह साठ-सत्तर इंच से अधिक वर्षावाले स्थानों में अच्छी नहीं होती।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए उत्तम भूमि दुमट होती है। खड़ी वाली के लिए बलुआ-दुमट भी उत्तम होगी। इसके लिए जमीन की जुताई काफी अच्छी करनी चाहिए ताकि फलियां जो भूमि के अन्दर बैठती हैं, अच्छी बन जायं। लगभग १५० मन गोबर का खाद, तीन मन हड्डी का चूरा और मिल सके तो मन-सवा मन पोटेशियम सलफेट देना चाहिए। पोटेशियम सलफेट के अभाव में दस-बारह मन राख भी दे सकते हैं।

मूंगफली में खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

	नाइ०	फा० पे०	पो० आ०
फलियां	३.८७	१.१५	०.६६
भूसा	१.१८	०.३३	०.५५

बीज, बोआई, मिश्रण, और हेरफेर—नम्बरी जातियों में मद्रास में फैलनेवाली में ए. एच. २५ तथा गुच्छेवाली में ए. एच. ४५ अच्छी हैं। बम्बई के लिए नं. ८, ५-१, के. १ और के ३, मध्यप्रदेश के लिए ए. के. ८-१२ और १२-२४ तथा उत्तरप्रदेश के लिए अकोला १० अच्छी है। मोटे-पतले छिलके अनुसार पैंसठ से पचहत्तर शतांश तक मूंगफली के बीज प्राप्त किये जाते हैं। प्रति-एकड़ करीब तीस सेर बीज बोना होता है। मद्रास की तरफ एक मन तक भी बोते हैं। मद्रास को छोड़कर अन्य स्थानों में मूंगफली आषाढ़-श्रावण में बोई जाती है। मद्रास में छोटे दानेवाली माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और बड़े दानेवाली ज्येष्ठ से आषाढ़ (मई-जून) तक बरानी खेतों में बोते हैं। वर्षा से पहले बोई जानेवाली को सींचना होता है। कतारें जाति-अनुसार एक फुट से डेढ़-दो फुट होनी चाहिए। फैलनेवाली की कतारें डेढ़-दो फुट की दूरी पर रखनी होंगी। कतारों में बीज पांच-छः इंच की दूरी पर गिराना चाहिए। मूंगफली को मक्का व कपास के साथ भी बोते हैं। मूंगफली का हेरफेर कपास के साथ बड़ा अच्छा होता है।

निंदाई और सिंचाई—प्रारम्भ में निंदाई काफी करनी पड़ती है। जब फूल की सफेद डंडियां गर्भाधान के बाद भूमि में जाने लगें, उस समय निंदाई सावधानी से करनी चाहिए। यदि वह बाहर निकल आयेंगी तो फल नहीं बैठेंगे। सिंचाई जहां आवश्यकता हो, होनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—जब पत्ते पीले पड़ जायं और आधे सूख जायं तब मूंगफली उठाई जाती है। छोटे बीजवाली के पौधे खींच लिये जाते हैं। बड़ी तथा फैलनेवाली के लिए हल जोतकर या मजदूरों से खुदवा कर फलियां चुनवाई जाती हैं और सुखा लेते हैं। मूंगफली की उपज पन्द्रह मन से लेकर तीस मन तक हो जाती है। बीज के लिए अथवा मूंगफली को रखने के लिए छिलके-सहित रखना अच्छा होता है।

वितरण और व्यवसाय—उपज का लगभग १३ प्रतिशत बीज के काम आता है। शेष खाने के काम आती है या तेल निकाला जाता है। इसका व्यवसाय भी बीज, तेल और खली तीनों रूप में होता है। तेल से वनस्पति घी बहुत बनता है। मूंगफली के बीज में ४८ से ५० प्रतिशत तक तेल रहता है; परन्तु घानी द्वारा निकालने से ४० से ४५ प्रतिशत तक ही मिलता है।

उपयोग और गुण—मूंगफली बालू में भूनकर खाई जाती है। इसके कई पकवान भी बनते हैं। तेल खाने के काम में आता है। डालडा वनस्पति घी इसी तेल का बना हुआ होता है। खली मनुष्य तथा पशु खाते हैं। इसे खाद के लिए भी काम में लाते हैं।

मूंगफली के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

	बीज	खली
जल	७.६	७.४७
आ० जा०	२३.७	४३.६१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्नेह	४०.१	११.७८
शर्करायुक्त	२०.३	२७.६५
खनिज	१.६	४.४
कैलशियम	.०५	
फा०	०.३६	
लोहा	.००१६	

(७) रामतिली, रामतिल Niger *Guizotia Abyssinica*

इसके पौधे तीन से पांच फुट ऊंचे होते हैं। फूल सूरजमुखी के जैसा, लगभग एक इंच व्यास का होता है। बीज पतले, करीब आध इंच लंबे, काले और चमकीले होते हैं।

जलवायु—पचीस-तीस इंच वर्षा वाले स्थान इसके लिए अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इसे भी हलकी जमीन में ही बोना अच्छा है। जुताई खरीफ की फसलों-जैसी होनी चाहिए। खाद भी इसे नहीं दिया जाता; परन्तु यदि मिल सके तो सौ-सवा सौ मन तक गोबर का खाद दे देना चाहिए।

रामतिली में खाद्य पदार्थ—नाइट्रेट ३ प्रतिशत

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसे वर्षारम्भ के समय बोना चाहिए। इसे छींटकर भी बोते हैं। वैसे कतारों में भी बोई जाय तो उनमें एक-एक फुट का अन्तर उत्तम होगा। करीब चार सेर बीज प्रति-एकड़ बोना होगा। रामतिली बहुधा रागी, कंगनी, जुवार, बाजरा, कपास, कुलथी और मूंग के साथ बोई जाती है। मुख्य फसल की कतारों में इसकी कतारें बो देते हैं। यदि अकेली बोना हो तो उपर्युक्त फसलों के साथ हेरफेर हो सकता है।

निंदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से चार-पांच महीने में तैयार हो जाती है। पौधे जब सूख जायं, तब फसल काट लेनी चाहिए। खलिहान में डालकर डंडों से पीटकर बीज छुड़ा लेते हैं। यदि अधिक हुई तो फूल काटकर गहाई कर लेते हैं। बीज की उपज करीब पांच मन तक हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वितरण और व्यवसाय—इसका व्यवसाय भी बीज, तेल तथा खली तीनों पदार्थों के रूप में होता है। इसके बीज में लगभग ४० प्रतिशत तेल रहता है। देशी घानी से ३५ प्रतिशत तक प्राप्त हो जाता है।

उपयोग और गुण—हरे पौधे विशेषत: भेड़ों को खिलाये जाते हैं। बीज की चटनी बनाकर भी खाते हैं। इसके तेल से एक प्रकार की बू आती है। ताजा तेल खाने तथा पुराना जलाने के काम आता है। खली दुधारू पशुओं के लिए बहुत उपयोगी मानी गई है। यह खाद के काम भी आती है।

रामतिल के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

	बीज	खली
जल	६.१५	७.४२
आ० जा०	२०.०७	३८.५६
स्नेह	४१.१४	६.३
शर्करायुक्त	१५.०८	२५.४८
खनिज	४.३७	६.२५

(८) तारामीरा Taramira *Fruca sotiva*

तोरिया Toria *Brassca campastris var-Gauca*

राई Mustard *Brassica juncea*

सरसों Rape *Barassica campastris var-Toria*

उपर्युक्त चारों फसलें एक जाति की हैं और खेती की रीति सबकी समान ही है। इनके पौधे दो-तीन फुट से लेकर चार-पांच फुट ऊंचे हो जाते हैं। सरसों का बीज पीला या भूरा और चिकना होता है। राई का खुरदरा होता है। तोरिया के बीज गोल, भूरे, नीले छाई लिये हुए होते हैं। तारामीरा के बीज गोल होते हैं।

जलवायु—तीस से पचास-साठ इंच वर्षावाले स्थानों में ये अच्छे होते हैं।

भूमि, जुताई और खाद—इनके लिए कछार-दुमट भूमि अच्छी होती है। जुताई गेहूं की जुताई से कुछ कम करनी होगी। इसके लिए १५० मन गोबर का खाद या सात-आठ मन खली या दो मन एमोनियम सल्फेट देना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए। इसे फासफोरस के खाद से अच्छा लाभ पहुंचता है, सो दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट देना चाहिए।

उपर्युक्त फसलों में खाद्य पदार्थ प्र० श० (नाइट्रोजन)—

तारामीरा ४.२, तोरिया ३.२५, राई ३.७४, सरसों ३.२८।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इनके बोने का समय आश्विन-कार्तिक है। पंजाब में तोरिया कहीं-कहीं भाद्रपद (अगस्त) में भी बोया जाता है। तोरिया के लिए कतारों में एक फट का और अन्य के लिए फुट-डेढ़ फुट का अन्तर ठीक होगा। तारामीरा की कतारें बहुधा चने के साथ बोई जाती हैं। हेरफेर खरीफ की फसल में मक्का, उड़द या कपास के साथ कर सकते हैं। रबी की फसल के साथ करना हो तो चना, मटर, जव इत्यादि के साथ कर सकते हैं। बीज की मात्रा राई के लिए दो-ढाई सेर और अन्य के लिए कतारों में बोना हो तो चार-पांच सेर और छींटकर बोना हो तो छः-सात सेर तक काफी होगा।

निदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से तीन सप्ताह में सरसों के पौधे साग के योग्य हो जाते हैं। सरसों और राई की पकी हुई फसल माघ या फाल्गुन तक तैयार हो जाती है। गेहूं के क्रम की भांति इसकी फसल विविध स्थानों में पृथक्-पृथक् समय में तैयार होती है। बम्बई की तरफ जल्दी और पंजाब की तरफ देरी से होती है। तारामीरा की फसल अन्य की अपेक्षा कुछ देरी से होती है। राई और तारामीरा की उपज पांच-छः मन, तोरिया की सात-आठ मन और सरसों की आठ-दस मन प्रति-एकड़ हो जाती है। खलिहान में पीटकर या बैलों से गहाकर तैयार करते हैं।

वितरण और व्यवसाय—इनका व्यवसाय बीज, तेल और खली के रूप में होता है। तारामीरा में लगभग ३० शतांश, तोरिया में लगभग ४० शतांश, राई में ३०-३९ शतांश और सरसों में ४१ से ४७ शतांश तक तेल रहता है। इनका आयात नहीं के बराबर है, निर्यात काफी होता है

उपयोग और गुण—सरसों के पत्तों की सब्जी बनाई जाती है। तेल खाने, जलाने तथा साबुन बनाने के काम आता है। राई अधिकांश मसाले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का काम देती है। तोरिया और तारामीरा का तेल भी सरसों के तेल की भांति काम में लाया जाता है। खलियां पशुओं को खिलाई जाती हैं और खाद के काम आती हैं।

राई तीक्ष्ण, गर्म, कफनाशक, पाचक और क्षुधावर्धक होती है। सरसों और तोरिया में भी कुछ अंश तक ऐसे ही गुण होते हैं।

खली के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

	तारमीरा	तोरिया	सरसों
जल	७.८३	१४.६२	६.७३
आ० जा०	३३.७५	[२८.६२	३०.१६
स्नेह	८.३४	१२.१८	१२.४७
शर्करायुक्त	२७.५१	२८.७६	२६.८
खनिज	१३.७०	७.३४	१०.१६

४—ताग वाली फसलों की खेती

(१) अम्वाडी Ambadi *Hibisicus connabis*

पटुआ Patua " *Subdariffa*

इसके पौधे आठ-दस फुट ऊंचे होते हैं। वैसे तो इसकी कई जातियां हैं, परन्तु उन्हें हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। एक वह जिसमें फूलों का पुटपत्र (Calyx) मोटा और रसभरा हो और जिससे चटनी और मुरब्बा बन सकें। दूसरे वर्ग में वह अम्बाड़ी है जिसके पुटपत्र पतले होते हैं और सन निकाला जाता है।

जलवायु—तीस-चालीस इंच वर्षावाले स्थान उत्तम होते हैं।

जमीन, जुताई और खाद—इसे बहुधा जुवार-बाजरे के साथ बोते हैं सो उनके लिए जैसी जुताई और खाद होगी, वही इसके लिए ठीक है।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—जितना बीज डालना चाहें, जुवार, बाजरे के बीज के साथ मिलाकर बोते हैं। लगभग एक सेर प्रति-एकड़ काफी होगा। कहीं-कहीं कुछ कतारें जुवार या बाजरे की और एक-दो कतारें इसकी बोते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निदाई और सिंचाई—जहां आवश्यकता हो।

फसल की तैयारी और उपज—कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) तक फसल तैयार हो जाती है। इसके पौधे उखाड़कर पूले बांध लिये जाते हैं। जब पौधे सूख जाते हैं तो उन्हें पीटकर पत्ते और बीज छुड़ा लेते हैं। बाद में पानी में गलाकर सन निकाल लेते हैं। पहले दो-तीन दिन तक पूले खड़े और बाद में आड़े गाढ़कर गलाये जाते हैं। जब वे इतने गल जाते हैं कि ताग जल्दी से छूट जावें तो मजदूरों द्वारा ताग छुड़ा लिया जाता है। बाद में धोकर सुखा लेते हैं। इसका ताग सफेद और मुलायम होता है।

वितरण और व्यवसाय—घर-खर्च इतना रखकर शेष बेच दिया जाता है।

उपयोग और गुण—कोमल पत्ते तरकारी के काम आते हैं। यदि पटुआ हो तो पुटपत्र चटनी, मुरब्बा इत्यादि बनाने के काम आते हैं। सन से टाट, पट्टी, रस्से इत्यादि बनाते हैं। इसके रस्से सन के रस्से से कुछ कमजोर होते हैं।

(२) कपास Cotton *Gossypium variaties*

कपास का पौधा जाति-अनुसार दो फुट से लेकर सात-आठ फुट ऊंचा होता है। फल खुल जाते हैं तो कपास उनमें से लटकता रहता है जो चुन लिया जाता है।

जलवायु—कपास की बाढ़ के लिए उष्ण और तर वातावरण चाहिए। फल बैठने लगे उस समय से ठंडा और सूखा वातावरण चाहिए ताकि फल फूट सकें। कपास को पाले से हानि पहुंचती है यही कारण है कि जहां सर्दी का भय अधिक रहता है वहां कपास सिंचाई के आधार पर वर्षा के पहले ही बोया जाता है। वर्षा के विचार से देखा जाय तो २५ से ४० इंच वर्षा-वाले स्थान उत्तम होते हैं। जहां कपास की बाढ़ के समय ७०° फे० से ९०° फे० तक तापमान तहता है वहां कपास की बाढ़ अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—भारतवर्ष में कपास के लिए काली मिट्टी अच्छी सिद्ध हुई है जो मध्यप्रदेश, मध्यभारत, गुजरात, हैदराबाद और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मद्रास में पाई जाती है। इससे दूसरे नम्बर की कछार भूमि पंजाब, उत्तर प्रदेश, विहार की है। कपास की काली मिट्टी की जुताई विशेषतः वर्षा होने के वाद वड़ी सावधानी से करनी होती है। अधिक गीली जोती जाय, तो उसमें ढेले पड़ जाते हैं। इसके लिए तो पहली फसल उठाकर ही हल चलाकर छोड़ देनी चाहिए। वर्षा आने के कुछ दिन पहले गोवर का खाद डालकर मिला देना चाहिए। खाद मिलाने के वाद पहली वर्षा होते ही जल्दी से जोतकर कपास वो देना चाहिए। कपास के लिए यदि पहली वाली फसल को अच्छा खाद दिया हुआ हो, तो इसे देने की आवश्यकता नहीं। यदि न दिया हो तो साठ-सत्तर मन गोवर का खाद देना चाहिए। भाद्रपद (अगस्त) में एमोनियम सलफेट भी आध मन प्रति-एकड़ देना उत्तम होगा। एमोनियम सलफेट के अभाव में चार-पांच मन प्रति-एकड़ खली का खाद भी दिया जा सकता है।

कपास की फसल के खाद्य पदार्थ[1] (प्रतिशत)—

	जड़	धड़	पत्ते	फल	बीज	रुई
नाइट्रोजन	.४८	.६४	२.२५	१.८३	३.५४	.१८
फा० पे०	.२६	.२१	.४८	.७८	१.४	.०६
पो० आ०	.६०	.८५	१.०६	१.६	१.१३	.५६

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—कपास के नम्बरी बीज पृथक्-पृथक् प्रान्तों में भूमि की स्थिति अनुसार कई तरह के हैं, सो स्थानीय कृषि-विभाग की सम्मति से बोना चाहिए। यहां पर नम्बर[2] दिये जाते हैं। कोष्ठकवाले अंक कपास से कितनी प्रतिशत रूई निकलती है, यह दिखलाते हैं।

भारत के विभिन्न प्रान्तों के लिए कपास की सुधरी हुई जातियां—[3]

---

[1] Brown HB. 1933 Cotton P. 220 originally compiled by Anderson.

[2] Indian Central Cotton Committee, 31st Repoot 1952.

[3] Indian Farming Vol. XII :2: PP 33-37 के आधार पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोष्ठकों में कपास से प्राप्त होनेवाली रूई की मात्रा—

आन्ध्रप्रदेश—

एन १४ (२५%), लक्ष्मी (३६%), सी २ (३०%), वेस्टर्न १ (२८%), आर १ (३३%), परभानी अमरीकन (३२%)।

उत्तरप्रदेश—

रानीवेन (३७%), २१६ एफ (३३%)।

गुजरात—

कल्याण (४०%), देवीतेज (४०%), दिग्विजय(३९%), देवीराज (३८%), विजल्प (३६%)।

मध्यप्रदेश—

इन्दौर २ (३३%), मालझरी (३५%), वुरी (३४%)

मद्रास—

के ५ (२७%), एम० सी० यू० १ (३५%), एम० सी० यू० २ (३२%)।

महाराष्ट्र—

गऊरानी २२ और ४६ (३१%), दौलत (३६%), वीरनार (४०%), वुरी (३४%)।

मैसूर—

जयधर (३०%), लक्ष्मी (३६%), वेस्टर्न १ (२८%), एम० ए० ५ (३५%), सिलैक्शन ६९ (३०%), एण्ड्रयूज़ (३३%)।

पंजाव—

२३१ आर (४३%), ३२० एफ (३४%),
एल० एल० ५४ (३६%), एच १४ (३५%)।

राजस्थान—

गंगानगर १ (४०%) इन्दौर १ (३१%)।

कपास के वीज प्रति-एकड़ पांच-छः सेर वोने होते हैं। कम फैलनेवाली या मोटे बीजवाली जाति के वीज कुछ अधिक वोने होते हैं। इसके बीज रोएं के कारण चिपके रह जाते हैं और वोने में कठिनाई होती है। इसलिए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनमें गोवर और चिकनी मिट्टी मिलाकर रस्सीवाली खाट में से नीचे गिराते हैं जिसमें वे अलग-अलग हो जायं। कहीं-कहीं बिना खाट के ही मिट्टी मिला देते हैं। अधिकांश स्थानों में कपास पहली वर्षा के बाद बोया जाता है। परन्तु सिंचाई का सुभीता हो तो बरसात के पहले भी वो सकते हैं। ऐसा करने से एक तो दूसरी फसलें जो बरसात शुरू होने पर बोई जाती हैं, उनके बोने का समय मिल जाता है; दूसरे जहां सर्दी में पाले का भय हो, वहां कपास जल्दी आ जाता है। मद्रास में जिन स्थानों में वर्षा भाद्रपद से शुरू होती है वहां भाद्रपद से आश्विन (अगस्त-सितम्बर) तक बोया जाता है। रामनाथपुरम् और मदुराई जिलों में सिंचित फसल फरवरी-मार्च में बोते हैं। बोने के लिए पंजाब की तरफ छींटकर बोते हैं। कतारों में बोने के लिए अरगड़े या नालीवाले हल अच्छे होते हैं। कतारों में दूरी अठारह इंच की और जो अधिक फैलनेवाला हो तो दो फुट की दूरी अच्छी होगी। गुजरात में कहीं-कहीं पांच फुट की दूरी पर बोकर बीच में मूंगफली या मूंग बो देते हैं। कपास के साथ मूंगफली का हेर-फेर अच्छा होता है; परन्तु जहां जंगली जानवरों से मूंगफली को विशेष हानि का भय हो अथवा पशुओं के लिए चारे की आवश्यकता हो तो जुवार बोना पड़ेगी।

निंदाई और सिंचाई—कपास में दो-तीन बार निंदाई अवश्य करनी चाहिए, ताकि घासपात इसे दबा न सके। सिंचाई जहां आवश्यकता हो, करनी चाहिए।

फसल की तैयारी और उपज—कपास के फल से जब कपास लटकने लगे तब चुनना पड़ता है और चुनाई करीब तीन-चार बार होती है। पहली चुनाई में लगभग ३५% और दूसरी में ४५% और शेष तीसरी और चौथी चुनाई में चुन लिया जाता है। पंजाब में यह कार्य आश्विन से माघ तक, मद्रास में माघ से आषाढ़ तक और अन्य स्थानों में कार्तिक से माघ तक होता है। कपास की उपज तीन मन से लेकर छः मन तक होती है। वैसे कहीं-कहीं खाद और सिंचाई के आधार पर इससे दुगनी-तिगुनी भी हो जाती है।

वितरण और व्यवसाय—आजकल भारतवर्ष में अनाज की मंडियों जैसे 'कॉटन-मार्केट' खुले हुए हैं। वहां पर कपास लम्बे या छोटे रेशेवाला,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथवा पहली, दूसरी, तीसरी चुनाई का अथवा उसकी सफाई के आधार पर, उसमें पत्ते वगैरह तो नहीं हैं, यह देखकर मूल्य ठहराया जाता है या गाड़ियां नीलाम होती हैं और कृषक जीनघर पर डाल आते हैं। जहां रूई छुड़ाई जाती है वहां रूई की कच्ची या पक्की गांठों को बांधकर मिलों में चालान कर दिया जाता है।

उपयोग और गुण—रूई से कपड़े बनते हैं। बिनौले पशुओं को खिलाये जाते हैं। इनसे वनस्पति घी बनता है। इनमें १७ से २०% तक तेल रहता है। खली पशुओं को खिलाई जाती है या खाद के काम आती है। डंडियों से टोकरियां बनती हैं।

कपासिये (बिनौला) के पोषक द्रव्य (प्र० श०)—

जल	आ० जा०	स्नेह	शर्करायुक्त	खनिज
९.०	१६	१८	३४	४

(३) पाट Jute *Carchorus Copsularis olitarius*

भूमि की उर्वरा-शक्ति के अनुसार इसके पौधे पांच-छः फुट से लेकर आठ-दस फुट ऊंचे होते है। वैसे कहीं-कहीं पन्द्रह फुट तक की ऊंचाई भी पाई जाती है।

जलवायु—इसकी बाढ़ उष्ण वातावरण में अच्छी होती है। जिन स्थानों का तापमान ८०° फै० से कम न हो, वे स्थान अच्छे पाये गए हैं। वर्षा भी ७० इंच के लगभग और सम हो तो अच्छी होती है।

भूमि, जुताई और खाद—यह सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है; परन्तु पहाड़ी हिस्सों वाला पाट मजबूत होता है। पाट की खेती ऐसी जगह होती है, जहां बरसात में पानी भरा रहता है। पौष-माघ में पांच-छः बार हल से जुताई कर लेनी चाहिए। ढेले पठार से तोड़े जा सकते हैं। खाद ऊंची पहाड़ी भूमि में देना होता है। लगभग डेढ़ सौ मन गोबर का खाद देना चाहिए।

बीज, बोवाई, मिश्रण और हेरफेर—चार-पांच सेर बीज प्रति-एकड़ छींटकर बोये जाते हैं। यदि कतारों में बोना हो तो कतारें आठ-नौ इंच की दूरी पर होनी चाहिए। जहां बरसात में पानी भर जाता है वहां माघ-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फाल्गुन में ही बो देते हैं, ताकि बाढ़ आने के पहले पौधे बढ़ जायं, अन्यथा फाल्गुन से वैशाख तक बोते हैं। पाट के बीज सब जगह अच्छे नहीं होते। पाट बंगाल में अच्छा होता है, परन्तु बीज आसाम और बिहार से ले जाते हैं।

निंदाई और सिंचाई—निंदाई का काम आवश्यकतानुसार होना चाहिए। सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु बोते समय यदि तरी कम हो और सींचने की सुविधा हो तो सींच सकते हैं।

फसल की तैयारी और उपज—बोने के समय से लगभग चार महीने में फसल तैयार हो जाती है। जब इनके फल झड़ने लगें तब काटना चाहिए। उपज बीस-पचीस मन प्रति-एकड़ तक आ जाती है। पचास-साठ मन डंडियां भी मिल जाती हैं। बीज की उपज छः-सात मन तक होती है। अम्बाड़ी की तरह गलाकर ताग छुड़ाया जाता है।

वितरण और व्यवसाय—धुले हुए सन को स्थानीय व्यापारी खरीदकर मिलों तक पहुंचा देते हैं। पाट के ताग का मूल्य उसकी लम्बाई, रंग तथा मुलायमी पर होता है।

उपयोग और गुण—ताग से अनाज तथा चीनी रखने के बोरे बनाये जाते हैं अथवा कपड़ों की गांठों पर चढ़ानेवाली चट्टियां बनाते हैं। इसके गलीचे भी बनाते हैं। जो पाट अच्छा नहीं होता, उसे कागज बनाने के काम में लाते हैं। बीज में लगभग २०% तेल रहता है जो चर्म-रोगों पर काम आता है। पाट के बीज जहरीले होते हैं। पशु खा जायं तो मर जाते हैं सो सम्हालकर रखने चाहिए।

(४) सन Sannhemp *Crotalaria juncea*

इसका पौधा पांच-छः फुट ऊंचा होता है और यदि भूमि अच्छी हुई तो और भी ऊंचा हो जाता है। यह दाल-वर्ग की जाति का पौधा है और सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा वायुमंडल की नाइट्रोजन से लाभ उठाता है।

जलवायु—इसकी फसल उष्ण और शीतोष्ण भागों के मैदानों में अच्छी होती है। पहाड़ों पर यह अच्छा नहीं होता। चालीस से साठ इंच वर्षा इसके लिए उत्तम है। इससे अधिक वर्षावाले स्थानों में बाढ़ अच्छी नहीं होती।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भूमि, जुताई और खाद—सन के लिए दुमट और बलुआ-दुमट मिट्टी उत्तम होती है। पानी लगनेवाली मिट्टी अच्छी नहीं होती। इसके लिए तीन-चार मन हड्डी के चूरे का या दो-ढाई मन सुपर फासफेट का खाद उत्तम होगा। बरसात के पहले साधारण जुताई कर लेनी चाहिए।

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—इसका हेरफेर किसी भी फसल के साथ हो सकता है। बहुधा इसे हरे खाद के लिए काम में लाते हैं सो इसके बाद गेहूं, ईख आदि फसल लेते हैं। इसके बीज छींटकर बोये जाते हैं। एक मन बीज गिराना चाहिए ताकि पौधे लम्बे हों और उनमें टहनियां न फूटें। इसे वर्षारम्भ के समय बोना उत्तम है।

निंदाई और सिंचाई—नहीं करनी पड़ती। यदि बरसात के पहले बोया जाय तो सिंचाई करनी होगी।

फसल की तैयारी और उपज—हरे खाद के लिए उस समय गाढ़ देनी चाहिए जब फूलों की कलियां दिखाई दें, अथवा फसल आठ-दस सप्ताह की हो जाय। यह भी देखना चाहिए कि इसमें गाढ़ने के बाद एक बरसात अच्छी-सी हो जाय, नहीं तो इसके सड़ने में पानी सूख जायगा। तागवाली फसल बोने के समय से पांच-छः महीने में तैयार होती है। ऐसी फसल को काटकर अम्बाड़ी की भांति गलाकर ताग निकालना चाहिए। ताग के लिए फसल पूर्ण पकने पर काटी जाय तो बीज मिल जाते हैं और पत्तों के झड़ जाने से भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि यदि फसल पूर्ण पकने दी जाय तो ताग कमजोर हो जाता है। 'ऐम्पायर मार्केटिंग बोर्ड' की रिपोर्ट से तो ऐसा मालूम होता है कि ताग कमजोर नहीं होता। सन के ताग को धोने के बाद बाजार में बेच दिया जाता है।

जो सन हरे खाद के लिए गाढ़ा जाता हो उसकी उपज २०० से ३०० मन प्रति-एकड़ हो जाती है। ऐसे खाद में लगभग ७५% जल और ०.४ से ०.५ शतांश नाइट्रोजन की मात्रा रहती है।

सन के ताग की उपज पांच-छः मन, डण्ठल साठ-सत्तर मन और बीज भी छः-सात मन तक हो जाता है।

वितरण और व्यवसाय—ताग और सन के बीज का व्यवसाय अन्त-र्प्रान्तीय ही होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—सन के ताग से जो रस्सी बनती है वह पानी में भिगोने से जल्दी सड़ती नहीं। हरे पौधों से खाद बनता है। पशुओं को भी कहीं-कहीं हरे पौधे खिलाये जाते हैं। फूलों की पकौड़ियां और तरकारी भी बनाते हैं। ताग से सुतली और रस्से बनते हैं। सुतली से टाट-पट्टियां भी बनती हैं। डंडियां टट्टे बनाने तथा जलाने के काम आती हैं। बीज यदि अधिक हों तो गेहूं के लिए खाद का काम अच्छा देते हैं। इनमें लगभग ६ प्रतिशत नाइट्रोजन रहती है। लगभग १० सेर नाइट्रोजन पहुंचे, इतने बीज डालना चाहिए।

५—अन्य मूल्यवान फसलों की खेती

(१) तम्बाकू Tobacco *Nicotiana tabacum rustica*

तम्बाकू का आगमन १६०५ में पुर्तगालियों द्वारा भारत में हुआ, ऐसा अनुमान है। 'टेवेकम' जाति के पत्ते बिना डंडी के नोकीले होते हैं। 'रस्टी-का' के पत्ते की नोक गोल होती है। पहली के फूल गुलाबी रंग के बिखरे हुए होते हैं। दूसरी के पत्ते पीले और घने होते हैं। तम्बाकू के पत्ते साधा-रणतः जितने चौड़े होते हैं, उससे दूने लम्बे होते हैं।

जलवायु—बाढ़ के समय उष्ण और तर वातावरण चाहिए, परन्तु पकते समय सूखा और ठंडा होना चाहिए। इसे पाले से बहुत जल्दी हानि पहुंचती है। चौड़े पत्तेवाली को ओले से भी काफी नुकसान होता है।

भूमि, जुताई और खाद—इसके लिए गांव के निकट की बलुआ-दुमट मिट्टी अच्छी होती है। जुताई भी काफी अच्छी करनी चाहिए। चूंकि पौधे रोपे जाते हैं, अतः जुताई के लिए समय भी अच्छा मिल जाता है। खाद अधिक नहीं देना चाहिए। लगभग सौ-सवा सौ मन गोबर का खाद काफी होगा। तम्बाकू के लिए पोटेशियम के खाद का महत्व विशेष है, सो दूसरा न हो तो दस-बारह मन राख देनी चाहिए।

तम्बाकू के खाद्य पदार्थ (प्र० श०)—

सूखे पत्तों	नाइट्रोजन	फा० पे०	पो० आ०
में	२.९२	०.६३	१.३९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—उत्तर भारत के लिए एन. पी. १६ और एन. पी. २० अच्छी हैं। हुक्के के लिए एन. पी. १६ और खाने के लिए एन. पी. २०, ४० और ५३ अच्छी होती हैं। गुजरात में गाड़ियों नं. ६ और पीलियों नं. ४३ और नं. २४ अच्छी उपज देती हैं। तम्बाकू के बीज नर्सरी में गिराकर पौधे तैयार करने होते हैं। एक एकड़ के लिए आधी छटांक बीज महीन बालू में मिलाकर पांच फुट चौड़ी और तीन फुट लम्बी नर्सरी में बोना काफी होगा। इसके पौधे छः-सात सप्ताह में रोपने योग्य हो जाते हैं। नर्सरी में बीज गिराने का समय पृथक्-पृथक् स्थानों में अलग-अलग है। अधिकांश स्थानों में श्रावण-भाद्रपद (अगस्त-सितम्बर) है। सहारनपुर और झांसी की तरफ वैशाख-ज्येष्ठ (ऐ०-मई), बंगाल की तरफ श्रावण से आश्विन (अग० से अक्तूबर) पंजाब में कार्तिक-अगहन (अक्तूबर-नवम्बर) हैं। रस्टीका जाति के पौधे जो, छोटे और कम फैलनेवाले होते हैं, उन्हें डेढ़-दो फुट की दूरी पर रोपना चाहिए। हुक्केवाली टेबेकम जाति के पौधे ३'×२.५' की दूरी पर और सिगरेटवाली को २.५'×२.५' पर रोपना चाहिए।

निदाई और सिंचाई—नर्सरी में पौधों को छांटकर उन्हें छः-छः इंच की दूरी पर कर देना चाहिए। ठोकरा नाम का घातक पौधा निकल आवे तो उसे नष्ट कर देना चाहिए। पौधे जब रोपे जाते हैं तो उन्हें टिड्डे काट देते हैं सो उनसे बचाने की ओर ध्यान रखना चाहिए। तम्बाकू के पौधों में बढ़ती हुई कोंपल तोड़ना और बगल से निकली कोंपल तोड़ना ऐसी दो क्रियाएं और होती हैं। जब दस-बारह पत्ते आ जाते हैं, तो बढ़ती हुई कोंपल तोड़ दी जाती है। कहीं-कहीं कोंपल तोड़ने के बाद उस स्थान पर बांस का सूआ भोंकते हैं ताकि ऊपर की बाढ़ बन्द हो जाय और पत्ते अच्छे बनें। सिगरेटवाली तम्बाकू में पन्द्रह-सोलह पत्ते छोड़कर ऐसा करना चाहिए। जहां पत्ते पहले ही मोटे हों वहां कोंपल नहीं तोड़नी चाहिए। ऐसी सूरत में नीचे के कुछ पत्ते छोड़कर ऊपर के पत्ते सिगरेट और सिगार के काम आ सकेंगे। जिन पौधों से बीज लेना हो, उनकी ऊपर की कोंपलें नहीं तोड़नी चाहिए, बाजूवाली अवश्य तोड़नी चाहिए। सिंचाई की जहां आवश्यकता हो, करनी होगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फसल की तैयारी और उपज—रोपने के समय से चौथे-पांचवें महीने नें तैयार होती है। टेवेकम से रस्टीका कुछ दिन पहले तैयार होती है। पत्तों में जब हलका-सा पीला रंग और कहीं भूरे धब्बे नजर आवें तब पत्ते काटने योग्य होते हैं। सब पत्ते एक साथ तैयार नहीं होते, अतः ज्यों-ज्यों तैयार होते हैं काटते जाते हैं। काटने के पश्चात् इन्हें खास रीति से सुखाना और तैयार करना पड़ता है, जिससे सोरभ और सुगन्ध (aroma), चाहिए वैसी, आ जाय। सिगरेटवाली तम्बाकू को खास प्रकार की भट्टियों में सुखाते हैं, जिनका वर्णन लेखक की 'खेती की रीति' के तीसरे भाग में दिया है। इसके सिवाय विभिन्न रीतियों से सुखाने तथा तैयार करने का वर्णन भी उसमें है। उपज के विचार से देखा जाय तो हुक्केवाली तम्बाकू से लगभग पच्चीस मन पत्ते मिल जाते हैं। सिगरेटवाली की उपज इसकी एक-तिहाई होती है। डंठलों की उपज कहीं-कहीं पत्तों से आधी और कहीं-कहीं पांचवें भाग तक आ जाती है।

वितरण और व्यवसाय—तम्बाकू के कहीं-कहीं खड़े खेत बेच दिये जाते हैं। कहीं-कहीं तम्बाकू तैयार करनेवाली कम्पनियां होती हैं, जिन्हें बुलाकर बेचने के लिए तैयार की जाती है। बीड़ी के लिए चूरा तैयार करके बेचते हैं। सिगरेटवाली के पत्तों का चालान बक्सों में होता है। कहीं-कहीं पत्ते पतंवार जमाकर चट्टियों से बांधकर भेजते हैं। मार्केटिंग विभाग से तम्बाकू के ग्रेड भी बने हुए हैं। हुक्केवाली तम्बाकू को खास रीति से तैयार करते हैं। इसमें केला, अमरूद, अनानास, कटहल इत्यादि डालते हैं।

उपयोग और गुण—तम्बाकू खाने, पीने और सूंघने के काम आती है। उपज का ५६% भाग चिलम या हुक्के द्वारा काम में आता है। शेष का उपयोग अन्य प्रकार से होता है। तम्बाकू का काढ़ा लाही-जैसे कीट के लिए अच्छा विष होता है। तम्बाकू के बीज में २५.३०% तेल रहता है जो खाने के काम तो नहीं अन्य व्यवसाय के काम का है। खली खाद का काम दे सकती है। सूंघनेवाली तम्बाकू से सर्दी या जुकाम में काफी आराम पहुंचता है। तम्बाकू का चूर्ण दन्तमंजन का काम देता है। पीनेवालों का कहना है कि इससे थकावट दूर होती है। अधिक खाने और पीने से हाजमा बिगड़ जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(२) ईख, गन्ना, ऊख, सांठा—Sugarcane

Saccharum officinarum

गन्ने के पौधे से ग्रामीण तथा नागरिक सब परिचित हैं। ऊंचाई में जाति-अनुसार उपयोगी भाग की ऊंचाई पांच फुट से लेकर सात-आठ फुट होती है। मोटे तौर पर गन्ने की तीन श्रेणियां हैं : जल्दी पकनेवाला, मध्यम श्रेणी का तथा देरी से पकनेवाला। गन्ने की मोटाई का विभाजन किया जाय तो पतला, मध्यम श्रेणी का और मोटा, ऐसी तीन श्रेणियां होंगी। साधारणतः पतला बहुत कठोर और मोटा बहुत मुलायम होता है।

भूमि, जुताई और खाद—गन्ने के लिए सर्वोत्तम भूमि दुमट-कछार होती है; परन्तु अब तो वैज्ञानिकों ने ऐसी जातियां निकाल दी हैं कि हर प्रकार की भूमि के लिए एक-न-एक जाति मिल जाती है। गन्ने के लिए जुताई काफी करनी होती है और खाद भी बहुत-सा देना पड़ता है, क्योंकि फसल को पूरे बारह महीने की खुराक देना होती है। खाद देने की उत्तम रीति यह होगी कि सबसे पहले सन का खाद दिया जाय। उसके बाद गोबर, खली या एमोनियम सलफेट देना उत्तम होगा। कुछ खाद के प्रयोगों के आधार पर हम निम्नलिखित मात्राएं देते हैं, जिन्हें खली या एमोनियम सलफेट के रूप में दे सकते हैं। गोबर का खाद मिल सके, तो लगभग तीन सौ मन से चार सौ मन देना चाहिए।

उत्तर विहार	३० सेर	नाइट्रोजन	प्रति-एकड़			+ ३५ सेर फा० पे०
दक्षिण विहार	४० „	„	„	„		+ ३० सेर फा० पे०
उत्तरप्रदेश	५० „	„	„	„		
मध्यप्रदेश	५० „	„	„	„		
मद्रास	७५ „	„	„	„		
वम्बई	१५० „	„	„	„		

खली या एमोनियम सलफेट की आधी मात्रा गन्ना लगाते समय और आधी मिट्टी चढ़ाते समय दे सकें तो अच्छा है, अन्यथा पूरी मात्रा प्रारंभ में ही दे सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गन्ने के भागों में खाद्य पदार्थ[1] (प्र० श०)—

	ना०	फा० पे०	पो० ग्रा०	कें० ग्रा०
जड़ें और खूटियां	०.३०	२.१३	१.६२	१.०८
सूखे पत्ते	०.२३	०.०६	१.२७	०.७०
वांड और हरे पत्ते	०.५६	०.४३	०.७६	०.३३
पैरने जैसे गन्ने	०.२०	८.३६	०.३४	०.०६
पैरने जैसे हरे गन्ने	०.०५	०.०६	०.०८	०.०२

बीज, बोआई, मिश्रण और हेरफेर—कृषि-विभाग की सम्मति से ही गन्ने की जाति चुननी चाहिए। वैसे कुछ प्रचलित जातियां यहां दी जाती हैं। **विहार**[2]—३१३, ४१६ बी. ओ. ३, १०, १४, १७, २४, २६; नीची जमीन के लिए ६६२। **पंजाब**—को एल. ६, को ३१२, को २८५, को ४२१। **बंगाल**—को ४२१, ५२७, ४५३, ३१३, ४१६। **बम्बई**—४६०, ४७५, ५२७। **मद्रास**—को ४४६, ५२७, ४७१। **उड़ीसा**—को ४१६, को ४२१। गन्ने के टुकड़े लगाये जाते हैं जो फुट-डेढ़ फुट लम्बे होते हैं। प्रत्येक टुकड़े में तीन से पांच आंखें होतीं हैं। ये टुकड़े दो रीति से लगाये जाते हैं। एक आंख से आंख मिलाकर और दूसरा छोर से छोर मिलाकर। जहां दीमक का भय अधिक हो वहां पहली रीति अच्छी होती है। दोनों रीति से लगाने में कितने टुकड़े लगेंगे, इसकी गणना निम्नलिखित सूत्र से हो सकती है।

छोर से छोर मिलाकर—

$$\frac{४३५६०}{\text{गन्ने के टुकड़े की लम्बाई फुट में} \times \text{कतारों की दूरी फुट में}} = \text{टुकड़े प्रति-एकड़}$$

आंख से आंख मिलाकर—

$$\frac{४३५६०}{\left(\begin{array}{c}\text{टुकड़े की पहली आंख से अन्तिम}\\ \text{आंख की दूरी फुट में}\end{array}\right) \times \text{कतारों की दूरी फुट में}} = \text{,,}$$

---

[1] सहस्रबुद्धे, बम्बई कृषि-विभाग बुलेटिन १७४, १६३३, पृ० ३६।

[2] ईख-समाचार, ईख-अन्वेषण संस्था, पूसा बिहार, जनवरी-फरवरी १६५८।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त टुकड़ों में गन्ने की लम्बाई का भाग देने से प्रति-एकड़ गन्ना-संख्या निकल आयेगी।

यदि बीज का वजन निकालना हो तो कुछ गन्नों का वजन करके संख्या प्रति-एकड़ पर गणना करके निकाल सकते हैं। साधारणः छीला हुआ पतला गन्ना लगभग सत्तर-पचहत्तर मन और मोटा अस्सी-नव्वे मन प्रति-एकड़ लगता है। गन्ना लगाने के लिए निर्मित दूरी पर हल से चास (नालियां) निकालकर उनमें गन्ने दवा दिये जाते हैं। कहीं कहीं नालियों में पहले पानी देकर गन्ने के टुकड़े पांव से गीली मिट्टी में दवा दिये जाते हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी किया जाता है कि गन्ने के टुकड़ों को एक-दो रोज के लिए पानी में डाल देते हैं। ऐसा करने से उपज में कुछ लाभ होता है, क्योंकि आंखों में काफी तरी आ जाती है, जिससे वे जल्दी फूट जाती हैं। गन्ना बहुधा माघ-फाल्गुन (फरवरी) में लगाया जाता है। वैसे बिहार में अक्तूबर से ऐप्रिल तक भी लगाया जाता है। दक्षिण भारत में माघ-फाल्गुन से वैशाख (फ. सेऐ.) तक लगाते हैं। कतारों की दूरी कमजोर भूमि में डेढ़-दो फुट काफी होगी। उपजाऊ भूमि में दो से ढाई फुट तक वढ़ा देनी चाहिए।

रखत, पड़ी या खूंटी—गन्ने की खेतीवाले एक साल गन्ना बोते हैं। उसे काटने के पश्चात् खूंटियां वैसी ही छोड़ देते हैं, जिनसे नये कोंपल निकलकर फसल तैयार हो जाती है। ऐसी फसल को रखत, पेड़ी या खूंटी कहते हैं।

गन्ने के साथ मिश्रण का प्रश्न तो प्रथम वर्ष में होता है, सो उस साल गन्ने की कतारों में मेथी-जैसी दलहन की फसल ले लेनी चाहिए।

गन्ने का हेरफेर—(१) सन—गन्ना—गन्ना (खूंटी) पड़त—गेहूं; (२) मूंगफली—गन्ना—गन्ना (खूंटी)—पड़त — गेहूं उत्तम होगा।

निंदाई और सिंचाई—दोनों वहुत करनी पड़ती हैं। पौधों पर मिट्टी भी चढ़ानी होती है और मिट्टी चढ़ाते समय खली या एमोनियम सलफेट का खाद भी देना होता है। गन्ना गिरने न पाये, इसलिए कुछ गन्नों को इकट्ठे करके वांध भी देते हैं ताकि एक-दूसरे के सहारे से सब खड़े रहें। गन्नों में पांच-छ. महीने के वाद जो दौजियां निकलें, उन्हें भी छोड़ देना चाहिए। गन्ने में कहीं-कहीं सिंचाई नहीं करनी पड़ती। अधिकांश स्थानों में तीन से लेकर दस-वारह वार तक सिंचाई करनी पड़ती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फसल की तैयारी और उपज—दीपावली (अक्तूबर) के समय से फसल तैयार होने लगती है, परन्तु गन्ना पौष (दिसम्बर) से पीलने-जैसा होता है और जाति-अनुसार चैत्र तक चलता रहता है। गन्ने के पकने की पहचान उसके रस में चीनी की मात्रा से करते हैं। जब यह मात्रा चौदह-पन्द्रह शतांश तक गन्ने के रस में पहुंच जाती है तब गन्ना काटने योग्य होता है। साधारण कृषक पत्तों के रंग से, बाढ़ के रुकने से तथा गन्नों को तोड़ कर पहचान लेते हैं। जब पत्ते पीले पड़ जाते हैं और गन्ना खेत में से तोड़ते समय जल्दी टूट जाय, तो समझना चाहिए कि गन्ना पक गया। गन्ने के पकने की पहचान ब्रिक्स हायड्रोमीटर नाम के यंत्र से भी होती है। रस में डालने से जब यह इतना डूबे कि उसपर के अंक १९° से २०° बतलाये, तो गन्ना पका हुआ माना जाता है। गुड़ या चीनी के लिए जब गन्ना भेजा जाता है तो उसके पत्ते छील दिये जाते हैं। गन्ने की कटाई हँसुए से होती है और उसीसे छीला भी जाता है। साधारणतः अच्छे खेतों में पतले गन्ने की उपज चार सौ मन तक हो जाती है। चीनी के व्यवसाय की रिपोर्ट में उपज के निम्नलिखित अंक दिये हैं—

उत्तरप्रदेश ३९१ मन; बिहार ३०४ मन; बंगाल ४५१ मन; पंजाब २०६ मन; मद्रास ६४८ मन बंबई ५७७ मन प्रति-एकड़।

गन्ने से चीनी तो कारखानों में बनती है; परन्तु गुड़ कृषक स्वयं बना लेते हैं। इसके लिए लोहे की चर्खियों द्वारा रस निकाला जा सकता है। ऐसी चर्खियों से साठ-सत्तर शतांश रस निकाला जा सकता है। बैल जोड़ियां अच्छी हों तो तीन-चार मन गन्ना प्रति-घंटा पीला जा सकता है। गन्ने के रस को कढ़ाह में उबालकर गुड़ बनाते हैं। इसका मैल निकालने के लिए दूध, चूने का पानी, भिंडी, सेमल, फालसा, सुखलाई की छाल का रस काम में लाते हैं। 'एक्जिवेटेड चारकोल' से छानकर रस शुद्ध किया जाय तो गुड़ अच्छा बनता है।

जब गरम होते-होते रस का तापमान ११९° से १२०° शतांश तक आ जाय तो समझना गुड़ अच्छा बनेगा। यदि ११०° से ११२° शतांश से कम पर उतार लिया जाय तो गुड़ पतला होगा।

गुड़ बनाने के यंत्र पृष्ठ ६९ पर देखें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वितरण और व्यवसाय

गन्ने की व्यावसायिक रिपोर्ट में वितरण के अंक निम्नलिखित हैं : बीज ६.६%; पशुओं के लिए १.१%; चूसने के लिए ८.५%; चीनी के लिए १७.४%; खांड ४.५%; गुड़ ६१.१%; अन्य .०१%।

कृषक गुड़ खास बड़ी मंडियों में ले जाकर बेच आते हैं। वहां से वितरण होता है। चीनी कारखानों से ही वितरण के लिए बिकती है।

उपयोग और गुण—मोटा गन्ना या पौंडा चूसने के काम आता है। बाजार में गन्ने की गंडेरियां कार्तिक से वैशाख तक बिकती रहती हैं। मध्यम श्रेणी और पतले गन्ने का रस बाजारों में बिकता रहता है। इससे चावल पकाकर मीठे बनाये जाते हैं जिसे रसाल कहते हैं। चीनी और गुड़ से कई प्रकार के पकवान बनते हैं। चोआ (शीरा) का उपयोग पीने की तम्बाकू के लिए किया जाता है। पत्ते पशुओं को खिलाये जाते हैं। रस निकाल लेने पर जो गूदा बचता है, उससे जलावन का काम लेते हैं। ऐसे गूदे का उपयोग कागज, नकली रेशम, कोयले का चूर्ण तथा पशुओं को खिलाने के लिए किया जाता है। गन्ने पर जो सफेद पदार्थ रहता है उससे मोम बनाते हैं।

६—चारे की खेती

भारत को आजकल दूध का अभाव बहुत खटक रहा है, जिसका कारण चरागाह या गोचर-भूमि की कमी है। इसकी पूर्त्ति खेतों में हरा चारा उपजाकर ही हो सकती है। ऐसे चारे कई प्रकार के हैं, परन्तु यहां पर हम कुछ मुख्य-मुख्य चारों का वर्णन करते हैं। इनमें गिनीघास और हाथीकांडा अनाज-वर्ग के हैं और बरसीम, लूसर्न, शफताल और सेंजी दाल-वर्ग के हैं। पहले दो की अपेक्षा इनमें पोषण-शक्ति अधिक होती है परन्तु एक निर्धारित मात्रा से विशेष उन्हें नहीं खिला सकते, क्योंकि अधिक खिलाने से पशुओं को आफरे की व्याधि हो जाती है।

दाल-वर्ग की घास उपजाने के लिए यदि पहली बार उपजाई जाय तो खेतों में एक खास प्रकार के जन्तु प्रयोगशाला से मंगवाकर छोड़ने चाहिए। यदि प्रांतीय प्रयोगशाला में न हों तो इण्डियन एग्रिकल्चरल रिसर्च इंस्टी-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ट्यूट, दिल्ली से मंगवाना चाहिए। इस क्रिया को 'इनाक्युलेशन' कहते हैं।

(१) गिनी घास Guinea grass *Panicum maximum*

भूमि, जुताई और खाद—यह बलुआ को छोड़ हर प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। एक बार लगाने से कई साल तक एक स्थान पर रहता है। जुताई अच्छी गहरी करनी चाहिए। खाद के लिए छाना हुआ शहर का कूड़ा-कर्कट लगभग तीन सौ मन प्रति-एकड़ देना चाहिए और हर चौथे साल खाद देना चाहिए।

लगाना—पुराने पौधों से कूंचे काटकर बरसात में दो-ढाई फुट की दूरी पर लगा देने चाहिए।

सिंचाई—आवश्यकतानुसार।

फसल की तैयारी, उपज और उपयोग—घास लगभग तीन फुट ऊंचा होता जाय तो काटते रहना चाहिए। पहले साल छः-सात और बाद में आठ-दस कटाई प्रतिवर्ष मिल जाती हैं। प्रत्येक कटाई में सौ-सवा सौ मन हरा घास मिल जाता है। इसे पशुओं को खिलाया जाता है।

(२) हाथीकांडा Elephant grass or Napier grass *pannicum purpeureum*.

इसकी खेती गिनी घास जैसी ही होती है। रोपने के समय से चार-पांच महीने में पहली कटाई मिलती है। इसके बाद डेढ़-दो महीने के अन्तर पर कटाव ले सकते हैं। लगभग दो सेर प्रति-मन हरा घास प्रति-कटाव प्रति-एकड़ मिल जाता है।

(३) बरसीम Berseem Egyptian clover *Trifolium alezandrinm*

भूमि, जुताई और खाद—भारी को छोड़कर सब प्रकार की मिट्टी में हो जाता है। मक्का जैसी खरीफ की फसल को काटकर खेतों की जुताई करके क्यारियां बना लेनी चाहिए। इसके लिए तीन-चार मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट का खाद देना चाहिए और गोबर या खाद लगभग ढाई सौ मन देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बीज, बोग्राई ग्रौर हेरफेर—ग्रच्छे साफ खेतों में दस-बारह सेर ग्रौर दूसरे में लगभग पन्द्रह सेर बीज प्रति-एकड़ ग्राश्विन-कार्तिक (ग्रक्तूबर) में छींटने होंगे। बीज को पहले भिगोकर फुला लेना चाहिए ग्रौर बाद में क्यारियों में पानी भरकर गीली जमीन पर छींट देना चाहिए ग्रथवा पहले छींटकर फिर पानी दे देना चाहिए। भीगे हुए बीज छींटने में कठिनाई न हो, इसलिए उन्हें थोड़ी मिट्टी के साथ मिला लेना चाहिए। हेरफेर मक्का जैसी फसल के साथ हो सकता है। यदि रबी की फसल लेना हो तो गेहूं लेना चाहिए।

सिंचाई—ग्रावश्यकतानुसार करें।

फसल की तैयारी, उपज ग्रौर उपयोग—बोने के दो महीने बाद पहला कटाव ग्रौर फिर हर महीने एक कटाव ले सकते हैं। ऐसे पांच-छः कटाव मिल जाते हैं। प्रत्येक कटाव में एक सौ मन हरे चारे की उपज मिल जायगी। दुधारू पशुग्रों के लिए यह चारा ग्रच्छा उपयोगी है। सूखे चारे या भूसे के साथ मिलाकर खिलाना चाहिए। दो भाग भूसे के साथ एक भाग बरसीम होना चाहिए।

(४) लूसर्न Lucern Alfalfa *medicago sativa*

इसकी खेती बरसीम-जैसी ही होती है, परन्तु एक बार बो देने के बाद यह तीन-चार साल तक एक जगह रहता है, ग्रतः प्रतिवर्ष कुछ खाद दे देना चाहिए। इसके लिए सात-ग्राठ सेर बीज प्रति-एकड़ बोना काफी होंगे। इससे प्रति-वर्ष पांच-छः कटाव मिल जाते हैं ग्रौर प्रत्येक कटाव में लगभग एक सौ मन हरा घास मिल जाता है। इसे भी सूखे घास के साथ मिलाकर खिलाना चाहिए।

(५) शफताल Persian clover *Trifolium rescupi- atum*

जैसे बरसीम की खेती मिस्र में विशेष होती है, वैसे ही इसकी खेती ईरान में होती है। इसकी खेती बरसीम की खेती के समान ही होती है। इसका पौधा बरसीम के पौधे से कुछ छोटा होता है। इससे साल-भर में तीन कटाव मिल जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) सेंगी Indian clover *Melilotus parviflora*

इसका पौधा बरसीम से कुछ छोटा, पीले फूल का होता है। खेती बरसीम की खेती के समान ही होती है। परन्तु इसका माघ (फरवरी) में एक ही कटाव मिलता है, इससे इसे खाद कम देना चाहिए। बीज की मात्रा प्रति-एकड़ बीस सेर होगी। इसकी उपज डेढ़ सौ से दो सौ मन तक हो जाती है। इसे भी सूखे चारे के साथ मिलाकर खिलाना चाहिए। पांच सेर से अधिक किसी पशु को नहीं देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीसरा खण्ड

साग-भाजी की खेती

वर्तमान समय में उत्तम स्वास्थ्य रखने के लिए साग-भाजी का उपयोग बहुत बढ़ गया है और दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। इसकी खेती ऐसी है कि अल्प पूंजी से कुछ-न-कुछ आमदनी होती रहती है विशेषतः नगरों के निकट इसकी खेती विशेष लाभप्रद होती है। यदि सिंचाई का उचित प्रबंध हो तो कृषक ही नहीं, हर कोई शिक्षित युवक थोड़ी पूंजी लगाकर अपना तथा अपने आश्रितों का जीवन-निर्वाह कर सकता है।

साग-भाजी को पांच-छः भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) कन्दवाली, अर्थात् जिनका उपयोगी भाग भूमि के अन्दर हो; जैसे गाजर, मूली, आलू, शकरकन्द।

(२) वे जिनके पत्ते या कोमल डंडियां काम में आती हों; जैसे बन्द-गोभी, साग।

(३) वे जिनके फूल या फली की डंडी काम आती है; जैसे पटुआ, फूलगोभी।

(४) वे जिनके फलों का उपयोग होता हो; जैसे परवल, टमाटर।

(५) वे जिनकी फलियां या बीज काम में आते हों; जैसे ग्वार, मटर।

(६) इस वर्ग में हम मसाले आदि की गणना करेंगे।

लेखक की 'साग-भाजी की खेती' नाम की पुस्तक में प्रत्येक तरकारी की खेती का विवरण निम्नलिखित स्तम्भों में किया गया है। स्थानाभाव के कारण इस ज्ञानकोष में कुछ स्तम्भों का वर्णन सामूहिक रूप में ही दिया है (१) जमीन, जुताई और खाद, (२) बीज बोना, बोने की रीति का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वर्णन तो प्रत्येक तरकारी के साथ दिया है, परन्तु बोने के समय का वर्णन परिशिष्ट में दिया है, क्योंकि विभिन्न भागों में यह समय अलग-अलग है। प्रति-एकड़ पौधों की संख्या और बीज की मात्रा का अनुमान भी परिशिष्ट में दिया है।

यहां पर यह भी बतला देना उचित होगा कि कुछ साग-भाजियों के बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं और बाद में पौधे जब दो-तीन इंच ऊंचे हो जाते हैं तब खेतों में लगाते हैं। नर्सरी में बोने का विशेष अभिप्राय यह होता है कि साग-भाजियों के पौधे बाल्यावस्था में खेतों की शीतोष्णता सहन कर सकें अथवा उन्हें कीट से हानि न पहुंचे। थोड़े क्षेत्रफल में होने से उनकी रक्षा सरलता से हो सकती है।

नर्सरी का आकार आवश्यकतानुसार लम्बा लेकिन ४-५ फुट से अधिक चौड़ा नहीं होना चाहिए ताकि निंदाई-सिंचाई सरलता से हो सके। बरसात में जो नर्सरी बनाई जाय, वह नौ-दस इंच ऊंची होनी चाहिए।

(३) निंदाई और सिंचाई—(४) फसल की तैयारी—(५) उपयोग और गुण, तथा

(६) कीट और व्याधियों का वर्णन पृष्ठ १०१ पर दिया गया है।

१. कन्दवाली तरकारियां

अर्थात् वे फसलें जो भूमि के अन्दर होती हैं। चूंकि इनकी बाढ़ भूमि के अन्दर होती है इनके फलने के लिए ऐसी मिट्टी चाहिए, जो जल्दी से दब-कर इन्हें फूलने की जगह दे दे, न कि काली और भारी मिट्टी, जो अपने-आप ही फूलकर इन्हें दबा दे। ऐसी मिट्टी बलुआ-दुमट होती है जो कन्द की बाढ़ को नहीं रोकती। भारी मिट्टी इन्हें दबा देती है जिससे कन्द सुन्दर आकार के न होकर टेढ़े-मेढ़े हो जाते हैं। ऐसी फसलों के लिए जुताई गहरी और अच्छी करनी होती है। कार्बनिक खाद भी अधिक मात्रा में देना इनके लिए उचित है। साधारणतः लगभग २०० मन सड़ा हुआ गोबर और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट का खाद इन्हें देना चाहिए। इसके साथ फसल से होनेवाली आय के अनुसार कृत्रिम खाद भी दे सकते हैं। डेढ़-मन एमोनियम सलफेट और दो-ढाई मन सुपरफासफेट भी देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जहां की भूमि में पोटेशियम कम हो, वहां सवा मन के लगभग पोटेशियम सलफेट देना चाहिए।

कन्दवाली फसलें दो प्रकार की होती हैं। एक वे, जिनकी जड़ें काम में लाई जाती हैं और दूसरी वे, जिनके धड़ रूपांतरित होकर भूमि के अन्दर बाढ़ पाते हैं।

जड़वाली तरकारियां

(१) गाजर Carrot *Daucus carota;* (२) मूली Radish *Raphanus sativus;* (३) शलजम Turnip *Brassica rapa* (४) चुकन्दर Beet *Beta vulgaris* (५) पारस्निप Parsnip; *Pastinaca sativa;* (६) साल्सीफाई Salsify *Tragopogon porifolius* (७) रुटे वागा Rutabaga *Brassica nahobrassica;* (८) स्किरेट *Skirret Sium sisamum.*

उपर्युक्त में से पहली चार की खेती जरा विशेष रूप से होती है। दूसरी चार को वगीचों में कहीं-कहीं स्थान मिल जाता है।

१. गाजर—इसके बीज कतारों में, जिनकी दूरी एक फुट हो, बोये जाते हैं। जब पौधे निकल आवें तो उनकी छंटनी करके पांच-छः इंच की दूरी पर कर देने से गाजर अच्छी बैठती है। साधारण निंदाई-सिंचाई करते रहने से फसल तीन-चार महीने में तैयार हो जाती है। गाजर के बीज तैयार करना हो तो कन्द के नीचे का आधा भाग काटकर

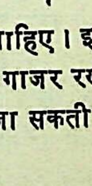

ऊपर का आधा भाग अच्छी उपजाऊ जमीन में लगा देना चाहिए। इनमें लगभग दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। कुछ दिनों के लिए गाजर रखना पड़े तो बालू में रख सकते हैं। गाजर सुखा करके भी रखी जा सकती है। इसके लिए कद्दूकस में कसकर सुखाना चाहिए।

उपयोग और गुण—कच्ची खाई जाती है। दूध-चीनी के साथ हलवा भी अच्छा बनता है, इसकी तरकारी भी बनाते हैं। आंख की रोशनी के लिए, दांतों के लिए तथा संग्रहणी और बवासीर के लिए इसका सेवन अच्छा होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२. मूली——कतारों में एक फुट का और पौधों में पांच-छ: इंच का अन्तर ठीक होता है। जौनपुरी मूली के लिए दस-बारह इंच का अन्तर अच्छा होगा। मूली के बीज क्यारी अथवा पारी पर बोने चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से डेढ़ महीने में पत्ते, दो महीने में जड़ें और ढाई महीने में फल तैयार हो जाते हैं। बीज की तैयारी गाजर के समान। इसे पन्द्रह-पन्द्रह दिनों के अन्तर से बोया जाय तो काफी दिनों तक मूलियां मिलती रहती हैं।

उपयोग और गुण——मूलियां कच्ची खाई जाती हैं। पत्ते, जड़ और फल की तरकारी बनती है। पत्ते और जड़ पाचक तथा स्वर को उत्तम करनेवाले और नेत्रों को लाभ पहुंचानेवाले होते हैं।

३. शलजम——इसके बीज एक फुट के अन्तर वाली कतारों में बोने चाहिए। इन्हें पारियों पर भी बोते हैं। कतारों में पौधों का अन्तर पांच-छ: इंच का होना चाहिए। बराबर सिंचाई करने से ढाई महीने में फसल सब्जी के योग्य हो जाती है। २५० से ३०० मन उपज प्रति-एकड़ आ जाती है। इसके बीज गाजर की भांति तैयार करते हैं, परन्तु ये पहाड़ों पर ही होते हैं।

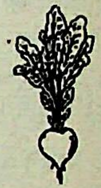

उपयोग और गुण——जड़ और पत्तों की सब्जी बनाई जाती है। शलजम पाचक और वीर्यवर्धक होते हैं।

४. चुकन्दर—इसके बीज भी कतारों में क्यारियों में या पारियों पर बोने चाहिए। पंक्तियों में अन्तर एक फुट का और पौधों में पांच-छ: इंच का होना चाहिए। इसकी फसल छ: महीने में तैयार होती है और उपज पचास-साठ मन तक हो जाती है। इसके बीज भी पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में होते हैं।

उपयोग और गुण—जड़ और पत्तों की तरकारी बनती है। जर्मनी और रूस में चीनी भी बनती है। इसका आचार भी बनाया जाता है। इसका सेवन पाचन-शक्ति को बढ़ाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५. पारस्निप ६. साल्सीफाई ७. रुटेबागा ८. स्किरेट—इनकी खेती विशेष रूप से नहीं होती। यदि किसीकी इच्छा हो, तो गाजर की भांति जमीन तैयार करके एक-दो क्यारी लगा सकते हैं। पारस्निप और साल्सीफाई की कतारें डेढ़ फुट दूर होनी चाहिए। कतारों में पौधों का अन्तर छः इंच का उत्तम होगा। बोने के समय से छः महीने में इनकी फसल तैयार होती है।

रुटेवागा की खेती शलजम की खेती के समान होती है। शलजम के पत्ते हरे और खुरदरे होते हैं और इसके साफ और नीले रंग के होते हैं। बोने के समय से पांच-छः महीने में फसल तैयार होती है।

स्किरेट की जड़ एक न होकर गुच्छे के रूप में होती है। जड़ें मीठी और भूरे रंग की होती हैं। इसे बीज और खूंटी दोनों से तैयार करते हैं। बोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार होती है। इसकी तरकारी भी बनाई जाती है।

वे कन्दवाली तरकारियां, जिनके रूपांतरित धड़ या शाखाएं भूमि में बैठती हैं—

(१) आलू Potatoes *Solunum tuberosum;* (२) अर्वी, घुईयां Arum *Colocasia esculenta (antiquorum);* (३) शकरकन्द Sweet Potatoes *Ipomoea batatas;* (४) गांठगोभी[1] Knolkhol, *Brassica Caulorapa (oleracea Var gongy lodes);* (५) सूरन Elephants foot *Amorphophallus Companulatus;* (६) गराडू *Yams Diascoria alata Vor globosa;* (७) रतालू Yams, *Diascoria purpura;* (८) सुथनी Kidney shaped yams *Diascoria fasciculata* (९) कच्चू Jerusalem artichoke *Helianthus tuberosus;* (१०) अरारूट

---

[1] गांठगोभी भूमि के अन्दर तो नहीं होती परन्तु कुछ भूमि में रहती है। चूंकि यह एक रूपान्तरित धड़ है, अतः इसको इस वर्ग में ले लिया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Arrowroot *Muranta arandinacca*; (११) टेपियोका Tapioca *Munihot (Utilisima)*; (१२) एसपेरेगस Asparagus *Asparagus officinalis*.

इनमें से पहली ४ की खेती प्रायः सब प्रान्तों में; ५,६,७ की गुजरात तथा दक्षिण भारत में, ८ की विहार में और ११ की ट्रावनकोर-कोचीन में विशेष रूप से होती है। १० और १२ को कहीं-कहीं छोटी-मोटी क्यारियों में स्थान मिल जाता है।

१. आलू—इसके लिए ढाई सौ से तीन सौ मन गोबर का खाद या दस-पन्द्रह मन सरसों की खली का खाद अच्छा होगा। इन्हें थोड़ी जमीन

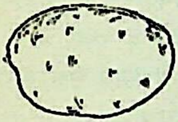

चीरकर कतारों में (छोटे आलू हों तो समूचे, और बड़े हों तो टुकड़े करके) लगाते हैं। पहाड़ी आलू के लिए कतारों में डेढ़ फुट का अन्तर और मैदानवालों के लिए दो-ढाई फुट का अन्तर रखना चाहिए। कतारों में पहले छः इंच का और दूसरे में नौ इंच का अन्तर उत्तम होगा। इन्हें इतने गहरा रोपना चाहिए कि दो-तीन इंच मिट्टी की तह से ढक जाय। निंदाई के समय जब पौधे सफेद-सफेद शाखें फेंकने लगें तो ऊपर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। करीब तीन-चार बार मिट्टी चढ़ानी होगी। मिट्टी चढ़ाने से जो नालियां बनती जाती हैं उनमें जहां आवश्यकता हो सिंचाई करनी चाहिए। वोने के समय से चार-पांच महीने में फसल तैयार हो जाती है और उपज पचास मन से लेकर २५० मन प्रति-एकड़ तक हो जाती है। वैसे कृषि-पंडितों ने सात सौ मन से अधिक उपज भी प्राप्त की है[1]। अगली फसल के लिए बीज रखना हो तो नींबू के आकार के आलू ठंडे गोदाम में या कोयले के चूर्ण में रखना चाहिए। आलू सुखाकर[2] भी रखे जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी और मीठे या नमकीन पदार्थ

---

[1] श्री जयपालचन्द बुलन्दशहरवालों ने लगभग ७३५ मन उपज दिखलाई है (Indian Farming, July 1953 Supplement.)

[2] लेखक की 'सागभाजी की खेती', आठवां संस्करण, पृष्ठ ११७ में सुखाने की रीति दी है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बनाये जाते हैं। इनसे स्टार्च भी बनाते हैं। इनकी तरकारी सूखी, बलदायक और अग्निदीपक होती है। मोटे मनुष्यों को आलू का उपयोग बहुत कम करना चाहिए।

२. अर्वी घुईयां—डेढ़ सौ से दो सौ मन गोबर का खाद या लगभग दस मन खली का खाद ठीक होगा। अर्वी की गांठें क्यारियों में अथवा नालियों में लगानी चाहिए। पंक्तियों में दो फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर अच्छा है। ज्यों-ज्यों पत्ते बढ़ते जायं, निंदाई के समय कुछ मिट्टी चढ़ाते जाना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से पत्ते दो-तीन महीनों में और कन्द चार-पांच महीनों में तैयार हो जाते हैं। अर्वी की उपज लगभग तीन सौ मन प्रति-एकड़ तक हो जाती है। अगली फसल के लिए सूखे तथा हवादार कमरों में मचानों पर इसकी गांठें रखनी चाहिए।

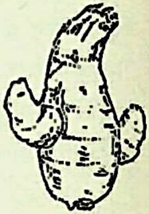

उपयोग और गुण—पत्तों की तरकारी, पकौड़े इत्यादि अच्छे बनते हैं। कन्द की तरकारी बलदायक, चिकनी और भारी होती है।

३. शकरकन्द—लगभग दो सौ मन गोबर का खाद देकर भूमि तैयार कर लेनी चाहिए। जहां सिंचाई करनी पड़े, वहां क्यारियां बनाकर उनमें लगाना चाहिए। एक-एक हाथ की दूरी पर लताओं के टुकड़े लगाये जाते हैं। जबतक लताएं भूमि ढकने नहीं पाती, निंदाई करनी होगी। आश्विन में लगाई गई लता से तीन महीने में और माघवाली से चार महीने में कन्द मिल जाते हैं। उपज एक सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती है। बीज के लिए लताएं रखने के लिए आश्विनवाली से माघ की फसल के लिए और माघवाली से आषाढ़ में कुछ लताएं लगा देते हैं, जिससे आश्विन में फिर बीज मिल जाता है। एफ. ए. १७ सफेद अच्छी जाति है।

उपयोग और गुण—उबालकर, आग में भूनकर अथवा सब्जी बनाकर खाते हैं। इसके टुकड़े करके सूख भी सकते हैं। इसका आटा भी बनाया जा सकता है। पत्तियां पशुओं को खिलाई जाती हैं। शकरकन्द भारी, बलदायक और कुछ दस्तावर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होते हैं।

४. गांठगोभी—दो सौ मन गोबर का खाद देकर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। इसके बीज नर्सरी में लगाकर रोप तैयार करके लगाने चाहिए। इसकी कतारें लगभग १५ इंच दूर और कतारों में पौधे ६ इंच की दूरी पर रखने चाहिए। निंदाई और सिंचाई आवश्यकतानुसार करने से तीन-चार महीने में फसल तैयार हो जाती है। ज्यों-ज्यों गोभियां

काम के योग्य होती जायं, उनकी तरकारी बनाई जा सकती है। उपज लगभग १५० मन प्रति-एकड़ तक हो जाती है। इसके बीज ठंडे स्थानों में ही बनते हैं अतः वहीं से मंगवाने होंगे।

उपयोग और गुण—तरकारी बनाई जाती है। पशुओं को भी खिलाये हैं। इसकी सब्जी कुछ दस्तावर होती है।

५. सूरन—इसके लिए कम सड़ा हुआ खाद भी काम देगा। लगभग २०० मन खाद देना चाहिए। इसके लगाने के लिए बड़ी सूरन के आस पास जो छोटी गांठें निकल आती हैं वे लगाई जाती हैं। इनका वजन लगभग एक छटांक होता है। पूरी बाढ़ पाई हुई सूरन चार साल में तैयार होती है। ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है हर साल कुछ दूरी बढ़ाकर वही गांठें क्यारियों, में लगाई जाती हैं। पहले साल १′, दूसरे साल १.५′, तीसरे साल २′ और चौथे साल ३′—४.५′ के अन्तर पर लगते हैं। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से चौथे साल में जो सूरन तैयार होती है उसका वजन लगभग पांच सौ मन प्रति-एकड़ हो जाता है। हर साल बोने के समय तक गांठों को हवादार मकान में रखना चाहिए।

उपयोग और गुण—कन्द की तरकारी बनाई जाती है। इसका अचार भी बनता है। यह कफ-नाशक और अग्नि-वर्धक होती है।

६. गराड़ू, ७. रतालू—खेतों की अन्तिम जुताई के बाद तीन-तीन फुट की दूरी पर दो-दो फुट चौड़ी नालियों में खाद भरवा देना चाहिए। इसके लिए कन्द के टुकड़े विशेषतः ऊपरी भाग के काटकर खाद भरी हुई नालियों में लगाना चाहिए। कतारों में अन्तर पांच फुट का और पौधों में तीन फुट काफी होगा। लगाने के बाद कुछ दिन तक घास से ढककर रखना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से सात-आठ महीने में फसल तैयार हो जाती है। प्रति-एकड़ दो से ढाई सौ मन कन्द प्राप्त हो जाते हैं। हवादार मकान में कन्द वैसे ही कई दिनों तक रखे जा सकते हैं।

उपयोग और गुण—कन्द की तरकारी बनती है। यह अग्निदीपक और सूखी होती है। बवासीर और कफ वालों के लिए विशेष लाभप्रद होती है।

८. सुथनी—इसकी खेती विहार में होती है। इसके कन्द एक-एक फुट की दूरी पर खेतों में लगा दिये जाते हैं और विना सिंचाई के हो जाते हैं। लगाने के समय से छः-सात महीने में फसल तैयार होती है। उपज दो सौ से ढाई सौ मन तक हो जाती है। कन्द मचानों पर हवादार मकानों में रख सकते हैं।

उपयोग और गुण—शकरकन्द की भांति उबालकर खाते हैं। यह सूखी और भारी होती है।

९. कच्चू—इसके लिए लगभग दो सौ मन गोवर का खाद या १० मन खली देना अच्छा होगा। इसके लिए कच्चू के टुकड़े लगाये जाते हैं। पंक्तियां ढाई फुट और उनमें पौधे एक-एक फुट की दूरी पर होने चाहिए।

आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से छ.-सात महीने में फसल तैयार हो जाती है लगभग १०० मन कच्चू मिल जाते हैं। बीज के लिए कच्चू मिट्टी में गाढ़कर रखने चाहिए।

उपयोग और गुण—आलू की भांति उबालकर तरकारी बनाते हैं। आलू की अपेक्षा यह जल्दी पचनेवाली होती है।

१०. अरारूट—इसकी गांठें एक-एक फुट की दूरी पर लगाई जाती हैं और पौधों पर मिट्टी चढ़ानी होती है। फूल आते जायं तो उन्हें तोड़ डालना चहिए। सिंचाई की जहां आवश्यकता हो करनी होगी। लगाने के समय से आठ-दस महीने में फसल तैयार होती है और लगभग दो सौ मन कन्द मिल जाते हैं, जिनसे १५% स्टार्च मिल जाता है। कच्चू की गांठों की भांति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसकी गांठें भी बोने के लिए रख ली जाती हैं।

उपयोग और गुण—गांठों की तरकारी बना सकते हैं, परन्तु अधिकतर स्टार्च बनाने के काम आता है। यह हलका और जल्दी पचनेवाला होता है।

११. टेपियोका—इसके लिए १५० मन गोबर-पत्तों का खाद काफी होगा। वर्षारम्भ के समय एक फुट व्यास के एक फुट गहरे गढ़ों में इसकी डंडी के टुकड़े लगाये जाते हैं। टुकड़ों का दो-तिहाई भाग गाड़ना होता है। पौधों में २ फुट का अन्तर रखना चाहिए। इन पर मिट्टी भी चढ़ानी होती है। छः-सात महीने में कन्द तरकारी के योग्य हो जाते हैं। स्टार्च के लिए, पत्ते झड़ने लगें और जमीन फटने लगे, तब उखाड़ना चाहिए। उपज सौ-सवा सौ मन प्रति-एकड़ आ जाती है।

उपयोग और गुण—कन्द छीलकर शकरकन्द की भांति काम में लाते हैं। इनसे सब्जी और मिठाई भी बनती है। चूर्ण से साबूदाना भी बनाते हैं। कन्द को छीलकर छोटे-छोटे टुकड़े करके सुखाकर भी रख लेते हैं।

१२. एसपेरेगस—इसके लिए गोबर कूड़ा-कर्कट लगभग तीन सौ मन प्रति-एकड़ डालना होगा। इसके बीज या रोप पंक्तियों में लगाने चाहिए। पंक्तियां डेढ़ फुट की दूरी पर होनी चाहिए। उनमें रोप एक-एक फुट की दूरी पर लगा सकते हैं। इनपर मिट्टी चढ़ानी होती है। तीसरे साल में इसके डंठल तरकारी-योग्य होते हैं और दस-बारह साल तक मिलते हैं। जिन डंठलों पर मिट्टी नहीं चढ़ती वे हरे हो जाते हैं। प्रतिवर्ष लगभग ५० मन डंठल मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—डंठलों की तरकारी बनाई जाती है जो बलदायक होती है।

२. पत्ते और कोमल डंडियां काम में लाई जानेवाली तरकारियां

इनके लिए नाइट्रोजन का खाद विशेष लाभप्रद होता है। लगभग दो मन प्रति-एकड़ फासफेट का खाद भी देना अच्छा होगा ताकि पौधे स्वस्थ हों और कीट और व्याधियों का आक्रमण विशेष न हो। जताई भी गोभी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैसी दो-एक फसलों को छोड़कर अधिक गहरी नहीं करनी पड़ती। भूमि बलुआ और मटियार को छोड़कर सब प्रकार की अच्छी होती है। इस वर्ग में निम्नलिखित तरकारियां हैं—

(१) प्याज Onion *Alium cepa;* (२) लहसुन Garlic *Alium sativum;* (३) लीक Leek *Allium porrum;* (४) गंधक Shallot *Allium ascolonicum;* (५) शाईव Shive *Allium. schoe-noprosum;* (६) सिवाल Sibol *Allium fistulosum.*

उपर्युक्त तरकारियां प्याज की जाति की हैं और अधिकतर साग-भाजियों को स्वादिष्ट बनाने के काम आती हैं। इनमें की पहली दो मुख्य हैं, शेष को कहीं-कहीं स्थान मिल जाता है।

(७) कुसुम Safflower *Carthamus tinctorius;* (८) खस-खस Poppy *Papaver somniferum;* (९) खिसारी Khesari *Lathirus sativus;* (१०) चौलाई Chaulai *Amarantus blitum;* (११) पालक Spinach *Spinosa oleracea;* (१२) पालक खट्टा Sorrel *Rumex vasicarius;* (१३) पोई Malabar night Shade *Basella alba and Basella rubra;* (१४) बथुआ Bathua *Chenopodium album;* (१५) मेथी Fennugreek *Trigonella foenum-graecum;* (१६) राई Rai *Brassica juncea;* (१७) राजगिरा Rajgira *Ammarantus Cundatus paniculatus;* (१८) लूणिया Purslane *Portulaca oleracea;* (१९) सरसों Sarson *Brassica Campestris;* (२०) सरसों; सफेद Sarson white *Brassica alba;* (२१) साग लाल और मरसा Sag *Amarantus gaggaticus.*

उपर्युक्त ७ से २१ तक की खेती भारतवर्ष में बहुत दिनों से होती चली आ रही है। इनके लिए दो मन फोसफेट के खाद के साथ सवा सौ मन गोबर का खाद काफी होता है। ये सब प्रकार की भूमि में हो जाती हैं।

(२२) बंधगोभी Cabbage *Brassica oleracea;* (२३) चीनी गोभी Chinese cabbage *Brassica oleracea gemmifera;* (२४) ब्रसेल्स स्प्राउट्स Brusells sprouts *Brassica oleracea*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

acephela; (२५) लेट्यूस Lettuce *Lectuca sativa.*

उपर्युक्त (२२ से २५) का आगमन विदेशों से हुआ है। बंधगोभी की खेती विशेष रूप से, लेट्यूस की उससे कम तथा शेष दो की कहीं-कहीं होती है।

इनके लिए गोबर का खाद दो सौ से ढाई सौ मन, फासफेट का खाद दो-ढाई मन, हड्डी का चूरा या सुपरफास्फेट और मन-सवा मन एमोनियम सलफेट या चार-पांच मन खली का खाद देना लाभप्रद होगा। इनके लिए दुमट भूमि अच्छी होती है।

निम्नलिखित का आगमन भी विदेशों से ही हुआ है। जबतक अंग्रेज थे, उनके बगीचों में कहीं-कहीं इन्हें स्थान मिल जाता था। अब इनकी खेती की संभावना नहीं है। फिर भी किसीकी इच्छा हो तो निज के बगीचों में स्थान दे सकते हैं। इनके लिए दो सौ मन गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट प्रति-एकड़ काफी होगा।

(२६) एण्डाईव Endive *Chicorium endiva;* (२७) ओरेक Orach *Atriplex hortense;* (२८) कासनी Chicory *Chicorium intybus;* (२९) कार्न सलाद Corn Salad *Valleianella olitoria;* (३०) कार्डून Cordoon *Cyneria carduncuIus;* (३१) केल Kale *Taraxacum officinale;* (३२) कोलार्ड्स Collards *Brassica oleracea acephelia;* (३३) चार्ड्स Chards *Beta valgaris var cicela;* (३४) डेण्डेलियन Dandelion *Toraxacum Officinalis;* (३५) पार्सले Parsley *Petroselinum hortense;* (३६) रूबर्ब Rhubarb *Rheumrha ponticum;* (३७) शेरविल Shervil *Anthricus cere folium;* (३८) सिसरी Sage *Saliva officinales;* (३९) सेलेरी Celery *Apium graveolens.*

१. प्याज—गोबर का खाद इससे पहली फसल को देना अच्छा होगा। प्याज को ही न देना हो तो दस मन खली और दस-बारह-मन राख देना अच्छा है। लेखक के प्रयोग में सन के बीज का खाद भी अच्छा पाया गया। सन की फसल को ताग और डंठल के लिए काटकर बीज उसी खेत में भिगो-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर अंकुरित करके छींट दिये गए थे। इसकी तुलना हरे सन को गाड़कर भी की गई थी। जिस खेत में बीज डाला गया था, उससे ८.३ मन सन का ताग, ६९ मन डंठल और ८९ मन प्याज हरे खादवाले खेत से अधिक आये।

इसके बीज नर्सरी में डालकर रोप लगाये जाते हैं। रोप जब चार-पांच इंच ऊंचे हो जायं तो पांच-पांच इंच की दूरी पर लगा देने चाहिए। निंदाई साधारण। रोपने के समय से पांच महीने में प्याज उठाने-जैसे हो जाते हैं। वैसे सब्जी के लिए तीन महीने बाद से भी उखाड़े जा सकते हैं। इसके बीज प्राप्त करने की रीति है कि पिछली फसल के बड़े-बड़े चुने हुए प्याज लगा देने चाहिए। इनके फूलों में जो बीज आते हैं, उन्हें नमी से बचाकर रखना चाहिए। प्याज की उपज २०० से २५० मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण—इनकी तरकारी बनाई जा सकती हैं और इससे तरकारियां भी स्वादिष्ट की जाती हैं। प्याज पाचक, बलवर्धक, उत्तेजक, कफ और ज्वर-नाशक, सर्दी और खांसी को कम करनेवाला होता है। हैजे के दिनों में इसका सेवन विशेष रूप से करना चाहिए। चीनी के साथ इसका रस देने से खूनी बवासीर में लाभ पहुंचता है।

२. लहसुन—प्याज की भांति भूमि तैयार करके इसकी कलियां क्यारियों में छः-छः इंच की दूरी पर लगा देनी चाहिए। अन्य फसलों की पारियों पर लगा देने से भी लहसुन हो जाते हैं। रोपने के समय से पांच-छः महीने में फसल तैयार हो जाती है और उपज लगभग ५० से ७५ मन तक आ जाती है।

उपयोग और गुण—तरकारियों को स्वादिष्ट करने के काम में लाई जाती है। इसका तेल लकवा और बादी में काम देता है। बुखार, खांसी-सर्दी पर लहसुन का सेवन अच्छा होता है।

३. लीक—लीक के पौधों पर मिट्टी चढ़ानी पड़ती है। पंक्तियां और पौधों में पांच-छः इंच का अन्तर रखना चाहिए। शेष कार्य प्याज के समान।

४. शाईव—इसकी खेती स्काटलैंड में होती है। प्याज की भांति भूमि तैयार कर खूंटी से लगाते हैं।

५. सिबाल—इसे बीज या खूंटी से लगाते हैं। एक साल लगाने से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो साल तक पत्ते मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—३, ४, ५ का उपयोग तरकारियों को स्वादिष्ट करने करने के लिए किया जाता है। गुण करीब-करीब प्याज-जैसे हैं।

७. **कुसुम**—(पृष्ठ १६५)

८. **खसखस**—(पृष्ठ १६६)

६. **खिसारी**—(पृष्ठ १७५)

१०. **चौलाई**—इसे क्यारियों में छींटकर बोते हैं। पौधे कोमल मिलते रहें, इसलिए इसे एक मास के अन्तर पर बोना चाहिए। ऐसे क्रम से चार-पांच महीने तक तरकारी मिलती रहती है। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देने चाहिए।

उपयोग और गुण—कोमल पौधों की तरकारी बनाई जाती है। इसकी तरकारी हलकी, पाचक और खून को साफ करनेवाली होती है।

११. **पालक**—छींटकर क्यारियों में या पंक्तियों में बो सकते हैं। पंक्तियों में एक फुट का अन्तर रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहने से ४-५ महीने तक पौधे मिलते रहते हैं। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देने चाहिए।

उपयोग और गुण—पौधों के तरकारी बनाई जाती है जो पाचक और खून को साफ करनेवाली होती है।

१२. **पालक खट्टा**—खेती पालक-जैसी। इसकी तरकारी स्कर्वी नाम की व्याधि में लाभप्रद होती है।

१३. **पोई**—पोई लाल और हरे पत्तेवाली अलग-अलग होती है। इसके खेत-के-खेत नहीं लगाये जाते हैं। इसकी बेल छप्परों पर या मचानों पर चढ़ा देते हैं। बरसात में इसके पुराने पेड़ के पास जो नई बेल निकल आती है, वह लगा देनी चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्तों की तरकारी बनाई जाती है। पकौड़े-समोसे आदि भी इससे अच्छे बनते हैं। इसकी तरकारी स्वास्थप्रद और ठंडी होती है। इससे रक्तपित्त के विकार शांत होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१४. बथुआ—इसे छींटकर या पंक्तियों में बोते हैं। पंक्तियों में नौ इंच का अन्तर अच्छा होता है। पर गेहूं के खेतों में आपसे-आप निकल आता है वह काम में ला सकते हैं। बोने के समय से एक महीने में पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। इससे भी चार-पांच महीने तक तरकारी मिलती रहती है।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी पाचक, हलकी और दस्तावर होती है। तिली, बुखार, ववासीर आदि में गुणदायक है।

१५. मेथी—चूंकि यह दलहन की फसल है इसके लिए फासफेट का खाद अवश्य देना चाहिए—ढाई मन के लगभग हड्डी का चूरा या सुपर फासफेट देना उत्तम होगा। गोवर का खाद यदि पहली फसल को नहीं दिया हो तो सौ-सवा सौ मन इसे दे देना चाहिए। इसे क्यारियों में छींटकर बोते हैं। आवश्यकतानुसार निंदाई करते रहने से एक माह में इसके पौधे तरकारी के योग्य हो जाते हैं। बीज चार महीने में तैयार होते हैं। लगभग आठ दस मन बीज प्रति-एकड़ मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—हरी मेथी की तरकारी बनती है। इसे सुखाकर भी रख सकते हैं ताकि अभाव के समय काम आवे। बीज की तरकारी चने की दाल के साथ बनती है। मेथी क्षुधावर्धक बलदायक, वातनाशक, पेचिश के दस्तों को रोकनेवाली, बढ़ी हुई तिल्ली तथा खांसी में भी काम आती है। गठिया-वादी इसके सेवन से नष्ट होती है।

१६. राई—सरसों की तरह।

१७. राजगिरा—छींटकर या पंक्तियों में बोते हैं।। पंक्तियों में डेढ़ फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर काफी होगा। कुछ अंतर पर बीज बोने से चार-पांच महीने तक सब्जी मिलती है। बीज के लिए कुछ पौधे छोड़ देने चाहिए।

उपयोग और गुण—कोमल पौधे और पत्तों से तरकारी बनाते हैं, जो हलकी पाचक होती है। बीज से लावा बनाकर फलाहार के काम में लाते हैं।

१८. लूणिया (कुलफा) साग—छींटकर क्यारियों में बोना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह दो जाति का होता है। एक हरे पत्तेवाला और दूसरा सुनहरे पत्ते-वाला। बोने के समय से तीन-चार सप्ताह में पौधे सब्जी के योग्य तैयार हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—कोमल पौधों की तरकारी बनाई जाती है। स्वाद में लूणिया कुछ खारा और खट्टा होता है। इसकी तरकारी पाचक और अग्निदीपक होती है।

१९. सरसों—(पृष्ठ २०३)

२०. सरसों सफेद—सरसों की तरह।

२१. साग—इसकी भी खेती राजगिरा-जैसी होती है।

२२. बंधगोभी—दुमट भूमि और दो सौ से ढाई सौ मन गोबर का खाद, दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट और पांच मन खली या मन-सवा मन एमोनियम सलफेट देना अच्छा होगा।

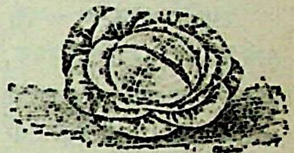

इसके बीज नर्सरी में गिराकर पौधे तैयार किये जाते हैं। चार-पांच सप्ताह के होने पर इन्हें क्यारियों में या पारियों पर लगा सकते हैं। पंक्तियों में डेढ़ से दो फुट का अन्तर और पौधों में एक फुट से डेढ़ फुट का अन्तर अच्छा होगा। इसके पौधों की जड़ों पर थोती मिट्टी चढ़ानी चाहिए। बोने के समय से जल्दी आनेवाली ढाई-तीन महीनों में और देरीवाली चार-पांच महीनों में तैयार हो जाती है। उपज १५० मन से २५० मन तक हो जाती है। बीज पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में ही होते हैं। चुनी हुई गोभियाँ एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान में लगा दी जायं, तो वे फूट जाती हैं और बीज बन जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसकी तरकारी बनाई जाती है, जो दस्तावर और स्वास्थप्रद होती है।

२३. चीनी गोभी—यह बंधगोभी-जैसी होती है परन्तु चपटी न होकर उलटे लट्टू की आकार की होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२४. ब्रसेल्स स्प्राउट्स्—इसमें ऊंची डंडी पर बंधगोभी के आकार की छोटी गोभियां लगती हैं। इनके रोप भी नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। इन्हें दो-ढाई फुट की दूरी पर लगाना चाहिए। निंदाई के समय पौधों पर कुछ मिट्टी चढ़ानी होगी। बोने के समय से पांच-छः महीने में गोभियां तोड़ने-जैसी होती हैं। खेती की क्रिया बंधगोभी-जैसी ही है।

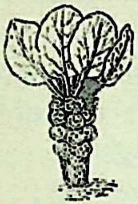

उपयोग और गुण—बंधगोभी की तरह।

२५. लेट्यूस—खाद की मात्रा बंधगोभी से लगभग आधी दी जाय। इसे बीज या रोप से तैयार करते हैं। पंक्तियां छः इंच और पंक्तियों में पौधे भी छः इंच की दूरी पर होने चाहिए। निंदाई के समय ज्यों-ज्यों पत्ते बनते जायं, उन्हें बांधते जाना चाहिए, जिससे वे कोमल रहें। इसके पत्ते कुछ खुली हुई बंधगोभी-जैसे होते हैं।

उपयोग और गुण—पत्ते सलाद के काम आते हैं अर्थात् कच्चे ही खाये जाते हैं। स्वाद के लिए नमक, मसाला, नींबू का रस डाल सकते हैं। यह ठंडी और खून को साफ करनेवाली होती है।

जैसाकि पहले कहा गया है, निम्नलिखित फसलों की खेती भारत में कहीं-कहीं अंग्रेजों के बगीचों में हुआ करती थी और अब तो बहुत ही कम होती है। फिर भी किसीकी इच्छा हो तो बंधगोभी के लिए जिस तरह से भूमि तैयार करते हैं, करके इन्हें निम्नलिखित दूरी पर लगा सकते हैं। चूंकि ये ठंडे देश की चीजें हैं इन्हें आश्विन-कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) में बोना चाहिए। ये सब बीज से पैदा की जाती हैं। रुबर्ब कन्द से भी हो जाता है।

इनमें से एंडाइव, कासनी, कार्नसलाद, क्रेस, पार्सले, रुबर्ब और शेरविल की सलाद काम में आती है। शेष के पत्ते तथा डंडियों से सब्जी बना सकते हैं। रुबर्ब के पत्ते अर्वी के पत्ते की भांति जमीन की सतह के पास से निकलते हैं। यह कई साल तक लगा रहता है, अतः इसे एक ओर स्थान दे देना चाहिए। एंडाईव, कोलार्ड्स, डेण्डेलियन, पार्सले और सेलेरी के बीज पहले नर्सरी में बोये जाते हैं। सेलेरी पर मिट्टी चढ़ानी होती है और कासनी के पत्ते सफेद करने होते हैं इसलिए उन्हें गमले से ढकना पड़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	पौधों की दूरी		बोने या रोपने के समय से तैयारी का समय
	पंक्तियों की दूरी	पौधों की दूरी	
२६ ओरेक	१.५′	१′	२.५ महीने में
२७ एण्डाईव	१′	१′	२ ,,
२८ कासनी	१′	६′	३-४ ,,
२९ कार्डून	४′	१′	३-४ ,,
३० कार्न सलाद	१′	६″	२ ,,
३१ क्रेस	२′	१′	३.५ ,,
३२ कोलार्ड्स	३′	२′	३ ,,
३३ चार्ड	१.५	१″	२.५ ,,
३४ डंडेलियन	१′	६″	२ ,,
३५ पार्सले	१′	४″	४ ,,
३६ रुवर्ब	४′	१′	३-४ ,,
३७ शेरविल	८″	६″	२ ,,
३८ सिसरी	१′	१′	२ ,,
३९ सेलेरी	३′	१′	४ ,,

३. फूल की डंडी या फूल काम में लाई जानेवाली तरकारियां

१. ग्लोब आर्टिचोक Glob artichoke *Synara scolymus*; २. पटुवा Roselle *Hibiscus sobdariffa*; ३. फूलगोभी Cauliffower; *Brassica oleracea Vor. botritys*; ४. ब्रोकोली Broccoli *Brassica oleracea.*

(१) ग्लोब आर्टिचोक—यह सूरजमुखी जाति का होता है। अधखिले फूल और कलियां काम में लाई जाती हैं। इसके लिए दुमट मिट्टी और लगभग दो सौ मन गोबर का खाद अच्छा होगा। इसे बीज और पौंच (Suckers) दोनों से पैदा करते हैं। बीज से पैदा करना हो तो रोप-नर्सरी में तैयार कर, जब वे दो-ढाई इंच ऊंचे हो जायं, तो खेतों में लगाना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पंक्तियों में पांच-छः फुट का और पौधों में दो-तीन फुट का अन्तर काफी होगा। बोने के समय से करीब बारह महीने में फसल तैयार होती है।

उपयोग—कोमल कलियां और फूल तरकारी के काम आते हैं।

(२) पटुवा—पृष्ठ २०५ पर देखें।

(३) फूलगोभी—जिस तरह से बंधगोभी के लिए खाद देकर भूमि तैयार की जाती है, इसके लिए भी करनी चाहिए। इसके बीज नर्सरी में गिराये जाते हैं और रोप को खेत लगाने से पहले एक बार नर्सरी में एक जगह से हटाकर दूसरी जगह पर लगाकर पन्द्रह-बीस दिन बाद खेत में लगाना अच्छा होता है। इन्हें पारियों पर लगाना अच्छा होता है। पंक्तियों में दो फुट और पौधों में डेढ़-दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। आवश्यकतानुसार

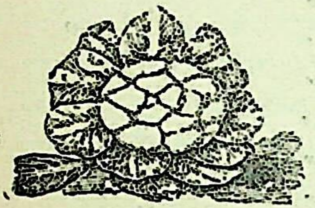

निंदाई-सिंचाई करते रहने से जाति-अनुसार कार्तिक से फाल्गुन (अक्तूबर से फरवरी-मार्च) तक फूल मिलते रहते हैं। इसके बीज पहाड़ों पर ठंडे स्थानों में ही होते हैं।

उपयोग और गुण—फूलगोभी की तरकारी, अचार आदि बनाते हैं। यह बादी और कब्ज़ करनेवाली होती है। हृदय को इसकी तरकारी से लाभ पहुंचता है।

(४) ब्रोकोली—यह भी एक प्रकार की फूलगोभी है। इसकी खेती फूल-गोभी जैसी ही होती है। फसल तैयार होने में फूलगोभी की अपेक्षा अधिक समय लगता है। सात-आठ महीने में फूल तैयार होता है। इसके पौधे ढाई फुट के अन्तर पर लगाने चाहिए।

४. फल काम में लाये जानेवाली तरकारियां

इनमें से परवल, टमाटर, बैंगन आदि ऐसी हैं जिनके लिए हलकी दुमट मिट्टी अच्छी होती है। ककड़ी, खरबूजा आदि के लिए बलुआ उत्तम होगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस वर्ग में निम्नलिखित तरकारियों की गणना है :

(१) आल, कदुआ, लौकी Bottle gourd *Lagenaria vulgaris*; (२) उच्चे Bitter gourd *Momordica muricata*; (३) करेला Bitter gourd *Momordica Charantia*; (४) कद्दू, कदीमा, काशीफल, सीताफल Pumpkin *Cucurbita Moschota*; (५) कद्दू, विलायती हलवा-कद्दू Vegetable marrow *Cucurbita pepo*; (६) कद्दू, भूरा, शिषकुम्हड़ा, पेठा Ash gourd *Benincasa hispida*; (७) कुन्दरू Kundru *Tricosenthes diseca*; (८) खरबूज़ा Melon *Cucumis melo*; (९) खीरा Cucumber *Cucumis sativus*; (१०) खीरा गोल, कचरी Cucumber *Cucumis anguria*; (११) चचैल, किकोड़ा Chathail *Momordica cochinchininsis*; (१२) चिचड़ा Snake gourd *Tricosanthes anguiana*; (१३) टमाटर Tomotoes *Lycopersicum esculantum*; (१४) टिण्डा Tinda *Citrullus vulgaris var fistulosus*; (१५) तरबूज, कलिंगड़ा, हिन्दवाना Water melon *Citrullus vulgaris*; (१६) तोरी, तरोई, झिगुनी Sponge gourd *Luffa acutangula*; (१७) तोरी घिया, घिवरा Sponge gourd *Luffa cylindrica*; (१८) परवल Parwal *Tricosanthes dioica*; (१९) फूट Cucumber *Cucumis malo var momordica*; (२०) बैंगन Brinjal *Solanum melongena*; (२१) भिण्डी Ladies fingers *Abelmoschus (Hibiscus) esculantus*; (२२) मिर्च Chillies *Capsicum Frutescens (annum)*; (२३) मोगरी Mogai *Rappanus sativus Var caudotus*; (२४) रैंता, रेती, ककड़ी Cucumber *cucumis melo var utilitimus*; (२५) स्क्वाश Sqash *Cucurbita melo pepo*.

(१) आल, लौकी—इसकी लता छप्परों या मचानों पर चढ़ाई जाती है। बहुधा लोग अपने घरों के आसपास भी लगा देते हैं। खेत-के-खेत कम ही बोये जाते हैं। खेत में लगभग १५० मन गोबर का खाद देकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्हें तैयार कर लेना चाहिए। इसके बीज लगाये जाते हैं, परन्तु नर्सरी में तैयार करके पौधे भी लगा सकते हैं।

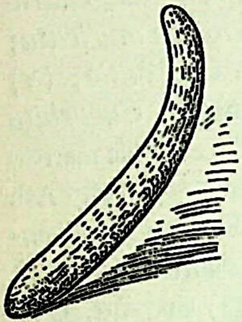

पौधों में लगभग छः-छः फुट का अन्तर रहना चाहिए। माघ में बोई जाय उसके लिए चार-चार फुट का अन्तर काफी होगा। लताएं जमीन से कुछ ऊंची रहें इसलिए मचान का प्रवन्ध न हो सके तो कुछ टहनियां डाल देनी चाहिए। आषाढ़ में बोई जानेवाली से कार्तिक से माघ तक और माघवाली से वैशाख से आषाढ़ तक लौकियां मिल सकती हैं। माघ में बोई जानेवाली के लिए 'समर प्रालिफिक' अच्छी जाति है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी, रायता, खीर, हलवा आदि बना सकते हैं। इसकी तरकारी ठंडी, शीघ्र पचनेवाली, दस्तावर और बल-दायक होती है।

(२) **उच्चै**—उच्चै के फल करेले-जैसे, लेकिन छोटे-छोटे होते हैं। खेती करेला-जैसी।

(३) **करेला**—लगभग डेढ़ सौ मन गोवर का खाद और ढाई मन हड्डी का चूरा प्रति-एकड़ डालकर जमीन तैयार करके बीज बोना चाहिए। कतारों में अन्तर चार-पांच फुट और पौधों में दो फुट का काफी होगा। चूंकि इनकी भी लताएं होती हैं अतः पौधों को जमीन से ऊपर रखने का प्रवन्ध होना चाहिए।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी वनाई जाती है जो शीतल, कड़वी और दस्तावर होती है।

(४) **कद्दू**—लगभग एक सौ मन खाद देकर जमीन तैयार करनी चाहिए। इसे वहुधा मक्का के खेतों में भी बो देते हैं। इसके वीज पंक्तियों में तीन-तीन फुट की दूरी पर वोने चाहिए। पंक्तियों में छः फुट का अन्तर होना चाहिए। माघ में बोई जानेवाली से बरसात में और बरसातवाली से सर्दी में फल मिलते हैं।

Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इससे भी रायता, हलवा आदि बना सकते हैं। इसकी तरकारी कफवर्धक और कब्ज-कारक होती है। बीज पाचक और दस्तावर होते हैं।

(५) **कद्दू विलायती**—यह भी एक प्रकार का कद्दू ही है। इसे अधिक दिनों तक रखा जाय तो अन्दर का गूदा सूख जाता है। इसकी खेती कद्दू की खेती के समान ही होती है।

(६) **कद्दू भूरा**—लगभग एक सौ मन खाद और दो मन हड्डी का चूरा डालकर खेत तैयार करने चाहिए। इसके बीज कतारों में छः-छः फुट की दूरी पर बोने चाहिए। कतारों में भी अन्तर उतना ही होना चाहिए। बोने के समय से छः-सात महीने में फल आते हैं जिनपर भूरा-भूरा पदार्थ जम जाता है। इसकी एक-दो लता छप्परों पर चढ़ा दी जायं तो वहां भी अच्छा फल जाता है।

उपयोग और गुण—इसकी एक प्रकार की मिठाई 'पेठा' बनती है। पेठा ठंडा, वीर्यवर्धक, खून को साफ करनेवाला और बलदायक होता है। मृगी, पागलपन आदि में इसका सेवन अच्छा होता है। ताजे रस के सेवन से आन्तरिक अंगों से रक्त बहता हो तो वह बन्द हो जाता है। क्षयरोग, अर्श आदि शक्तिनाशक व्याधियों में पेठे का सेवन लाभदायक होता है।

(७) **कुन्दरू**—इसकी लता छप्पर या पेड़ों पर चढ़ा दी जाती है जिनमें डेढ़-दो इंच लम्बे फल लगते रहते हैं। इसके लिए इसकी जड़ के पास की गांठ गढ़ा खोदकर लगा दी जाती है।

(८) **खरबूजा**—बहुधा नदी की बालू में अच्छा होता है। तीन-तीन फुट के अन्तर पर डेढ़-डेढ़ फुट चौड़ी नालियां बनाकर उनमें लगभग डेढ़

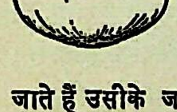

सौ मन गोबर का खाद मिला देना चाहिए। ऐसी नालियों में तीन-चार फुट की दूरी पर दो-दो बीज बोने चाहिए। बाद में सबल को रखकर निर्बल पौधे को उखाड़कर फेंक देना चाहिए। जिस नदी में बोये जाते हैं उसीके जल से पहले कुछ दिन जल्दी-जल्दी सींचना होगा। जड़ें गहरी चली जाने से फिर सिंचाई कम लगेगी। इसे माघ में लगाते हैं और गर्मी में फल मिलते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—इनके फल पकने पर खाये जाते हैं। लखनऊ के खरबूजे बड़े मीठे होते हैं। कच्चे फलों की तरकारी बनाई जाती है। खरबूजा दस्तावर और बलदायक होता है। बीज ठंडे, बलदायक और अधिक पेशाब लानेवाले होते हैं।

(९) खीरा—लगभग १५० मन प्रति-एकड़ गोबर का खाद देकर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। इसे बहुधा मक्का के खेत में भी बो देते हैं। अकेले बोना हो तो पंक्तियों में चार-चार फुट की दूरी पर बोना चाहिए। पंक्तियों में छः फुट का अन्तर अच्छा होगा। आषाढ़ में बोये जानेवाले से आश्विन-कार्तिक (अ०-न०) में फल मिलते हैं। माघ में बोने से वैशाख-जेष्ठ में मिलेंगे।

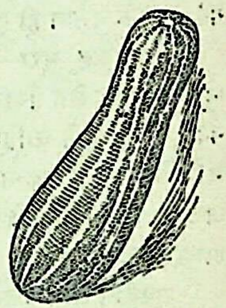

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनसे सलाद भी बनाते हैं। इनकी तरकारी भी बनाई जाती है। ककड़ियां ठंडी होती हैं।

(१०) खीरा गोल, कचरी—बहुधा मक्का, कपास आदि के साथ बो देते हैं। यह छोटे-छोटे फूट के आकार की होती है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इनको वैसे ही कच्चा भी खा सकते हैं।

(११) चचैल—गोल या लम्बा करेले-जैसा कांटेदार फल होता है। इसकी गांठ जो जड़ के पास होती है लगा दी जाती है। लता मचान पर चढ़ा दी जाती है। बीज से भी पैदा कर सकते हैं। एक बार लता चढ़ा दी जाय तो कई साल तक बरसात में फल देती रहती है। दूसरी बरसात में फिर नई निकल आती है।

उपयोग और गुण—फलों के कांटे छीलकर तरकारी बनाते हैं। इसकी तरकारी अग्निदीपक, बुखार और खांसी को मिटानेवाली होती है। इसकी जड़ से बालों का गिरना बन्द हो जाता है।

(१२) चिचड़ा—लगभग १२५ मन गोबर का खाद और दो-ढाई मन हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट प्रति-एकड़ मिलाकर खेतों को तैयार करना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

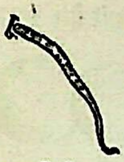

चाहिए। इसके बीज दो-दो फुट की दूरी पर पंक्तियों में बोने चाहिए। पंक्तियों में छः-छः फुट का अन्तर रखना चाहिए। इसके फल तीन-चार फुट लम्बे और इंच-डेढ़ इंच मोटे होते हैं। इसकी लता के लिए मचान बनाना जरूरी है। जब फल बनकर लटकने लगें तो उनके नीचे की नोक पर छोटे पत्थर या मिट्टी के ढेले बांध देने चाहिए। ऐसा करने से फल सीधे और लंबे होंगे। बरसात में जो बीज बोये जायं उनसे आश्विन-कार्तिक में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है, जो हल्की, रुचिकर और बलदायक होती है।

(१३) **टमाटर**—सौ-सवा सौ मन गोबर का खाद और दो मन सुपर-फासफेट या हड्डी का चूरा मिलाकर जमीन तैयार कर लेनी चाहिए। जब पौधे एक फुट की ऊंचाई के हो जायं तो सवा मन के करीब सोडियम नाइ-ट्रेट या एक मन एमोनियम सलफेट का खाद भी देना चाहिए। इसके पौधे पहले नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। जब पांच-छः इंच ऊंचे हो जायं तो

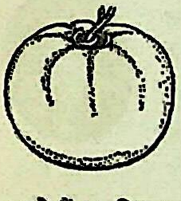

क्यारियों में या पानी देने की नालियों के दोनों ओर एक-एक फुट की दूरी पर लगा देने चाहिए। पंक्तियों में दो फुट का अन्तर होना चाहिए। आवश्यकता-नुसार निंदाई-सिंचाई करने से दो-तीन महीने में फल आने शुरू होकर तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। यदि कुछ आगे-पीछे बोये जायं तो और भी अधिक समय तक मिलते रहते हैं। दूसरी फसल के लिए अच्छे पके टमाटर के बीज धोकर सुखा करके बन्द डिब्बों में रख लेने चाहिए। टमाटर की उपज दो सौ मन से तीन सौ मन प्रति-एकड़ हो जाती है। 'सिपाक्स' और 'मीरठी' अच्छी जातियां हैं।

उपयोग और गुण—इसके फल बिना पकाये भी खाये जाते हैं। सब्जी भी बनती है। टमाटर दस्तावर, वीर्य-वर्धक और अग्निदीपक होते हैं। बेरीबेरी, स्कर्वी, रिकेट्स आदि रोगों में इनका सेवन अच्छा होता है और यह नेत्रों को भी लाभ पहुंचाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(१४) टिंडा—इसके लिए बलुआ दुमट मिट्टी अच्छी होती है। सवा सौ मन गोबर का खाद प्रति-एकड़ के हिसाब से देकर खेत तैयार कर लेना चाहिए। इसके बीज क्यारियों में दो-दो फुट की दूरी पर बोने चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से दो महीने में फल आने शुरू होकर दो-ढाई महीने तक मिलते रहते हैं। दूसरी फसल के लिए पके हुए फल के बीज रखने चाहिए।

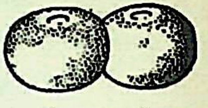

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाई जाती है। टिण्डे कफ-पित्तनाशक, शीतल, दस्तावर और अधिक पेशाब लानेवाले होते हैं।

(१५) तरबूज—नदी की बालू में बोने के लिए खरबूजे की भांति जमीन तैयार करके बोने चाहिए। दूसरे खेतों में बोना हो तो पांच-पाच फुट की दूरी पर डेढ़ फुट चौड़ी, आठ-दस इंच गहरी मिट्टी में, दो सौ मन गोबर का खाद व ढाई मन हड्डी का चूरा प्रति-एकड़ के हिसाब से मिलाना चाहिए। बाद में सिंचाई करके उपर्युक्त प्रकार से तैयार की हुई नालियों में चार-चार फुट की दूरी पर दो-दो बीज बोने चाहिए। पौधे निकल आने पर सबल को रखकर निर्बल को निकाल देना चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से दो-ढाई महीने में फल आने शुरू होकर उतने ही समय तक फल मिलते रहते हैं। अच्छी फसल होने से लगभग २००० फल प्रति-एकड़ मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—फल का लाल गूदा खाने के काम आता है। सफेद भाग की तरकारी बन सकती है। तरबूज ठंडा, पाचक और दस्तावर होता है। पीलिया नाम की व्याधि में इसका सेवन अवश्य करना चाहिए।

(१६) तोरी (झिगुनी), (१७) तोरी (घिवरा)—घरों के आसपास लगाकर मचान पर चढ़ा देने से लताएं फलती रहती हैं। खेत में बोने के लिए लगभग सवा सौ मन गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा मिलाकर प्रति-एकड़ डालना चाहिए। इनके बाज छः-छः फुट की दूरी पर बोने चाहिए। माघ में बोई जानेवाली के लिए तीन-चार फुट की दूरी काफी होगी। बोने के समय से ढाई-तीन महीने में फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आषाढ़वाली से आश्विन-कार्तिक में व माघवाली से वैशाख-ज्येष्ठ में फल मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है जो शीतल और पित्तनाशक होती है।

(१८) परवल—इसके लिए घोड़े की लीद का खाद अच्छा माना गया है। लीद और गोवर का खाद लगभग डेढ़ सौ मन और ढाई मन हड्डी का चूरा प्रति-एकड़ डालना चाहिए। दूसरे साल पांच मन प्रति-एकड़ के हिसाब से खली का खाद देना चाहिए। इसे बीज से तैयार कर सकते हैं, परन्तु बहुधा लता ही लगाई जाती है। तीन-चार हाथ लम्बी बेल को तीन-चार बार ऐसी मोड़ते हैं कि एक हाथ लम्बा बंडल बन जाता है और एक-एक छोर दोनों तरफ रह जाता है। इस बण्डल के बीच के भाग को मिट्टी में दबा देते हैं। पंक्तियां छः फुट की दूरी पर और उतना ही अन्तर रोपने की जगह का होना चाहिए। लताएं जगह-जगह जड़ें फेंकने न पायं, इसलिए निंदाई के समय उठा-उठाकर देखते रहना चाहिए। लगाने के समय से पांच महीने में फल आने शुरू हो जाते हैं और चैत्र से आश्विन तक मिलते रहते हैं। पहले वर्ष में पचास-साठ मन और दूसरे में लगभग सौ मन फल मिल जाते हैं। तीसरे वर्ष में स्थान बदल देना चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्ते और कोमल डंडियों की तरकारी बनाई जा सकती है, परन्तु बहुधा फलों की ही तरकारी बनाते हैं। पत्ते पित्तनाशक, डंडी कफनाशक और फल त्रिदोषनाशक हैं। इससे पाचन-शक्ति तीव्र होती है। खांसी, ज्वर और रक्त-विकार दूर होते हैं।

(१९) फूट—इसके बीज मक्का के खेत में डाल दिये जाते हैं। लताओं में खरबूजे के आकार के फल बैठते हैं। खाने में ये बहुत ही कम मीठे होते हैं। कच्चे फल भाद्रपद में और पके हुए आश्विन-कार्तिक में मिलते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाते हैं। पके फल वैसे ही खाते हैं।

(२०) बैंगन—दो सौ मन गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा तथा दस-बारह मन राख का खाद देकर खेत तैयार कर लेने चाहिए। इसके पौधे पहले नर्सरी में तैयार किये जाते हैं। जब पौधे चार-पांच सप्ताह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के हो जायं तो उन्हें दो-दो फुट की दूरी पर क्यारियों में लगा देना चाहिए। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से तीन महीने में फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं और तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। इनकी उपज डेढ़ सौ से दो सौ मन प्रति-एकड़ हो जाती है। 'दिल्ली बटिया' लम्बा बैंगनी रंग का 'पानीरत गोल' दोनों अच्छी जातियां हैं।

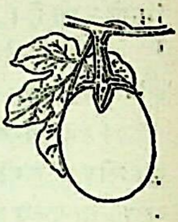

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है जो गर्म, वीर्य-वर्धक और कफनाशक होती है।

(२१) भिण्डी रामतरोई—इसके लिए लगभग १५० मन गोवर का खाद प्रति-एकड़ डालकर खेत तैयार कर लेना चाहिए। इसके बीज बोये जाते हैं। बरसात में बोई जानेवाली की कतारों में दो फुट का, माघ में बोई जानेवाली में एक फुट का और पौधों में एक फुट नौ इंच का अन्तर अच्छा होगा। बोने के समय से दो-ढाई महीने में फल मिलने लग जाते और तीन-चार महीने तक मिलते रहते हैं। बीज के लिए चुने हुए फल ही रखने चाहिए। बरसातवाली फसल से एक सौ मन और माघवाली से ५०-६० मन फल प्रति-एकड़ मिल जाते हैं। 'सबोर सेलेक्शन' जल्दी आने-वाली अच्छी जाति है जिसे माघ में बोना चाहिए। 'पूसा मखमली' भी अच्छी जाति है। इसकी भिंडियां सात-आठ इंच लम्बी होती हैं और यह बरसात और गर्मी दोनों मौसमों में उगाई जा सकती है।

उपयोग और गुण—फलों की तरकारी बनाई जाती है। इन्हें गोल काटकर सुखा करके भी रख सकते हैं। स्वाद नष्ट नहीं होता। भिण्डी भारी, चिकनी, कफकारक और बलवर्धक होती है।

(२२) मिर्च—लगभग १५० मन गोवर का खाद देकर भूमि तैयार करके क्यारियां बनाकर उनमें रोप लगाये जाते हैं। बीज नर्सरी से गिराकर रोप तैयार करने चाहिए। पौधों में डेढ़ फुट का अन्तर काफी होगा। जब फूल आने लगें तब पानी

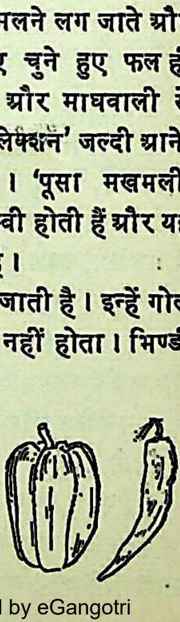

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ कम देकर फिर जब फल बैठ जायं तो अच्छा पानी देना चाहिए। रोंपने के समय से चार-पांच महीने में मिर्चें ताड़ने-योग्य हो जाती हैं। जब मिर्चें सूखें तब उन्हें दबा देना चाहिए ताकि जगह कम लगे। अगली फसल के लिए चुनी हुई मिर्च के बीज रखना चाहिए। उपज दस-बारह मन तक हो जाती है।

मिर्च दो प्रकार की होती है। एक बड़ी, जो सब्जी के काम आती है; दूसरी छोटी, जो मसाले के काम आती है।

उपयोग और गुण—हरी मिर्च की सब्जी बनाई जाती है। इनका अचार भी बनता है। इनसे तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। मिर्च क्षुधा-वर्धक, उत्तेजक और कफनाशक होती है।

(२३) मोगरी—सवा सौ मन के लगभग गोबर का खाद और दो मन हड्डी का चूरा मिलाकर खेत तैयार करके इसके बीज कतारों में बोने चाहिए। कतारों में डेढ़ फुट का और पौधों में एक फुट का अन्तर काफी होगा। आवश्यकतानुसार निंदाई-सिंचाई करते रहने से दो महीने में फलियां आना शुरू होकर दो-एक महीने तक फल मिलते रहते हैं। कोमल फलियों को सुखाकर भी रख सकते हैं।

उपयोग और गुण—स्वाद मूली की फलियों के जैसा होता है। इन्हें कच्ची भी खा सकते हैं और सब्जी भी बना सकते हैं। यह पाचक और दस्तावर होती है।

(२४) रैंता, ककड़ी—खरबूजे की खेती की भांति नदी में खेत तैयार कर खेती की जाती है। इसके बीज माघ-फाल्गुन में तीन-तीन फुट की दूरी पर बोये जाते हैं। वैशाख-जेष्ठ में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—हरी ककड़ियां कच्ची खाई जाती हैं और इनकी तरकारी भी बनाई जाती है। दूसरी फसल के लिए पकी हुई ककड़ी के बीज रखने चाहिए। ये शीतल और हलकी होती है।

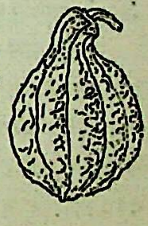

(२५) खबाश—इसका फल नाशपाती के आकार का, पपीते-जितना बड़ा होता है। इसकी दो जातियां होती हैं। एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गर्मी में फलनेवाली, दूसरी सर्दी में पहाड़ों पर ही होती है। खेती तोरी की खेती के समान करनी चाहिए।

५. दलहन की तरकारियां

(क) वे जिनकी फलियां तरकारी के काम में आती हैं।

(ख) वे जिनके बीज काम में आते हैं।

इनके लिए दुमट जमीन उत्तम होती है। खाद फासफेट का (हड्डी का चूरा या सुपरफासफेट) लगभग तीन मन अवश्य देना चाहिए। गोबर का खाद लगभग एक सौ मन मिल जाय तो अच्छा है।

(क) (१) ग्वार Guar or cluster beans (पृष्ठ १७६); (२) चंवली, बरवटी, बोरा (पृष्ठ १८०); (३) बीन फ्रेंच French bean *Phaseolus vulgaris*; (४) बीन ब्राड Broad bean *Vicia Faba*; (५) बीन लाइमा Lima bean *Phaseolus lunatus*; (६) बीन स्कारलेट रनर Scarlet runner bean *Phaseolus coccineus*; (७) सेम वालोर Sem (पृष्ठ १८८); (८) सेम उदा *Mucuna capitata*; (९) सेम कमच *mucuna nivea*; (१०) सेम चारकोनी Goa bean *Psophocarpus tetragonolobus*; (११) सेम रहरिया Velvet bean *mucuna sp.* (ख); (१२) किराओ (पृष्ठ १७४); (१३) चना Gram (पृष्ठ १७८); (१४) तूर, अरहर Pigeom *Cajanus cajan* (पृष्ठ १८१); (१५) मटर Peas (पृष्ठ १८४); (१६) सोयाबीन Soybean (पृष्ठ १८७)।

चूंकि उन तरकारियों का जिनके सामने पृष्ठ दिये गए हैं पहले वर्णन हो चुका है, अतः यहां पर शेष की खेती का वर्णन दिया जाता है।

(३) बीन फ्रेंच—इसकी दो जातियां होती हैं। एक के पौधे डेढ़ फुट के लगभग और दूसरी के पांच-छः फुट ऊंचे होते हैं। दूसरे के लिए सहारे का प्रबन्ध करना होता है। छोटे पौधेवाली जाति डेढ़ फुट के अन्तर पर पारियां बनाकर उनपर छः-छः इंच की दूरी पर, भाद्रपद से आश्विन तक,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोनी चाहिए। ऊंचे पौधेवाली के लिए पारियों की दूरी दो-ढाई फुट कर देनी चाहिए। छोटे पौधेवाली जाति से ढाई-तीन महीने में और बड़ीवाली से चार-पांच महीने में फल मिलने लग जाते हैं।

(४) बीन ब्रॉड—यह भी दो जाति का होता है। एक की फलियां छः इंच और दूसरे की तीन इंच लंबी होती हैं। इन्हें आश्विन-कार्तिक में पानी की नालियां बनाकर उनके दोनों ओर नौ से बारह इंच की दूरी पर बोना चाहिए। नालियां तीन-तीन फीट की दूरी पर हो सकती हैं। बोने के समय से चार-पांच महीने में फलियां मिलना प्रारम्भ हो जाता है।

(५) बीन लाईमा—इनकी फलियों की नोक मुड़ी हुई होती है। खेती फ्रेंच बीन की खेती के समान।

(६) बीन स्कारलेट रनर—फ्रेंच बीन के बड़े पौधों की खेती के समान।

(७) उवा, (८) कमच—इनकी फलियों पर रोएं होते हैं जो छूने से मखमल-से मालूम होते हैं। इनको हटाकर तरकारियां बनाते हैं। इन्हें वर्षाऋतु के प्रारम्भ में बोते हैं। बीज पंक्तियों में छः-छः इंच की दूरी पर बोने चाहिए। इनकी लताओं के लिए सहारे का प्रबन्ध उत्तम होता है। बोने समय से पांच-छः महीने में तरकारी के लिए फलियां मिल जाती हैं।

(९) सेम चारकोनी—यह भी एक प्रकार की सेम है जिसकी फलियां चपटी या गोल न होकर चौकोनी होती हैं। इसकी खेती सेम की खेती के समान करनी चाहिए। लताएं छप्पर पर चढ़ा देने से फलियां मिलती रहती हैं।

(१०) रहरिया सेम—इनकी फलियों पर भी रोएं होते हैं। आश्विन-कार्तिक में अठारह इंच की दूरीवाली पंक्तियों में एक-एक फुट की दूरी पर बोना चाहिए। फाल्गुन से चैत्र तक इनसे तरकारी मिलती रहती है।

६. अन्य तरकारियां

अन्य तरकारियों में केला, पपीता आदि फलों की खेती का वर्णन आ सकता है; परन्तु चूंकि इनका वर्णन फलों की खेती के स्तम्भ में दिया गया है अतः यहां पर सिर्फ उन्हीं का वर्णन है, जिन्हें किसी स्तम्भ में स्थान नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मिल सका।

(१) धरतीफूल, छत्रक, धरतीफोड़, मशरूम (Mushroom *Agaricus Campestris*)—बरसात में खाद की ढेरी पर या भूमि में सफेद, भूरा या गुलाबी रंग का पौधा निकल आता है उसे अंग्रेजी में मशरूम और हिन्दी में धरतीफूल या छत्रक कहते हैं। इसे पंजाब में अधिक पसन्द करते हैं। इसकी खेती तलघर या अंधेरे घर में अच्छी होती है। जिस घर में लगाना हो उसमें मिट्टी और लीद की तहें देकर उन्हें नौ-दस इंच की ऊंचाई तक बनाकर आखिरी तह मिट्टी की देनी चाहिए। इस घर में तरी काफी रहनी चाहिए। इस प्रकार तैयारी की हुई ढेरी पर मशरूम के स्पान[1] के टुकड़े बिखेरकर मिट्टी में मिला देने चाहिए। सात-आठ सप्ताह में छत्रक निकल आते हैं और दो महीने तक तरकारी के योग्य मिलते रहते हैं। ऐसे घर में ७०-७५ शतांश तक तरी बनी रहे, इसलिए पानी छींटते रहना चाहिए। मशरूम की तरकारी दस्तावर और कफनाशक होती है।

नोट—स्मरण रहे कुछ मशरूम जहरीले होते हैं। जो मशरूम पकाने पर पीला हो जाय, वह जहरीला होता है। तोड़ने पर जो नीला रंग दे उसे कभी नहीं खाना चाहिए।

(२) सहजन (Drumstiks *Moringa oleifera)* इसके खेत नहीं लगाये जाते। एक-दो पेड़ बगीचों में लगा देने से कई वर्षों तक फल मिलते रहते हैं। इसकी एक जाति बारहमासी होती है और दूसरी माघ-फाल्गुन में फूल और चैत्र-वैशाख में फल देती है। इसके लगाने की सरल रीति यह होगी कि दो फुट गहरा गढ़ा खोदकर उसकी मिट्टी में आठ-दस सेर गोबर, पत्ते की खाद और एक-दो सेर हड्डी का चूरा मिलाकर भर देना चाहिए। फिर बरसात में किसी अच्छे पेड़ की डाली काटकर लगा देनी चाहिए। डाली लगाने के तीसरे साल से ही कुछ फल मिलने लग जाते हैं, जिनकी तरकारी बन सकती है।

---

[1] स्पान (spawn) लीद, गोबर और मिट्टी में छत्रक मिलाकर सुखा करके कई दिनों तक रख सकते हैं। जहां लगाना हो, ऐसा स्पान लगाना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसके पत्ते, फूल और फल तीनों की तरकारी बनती है। फल गर्म और रूखे होते हैं।

(३) सिंघाड़ा (Waternut *Trapa bispinosa*)

यह तालाब या पोखरों में जहां पानी भरा रहता है पैदा किया जाता है। बरसात के आरम्भ में इसके फल पांव से दबाकर मिट्टी में गाड़ दिये जाते हैं जिनसे शाखाएं निकलती हैं और पत्ते पानी पर तैरते हुए नजर आते हैं। आश्विन में फूल और कार्तिक में फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं। मार्गशीर्ष तक सब फल चुन लिये जाते हैं। फल छोटी-छोटी नौकाओं में जाकर तोड़ते हैं या किसी लकड़ी के छोटे टुकड़े पर उलटे घड़े बांधकर उससे नौका का काम लेते हैं। फल तोड़नेवाला दोनों पैर लटकाकर इस लकड़ी पर चढ़ जाता है और एक हंडिया साथ ले जाकर उसमें फल तोड़-तोड़कर रखता जाता है।

७. मसाले

बिना मसाले के तरकारियां स्वादिष्ट नहीं होतीं इसलिए यहां पर कुछ मसालों की खेती का वर्णन भी दिया जाता है।

१. हल्दी Turmeric *Curcuma domestica (longa)*; २. अदरक Ginger *Zinjiber officinalis*; ३. धनिया Goriander *Coriadrum sativum*; ४. पोदीना Mint *Mentha arvensis*; ५. सफेद जीरा Cumin *Cuminum cyminum*; ६. स्याह जीरा Carraway *Carum carvi*; ७. कलौंजी मंगरैला Black cumin *Nigella sativa*; ८. अजवायन Ajwan *Trachys Permumammi* (*Carum copticum*); ९. सौंफ Aniseed *Pimpinella anisum*; १०. सौंफ बड़ी Fennel *Foeniculum vulgare*; ११. सोआ Dill *(Peucedanun graveolens.*; १२. छोटी इलायची Cordamoms *Elettaria cordamomum*; १३. बड़ी इलायची *Amomum subulatum*; १४. सेलेरियाक Celariae *Apium graveolens*; १५. सेवारी Savory *Saturie hortensis*; १६. काली मिर्च Pepper *Piper*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

nigrum; १७. लौंग Clove *Syzyium* (Eugenia) aromaticum; १८. दालचीनी Cinamomum *Cinamomum Zeylanicum*; १९. तेजपात Tejpat *Tumola obtusifolia*.

(१) **हल्दी**—बलुआ-दुमट जमीन में लगभग दो सौ मन खाद देकर अच्छी जुताई के पश्चात् डेढ़-दो फुट की दूरी पर पारियां बनाकर उनपर वर्षारम्भ के समय एक-एक फुट के अन्तर पर हल्दी की गाठें लगानी चाहिए। इसे क्यारियों में भी बो सकते हैं। निंदाई के समय पौधों पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए। सिंचाई की जहां आवश्यकता हो करनी होगी। माघ-फाल्गुन तक हल्दी तैयार हो जाती है। जब पत्ते सूख जायं तो हल्दी खोद लेनी चाहिए। उपज बीस-पच्चीस मन सूखी हल्दी की हो जाती है।

बीज के लिए जो गांठें रखी जाती हैं उन्हें ठंडे हवादार मकान में गाड़कर रखना चाहिए।

हल्दी को सुखाना—खोदी हुई हल्दी को पानी के साथ उबालकर पकाते हैं। बाद में सुखाकर बोरे के टुकड़ों से घिसकर ऊपर का छिलका निकाल देते हैं। छिलका मशीनों से भी छुड़ाया जा सकता है।

उपयोग और गुण—तरकारियों और दाल में रंग लाने के लिए किया जाता है। गर्म जल के साथ सेवन करने से पेट का दर्द शीघ्र मिट जाता है। हड्डी को जोड़ने, घाव भरने और शरीर के रंग को साफ करने के गुण भी इसमें हैं।

(२) **अदरक**—हल्दी की भांति खाद देकर भूमि तैयार करने के बाद क्यारियां बना लेनी चाहिए जिनमें वर्षारम्भ के समय अदरक के छोटे-छोटे टुकड़े एक फुट की दूरी वाली कतारों में लगाये जाते हैं। कतारों में पौधों का अन्तर आठ-नौ इंच का रहे इस हिसाब से टुकड़े लगाने चाहिए। लगाने के पश्चात् पत्तों से ढक देना चाहिए। भारी मिट्टी में क्यारियों में न लगाकर पारियों पर लगाना चाहिए। इसकी फसल भी माघ-फाल्गुन तक तैयार हो जाती है। दूसरी फसल के लिए हल्दी की गांठों की भांति अदरक ठंडे हवादार मकान में गाड़कर रख सकते हैं।

सोंठ बनाना—चुनी हुई गांठें धोकर साफ पानी में डाली जाती हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ग्रौर जब छिलका ठीक से गल जाता है तो मिट्टी के बर्तन के टुकड़ों से घिसकर निकाल दिया जाता है ग्रौर हवा में सुखाते हैं। इसी भांति फिर से एक बार ग्रौर पानी में डालकर ग्रौर छिलके निकालकर सुखाते हैं।

उपयोग ग्रौर गुण—ग्रदरक से चटनियां ग्रौर तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। इसका नीबू के रस के साथ ग्रचार भी बनता है। सर्दी, बुखार, खांसी इत्यादि रोगों में इसका सेवन ग्रच्छा होता है।

३. धनिया—प्रति-एकड़ सौ-सवा सौ मन खाद दी हुई भूमि में इसे चटनी के लिए कभी भी बो सकते हैं; परन्तु जहां बीज लेना हो, वहां ग्राश्विन-कार्तिक में क्यारियों में छींटकर बोना चाहिए। जहां बिना सिंचाई के उपजा सकते हैं वहां खेतों में कतारों में बो देना चाहिए। बीजवाले पौधों को जहां छींटकर बोया जाय वहां छंटनी करके उनमें लगभग नौ इंच का ग्रन्तर कर देना चाहिए। चटनी के लिए तो पौधे एक महीने में तैयार हो जाते हैं, परन्तु पके हुए बीज के लिए चार-पांच महीने लगते हैं। प्रति एकड़ चार-पांच मन बीज हो जाते हैं।

उपयोग ग्रौर गुण—छोटे पौधे चटनी बनाने के काम ग्राते हैं। इनसे तरकारियां भी स्वादिष्ट की जाती हैं। सूखे धनिये का उपयोग मसाले के लिए होता है। हरा धनिया पित्तनाशक है, सूखे का चूर्ण मिश्री के साथ खाया जाय तो बल बढ़ाता है ग्रौर मस्तिष्क को तरी पहुंचाता है।

४. पोदीना—इसे जब चाहे लगा सकते हैं परन्तु कार्तिक में लगाना ग्रच्छा होता है। इसकी शाखाग्रों के टुकड़े जिनके साथ कुछ जड़ें हों, क्यारियों में छः-छः इंच की दूरी पर लगा देने चाहिए। एक बार लगा देने से कई वर्ष तक लगे रहते हैं पर कार्तिक में स्थानान्तरित करना उत्तम होता है। ग्रावश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मी के दिनों में इनकी बाढ़ ग्रच्छी होती है ग्रौर इनसे चटनी बनाते हैं। पोदीना ठंडा ग्रौर साफ पेशाब लानेवाला होता है। पाचन-शक्ति तीव्र करता है। हैजे के दिनों में इसका विशेष सेवन करना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५. सफेद जीरा—दुमट और बलुआ-दुमट, जिसमें इससे पहले वाली फसल को खाद दिया हो उनमें एक-एक फुट की दूरी पर पंक्तियों में जीरा आश्विन-कार्तिक में बोते हैं। जहां आवश्यकता हो सिंचाई करनी चाहिए। एक एकड़ के लिए छः-सात सेर जीरा बोना होगा। इसकी फसल फाल्गुन-चैत्र में तैयार होती है। एक एकड़ से चार-पांच मन जीरा मिल जाता है।

उपयोग और गुण—बीज से तरकारियां और चटनियां सुगन्धित की जाती हैं। जीरा पाचक, कफनाशक, ज्वरनाशक और गर्म होता है। भून-कर दही के साथ खाने से पेचिश में लाभ पहुंचाता है।

६. स्याह जीरा—खेती सफेद जीरे की भांति की जाती है। इसके बीज गरम मसाले में डाले जाते हैं। यह पाचक, गरम और बादी हरनेवाला होता हैं।

७. कलौंजी, मंगरैला—जीरे की भांति खेत तैयार करके आठ सेर प्रति एकड़ के हिसाब से इसके बीज क्यारियों में आश्विन-कार्तिक में बोने चाहिए। पंक्तियां डेढ़ फुट के अन्तर पर रखनी चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार करते रहने से इसकी फसल चैत्र-वशाख में तैयार होती है। तरकारी और नम-कीन पदार्थों को स्वादिष्ट करने तथा आचार इत्यादि में इसे डालते हैं। ऊनी कपड़ों में इसके बीज रक्खे जायं तो उन्हें कीट से हानि नहीं होती।

८. अजवायन—मटियार-दुमट या दुमट जमीन में कार्तिक में पांच-छः सेर प्रति-एकड़ के हिसाब से इसके बीज छींटकर या कतारों में बोने चाहिए। पंक्तियां एक फुट के अन्तर पर होनी चाहिए। पौधे छः-छः इंच की दूरी पर रखना उत्तम होगा। फाल्गुन तक फसल तैयार हो जाती है और प्रति एकड़ तीन-चार मन बीज प्राप्त हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—नमकीन पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं। इसके सत (Thymol) का उपयोग औषधि के लिए होता है। पेट का दर्द इससे बड़ी जल्दी छूटता है। अजवायन पाचक, दस्तावर और वातनाशक है।

९. सौंफ—बलुआ को छोड़कर किसी भूमि में जिसमें लगभग डेढ़ सौ मन प्रति-एकड़ खाद दिया हो, आश्विन-कार्तिक में चार-पांच सेर बीज प्रति एकड़ के हिसाब से कतारों में बोने चाहिए। कतारों का अन्तर डेढ़ फुट का उत्तम होगा। कतारों में भी पौधों को डेढ़-डेढ़ फुट के अन्तर पर कर देना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। चैत्र-वैशाख तक फसल तैयार हो जाती है।

उपयोग और गुण—इसका सत औषधि के काम आता है। इससे गर्मी के दिनों में शरबत भी बनाते हैं। पेचिश में इसके उपयोग से विशेष लाभ होता है।

१०. बड़ी सौंफ—सौंफ की खेती के समान ही है। चूंकि पौधे उससे बड़े होते हैं अतः पौधों के बीच का अन्तर कुछ अधिक रखना चाहिए।

११. सोआ—दुमट जमीन में दस सेर बीज प्रति-एकड़ के हिसाब से पंक्तियों में बोने चाहिए। पंक्तियां एक-एक फुट की दूरी पर होनी चाहिए। पौधों के बीच का अन्तर नौ इंच का उत्तम होगा। चैत्र-वैशाख तक बीजवाली फसल तैयार हो जाती है। उपज आठ-दस मन तक हो जाती है।

उपयोग और गुण—पत्तियां शोरबे और तरकारियों में डाली जाती हैं। बीज से तेल निकाला जाता है जो औषधि के काम आता है। पेट के दर्द में बीज का उपयोग लाभप्रद होता है।

१२. छोटी इलायची—इसकी खेती मलाबार और मैसूर में होती है। पौधे हल्दी के पौधे-जैसे होते हैं। तीन हजार से पांच हजार फुट की ऊंचाई के पहाड़ों पर जंगलों में कुछ जमीन साफ करके लगाते हैं। मैसूर में पान का बाड़ी में भी लगा देते हैं। इसे बीज से पैदा कर सकते हैं, परन्तु बहुधा पांच-छः फुट की दूरी पर इसकी दो-तीन गांठें एक साथ लगाते हैं। इलायची के पौधे तीसरे साल से फलना प्रारम्भ होते हैं परन्तु अच्छी फसल छठे साल से होती है। प्रति-एकड़ लगभग डेढ़ मन इलायची मिल जाती है। जब फल पक जाते हैं तब काट लिये जाते हैं।

उपयोग और गुण—मिष्टान्न सुगन्धित करने, मुख-शुद्धि और औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इससे कफ और पित्त के विकारों का दमन होता है, पाचन-शक्ति तीव्र होती है।

१३. बड़ी इलायची—इसकी जन्मभूमि नेपाल है। उत्तरप्रदेश की तराई के भागों में भी यह पाई जाती है। इसके फल भूरे रंग के तिकोनिये होते हैं। फल गर्मी में तोड़े जाते हैं। सस्ते मिलने के कारण इलायची की जगह इनका उपयोग भी होता है। गरम मसाले में यही इलायची डाली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाती है।

१४. सेलेरिएक—बीज पहले नर्सरी में गिराकर जब पौधे दो-तीन इंच ऊंचे हो जायं, तब एक-एक फुट के अन्तर पर खेतों में लगा देते हैं। सिंचाई आवश्यकतानुसार होनी चाहिए।

उपयोग और गुण—पत्तों से तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं और डंडी की सलाद बनाते हैं।

१५. सेवारी—आश्विन-कार्तिक में इसके बीज बोये जाते हैं। पौधों में दो फुट का अन्तर रखना चाहिए। पत्ते सुखाकर भी रखे जा सकते हैं। इसके सुगन्धित पत्तों से खाद्य-पदार्थ और सलाद सुगन्धित किये जाते हैं।

१६. काली मिर्च—पान के पत्ते के आकार के समान पत्तेवाली इसकी लता बहुवार्षिक होती है। फल पचीस-तीस की संख्या में पतली लता पर लगे रहते हैं। पकने पर लाल और सूखने पर काले हो जाते हैं। इसका छिलका निकालकर सफेद भी करते हैं। भारतवर्ष में मलाबार और कोचीन में इसकी खेती होती है। बरसात में लताओं के टुकड़े लगाकर लता टट्टियों पर अथवा आम, काजू या कटहल के पेड़ों पर चढ़ा दी जाती है। यहां यह भी फलती रहती है और पेड़ भी फलते रहते हैं। लगाने के बाद तीसरे साल से कुछ फल मिलते हैं। अच्छी फसल छठे साल से पचीस-तीस साल तक आती रहती है। ज्योंही फल पकते हैं, उन्हें तोड़कर सुखा लेते हैं, जिनसे उनपर झुर्रियां पड़ जाती हैं। प्रतिवर्ष चैत्र से ज्येष्ठ तक फल तोड़े जाते हैं।

उपयोग और गुण—तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। पापड़, अचार आदि में इसे डालते हैं। यह तीक्ष्ण, पाचक क्षुधावर्धक और कृमिनाशक होती है।

१७. लौंग—इसका पेड़ तीस-चालीस फुट ऊंचा होता है। खेती दक्षिण भारत में होती है। इसके लिए बलुआ-ढालू जमीन उत्तम होती है। इसके बीच पांच-छः सप्ताह में अंकुर फेंकते हैं। जब पौधे एक-दो फुट ऊंचे हो जाते हैं तो उन्हें पन्द्रह-बीस फुट की दूरी पर लगा देते हैं। सात-आठ साल की आयु से फल देना आरम्भ करके पचास-साठ साल की आयु-पर्यन्त फल देते रहते हैं। एक पेड़ से प्रतिवर्ष चार-पांच सेर लौंग प्राप्त किये जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

माघ-फाल्गुन में फूलों की बिना खिली कलियां डण्ठल-सहित तोड़ ली जाती हैं। वे जब सूख जाती हैं तो लौंग बन जाती हैं।

उपयोग और गुण—लौंग का उपयोग मसाले और औषधि के लिए किया जाता है। ये पाचक और अग्निवर्धक होती हैं। सिर-दर्द, दांत के दर्द तथा गठिया-वादी में इसके तेल से लाभ पहुंचता है।

१८. दालचीनी—यह भी मलाबार में होती है। इसे बीज और कलम दोनों से पैदा करते हैं। इसके पेड़ तीस-चालीस फुट से लेकर पचास-साठ फुट ऊंचे होते हैं। इसे लगाने के लिए दस-दस फुट की दूरी पर पतले-पतले गुच्छे लगाये जाते हैं जिनमें से-दो-दो साल की आयुवाले पेड़ काटते रहते हैं। इन काटे हुए पेड़ों पर डेढ़-दो फुट की दूरी पर छाल की गहराई तक कटाव कर देते हैं और लम्बे चीरे देकर छाल छुड़ा ली जाती है।

उपयोग और गुण—तरकारियों को स्वादिष्ट करने तथा औषधि के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इससे तेल भी निकाला जाता है। एक मन छिलकों से करीब तीन छटांक तेल निकलता है। दालचीनी तीक्ष्ण और गर्म होती है। सिर-दर्द में इसके तेल से लाभ पहुंचता है।

१९. तेजपात—इसके पेड़ आसाम और पूर्वीय हिमालय के अधिक वर्षावाले स्थानों में होते हैं। इसकी छाल भी कुछ अंश तक दालचीनी का काम देती है; परन्तु अधिकतर पत्ते ही मसाले के काम आते हैं। बीज गिरने से पेड़ों के नीचे जो पेड़ निकल आते हैं, उन्हें ही आठ-दस फुट की दूरी पर लगा देते हैं, वैसे नर्सरी में भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं। पौधे लगाने के समय से छः साल में पत्ते तोड़ने योग्य पेड़ होते हैं और कार्तिक से फाल्गुन तक पत्ते तोड़ते रहते हैं। एक पेड़ से लगभग पन्द्रह सेर पत्ते प्रतिवर्ष मिल जाते हैं। पेड़ की आयु पचास से एक सौ वर्ष तक मानी गई है।

उपयोग और गुण—तेजपात के पत्तों का चूर्ण गरम मसाले में डाला जाता है। यह पाचक, उत्तेजक, अधिक पेशाब लानेवाला तथा ज्वरनाशक होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौथा खण्ड

फलों की खेती

१. सफलता के आधार

भारत-जैसे शाकाहारी देश को प्रकृति ने ऐसी जलवायु दे रखी है कि यहां पर थोड़े से ही परिश्रम से चाहे जिस प्रकार के फल उपजाये जा सकते हैं। स्वास्थ्य के विचार से फलों का सेवन एक विशेष स्थान रखता है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाय तो पहले पांच-सात साल के अच्छे परिश्रम से और बाद में थोड़ी देखभाल से बंधी-बंधाई वार्षिक आय हो सकती है। इनके लिए नगरों से कुछ दूर भूमि हो तो भी अच्छा है।

फलों की खेती में सफलता प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित विषयों पर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

फलों के लिए भूमि का चुनाव—(१) फलों की खेती के लिए ऐसी भूमि चुननी चाहिए जिसमें पानी न लगता हो—बरसात में बाढ़ का पानी न भर जाय—और भूमि के जल की सतह (Water table) कम-से-कम दस फुट से नीचे हो।

(२) फल ऐसे चुनने चाहिए, जिन्हें आपके स्थान की जलवायु अपना सके।

(३) सिंचाई का भी प्रबन्ध हो, क्योंकि कुछ फलों को पानी देना ही पड़ता है; और दूसरी बात यह है कि फलों के बगीचे में कुछ सागभाजी भी उपजाना लाभप्रद होती है।

(४) एक निर्धारित योजना बना लेनी चाहिए कि हमें अमुक-अमुक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फलों की खेती करनी है, क्योंकि इसमें बार-बार इच्छानुसार हेरफेर सम्भव नहीं है।

(५) जहां तक सम्भव हो, मालिक के रहने का स्थान बगीचे की भूमि में ही हो; क्योंकि 'मालिक की आंख नौकर के हाथ से अधिक काम करती है।'

फलों के वृक्षों के वर्ग—फलों के वृक्षों को हम तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं :

(१) पचीस-तीस फुट से अधिक ऊंचाईवाले वृक्ष जिनके नीचे पशु घूम सकें या विश्राम कर सकें और वृक्षों को हानि न पहुंचा सकें, बल्कि उनके उठने-बैठने से उनके गोबर और मलमूत्र से वृक्षों को खाद मिल जाय। ऐसे फलों में आम, कटहल, जामुन, लीची आदि की गणना है।

(२) दूसरे वर्ग में हम उन फलदार पेड़ों को स्थान देंगे जिनकी ऊंचाई दस-पन्द्रह फुट से लेकर बीस-पचीस फुट तक हो। जैसे आड़ू, सन्तरा, अमरूद, पपीता, कलमी आम इत्यादि। ऐसे पेड़ों में खाद प्रतिवर्ष देना होता है और सिंचाई भी करनी होती है। किसी-किसीमें काट-छांट भी करनी पड़ती है।

(३) तीसरे वर्ग में उनकी गणना है, जिन्हें वृक्ष न कहकर पौधे कहा जाय; जैसे अनानास, स्ट्राबेरी, तरबूज आदि। इनमें खाद और सिंचाई के साथ जुताई का भी काम लगा रहता है।

उपर्युक्त वर्ग-निर्माण के आधार पर अलग-अलग वर्ग के पौधों को अलग-अलग स्थान देना चाहिए, ताकि उनकी देखभाल सरलता से की जाय। उन्हें आवश्यकतानुसार धूप मिल सके।

२. वृक्ष लगाने की रीतियां

निम्नलिखित चित्रों से वृक्ष लगाने की रीति का ज्ञान होगा—

(१) वर्गाकार—

(२) त्रिभुजाकार—या षट्कोणाकार—

(३) पंचवृक्षी—यानी वर्गाकार, लेकिन प्रत्येक वर्ग के बीच में एक पेड़ लगाना जो दूसरी जाति का कम आयुवाला हो। जबतक मुख्य जाति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

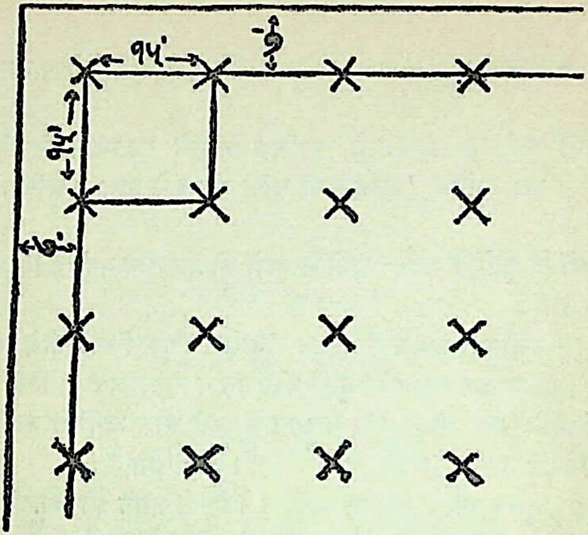

पेड़ लगाने की वर्गाकार रीति

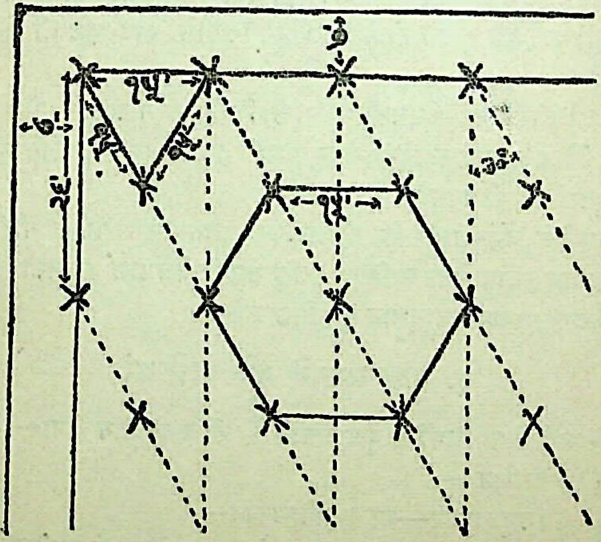

पेड़ लगाने की त्रिभुजाकार या षट्कोणाकार रीति

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के पेड़ पूर्ण बाढ़ को पहुंचते हैं, बीचवाले की आयु समाप्त हो जाती है।

दस फुट के अन्तर पर या इससे कम दूरी पर पेड़ लगाना हो तो पहली रीति, दस से बीस फुट की दूरी के लिए दूसरी और बीस से अधिक दूरी पर लगाये जानेवाले वृक्षों के लिए तीसरी रीति उत्तम होगी।

३. घेरा

फलों में आकर्षण-शक्ति बहुत होती है। पेड़ों पर पके हुए फलों को देखकर अच्छे-अच्छे मनुष्यों का जी उन्हें तोड़ने के लिए ललचा जाता है। पशु भी काफी हानि पहुंचाते हैं। यदि दो-चार पेड़ों को खा जायं तो वर्षों की मेहनत पर पानी फिर जाता है। इसलिए फलों के बगीचे में चारों ओर घेरा अवश्य होना चाहिए। घेरे निम्नलिखित प्रकार के होते हैं:

(१) मिट्टी, ईंट या पत्थर की ऊंची दीवाल का;
(३) जीवित पौधों का जैसे मेंहदी, रामबाण, करौंदा इत्यादि का;
(४) सूखे कांटों का।

४. खाद

फलों के वृक्षों के लिए नाइट्रोजन के खाद के साथ-साथ फासफोरस और पोटेशियम का खाद भी लगता है। इसलिए गोबर के खाद के साथ एक-शतांश, अर्थात् ढाई मन गोबर के खाद में एक सेर हड्डी का चूरा अवश्य मिलाना चाहिए। प्रारम्भ में जब पेड़ों को लगाने के लिए गढ़े खोदे जायं तो उनकी दूरी और आकारानुसार तथा वृक्षों की जाति-अनुसार उन गढ़ों की मिट्टी में दस सेर से लेकर एक मन तक उपर्युक्त मिश्रण भलीभांति मिलाकर उस मिट्टी से गढ़े फिर से भर देने चाहिए। भारत की भूमि में पोटेशियम की आवश्यकता विशेष नहीं है; परन्तु चूंकि इससे फलों का आकार और उनका रंग अच्छा बनता है इसलिए उपर्युक्त मिश्रण के साथ कुछ राख मिला देनी चाहिए।

जब पेड़ लग जाते हैं और बड़े हो जाते हैं तो उनमें निम्नलिखित रीति से खाद देना चाहिए—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जितनी दूर तक पेड़ की शाखाओं का फैलाव हो उससे दो-तीन फुट की अधिक दूरी तक जड़ों का फैलाव होता है, इसलिए धड़ के पास दो-तीन फुट का घेरा छोड़कर उपर्युक्त दूरी तक आठ-दस इंच गहरी मिट्टी खोदकर उसमें खाद मिला देना चाहिए। आम-जैसे वृक्षों में जो हर दूसरे साल फलते हैं खाद उस साल देना चाहिए जिस साल पत्ते फूटते और फल नहीं आते। खाद देने के पश्चात् पानी दे देना चाहिए।

५. वनस्पति-संवर्धन

कलमें लगाना—फलों के बगीचेवालों को कलमें लगाने की कला भी जाननी चाहिए। कलमों द्वारा जो पौधे तैयार किये जाते हैं, वे जल्दी फलते हैं और उनमें गुण-परिवर्तन भी नहीं होता। कलमें लगाने की कई रीतियां हैं और अलग-अलग जाति के पौधों के लिए अलग-अलग हैं। इसलिए उनका वर्णन यहां पर संक्षिप्त रूप में दिया जाता है। विशेष जानकारी के लिए लेखक की 'फलों की खेती और व्यवसाय' देखिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वनस्पति-संवर्धन

- बीज से अर्थात् बीज नर्सरी में बोकर पौधे तैयार कर लेना अथवा सीधे निर्धारित स्थान पर बीज बो देना।
- पौधे या पेड़ों के अंग से
  - स्वाभाविक जिन्हें पौधे स्वयं तैयार कर देते हैं जैसे अनानास तथा केले के पौंच (Suckers) स्ट्रावेरी काटोटा (Offset) रामबाण में बलबिल (Bulbils)
  - कृत्रिम
    - एक वृक्षी (पेड़ के अंग को लगाना)
      १. डाली लगाना, Cutting
      २. दाब कलम Layering
      ३. अंटा बांधना Gooty
    - द्वि-वृक्षी (दो पेड़ों के अंग के मेल से)
      - स्वजातीय
      - विजातीय
        १. चश्मा चढ़ाना Budding
        २. भेट कलम Inarching
        ३. कलम बिठाना Grafting

स्वाभाविक कलमों से पौधे लगाने के लिए पौंच, टोटा व बलबिल को मुख्य पौधों से अलग करके लगा देते हैं।

डाली लगाना—किसी अच्छे पेड़ की एक साल की आयु की डाली काटकर उसे भूमि में लगा देना। यह बहुधा वर्षा ऋतु में लगाई जाती है। कलम की लम्बाई नौ-दस इंच और प्रत्येक कलम में चार-पांच आंख होनी चाहिए, जिनमें से दो मिट्टी के अन्दर और तीन बाहर रहें और वे भी ऊपर-नीचे की ओर नहीं, बल्कि बाजू में रहें। नासपाती, अंजीर आदि की कलमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसी रीति से लगाई जाती हैं।

दाब कलम—इसमें एक साल की आयु की टहनी को झुकाकर उसके बीच के भाग को थोड़ा छीलकर मिट्टी में या गमले में दबा देते हैं। फिर पानी देते रहने से कटे हुए भाग की जगह से एक-दो महीने में जड़ें फेंक कर

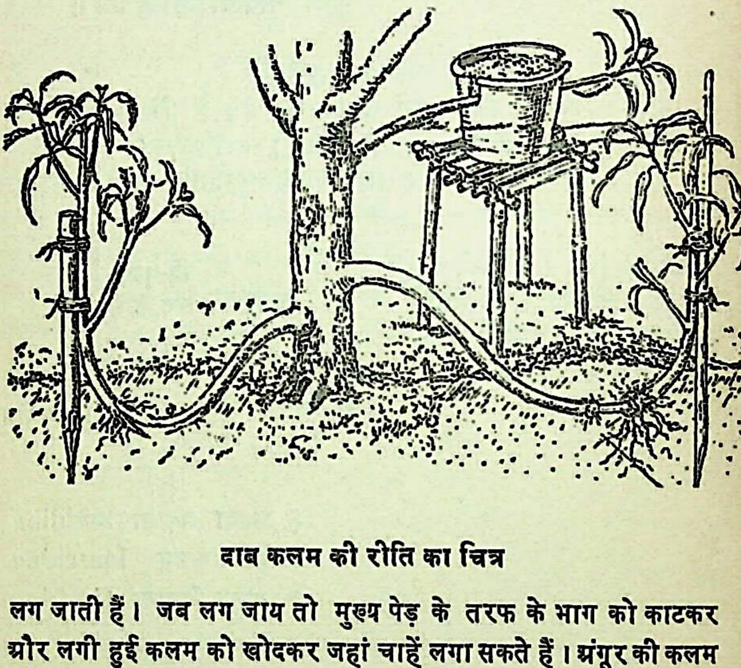

दाब कलम की रीति का चित्र

लग जाती हैं। जब लग जाय तो मुख्य पेड़ के तरफ के भाग को काटकर और लगी हुई कलम को खोदकर जहां चाहें लगा सकते हैं। अंगूर की कलम इसी रीति से लगाई जाती है।

अंटा बांधना—इसमें डाली पर से एक इंच लम्बाई तक की छाल छीलकर उसपर गीली मिट्टी लगाकर चट्टी से बांध देते हैं। बांधी हुई मिट्टी गीली बनी रहे, इसलिए उसपर एक हंडिया पानी की बांध देते हैं। हंडिया की पेंदी में एक छेद कर उसमें कपड़े का टुकड़ा डाल देते हैं जिसके द्वारा पानी थोड़ा-थोड़ा टपकता रहता है। लगभग दो-ढाई महीने में छीले हुए भाग की जगह पर जड़ें निकल आती हैं। फिर उस भाग को मुख्य टहनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से पृथक् कर दूसरी जगह लगा देते हैं। लीची की कलम ऐसे बांधी जाती है।

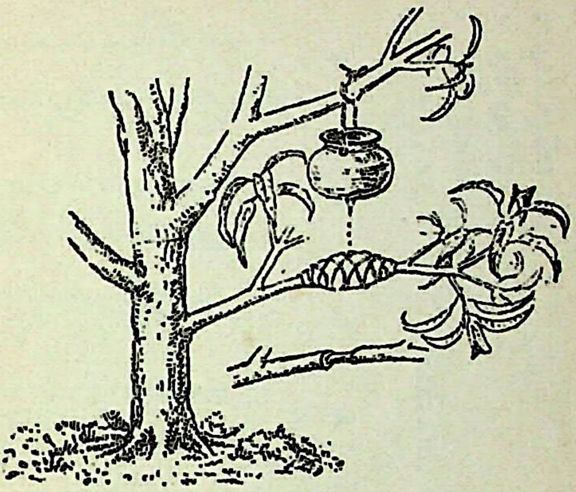

अंटा (Gooty) बांधने की रीति का चित्र

चश्मा चढ़ाना—इसमें किसी उत्तम पेड़ की टहनी की आंख निकालकर चित्र में दिखलाई हुई रीति से एक-दो साल के नये पौधे के धड़ पर चीरा देकर छाल को उठाकर उसमें बिठा देते हैं और फिर बांध देते हैं। दो-तीन सप्ताह में यह आंख चिपककर नये पत्ते दे देती है और अपना पोषण नये पौधों से करने लग जाती है। जब ठीक से कुछ पत्ते देकर जम जाय तो मूल पौधे को चश्मे के ऊपरी भाग से काट देते हैं और नये पौधे को जहां चाहें लगा सकते हैं। सन्तरे की कलमें इसी रीति से लगाई जाती हैं।

भेंट कलम—मूल पेड़ की टहनी दो इंच लम्बी एक ओर छीली जाती है। दूसरी ओर साल-डेढ़ साल की आयु के बीजू पौधे के धड़ को भी उतना ही छीला जाता है। छीलते समय इतना ध्यान रहे कि छाल ही नहीं छिले, बल्कि कुछ काष्ठ भी कट जाय। पेड़ की टहनी और बीजू पौधे का धड़ एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

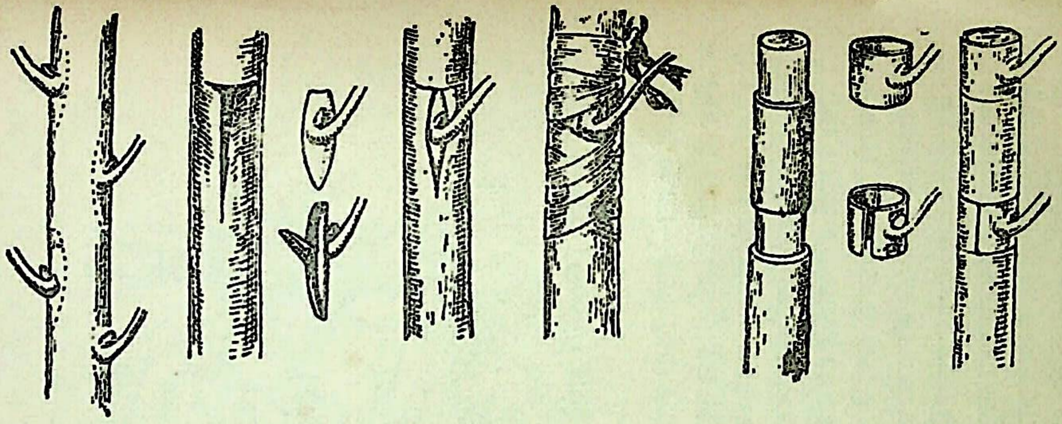

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

चश्मा लगाने की रीति का चित्र

१. चश्मा निकालने की डाली
२. बीजू पौधे का धड़
३. निकाला हुआ चश्मा
४. चश्मा लगाया हुआ पौधा
५. बांधा हुआ तैयार चश्मा
६. डाली जिसपर से ट्यूब्यूलर और रिंग चश्मे निकाले गये हैं
७. ऊपर ट्यूब्यूलर और नीचे रिंग चश्मा
८. बीजू पौधा जिसपर चश्मे चढ़ाये गये हैं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही व्यास का होना चाहिए। उन दोनों छीले हुए भागों को मिलाकर बांध देने से दो-ढाई महीने में जुड़ जाते हैं। वाद में जोड़ की जगह के नीचे से

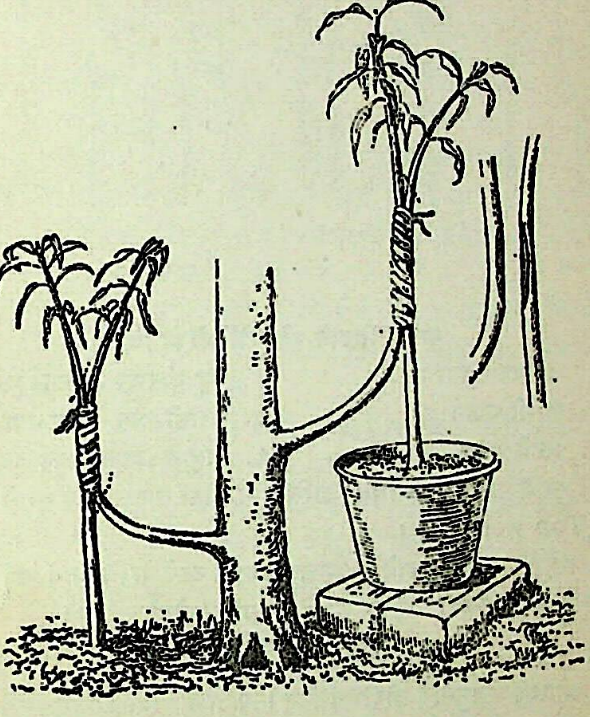

भेट कलम द्वारा कलमी पोधा तैयार करने की रीति का चित्र

मुख्य पेड़ की टहनी और बीज पौधे के बांध से ऊपर का धड़ काट देना चाहिए। ऐसा करने से बीजू पौधे पर पेड़ की टहनी लग जायगी। फिर उसे जहां लगाना हो लगा सकते हैं।

कलम बिठाना—(Grafting) बीजू पौधे के धड़ पर चीरा देकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीचे दी हुई रीति से अच्छे पेड़ की कलम काटकर बिठाना होता है। कभी-

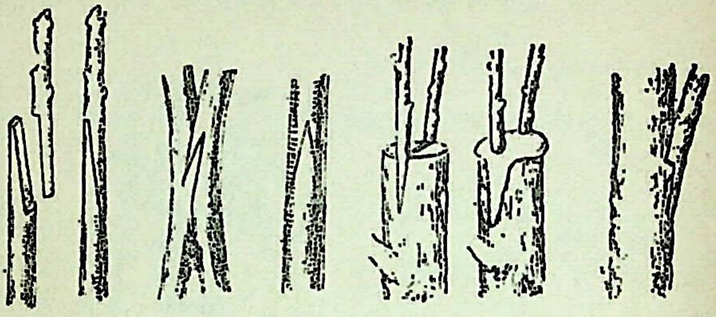

१ २ ३ ४ ५ ६

कलम बिठाने की रीतियों के चित्र

१. साधारण कलम
२. जीभी कलम
३. काठी कलम
४. धड़ चीरकर बिठलाई हुई कलमें
५. कलमी मोम डाला गया है
६. बाजू से बिठलाई हुई कलम

कभी पुराने पेड़ पर भी उसकी डालियों में चीरा लगाकर नई कलमें लगाते हैं (Top working)।

सहारा—पौधे लगाने के पश्चात् हवा से टूटने या गिरने न पावें, इसके लिए बांस या लकड़ी गाढ़कर सहारे का प्रबन्ध होना चाहिए।

६. निंदाई और सिंचाई

आवश्यकतानुसार होनी चाहिए। फलों के पौधों को सींचने के लिए उनके धड़ से कुछ दूरी पर गोल थाला बनाकर उसमें पानी देना चाहिए। ज्यों-ज्यों पेड़ बढ़ते जायं थाला भी बढ़ाते जाना चाहिए। ऐसा करते रहने से वे थाले कुछ दिनों में मिलकर पेड़ों की कतारों के बीच नालियां बना देंगे। जहां दीमक का विशेष भय हो वहां थाले गोल चक्कर के रूप में न बनाकर पेड़ों के आसपास गमलेनुमा बना देने चाहिए ताकि दीमक पानी की वजह से पेड़ की तरफ न जाकर बाहर जाय। ऐसे स्थानों के लिए नीम की खली का खाद भी उत्तम होगा। उससे दीमक कम लगेगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७. काट-छांट

फलों के पेड़ों की शाखाओं में काट-छांट भी करनी होती है। ऐसी काट-छांट जड़ों, टहनियों और फल-फूलों की भी होती है।

जड़ों की काट-छांट—कुछ पेड़ों की जड़ों को कुछ दिनों के लिए खोल-कर रखना पड़ता है, उस समय कुछ जड़ों की काट-छांट की जाती है, बाद में खाद देकर उन्हें ढक देते हैं।

टहनियों की काट-छांट—इस प्रकार की काट-कांट पेड़ों को सुन्दर आकार देने के लिए की जाती है। शाखाएं घनी हों तो वे भी काट दी जाती हैं अथवा व्याधिग्रस्त शाखाएं भी काटनी पड़ती हैं। कुछ पेड़ों से फल अधिक आयें इसलिए भी काट-छांट करनी पड़ती है।

फूलों और फलों की काट-छांट—जिन पेड़ों पर फल-फूल बहुत आयें, उनमें से जितने चाहिए उतने रखकर, शेष तोड़ दिये जाते हैं, ताकि जो रहें वे सुन्दर आकार में पनपकर बड़े हों।

किन-किन पेड़ों की काट-छांट करनी होती है यह आगे दिया गया है। यहां पर यह बतला देना ही उचित होगा कि जिन पेड़ों के पत्ते सालभर में एक बार झड़ जाते हैं, या झड़वाना अत्यावश्यक होता है, उनमें प्रतिवर्ष नई वाढ़ के प्रारम्भ होने के पहले काट-छांट हो जानी चाहिए। जो पेड़ सदा हरे-भरे रहते हैं उनमें विशेष काट-छांट नहीं करनी पड़ती।

८. फलों के शत्रु

फलों को हानि पहुंचानेवाले कीटों का वर्णन पृष्ठ ११६ से ११९ तक दिया गया है।

९. फलों का व्यवसाय

अधिकतर ऐसा होता है कि जब फल छोटे-छोटे रहते हैं, उसी समय व्यवसायी लोग बगीचों को या फलवाले पेड़ों को उस साल की फसल के लिए खरीद लेते हैं। ऐसी रीति में यह लाभ है कि फलों की रखवाली से लेकर उन्हें तोड़ने, पकाने, पार्सल या अन्य युक्तियों द्वारा वाहर भेजने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झंझट से बच जाते हैं। परन्तु जो लाभ उस फसल को खरीदनेवाला उठाता है वह कम हो जाता है। कभी-कभी आंधी, ओले वगैरा आ जाने से फल झड़ जाते हैं तो उस समय, फसल जिनके हाथ में होती है उनको, हानि उठानी पड़ती है। जो व्यक्ति फलों की बिक्री भी अपने ही हाथों करना चाहें उन्हें फल तोड़ने, पकाने और चालान की रीतियों की ज्ञान होना चाहिए।

फलों का व्यवसाय उनकी भौतिक स्थिति और स्थानान्तर करने की सुविधा पर निर्भर है। सूखे फल जैसे किशमिश, खूबानी बहुत ही आसानी से भेजे जा सकते हैं; कठोर फल जैसे हरे नारियल, कैथ, बेल इत्यादि भी सरलता से भेज सकते हैं, परन्तु सस्ते बिकने के कारण दूर नहीं भेजे जा सकते। टिकाऊ फल जैसे सेब, नासपाती, सन्तरा, आम इत्यादि अधिक मूल्यवाले होने से अच्छे पैंकिंग से ही दूर भेजे जा सकते हैं। कुछ फल, जो अपनी कोमलता के कारण एक-दो रोज़ ही रह सकते हैं—जैसे जामुन, करौंदे इत्यादि—बाहर नहीं भेजे जा सकते।

स्थानान्तर की सुविधा पर फलों का व्यवसाय निर्भर है। यदि रेल निकट हो अथवा पक्की सड़क और मोटर-ट्रक का मार्ग हो तो फल आसानी से दूर भेजे जा सकते हैं वरना निकटवर्ती बाजार में ही कम मूल्य पर बेचने होंगे।

१०. विभिन्न फलों की खेती

फलों को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं: जैसे ताज़े फल, सूखे फल और चटनी-मुरब्बा आदि के फल—

१. ताजे फल

१. अंगूर Grapes *Vitis vinifera*
२. अमरूद Guava *Psidium gujava*
३. अनानास Pine apple *Ananassa sativa*
४. अनार Pomegranate *Punica granatum*
५. आड़ू Peach *Prunus persica*
६. आम Mango *Megifera indica*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

७. ककड़ी, खीरा Cucumber *Cucumis sativus*
८. कटहल Jack fruit *Artocarpus heterophyllus*
९. कमरख Kamarakh *Averrhoa carambola*
१०. केला Plantain *Musa sapientum*
११. खजूर अरबी Dates *Phoenix dactylon*
१२. " देशी " *Phonix sylvestris*
१३. खरबूजा Melon *Cucumis melo*
१४. खिरनी Khirni *Mimosops manilkara*
१५. गुलाब जामुन *Gulab jamun Eugennia jambose*
१६. चकोतरा Pomelo *Citrus maxima*
१७. जामुन Jamun *Eugenia syzvgiun*
१८. तरबूज Water melon *Citrullus vulgaris*
१९. तुरंज Citron *Citrus medica*
२०. तैन्दू Persimmon *Diospyros kaki*
२१. दिलपसन्द Dilpasand *Citrullus var fistulosus*
२२. नासपाती Pear *Pyrus Communis*
२३. नीबू कागजी Lime *Citrus aurantifolia*
२४. नीबू जमेरी Lemon *Citrus lemon*
२५. पपीता Papaya *Carica papaye*
२६. फालसा Phalsa *Grewia asiatica*
२७. बीही Quince *Cydonia oblanga*
२८. बेर Ber *zizyphus var*
२९. वेरी गूज Goose berry *Physalis peruviana*
३०. " ब्लैक Black *Rubus fructicosus*
३१. " स्ट्रा Straw, *Fragaria vesca*
३२. बेल *Aegle marmelos*
३३. रामफल Bulocks heart *Annona reticulata*
३४. रैंता Cucumber *Cucumis var utilitimus*
३५. लीची Lichi *Litchi chinensis*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३६. लोकाट Loquat *Eriobotryo Taponica*
३७. शफतालू Nectarine *Amygdalus persica*
३८. शहतूत सफेद Mulberry *Morus alba*
काली „ „ *rubra*
३९. शरीफा Custard apple *Annona squamosa*
४०. सन्तरा मीठा Sweet orange *Citrus retiulata*
माल्टा मौसमी Malta *Citrus sinensis*
सन्तरा खट्टा Sour orange *Citrus aurantium*
४१. सपाटू, चीकू Sapatoo *Achras zapota*
४२. सिंघाड़ा Waternut *Trapa bispinosa*
४३. सेव Apple *Malus sylvestris*

सूखे फल

४४. अखरोट Walnut *Tuglans regia*
४५. अंजीर Figs *Ficus carica*
४६. काजू Cashunut *Anacardium occidentale*
४७. खूबानी Apricot *Prunus armeniaca*
४८. चिलगोजा Chilgoza *Pinus geradiana*
४९. चिरौंजी Chironji *Buchanania latifolia*
५०. नारियल Cocoanut *Cocos nucifera*
५१. पिस्ता Pistachionut *Pistacia vera*
५२. बादाम Almond *Amygdalus communis*

चटनी-मुरब्बा आदि के फल

५३. अलूचा Plun *Prunus doaestica*
५४. आलूबुखारा Plum „ *bokharensis*
५५. आंवला Anwala *Phyllanthus emblica*
५६. इमली Tamarind *Tumarindus indica*
५७. करौंदा Karaunda *Carissa carandas*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५८. कैथ Wood apple *Limonia acidissma*
५६. वाम्पी Ampeech *Cookia punelata*

उपर्युक्त सूची में से ७, १३, १८, ३४ और ४२ की खेती का वर्णन तीसरे खण्ड में दिया गया है। शेष में से जिनके पेड़ या पौधे अधिक संख्या में लगाये जाते हैं, उनके विषय में आवश्यकीय जानकरी—जैसे पौधे लगाने का समय, पौधा कैसे तैयार किया जाता है, पौधों की दूरी, फल-प्राप्ति का समय, व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने का समय सारणी के रूप में परिशिष्ट में दिया है। इनके अतिरिक्त जो विषय रह जाता है उसका वर्णन यहां दिया जाता है। उसी भांति जिन फलों के थोड़े-से पेड़ लगाये जाते हैं, उनका वर्णन सारणी में न देकर अलग ही कर दिया गया है।

१. ताजे फल

अंगूर

मोतिया, काले या बैंगनी रंग के, बीज या बिना बीज के होते हैं। खाद के लिए चार भाग सरसों या एरंडी की खली के साथ एक भाग हड्डी का चूरा मिलाकर सेर-सवा सेर प्रति-पौधा देना अच्छा होगा। अंगूर की लता के लिए सहारे की आवश्यकता होती है। जिसके लिए कहीं-कहीं पंगारा (Erythrina indica) नाम के पेड़ अंगूर की लता के पास लगा देते हैं। इन पेड़ों की जड़ें छिछली होती हैं इसलिए अंगूर की जड़ों को हानि नहीं पहुंचती। जब फल पकने लगे तब पानी कम देना चाहिए, ताकि खाद अच्छा बना रहे। जिन टहनियों से अंगूर मिल जायं, उन्हें सर्दी के दिनों में पांच-छः इंच छोड़कर आगे का भाग काट देना चाहिए। ऐसा करने से नई टहनियां निकलेंगी और उनमें अच्छे फल आयंगे। अंगूर का फल बड़ा कोमल होता है और उसे बड़ी सावधानी से पैकिंग करके भेजा जाता है। दूर भेजना हो तो बक्सों में भेजना अच्छा होगा।

उपयोग और गुण—अंगूर बलवर्धक, दस्तावर, खून को साफ करने वाले तथा खांसी और बुखार को मिटानेवाले होते हैं।

अमरूद

इलाहाबाद का सफेदा और करेला जाति के अमरूद उत्तम होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रत्येक पौधे को इस रीति से बढ़ने दिया जाय कि प्रत्येक धड़ पर से तीन-चार शाखाएं और प्रत्येक शाख पर तीन-चार उपशाखाएं रहें। अमरूद की दो बहार होती हैं। एक श्रावण से आश्विन तक और दूसरी मार्गशीर्ष से फाल्गुन तक। दूसरी में फल अधिक मिलते हैं। बहुधा लोग सर्दी की बहार को अधिक पसन्द करते हैं। इसके लिए गर्मी की फसल रोकने की उत्तम रीति यह होगी कि सर्दी के अन्त में तीन-चार बार सिंचाई करके पानी बन्द कर दें। ऐसा करने से फूल आकर झड़ जायंगे और गर्मी की फसल रुक जायगी। यदि गर्मी की फसल लेना हो तो माघ महीने में खाद देकर सिंचाई करते रहना चाहिए। जहां सर्दी की फसल लेना हो वहां वैशाख-ज्येष्ठ में जड़ें कुछ खोलकर एक शतांश हड्डी-मिश्रित खाद दे देना चाहिए।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनसे जैली या बरफी भी बनाई जा सकती है। कच्चे अमरूद कब्जकारी, लेकिन पके हुए कब्ज तोड़नेवाले होते हैं।

अनानास

बरसात के प्रारम्भ में प्रति-पौधा एक मुट्ठी सरसों, नीम या एरंडी की खली दी जाय तो बाढ़ अच्छी होती है। मछली का खाद भी इसके लिए अच्छा माना गया है। कृत्रिम खाद में सवा मन एमोनियम सल्फेट या सोडियम नाइट्रेट, ढाई मन के लगभग सुपर फासफेट और इतना ही पोटेशियम सलफेट प्रति-एकड़ देना उत्तम होगा। पके हुए फल की पहचान यह है कि जब नीचे का आधा फल कुछ रंग बदलने लगे, तब तोड़ना चाहिए।

उपयोग और गुण—अनानास का गूदा खाया जाता है जो स्वादिष्ट, बलदायक और पाचक होता है।

अनार

अनार काबुली उत्तम होते हैं, परन्तु इधर नहीं फलते। गुजरात में अहमदाबाद के पास धोलका के अनार अपनी मिठास तथा बीज की कोमलता के लिए विख्यात हैं। प्रतिवर्ष आठ-दस सेर हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद देना अच्छा होगा।

उपयोग और गुण—अनार के दानों का रस पिया जाता है। इससे शराब भी बनाते हैं। अनार ठंडा, त्रिदोष-नाशक, हृदय-रोग, दाह, ज्वर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और कण्ठ-रोग में लाभप्रद है। छिलका पेचिश की दवा में काम आता है।

आड़ू

सर्दी में जब पत्ते झड़ने लगें तब जड़ें खोलकर दस-पन्द्रह दिन बाद खाद देकर मिट्टी भर देनी चाहिए। फलों के पकने के समय पानी कम देना चाहिए।

उपयोग और गुण—इसके फल कृमिनाशक, पेट-दर्द को मिटानेवाले तथा दस्तावर होते हैं। बीज का तेल जलाने के काम आता है।

आम

आम में फल आने के पहले गोबर-पत्ता-राख-हड्डी-मिश्रित खाद उस साल देना चाहिए जिस साल पत्तों की बाढ़ हो और फल न आनेवाला साल हो। छोटे पौधों के लिए दीमक से बचाने के लिए नीम की खली का खाद काम में लाना चाहिए। सर्दी के दिनों में पाले से बचाने के लिए पांच-छः साल की आयु तक के पौधों पर साया करना चाहिए। आम की कई जातियां हैं। बिहार और उत्तरप्रदेश में आम ज्येष्ठ से भाद्रपद तक मिलते रहते हैं। कलमी आमों में मिठुआ, बम्बई, कृष्ण-भोग, माल्दा (बनारसी लंगड़ा) सिपिया, शुकुल, सिंदूरिया और भदैया क्रमानुसार पकते रहते हैं। बम्बई की तरफ कलमी आम में हापुस (Alphonso) और पायरी ज्येष्ठ-आषाढ़ (मई-जून) में और दक्षिण भारत में आम वैशाख से आषाढ़-श्रावण तक मिलते रहते हैं। अरकाट और सलेम के आम विख्यात हैं। उधर के विख्यात आमों में दिलपसन्द, काला पहाड़, जहांगीर, शकरपारा, राजमान्य, नल-कल्याण, स्वर्णरेखा इत्यादि हैं। जब आम पर से दो-एक आम पके हुए गिरें तब समझना चाहिए कि अब आम उतारने योग्य होगये। आम का चालान टोकरियों में होता है। यदि कीमती आम हो और दूर भेजना हो तो देवदार के बक्स में ही भेजना चाहिए।

उपयोग और गुण—आम चूसकर या काटकर खाये जाते हैं। इनका रस निकालकर भी खाते हैं और उसे सुखाकर पापड़ भी बनाते हैं। गुठली के बीच का गूदा कुछ लोग भूनकर खाते हैं। इससे स्टार्च भी बन सकता है। पका आम दस्तावर और बलवर्धक होता है। दूध के साथ इसका सेवन किया जाय तो शरीर पुष्ट होता है। कच्चा आम खट्टा और पित्तकारक होता है। आग में भुने हुए कच्चे आम का शरबत लू लगने पर बड़े काम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का होता है।

कटहल

ये बंगाल, बिहार, गुजरात और दक्षिण भारत में बहुत मिलते हैं। इनके फल आठ-दस सेर से लेकर बीस-पचीस सेर वजन तक के होते हैं और शाखा तथा धड़ पर ही नहीं बल्कि कभी-कभी जमीन के अन्दर भी हो जाते हैं, जो भूमि के फटने से जाने जाते हैं। एक पेड़ से पच्चीस-तीस से लेकर सौ-डेढ़ सौ अच्छे फल मिल जाते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनती है, पक्के फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनके पत्तों से पत्तलें बनाते हैं। भोजन के बाद कटहल खाया जाय तो वह बलदायक होता है। पके हुए कटहल का उपयोग पीने का तम्बाकू बनाने में भी किया जाता है।

कमरख

इनके फल तीन-चार इंच लम्बे पांच धारीवाले होते हैं। पौष-माघ में बीज बोकर पौधे तैयार किये जाते हैं। पेड़ पन्द्रह-बीस फुट ऊंचे होते हैं। पौधों को पन्द्रह फुट की दूरी पर गढ़े करके लगाना चाहिए। छः-सात साल की आयु होने पर ये आश्विन-कार्तिक (सितम्बर-अक्तूबर) में फलते हैं।

उपयोग और गुण—इसका मुरब्बा और अचार बड़ा अच्छा बनता है। इसका शरबत भी बनाया जाता है। कमरख कफ और बादीनाशक होता हैं। इसके रस से कपड़ों का दाग बड़ा जल्दी छूटता है।

केला

सब्जीवाले केले तिकोनिये होते हैं। खानेवाले केलों के कई नाम हैं—जैसे मालभोग, चीनी, चम्पा, सोनकेला, राजेली, रसखान इत्यादि। केले को प्रतिवर्ष बरसात के प्रारम्भ में आधा सेर सुपर फासफेट या हड्डी का चूर्ण, पावभर एमोनियम सलफेट और एकाध टोकरी राख डालना उत्तम होगा। जिस डण्ठल पर केले लगते हैं उसे 'धड़' कहते हैं। केले तोड़ने के समय धड़ के कटे हुए भाग पर मोम लगा दिया जाय तो केलों के छिलके जल्दी काले नहीं पड़ते और वे 'धड़' से जल्दी गिरते नहीं।

उपयोग और गुण—खम्भे मंडप सजाने और पत्ते पत्तल-दोने, बीड़ी बांधने के काम आते हैं। कच्चे केले की तरकारी बनती है। पके केले वैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही खाये जाते हैं या उनसे पकवान वनाते हैं। कच्चे केले के आटे की रोटी से वायु-विकार दूर होता है। पका केला हलका, शीतल और पुष्टिकारक होता है।

खजूर

अरवी और देसी ऐसे दो प्रकार के होते हैं। देसी में गूदा बहुत कम होता है। ऐसे खजूर जंगलों में या खेतों के आसपास पाये जाते हैं। अरवी खजूर के पौधे सात-आठ साल की आयु के होने पर फलते हैं और सत्तर-अस्सी वर्ष तक की आयु तक फलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं। इन्हें सुखाकर काम में लाते हैं। बीज पशुओं को खिलाये जाते हैं। खजूर शीतल, हृदय को हितकारी और पुष्टिकारक होता है। खांसी, दमा और क्षयरोग आदि में इसका सेवन अच्छा माना गया है।

खिरनी

मैदानों के जंगलों में इसके पेड़ पाये जाते हैं। फल नीम के फल-जैसे, पीले और चिकने होते हैं, जिनमें से सीताफल (शरीफे) के बीज-जैसे काले-काले बीज निकलते हैं।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं। इन्हें सुखाकर भी खाते हैं। खिरनी वलदायक, शीतल और भारी होती है।

गुलाबजामुन

इसके फल खटमीठे, छोटे सेव-जितने, गुलावी रंग के होते हैं।

उपयोग और गुण—फल सेव की तरह वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी वनता है। इसके सेवन से खांसी और कफ दूर होते हैं।

चकोतरा

नीबू की जाति का सबसे वड़ा फल मोटे छिलकेवाला चकोतरा होता है।

उपयोग और गुण—इसका रस चूसकर लेते हैं और उससे शरबत भी बनाते हैं। इससे पाचन-शक्ति अच्छी होती है।

जामुन

बड़े जामुन के एक-दो पेड़ वगीचों में लगा लें तो अच्छा है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनका सिरका भी बनाते हैं। फल दाहनाशक और पेट के दर्द को दूर करनेवाले होते हैं। सिरका पित्तनाशक होता है।

तुरंज, बिजौरा

यह भी नीबू की जाति का फल है जो सुनहरा और मोटे छिलकेवाला होता है, जिससे मार्मलेड बनाते हैं। पौधा दाब-कलम से तैयार किया जाता है।

उपयोग और गुण—फल का रस बहुत खट्टा होता है। हृदय के लिए हितकारी माना गया है।

तेंदू

फल छोटे सेब के आकार का मीठा होता है। इसे भेट-कलम से तैयार करते हैं। प्रतिवर्ष पौष-माघ (जनवरी) में जड़ें खोलकर खाद देना चाहिए। पेड़ बीस फुट की दूरी पर लगाना चाहिए। पांच साल की आयु के होने पर पेड़ फलते हैं। प्रतिवर्ष कार्तिक-अगहन (अक्तूबर-नवम्बर) से फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी बनता है।

दिलपसन्द

यह तरबूज की जाति का फल है। गर्मी में तीन-तीन फुट की दूरी पर इसके बीज बोये जाते हैं। कच्चे फल हरे और पके हरे नारंगी रंग के हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बनाते हैं। पके फल वैसे ही खाये जाते हैं।

नासपाती

इसमें पौष-माघ (दिसम्बर-जनवरी) में जड़ें खोलकर खाद देना चाहिए। गोबर का खाद न हो तो तीन-चार सेर खली और दो सेर हड्डी का चूरा एक पेड़ को काफी होगा।

उपयोग और गुण—पके फल वैसे ही खाये जाते हैं। कुछ जातियां ऐसी भी हैं, जिनसे तरकारियां बनती हैं। नासपाती हल्की, वीर्यवर्धक और पित्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तथा कफनाशक होती है।

नीबू

कागजी और जमेरी—कागजी का छिलका पतला, रस सुगंधित और कुछ कम खट्टा होता है। कागजी नीबू गोल और लम्बे ऐसे दो प्रकार के होते हैं। नीबू में खाद प्रतिवर्ष फल मिल जाने के पश्चात् सर्दी के अन्त में देना चाहिए।

उपयोग और गुण—दोनों ही प्रकार के नीबू से भोज्य पदार्थ स्वादिष्ट किये जाते हैं। इनका अचार भी डाला जाता है और शरवत भी बनाते हैं। शरबत बनाने के लिए रस को चौबीस घंटे तक ऐसे वर्तन में रखें, जिसमें विगड़ने न पाये। जब गाद नीचे जम जाय तो ऊपर का रस नितार लो। फिर उस रसवाले वर्तन को उबलते हुए पानी पर रखकर इतना सुखाओ कि दो हिस्सा सूख जाय और एक हिस्सा रह जाय। इतना सूख जाने पर आधा भाग चीनी मिला दो और बोतलों में भर दो। ऐसी भरी हुई बोतलों को १७०° फे. पर आधा घंटा गरम करके ठंडा होने के लिए रख दो और फिर कार्क लगा दो। कार्क को भी पानी में गरम कर लेना चाहिए। बोतलों को १७०° फे. पर गरम करने की सरल युक्ति यह होती है कि एक वर्तन में पानी भरकर बोतलें उसमें टेढ़ी करके रख दो और पानी को ऐसा गरम करो कि तापमान १७०° पर रहे। यदि तापमापक यन्त्र फे. डिग्रीवाला न हो तो सेंटीग्रेडवाले से काम चल जायगा। उसका मान ७७ डिग्री तक रहे।

पपीता, पपैया, एरंड ककड़ी

पपीते रांची, लंका तथा वाशिंगटन नाम के अच्छे होते हैं। इनकी खेती में चौथे साल की फसल के बाद भूमि बदल देनी चाहिए। प्रत्येक पेड़ से बीस-पच्चीस अच्छे फल प्रतिवर्ष प्राप्त किये जा सकते है। अधिक फल हों तो, जब वे छोटे हों, उसी समय तोड़ डालने चाहिए। ज्यों-ज्यों फलों पर पीली झाईं नजर आये उन्हें तोड़ते जाना चाहिए। इस अवस्था से पहले तोड़ने से फलों का स्वाद अच्छा नहीं होता।

उपयोग और गुण—कच्चे फलों की तरकारी बना ली जाती है या उनसे हलवा भी बना सकते हैं। पके फल वैसे ही खाये जाते हैं। फल पाचक, दस्तावर और बलवर्धक होते हैं। बढ़ी हुई तिल्ली या पेट की व्याधियों के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिए इनका सेवन अच्छा होता है।

फालसा

इसका फल जंगली करौंदे-जैसा खटमीठा होता है। पौधे बरसात में बीज बोकर तैयार किये जाते हैं और दो-तीन साल तक नर्सरी में रखकर खेतों में आठ-आठ फुट की दूरी पर लगा देने चाहिए। पांच-छः साल की आयु के होने पर पेड़ फलते हैं। प्रतिवर्ष जाड़े में फूलकर चैत्र-वैशाख में फल देते हैं। उपज दस-बारह सेर प्रति-पेड़ हो जाती है।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं, गर्मी में शरबत बनाकर भी पीते हैं। इसके सेवन से रक्त-विकार, ज्वर और बादी का नाश होता है। इनके पत्तों से पत्तलें भी बनती हैं।

बीही

यह पहाड़ों पर होती है और डाली लगाकर तैयार की जाती है। खेती सेव की खेती के समान होती है। इसका फल रसदार और मीठा होता है। सेव और नाशपाती की कलमें चढ़ाने के लिए इसके पौधे विशेष काम में आते हैं, क्योंकि इसपर कलम बांधने से पौधे छोटे हो जाते हैं। बहुत ऊंचे नहीं होते।

बेर

बेर पैवन्दी (कलमी), जंगली और झरिया ऐसे तीन प्रकार के होते हैं। कलमी बेर गोल या अण्डाकृतिवाले, मोटे और मीठे गूदेवाले होते हैं। दूसरे खटमीठे होते हैं। झरिया बेर के पेड़ न होकर छोटी झाड़ियां होती हैं। इनमें गूदा बहुत कम रहता है। ऐसे बेर राजपूताना की तरफ अधिक होते हैं। कलमी बेर नागपुर, बनारस और फर्रुखाबाद के विख्यात हैं। बेर पहाड़ों पर नहीं होते।

उपयोग और गुण—बेर वैसे ही खाये जाते हैं। जंगली बेर का अचार भी बनाया जाता है। बेर शीतल, दस्तावर और पुष्टिकारक होते हैं। कच्चे बेर पित्तकारक और कफवर्द्धक होते हैं।

बेरी-मकोय (गूजबेरी)

इसके बीज बरसात में नर्सरी में लगाये जाते हैं और बरसात के अन्त में खेत में दो-दो फुट की दूरी पर कतारों में लगाते हैं। पंक्तियों में तीन फुट

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का अन्तर रखना चाहिए। इसके लिए लगभग तीन सौ मन गोबर का खाद और तीन मन हड्डी का चूरा प्रति-एकड़ डालना चाहिए। जब पौधे एक फुट ऊंचे हो जायं तो बीच का कोंपल तोड़ देना चाहिए। फल पुटपत्र में छिपे रहते हैं। जब वे पीले पड़ने लगें तब तोड़ने चाहिए।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं, परन्तु बहुधा मुरब्बे के काम आते हैं। ये रोचक होते हैं।

बेरी-ब्लैक

इसे टोंटे (Offsets) से तैयार करते हैं। इसके लिए गढ़ों में तीन फुट का और पंक्तियों में पांच फुट का अन्तर उत्तम होता है। टोंटे बरसात में लगाये जाते हैं, चूंकि फल नये कोपलों पर ही आते हैं। जिनसे फल प्राप्त हो जाय उन्हें काट देना चाहिए। पौधे लगाने के समय दो साल में फल देते हैं और चैत्र-वैशाख में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं, परन्तु बहुधा मुरब्बे के काम में आते हैं।

बेरी-स्ट्रा

इसके फल लाल रंग के छोटी लीची-जैसे होते हैं। गर्मी में एक शतांश हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद चार सौ मन के लगभग डालना चाहिए। इसकी लता (Runners) के टुकड़े क्यारियों में या पारियों पर दो-दो फुट की दूरी पर लगाने चाहिए। फल बैठने लगें, उस समय पानी कुछ कम देना चाहिए। फल आने लगें उस समय सवा मन पोटेशियम सलफेट या आठ-दस मन राख का खाद देना चाहिए। मैदानों में चैत्र-वैशाख में और पहाड़ों पर माघ-फाल्गुन में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। मुरब्बा भी इससे बनता है। मलाई और चीनी के साथ खाने से बड़ा स्वादिष्ट पदार्थ बनता है। इसके फल रोचक और स्वास्थ्यदायी होते हैं।

बेल

एक-दो पेड़ लगा देने चाहिए। पौधे न मिलने पर बीज से तैयार कर सकते हैं।

उपयोग और गुण—पत्ते भगवान शंकर को चढ़ाये जाते हैं। फलों का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरबत गर्मी के दिनों में पिया जाता है। कच्चे बेल का गूदा पेचिश के लिए उत्तम होता है।

रामफल, नौना

इसे कहीं-कहीं सीताफल भी कहते हैं; लेकिन जिस सीताफल का बयान आगे किया है उसके फल की कलियां ऊपर से खुली हुई मालूम पड़ती है। रामफल का ऊपरी भाग साफ होता है। सीताफल हरे रंग का और यह बैंगनी रंग का होता है। सीताफल सर्दी में और रामफल गर्मी में आते हैं।

लीची

फल ले लेने के पश्चात् आषाढ़ में गोबर के खाद के साथ तीन सेर नीम या एरंडी की खली, दो सेर हड्डी का चूर्ण तथा तीन-चार सेर राख प्रतिवर्ष देना चाहिए। फल कुछ टहनियों-सहित तोड़े जाते हैं सो काटछांट हो जाती है। फल प्रतिवर्ष नई टहनियों पर ही आते हैं।

उपयोग और गुण—लीची का गूदा खाया जाता है, जो रसदार और मीठा होता है। चीन में लीचियां सुखाई जाती हैं जो सूखने पर काली हो जाती हैं।

लोकाट

इसमें सर्दी के प्रारम्भ में जड़ें खोलकर हड्डी-मिश्रित खाद देना चाहिए। पकने पर इसके फल पीले रंग के बेर-जितने बड़े हो जाते हैं।

उपयोग और गुण—फल वैसे ही खाये जाते हैं। ये खटमीठे होते हैं।

शफतालू

यह भी आड़ू-जैसा फल है, जो पहाड़ों पर होता है। आड़ू का फल रोएंदार मखमल-सा मालूम होता है। इसका साग होता है। खेती आड़ू की खेती के समान होती है।

शहतूत या तूत

शहतूत सफेद और काले ऐसे दो प्रकार के होते हैं। पहले के फल बहुधा इंच-डेढ़ इंच लम्बे या गोल होते हैं। दूसरे के विशेषतः लम्बे ही होते हैं।

उपयोग और गुण—इसके पत्ते रेशम के कीड़ों को खिलाये जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फल वैसे ही चूसकर खाये जाते हैं। इनका शरबत भी बनता है। ये शीतल, भारी और पित्तनाशक होते हैं।

सीताफल, शरीफा

जहां वर्षा बहुत होती है और सर्दी बहुत अधिक पड़ती है, वहां सीताफल नहीं होता।

उपयोग और गुण—इसके फल मीठे होते हैं और वैसे ही खाये जाते हैं। ये शीतल, बलवर्द्धक, हृदय को हितकारी और कफकारक माने गये हैं।

सन्तरा

सन्तरे दो प्रकार के होते हैं—एक मीठे ढीले छिलकेवाले पीले या नारंगी रंग के, दूसरे पतले छिलकेवाले पीले रंग के। ये दोनों आसानी से छीले जा सकते हैं और अन्दर की फांकें अलग-अलग की जा सकती हैं।

सन्तरा—मौसमी, माल्टा

माल्टा और मौसमी करीब-करीब एक ही प्रकार के होते हैं। स्वाद तथा आकार में थोड़ा अन्तर होता है। पंजाब की तरफ माल्टा और गुजरात की तरफ मौसमी अधिक होती है। सन्तरे का पेड़ बहुधा सीधा लेकिन माल्टे का फैला हुआ होता है। फल हरे-पीले रंग के चिपके हुए छिलकेवाले होते हैं। इनका रस सन्तरे के रस से निराले स्वाद का होता है। स्वास्थ्य के विचार से सन्तरे की अपेक्षा इनका विशेष उपयोग है। फल देने के बाद ही गर्मी के अन्त में जड़ें खोलकर एक-दो सप्ताह बाद उनमें खाद देना चाहिए। यदि खली मिल सके तो प्रत्येक पौधे के पीछे दो सेर देनी चाहिए। खली-जितनी राख और उतना ही हड्डी का चूरा देना चाहिए। कृत्रिम खादों में पावभर एमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट और आधा सेर सुपर फासफेट और उतना ही पोटेशियम सलफेट देना देना चाहिए। सन्तरे की दो बहार आती हैं, एक सर्दी में और एक गर्मी में। गर्मी की बहार के सन्तरे मीठे होते हैं और विशेष लाभप्रद भी। गर्मी की फसल प्राप्त करने के लिए वैशाख-ज्येष्ठ में सिंचाई वन्द करके बरसात के पहले खाद दे देना चाहिए। ऐसा करने में ज्येष्ठ-आषाढ़ में फूल आयंगे, जिनसे नौ-दस महीने बाद गर्मी में फल मिलेंगे। यदि सर्दी की फसल लेनी हो तो पौष में खाद और सिंचाई देनी चाहिए। इससे माघ-फाल्गुन (जन०-फर०) में फल बैठेंगे और सर्दी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में फल मिलेंगे। प्रत्येक पौधे से ५०० से १००० फलों के अनुमान मिल जा सकता है। इनके पेड़ों में यदि 'गमोसिस' नाम की व्याधि आ जाय (जिसमें धड़-पैर से गोंद-सा पदार्थ निकलता रहता है), तो उस स्थान को छीलकर वहांपर 'बोर्डोपेस्ट' लगा देना चाहिए।

बोर्डो-पेस्ट—१ सेर तूतिये को पांच सेर पानी में घोल लो। फिर एक सेर चूने को अढ़ाई सेर पानी में बुझाओ। दोनों के मिला लेने से बोर्डो-पेस्ट बन जाता है।

फलों का चालान टोकरी और पुआल में अच्छा होता है।

उपयोग और गुण—सन्तरे चूसकर खाये जाते हैं। माल्टा का रस निकालकर पिया जाता है। सन्तरा मीठा, ठंडा, पाचक और साफ पेशाब लानेवाला होता है। सफर में सन्तरे का सेवन बड़ा लाभप्रद होता है। स्कर्वी की व्याधि में इसका सेवन अच्छा माना गया गया है। व्याधि से उठे हुए के लिए माल्टा या मौसमी विशेष गुणकारी है।

सपाटू, चीकू

बंबई की तरफ इसे चीकू कहते हैं। इसके पेड़ भूरे रंग के फलवाले पच्चीस-तीस फुट ऊंचे होते हैं। फल इंच-डेढ़ इंच व्यास के गोल और उनका गूदा भूरे रंग का मीठा होता है। प्रत्येक फल में काले-काले तीन-चार बीज होते हैं।

उपयोग और गुण—फल छीलकर खाये जाते हैं। ये पित्तनाशक तथा बुखार को मिटानेवाले होते हैं। सपाटू की लकड़ी बड़ी मजबूत होती है।

सेब

इनकी खेती काश्मीर, पंजाब तथा उत्तरप्रदेश के पहाड़ी व ठंडे स्थानों में अच्छी होती है। फल आने लगे उस समय से प्रतिवर्ष पौष-माघ (दिस०-जन०) में एक शतांश हड्डी-मिश्रित गोबर का खाद देना चाहिए। फलों का स्वाद अच्छा बना रहे, इसलिए फल पकने लगें, तब पानी कम देना चाहिए। सूखी तथा घनी टहनियों की काटछांट पौष-माघ में होनी चाहिए। फल यदि आवश्यकता से अधिक हों तो कुछ तोड़ देने चाहिए। फलों का चालान चिकने कागज में लपेटकर बक्सों में अच्छा होता है।

उपयोग और गुण—सेब वैसे ही खाये जाते हैं। इनका मुरब्बा भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बनता है। सेव हलके, बलवर्धक और खून को बढ़ानेवाले होते हैं।

२. सूखे फल

अखरोट

काश्मीर और उत्तरप्रदेश में हिमालय पहाड़ पर कहीं-कहीं इनकी खेती होती है। मैदानों में नहीं हो सकती। इनके बीज को अंकुर फेंकने में पाच-छः महीने लगते हैं। इन्हें बालू में लगाकर ठंडे स्थानों में रख देते हैं। अंकुर निकलने के बाद एक-एक फुट की दूरी पर नर्सरी में लगाकर हर दूसरे साल स्थानान्तरित करके जब पौधे चार-पांच इंच के होते हैं, तब इन्हें बरसात या सर्दी में निर्धारित स्थान पर लगाते हैं। इनके फल श्रावण से आश्विन तक मिलते रहते हैं। ज्यों-ज्यों फल गिरते जाते हैं, सुखाकर रखते जाते हैं।

उपयोग और गुण—इनके फल का गूदा खाया जाता है। हरे फलों का अचार भी बनता है। इनसे तेल भी निकाला जाता है, जिसे वहां के निवासी खाने और जलाने के काम में लाते हैं। इसके गूदे में लगभग ५० शतांश तेल रहता है। अखरोट वीर्यवर्धक, भारी, गरम और कफकारक होते हैं।

अंजीर

हिन्दुस्तान में इसकी खेती पंजाब, उत्तरप्रदेश, दक्षिण बंबई और मैसूर में होती है। फल आने लगें उस समय से प्रतिवर्ष माघ में या बरसात में कुछ खाद दे देना ठीक होता है। पौधों की काटछांट ऐसी करनी चाहिए कि धड़ डेढ़-दो फुट ऊंचा हो और शाखाएं भी उतनी ही लम्बी हों। उपशाखाएं भी ऐसी हों कि पेड़ छः-सात फुट से ऊंचा न हो। इसमें फलों के पकने के समय यदि बरसात आ जाय तो फल बिगड़ जाते हैं। ज्यों-ज्यों फल पकते जाते हैं, सुखाकर दबा दिये जाते हैं और रस्सी में पिरो दिये जाते हैं। सूखे हुए फल तीन शतांश नमक के उबले हुए पानी में छोड़े जाते हैं। ऐसा करने से उनकी ठहरने की शक्ति बढ़ जाती है।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं। सूखे फलों का सेवन दूध के साथ सर्दी में किया जाता है। अंजीर पाचक, दस्तावर और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खांसी को मिटानेवाले होते हैं। बच्चों के लिए बड़े उपयोगी होते हैं।

काजू

इसकी खेती ट्रावनकोर-कोचीन में काफी होती है। बंबई और मद्रास प्रांत के कुछ हिस्सों में भी होती है। उड़ीसा के जंगलों में भी कहीं-कहीं इसके पेड़ पाये जाते हैं। मध्य प्रदेश के होशंगावाद जिले में भी एक सज्जन को इसकी खेती में सफलता मिली है। इससे ज्ञात होता है कि समुद्र के किनारेवाले स्थानों में ही नहीं, भारत के भीतरी भागों में भी इसकी खेती हो सकती है। पौधे बरसात में लगाते हैं। ये पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। दाब-कलम से भी पौधे तैयार किये जा सकते हैं। पौधे चार साल की आयु के होने पर फल देते हैं। इसके फल गर्मी के दिनों में मिलते हैं।

उपयोग और गुण—भनी हुई छिलका-रहित काजू बाजार में मिलती है। उसे वैसे ही खाते हैं। इसके ठंडल का अचार वनाया जाता है। इसके पेड़ का गोंद जिल्दसाजी के लिए उपयोगी होता है। लकड़ी पर इसका तेल लगा दिया जाय तो उसे दीमक हानि नहीं पहुंचा स कते।

खूबानी, जरदालू

इसकी खेती उत्तरप्रदेश के ठंडे स्थानों में होती है। पौधा आलू के पौधे-जैसा होता है। ज्यों-ज्यों फल पकते जाते हैं, तोड़कर मकानों की छतों पर सुखाये जाते हैं। ताजे फलों का चालान वक्सों में और सुखाये हुओं का वोरों में किया जाता है।

उपयोग और गुण—फलों के ऊपर का सूखा हुआ भाग, जो मीठा होता है, वहीं खाया जाता है। अन्दर वादाम-जैसी छोटी गुठली होती है उसके अन्दर से वादाम की गिरियों-जैसी स्वादवाली गिरी निकलती है।

चिलगोजा

इसकी खेती अफगानिस्तान की तरफ होती है। भारत में नहीं होती।

उपयोग और गुण—फल कच्चे या भूनकर खाते हैं। ये बलदायक होते हैं।

चिरौंजी

इसके पेड मलाबार और विंध्याचल पर्वत पर जंगलों में पाये जाते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं। ये चालीस-पचास फुट ऊंचे होते हैं।

इसकी गिरी (गूदा) बहुत मुलायम और स्वादिष्ट होती है। इसे भील या अन्य लोग बाजार में लाकर बेच जाते हैं और बदले में नमक, कपड़ा वगैरा ले जाते हैं।

उपयोग और गुण—इसका गूदा वैसे ही खाया जाता है। इसे मिठाइयों में भी डालते हैं। यह दस्तावर होती है। शरीर पर बहुत जलन हो तो इसके गूदे का लेप करना चाहिए। दूध-चीनी के साथ खाने से बल बढ़ता है।

नारियल

बंगाल, मद्रास, मलाबार और कोंकण में इसकी खेती व्यापक रूप से होती है। इसके लिए पूर्ण बाढ़ पाये और अंकुर फेंके हुए नारियल बोये जाते हैं। यदि कोंपल फेंके हुए न मिलें तो दूध-भरे हुए नारियल पानी में रख देते हैं तो वे अंकुर फेंक देते हैं। ऐसे नारियलों को एकाध साल नर्सरी में बढ़ाकर फिर निर्धारित स्थान पर लगाते हैं। जब फल आने लगें उस समय से प्रतिवर्ष बरसात में आठ-दस सेर नारियल की खली अथवा चार-पांच सेर एरंडी की खली के साथ एक सेर हड्डी का चूर्ण या मछली का खाद और राख दी जा सके तो फल अच्छे आते हैं।

उपयोग और गुण—हरे नारियल का रस पिया जाता है जो मीठा और ठंडा होता है। रस के सूखने से अन्दर गिरी बन जाती है। गिरी का तेल खाने, जलाने, मालिश करने तथा साबुन बनाने के काम आता है। फलों के ऊपर के रेशे से रस्सियां बनती हैं। नारियल की गिरी बलवर्धक, पित्तनाशक और दाह को मिटानेवाली होती है।

पिस्ता

इसके पेड़ ईरान के जंगलों में होते हैं। फल सफेद छिलकेवाले होते हैं, जिन्हें फोड़ने से अन्दर से हरे और बैंगनी रंग की गिरी निकलती है।

उपयोग और गुण—पिस्ते की गिरी खाई जाती है। पिस्ते बलवर्धक कफनाशक और रक्त को शुद्ध करनेवाले होते हैं।

बादाम

इसकी खेती अफगानिस्तान की तरफ होती है। भारत में पहाड़ों पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लगा देने से कहीं-कहीं थोड़े-बहुत फल आ जाते हैं।

उपयोग और गुण—बादाम हलके गरम, वीर्यवर्धक, बलदायक तथा पित्त-कफ-नाशक होते हैं।

३: चटनी, मुरब्बा आदि के फल

अलूचा—आलूबुखारा

प्रतिवर्ष पत्ते झड़ने लगें तब इनकी जड़ें खोलकर खाद देना चाहिए।

उपयोग और गुण—ताजे फल वैसे ही खाये जाते हैं, परन्तु विशेष उपयोग चटनी और मुरब्बे बनाने में होता है। इसके फल ठंडे, पाचक, दस्तावर और पित्तनाशक होते हैं।

आंवला

बड़े आंवले सुन्दरबन की तरफ बहुत होते हैं, छोटे आंवले सब जगह पाये जाते हैं। यह ऐसा फल है कि इसके गुण देखते हुए प्रत्येक बगीचे में इसके एक-दो पेड़ अवश्य होने चाहिए।

उपयोग और गुण—इससे मुरब्बा, अचार और चटनी बनाते हैं। आंवले का रस सन्तरा, नीबू या टमाटर के रस से दसगुना अधिक लाभदायक होता है। गर्मी के दिनों में इसके मुरब्बे का सेवन अवश्य करना चाहिए। आंवले बलवर्धक, पित्तनाशक, ठंडे, दस्तावर, अधिक पेशाब लाने वाले तथा त्रिदोष-नाशक होते हैं।

इमली

इसके पेड़ चालीस-पचास फीट से लेकर सत्तर-अस्सी फुट ऊंचे होते हैं। इसके पौधे बीज से निकल आते हैं, अतः जहां चाहे लगा सकते हैं। पेड़ लगाने के समय से दस-बारह साल में फल आने शुरू होते हैं और माघ-फाल्गुन (फरवरी-मार्च) में मिलते रहते हैं।

उपयोग और गुण—इमली से तरकारियां स्वादिष्ट की जाती हैं। इससे खटमीठी चटनी और शरबत भी बनाते हैं। इमली का प्रयोग मद्रास में बारहों महीने होता है। वहां इसके बीज निकालकर गूदे में थोड़ा नमक मिलाकर गोले बनाकर रख लेते हैं। इमली रूखी, पाचक, कृमिनाशक, अग्निदीपक और दस्तावर होती है। लू लग जाने पर इसका शरबत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पीना बड़ा लाभप्रद रहता है।

करौंदा

करौंदे छोटे-बड़े दो प्रकार के होते हैं। इच्छा होने से एक-दो पेड़ लगा देने चाहिए। जब पौधे तीन-चार साल की आयु के होते हैं तब फलना शुरू होते हैं।

उपयोग और गुण—पके हुए फल वैसे ही खाये जाते हैं। कच्चे का अचार और लुंजी (मीठी तरकारी) बनायी जाती है। पके हुए फल हलके, मीठे और वातनाशक होते हैं।

कैथ, कबीट

इसका पौधा बीज से तैयार किया जाता है। जब पेड़ आठ-दस साल की आयु के होते हैं तब फल देते हैं। फल कठोर सफेद रंग के होते हैं। पेड़ों की ऊंचाई तीस-चालीस फुट तक हो जाती है। इनके फल आश्विन-कार्तिक में मिलते हैं। बगीचे में एक-दो पेड़ काफी होते हैं।

उपयोग और गुण—पके हुए फल की चटनी बनाई जाती है। पेचिश और दांतों की शिकायत में कैथ का कच्चा फल बेल के गुण-जैसा काम करता है।

बाम्पी

इसका फल लीची के आकार का होता है। पौधे बीज से तैयार किये जाते हैं। प्रत्येक फल में तीन-तीन बीज होते हैं। प्रतिवर्ष आषाढ़-श्रावण में फल मिलते हैं।

उपयोग और गुण—फलों का अचार बनाया जाता है। इससे तरकारियां भी स्वादिष्ट की जाती हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पांचवां खंड

कृषि के सहायक धंधे

१—छोटे-बड़े धंधों के प्रकार

भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति में एक ही प्रकार की खेती, जैसे सस्यों की, सागभाजी की अथवा फलों की खेती उसी समय सन्तोषजनक रूप में लाभप्रद हा सकती है, जब हमारे कृषकों के पास खेती के योग्य काफी भूमि और बड़े-बड़े खेत हों, (जिनमें आधुनिक यन्त्रों का उपयोग हो सके), खाद और उर्वरक काफी मात्रा में उपलब्ध हों, सिंचाई के लिए नहरी जल या बिजली के पम्पों द्वारा कुओं से जल उठाने की सुविधाएं हों और सस्यों को व्याधियों तथा कीटादि शत्रुओं से बचाने के उपचार सरलता से प्राप्त हो सकें।

उपर्युक्त सब सुविधाएं बहुत ही कम कृषकों को मिल पाती हैं। अधिकांश के पास सब नहीं होतीं। इसलिए उन्हें अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए कुछ सहायक धंधे अपनाने पड़ते हैं।

ऐसे सहायक धंधे छोटे-बड़े कई हैं, जिन्हें कृषक अपनी रुचि अथवा योग्यतानुसार अपना सकते हैं, परन्तु उनसे सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब उनकी जानकारी पूर्ण रूप से हो।

छोटे धंधों में सूत कातना, कपड़े बुनना, ऊन कातकर कम्बल बुनना, रस्सी बंटना, टोकरियां बनाना इत्यादि धंधों की गणना कर सकते हैं। साग-भाजी उपजाना, फलोत्पादन, पशु-पालन, मुर्गी-पालन, शहद, लाख या रेशम-उत्पादन आदि की गणना बड़े सहायक धंधों में की जा सकती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहले प्रकार के धंधे थोड़ी-सी जानकारी से किये जा सकते हैं। दूसरों के लिए शिक्षण अथवा पुस्तकों की सहायता लेनी होती है तभी सफलता मिल सकती है। इसलिए इस खंड में दूसरे प्रकार के धंधों पर ही प्रकाश डाला गया है। इनमें से भी सागभाजी उपजाने और फलोत्पादन पर तीसरे और चौथे खण्डों में विस्तृत वर्णन दिया गया है। इस खण्ड में पशु-पालन तथा इसके अन्तर्गत आनेवाले विषय, जैसे पशु-पोषण, पशु-प्रजनन, डेरी-व्यवसाय, पशु-चिकित्सा आदि और मुर्गी-पालन तथा रेशम, लाख और शहद-उत्पादन पर ही विचार प्रकट किये हैं।

२—पशु-पालन

"आवश्यकता आविष्कार की जननी है।"

मनुष्यों ने अपनी विलक्षण बुद्धि का उपयोग कर कई प्रकार के पशु-पक्षियों को वश में किया और उनसे इच्छानुसार काम लिया। हाथी-जैसे भीमकाय और शेर-जैसे भयंकर पशु से लेकर गाय-भैंस, भेड़-बकरी आदि पशु तथा मुर्गे-मुर्गियां, बतख-कबूतर आदि पक्षियों से भी सेवा लेना शुरू किया। साथ ही इनके पालन और प्रजनन-क्रियाओं में काफी उन्नति की। उन्नति के अनुसंधान अब भी चल रहे हैं और चलते रहेंगे।

उपयोगी पशु-पक्षी

वर्तमान समय में हमारे यहां हाथी, ऊंट, घोड़ा, खच्चर, गधा, गाय, भैंस, भेड़, बकरी और सूअर की गणना पालतू उपयोगी पशुओं में की जाती है। इनमें से हाथी, जो निकट भूतकाल में राज-घरानों की शोभा बढ़ाता था, अब साधुओं की जमातों का धन रह गया है। जंगलों में इससे भार-वाहन का काम लिया जाता है। ऊंट से मारवाड़ में कहीं-कहीं खेतों की जुताई होती है, वरना अधिकतर इससे सवारी तथा माल ढोने का काम लिया जाता है। घोड़े, खच्चर और गधे सवारी तथा माल ढोने के काम आते हैं। कृषकों के लिए विशेष उपयोगी पशु तो गाय, भैंस और भेड़-बकरी हैं।

पक्षियों में मुर्गे-मुर्गियां, बतख और कबूतर विशेष उपयोगी सिद्ध हुए हैं। कबूतरों से पत्रवाहक का काम लिया जाता था, परन्तु अब वायुयानों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ने उनकी जगह ले ली है।

पशु-पालन की आवश्यकता

यह भलीभांति विदित है कि भारत की कृषि पशुओं पर निर्भर है और अभी काफी समय तक निर्भर रहेगी। खेतों की जुताई, सिंचाई और सस्यों की तैयारी से लेकर माल की ढुलाई तक सभी काम अधिकतर बैलों तथा भैंसों द्वारा ही होते हैं। इनके सिवा हमें दूध, दही, मक्खन, घी, मट्ठा और मांस इत्यादि पेय तथा खाद्य-पदार्थ इन्हीं वर्ग के पशुओं से मिलते हैं। सर्वोपयोगी खाद, चमड़ा, हड्डी आदि उपयोगी पदार्थ भी ऐसे ही पशुओं की देन हैं। भेड़ से उपर्युक्त पदार्थों के सिवा हमें ऊन भी मिलती है, जिससे शरीर-रक्षा के लिए उपयोगी ऊनी वस्त्र बनाये जाते हैं।

कृषकों के उपयोगी पशुओं को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं : बड़े पशु जैसे गाय-भैंस वर्ग के और छोटे जैसे भेड़-बकरी जाति के।

बड़े पशु तीन प्रकार के होते हैं—दुधारू, भारवाही और दोकारी। दुधारू पशु वे कहलाते हैं, जिनसे दूध अधिक मिलता है। उनके बैल खेत जोतने तथा भार ढोने में अधिक शक्तिशाली नहीं होते। सिंधी तथा साहीवाल वर्ग की गणना ऐसे वर्ग में है। भारवाही पशुओं की गणना उनकी होगी, जिनके बैल खेत जोतने तथा भार ढोने में विशेष काम के होते हैं। इस वर्ग की गायों से दूध विशेष नहीं मिलता, जैसे मालवी पशु। दोकारी पशु वे होते हैं जिनसे दुधारू वर्ग की गाय से जितना दूध मिलता है उतना तो नहीं मिलता, पर फिर भी काफी मिल जाता है और बैल भार ढोने या खेत जोतने में दुधारू पशु-वर्ग के बैलों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होते हैं।

जिस प्रकार गाय तीन प्रकार की होती है, वैसे भैंस दो ही प्रकार की होती है—अधिक दुधारू और कम दुधारू। दोनों के भैंसे खेत जोतने, विशेषतः धानवाले क्षेत्र में और भार ढोने के काम आते हैं।

भेड़ें तीन प्रकार की होती हैं : अधिक ऊनवाली, स्वादिष्ट मांसवाली और दोकारी। बकरियां दुधारू और स्वादिष्ट मांसवाली, ऐसी दो प्रकार की होती हैं।

क्या हमारी पशु-संख्या घट रही है ?

कुछ कृषकों का कहना है कि नई भूमि को जोत में लाने से चरागाह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की कमी होती जा रही है और पशु-संख्या घटती जा रही है। यदि हम पशु-संख्या के निम्नलिखित अंकों को देखें तो हमें ज्ञात होगा कि ऐसी धारणा तथ्यहीन है। किसी क्षेत्र में ऐसा भले हुआ हो, परन्तु समस्त भारत के अंक यही बताते हैं कि जनसंख्या के साथ पशु-संख्या भी बढ़ती जा रही है, और बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ हमें उपयोगी पशुओं की संख्या भी बढ़ानी होगा, तभी स्वास्थ्यप्रद दूध और दूध के पदार्थ, मांस, चमड़ा, खाद आदि की पूर्ति हो सकेगी।

भारत की पशु-संख्या—

	१९४५[1]	१९५१[1]	१९५६[2]
गाय-भैंस वर्ग	१७.७ करोड़	१९.९ करोड़	२०.४ करोड़
भेड़-बकरी वर्ग	८.४ ,,	८.६ ,,	९.५ ,,

१९४५ में जहां गाय-भैंस जाति के पशुओं की संख्या १७.७ करोड़ थी और १९५१ में १९.९ करोड़, वह १९५६ में २०.४ करोड़ होगई। इसी भांति भेड़-बकरियों की संख्या १९४५ में ८.४ करोड़ से बढ़कर १९५१ में ८.६ करोड़ और १९५६ में ९.५ करोड़ होगई।

पशु-पालन की सफलता चार बातों की जानकारी पर निर्भर है—१. पशु-पोषण; २. पशु-प्रजनन; ३. डेरी-व्यवसाय और ४. पशु-चिकित्सा।

३—पशु-पोषण

पशु-पोषण के निम्नलिखित तीन मुख्य अंग हैं:

१. चारा-दाना, २. चरागाह की व्यवस्था और ३. साफ पानी।

प्राणियों के शरीर की बनावट और स्वास्थ्य उनके खानपान पर ही अधिकतर निर्भर है और यह पशुओं के लिए तो उनकी उम्र और उनसे लिये जानेवाले काम पर भी निर्भर है। मनुष्य चाहे जैसा भोजन अपनी इच्छानुसार प्राप्त कर सकता है, परन्तु पशुओं को उनके मालिक द्वारा दिये

---

[1] Indian Agriculture in Brief 1954, P. 47

[2] सरदार हरबंससिंहजी (Animal Husbandry specialist) द्वारा प्राप्त।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुए चारे-दाने पर ही सन्तोष करना पड़ता है। चतुर मालिक ऐसा चारा-दाना अपने और अन्य लोगों के अनुभव तथा वैज्ञानिकों द्वारा सुझाई हुई रीति से बनाकर देता है। यदि पशुओं को उनकी आवश्यकतानुसार चारा-दाना नहीं मिले तो उनका शरीर निर्बल हो जाता है, उनके द्वारा खेती का काम ठीक से नहीं होता और उनकी आयु भी कम हो जाती है। दूध देने-वाले पशुओं को चारा-दाना उचित ढंग का और उचित मात्रा में न मिले तो उनका दूध कम हो जाता है और यदि गर्भवाले पशुओं को उनकी आवश्यकतानुसार चारा-दाना न मिले तो गर्भ-स्थित बछड़े की बनावट ठीक नहीं होती। पशुओं को चारा-दाना देने में इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह अधिक मात्रा में न हो, वरना पशु मोटे हो जायंगे और उनकी चाल धीमी पड़ जायगी।

चारे-दाने के पोषक पदार्थ—अनुसंधान द्वारा देखा गया तो शरीर को जल, एल्बुमिनीय (आमिषजातीय पदार्थ), कार्बोहाइड्रेट (शर्करा-जातीय पदार्थ), स्नेह, तन्तु और कुछ लवणों की तथा कुछ विटामिंस की आवश्यकता होती है। ये सब पशुओं को उनके चारे-दाने से मिलते हैं।

जल—यह सूखे चारे की अपेक्षा हरे में अधिक होता है, और वैसे भी पशु जल पीकर इसकी पूर्ति कर लेते हैं। इसीके द्वारा तथा शरीर के कुछ रसों द्वारा पोषक पदार्थ घुलनशील होते हैं, उनसे शरीर का पोषण होता है और बेकार वस्तुएं मल-मूत्र के रूप में त्यागी जाती हैं।

एल्बुमिनीय—काम करने से शरीर के पुठ्ठों की जो घिसावट होती है उसकी पूर्ति इनके द्वारा होती है। मांस और पुठ्ठे इन्हींसे बनते हैं।

कार्बोहाइड्रेट—शरीर की गर्मी की आवश्यकता की पूर्ति इनके द्वारा ही होती है।

स्नेह—इसमें कार्बोहाइड्रेट-जैसा ही गुण है, परन्तु इनसे सवा दो-गुनी शक्ति अधिक उत्पन्न होती है। काम करने की शक्ति इन्हींसे मिलती है।

तन्तु—इनमें पोषण-शक्ति तो नहीं होती, परन्तु मल त्यागने में ये सहायक होते हैं, अतः परोक्ष रूप में इनकी भी आवश्यकता है।

लवण—अम्ल तथा क्षार या धातुओं के मेल से जो पदार्थ बनते हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन्हें लवण कहते हैं। चारे-दाने में जो कैलशियम और फासफोरस रहता है उससे हड्डियां बनती हैं। अन्य लवणों का भी उपयोग शरीर की बनावट में होता है।

विटामिन—ये एक प्रकार के ऐसे पदार्थ हैं, जिनकी आवश्यकता सूक्ष्म मात्रा में होती है। इनका स्वास्थ्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनके अभाव में कई प्रकार की व्याधियां हो जाती हैं। मनुष्यों को तो कई प्रकार के विटामिन औषधियों के रूप में दिये जाते हैं, परन्तु पशुओं को तो ये चारे-दाने द्वारा ही मिलते हैं।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि चारा-दाना शरीर को ऊष्मा देता है और शरीर के अन्दर जो क्रियाएं चलती रहती हैं उनके लिए शक्ति देता है। पुठ्ठों की घिसावट की पूर्ति करता है। बछड़ों में बाढ़ होती रहती है, उसकी पूर्ति चारे-दाने से ही होती है। गर्भावस्था में गर्भ-स्थित बछड़े की बनावट होती है। दूध के द्वारा जो पदार्थ हमें प्राप्त होते हैं, उनकी पूर्ति होती है और काम करनेवाले बैल-जैसे पशुओं को काम करने की शक्ति भी चारे-दाने से ही मिलती है।

राशन और राशन के प्रकार

पशुओं को जो चारा-दाना दिया जाता है उसे राशन कहते हैं। यह तीन प्रकार का होता है—(१) निर्वाह, (२) वर्धक और (३) संतुलित। जो चारा-दाना पशुओं को दिया जाता है उसके सभी पोषक पदार्थ पूर्ण रूप से नहीं पचते। यह पाचन-शक्ति पशुओं की आयु, उनसे लिये जानेवाले काम, उनकी जाति और चारे-दाने की जाति के अनुसार पृथक्-पृथक् होती है। कौन-से चारे-दाने में कितने पाचन-युक्त पदार्थ हैं, इसकी गणना वैज्ञानिकों ने की है और उसे जनता की जानकारी के लिए छपवा दिया है, जिसके आधार पर पशुओं को कितना राशन अर्थात् चारा-दाना दिया जाय, इसकी गणना की जाती है।

ऊपर तीन प्रकार के राशन बतलाये गए हैं। पहला निर्वाह राशन है। यह वह मात्रा है जो उन पशुओं को दी जानी चाहिए, जो कोई काम नहीं करते, दूध नहीं देते या जिनके पेट में गर्भ नहीं है। इससे उनके शरीर का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निर्वाह हो जाता है ।

वर्धक राशन—यह वह मात्रा है जो शरीर-पोषक या निर्वाह-राशन की मात्रा से अधिक हो। ऐसी मात्रा काम करने की पूर्ति, दूध देने की शक्ति की पूर्ति तथा गर्भ की बाढ़ की पूर्ति के काम आती है ।

संतुलित राशन—यह वह मात्रा है, जो निर्वाह और वर्धक राशन को मिलाकर बनी हो।

मोटे तौर पर राशन की मात्रा गिनने की रीति—

पशुओं को हरा चारा दिया जाय तो उसमें जल की मात्रा का अनुमान करके सूखे वजन का अनुमान कर लेना चाहिए और यदि सूखा चारा हो तो उसका वजन और निर्वाह राशन के लिए जितना दाना हो, उसका वजन करके यह देखना चाहिए कि बारह मन[1] (लगभग ४५० किलोग्राम) वजनवाले पशु को दस सेर (९·३ किलोग्राम) सूखा वजन २४ घंटों में मिल जाय। चूंकि हमारे पशु चरने जाते हैं, इसलिए वहां उन्हें कितना चारा मिला होगा, उसका अनुमान करके चारे की मात्रा घटाई जा सकती है । उसी भांति निर्वाह राशन के लिए जो दाना दिया जाता है, उसका वजन भी कम किया जा सकता है।

दाने की मात्रा गिनने की रीति—

बारह मन (लगभग ४५० किलोग्राम) वजनवाले पशु के लिए—

---

[1] **पशुओं का वजन निकालने की रीति—**

बड़ी संस्थाओं में ऐसे कांटे होते हैं जहां पशुओं का वजन उन्हें कांटे पर चढ़ाकर किया जा सकता है। जहां ऐसी सुविधा न हो वहां निम्न-लिखित सूत्र से गणना की जा सकती है :

लपेट (Girth) इंच में × लम्बाई इंच में ÷ ३०० = वजन पौंड में।

एक पौंड = ०.४५३ किलोग्राम

लपेट—ककुद के पीछे से लेकर छाती पर होती हुई फिर उसी स्थान तक की गोलाई को लपेट कहते हैं।

लम्बाई—कन्धों के जोड़ से पसलियों पर होती हुई नितम्बों तक की दूरी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	निर्वाह राशन		संतुलित राशन			
			हलका काम		भारी काम	
	सेर	कि० ग्रा०	सेर	कि० ग्रा०	सेर	कि० ग्रा०
बैल	१.०	०.९३	१.५	१.३९	३.०	२.७९
गाय	१.५	१.३९	निर्वाह राशन + दूध का तीसरा भाग यानी तीन भाग दूध पीछे १ भाग।			
भैंस	२.०	१.८६	निर्वाह राशन + प्रति ढाई भाग दूध पीछे १ भाग।			

गर्भवती गाय-भैंसों को निर्वाह-राशन के ऊपर आधा सेर से एक सेर दाना अधिक देना चाहिए।

उपर्युक्त रीति थोड़े पशु हों तो उनके राशन गिनने में काम आ सकती है; परन्तु जहां बहुत-से पशु हों और अलग-अलग आयु के हों तो उनके लिए दाना निम्नलिखित आधार पर गिना जा सकता है (विशेष कठिनाई वहां आती है, जहां पशु पृथक्-पृथक् आयु के हों, जैसा डेरियों में होता है)।

साधारणतः डेरी में बड़े पशुओं में लगभग दो-तिहाई पशु दूध देनेवाले होते हैं और एक-तिहाई सूखे। दो वर्ष से तीन वर्ष की आयुवाले ओसर दूधवाले पशुओं का पांचवां भाग माना जाता है। उसी भांति एक चौथाई भाग एक से दो वर्ष की आयु के पशुओं का होता है। एक वर्ष से कम आयु वाले पशु भारतवर्ष में तो इतने ही होंगे जितने दूधवाले पशु। अन्य देशों में जहां वछड़ों को बेच देते हैं लगभग एक-तिहाई माने जाते हैं।

इनके सिवा प्रति पचास गाय पीछे एक सांड और प्रति एक सौ दुधारू पशु पीछे आठ जोड़ी बैल रखने पड़ते हैं, जो माल ढोने या खेती के काम आते हैं। इन सबके लिए इकट्ठा राशन तैयार किया जाता है और फिर वजन करके डाल दिया जाता है।

नाम पशु	वजन मन	कि० ग्रा० (लगभग)
गाय	८.५	३२०
सांड	१२.०	४५०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बैल	१२.०	४५०
ग्रोसर	६.०	२२५
एक से दो वर्ष के बछड़े	४.०	१५०
एक वर्ष से कम के	२.०	०.७५

उपर्युक्त हिसाब से समस्त पशुओं के वजन की गणना करके पृष्ठ ३०१ पर दी हुई सारणी से निर्वाह-राशन की मात्रा गिन लेनी चाहिए और उसी सारणी के दूसरे तथा तीसरे कालम से बैल तथा दुधारू पशुओं का वर्धक राशन गिना जा सकता है। इसके बाद प्रत्येक पशु को उसके वजन-अनुसार गणना करके दाना देना चाहिए। गर्भवाले पशुओं तथा बढ़ते हुए बछड़ों को भी बाढ़-पूर्ति के लिए अधिक दाना देना चाहिए।

पोषण का अनुपात—उपर्युक्त रीति राशन की गणना करने के लिए उत्तम है। वैज्ञानिक रीति के अनुसार बनाना हो तो चारे-दाने में पाचन-युक्त पदार्थ कितने हैं, इसकी गणना करके राशन बनता है। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र काम में आता है। इसमें एल्बुमिनीय पदार्थ, कार्बोहाइड्रेट और स्नेह का अनुपात निकाला जाता है। इसे पोषण-अनुपात (न्यूट्रिटिव रेशियो) कहते हैं।

$$\frac{\text{कार्बोहाइड्रेट} + \text{स्नेह} \times २.३}{\text{एल्बुमिनीय}} = \text{पोषण-अनुपात}^{1}$$

उदाहरण—

मान लो, कानपुरी तूअर के बीज में १४.२५ एल्बमिनीय, ६३.६६% कार्बोहाइड्रेट और १.४६% स्नेह है तो इसका पोषण-अनुपात होगा :

$$\frac{६३.६ + १.४६ \times २.३}{१४.२५} = ४.७$$

इसी भांति गेहूं के भूसे का पोषण-अनुपात होगा :

$$\frac{४०.१६ + ०.७४ \times २.३}{२.४४} = १७.१$$

---

[1] पूसा-बुलेटिन नं० ७० के आधार पर। इसी बुलेटिन में कई प्रकार के खाद्य-पदार्थों का विश्लेषण दिया है, जिससे पोषण-अनुपात की गणना ह सकती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभिन्न प्रकार के पशुओं के लिए पोषण-अनुपात अंक

अनुभव से विविध प्रकार के पशुओं के लिए निम्नलिखित पोषण-अनुपात ठीक माने गये हैं :

काम पर नहीं लगा हुआ बैल	१ : १२	काम पर लगा हुआ बैल	१ : ७
दुधारू गाय	१ : ६	सूखी गाय	१ : ७
ओसर	१ : ६	बछड़े	१ : ४
भेड़-बकरी	१ : ६		

पोषण-अनुपात के मान से राशन बनाने की रीति

मान लें कि हमें काम पर लगे हुए एक बैल, जिसका वजन लगभग १२ मन (४५० किलोग्राम) है, के लिए राशन बनाना है। ऊपर की सारणी से ज्ञात होगा कि इसके लिए पोषण-अनुपात १ : ७ चाहिए। पहले यह बतलाया जा चुका है कि बारह मन वजनवाले बैल को चारा-दाना इतना देना चाहिए कि उसका सूखा वजन दस सेर हो जाय।

हम नीचे तीन प्रकार के राशन बनाते हैं—(१ सेर = ०.६३ किलोग्राम)।

(मात्रा सेर में विश्लेषणांक से गिनकर)

	सेर	एल्बु०	कार्बो०	स्नेह
(१) जुवार चरी (सूखी)	७.५	०.३१	३.५६	०.००
चोकर	२.०	०.२३	१.२१	०.०७५
चने की चूरी	०.५	०.०८	०.२६	०.०२५
कुल	१०.०	०.६२	५.०६	०.१००

$$\text{पोषण-अनपात}\ \frac{५.०६ + ०.१० \times २.३}{०.६२} = १ : ८.६$$

	सेर	एल्बु०	कार्बो०	स्नेह
(२) जुवार चरी (सूखी)	७.५	०.३१	३.५६	०.००
चोकर	१.०	०.११	०.६१	०.०३५
चने की चूरी	१.५	०.२५	०.८७	०.०७६
कुल	१०.०	०.६७	५.०७	०.१११

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पोषण-अनुपात $\frac{५.०७ + ०.१११ \times २.३}{०.६७} = १ : ८$

(३) जुवार चरी (सूखी)	७.५	०.३१	३.५९	०.००
चोकर	१.०	०.११	०.६१	०.०३५
चने की चूरी	१.२५	०.२१	०.७२	०.०६४
तिल की खली	०.२५	०.१०	०.०७	०.०२५
कुल	१०.०	०.७३	४.९९	०.१२४

पोषण-अनुपात $\frac{४.९९ + ०.१२४ \times २.३}{०.७३} = १ : ७.२$

पहले प्रकार के मिश्रण का अनुपात १:८.६, दूसरे का १:८ और तीसरे का १:७.२ है, इसलिए तीसरा मिश्रण उत्तम हुआ, जो १:७ अनुपात के बिलकुल निकट है। इस रीति से यदि राशन बनाये जायं तो वे वैज्ञानिक ढंग के होंगे।

उपर्युक्त विभिन्न पदार्थों के विश्लेषणांक

	एल्बुमिनाइड	कार्बोहाइड्रेट	स्नेह	
जुवार चरी (सूखी)	४.१९%	४७.८५%	०.००%	पूसा-बुले-टिन नं० ७०से
चोकर	११.३३%	६०.६४%	३.७४%	
चने की चूरी	१६.९०%	५८.४१%	५.१०%	
तिल की खली	३१.६६%	२९.५९%	१०.९०%	

जहांतक बन सके सूखे चारे के साथ हरा चारा मिलाकर देना चाहिए। दाना भी सब प्रकार का न होकर मिश्रित हो तो अच्छा है। खली, चोकर, चूनी, जई आदि का मिश्रण उत्तम होगा। भैंस के दाने में बिनौले मिलाना भी अच्छा होगा, उससे घी में दाना अच्छा पड़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चारे-दाने के लिए भारत में मिलनेवाले पदार्थ

चारा

सूखा	हरा	सायलेज
१. विभिन्न प्रकार के घास	१. हरा घास	मक्का, जुवार,
२. गेहूं का भूसा	२. हरी मक्का	चंवली आदि का
३. जौ का भूसा	३. हरी जुवार	मिश्रण या
४. गरं का भूसा	४. हरा बाजरा	पृथक् रूप में
५. धान का पुआल	५. हरा जव	हरे पदार्थ से
६. चरी	६. जई हरी	बनाया हुआ पदार्थ
७. मक्का की कड़वी	सदाबहार	
८. जुवार की कड़बी	७. गिनि घास	
९. वाजरे की कड़बी	८. हाथीकांडा	
१०. जुवार की बुरी	दलहनी चारा	
दलहनी चारा	९. बरसीम	
११. बरसीम	१०. लूसर्न	
१२. लूसर्न	११. सफताल	
१३. सेंजी	१२. सेंजी	
१४. मूंग का भूसा	१३. ग्वार	
१५. मूंगफली का भूसा	१४. चंवली	
१६. चने का भूसा		

सूखा चारा (घास)

१. घास कई प्रकार के होते हैं और जंगलों में या पड़ती भूमि में पाये जाते हैं। इन्हें काटकर रख लेते हैं और आवश्यकतानुसार पशुओं को खिलाते हैं।

२. गेहूं, ३. जव, ४. जई और ५. धान का भूसा भी पशुओं को खिलाया जाता है। पुआल की कुट्टी काटकर उसे २४ घण्टे तक पानी में डुबोकर रखने और फिर धोकर सुखाकर खिलाने से उसमें के कुछ हानिप्रद पदार्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निकल जाते हैं और उसके गुण बढ़ जाते हैं।

६. चरी-जुवार को घनी बोकर जब फसल करीब-करीब पक जाती है तो काटकर सुखा लेते हैं और आवश्यकतानुसार कुट्टी काटकर खिलाते हैं।

(७) मक्का, (८) जुवार और (९) बाजरे की फसलों के भुट्टे जब अलग कर लिये जाते हैं तो शेष भाग बचता है उसे कड़बी कहते हैं। इसकी भी कुट्टी काटकर खिलाई जाती है।

(१०) जुवार की बूरी—जुवार के भुट्टों को गाहकर उनसे जब दाना अलग कर लिया जाता है तो शेष महीन भाग रह जाता है वह बूरी कहलाता है। कुछ हद तक इसमें दाने का गुण होता है।

बलहनी चारा—(११) बरसीम, (१२) लूसर्न और (१३) सेंजी आदि की हरी फसलें काटकर सुखा लेते हैं। इन्हें बड़ी सावधानी से सुखाना पड़ता है, क्योंकि सुखाने में पत्तियां बहुत झड़ जाती हैं। ऐसा चारा बड़ा पौष्टिक होता है। इन्हें दो-तीन सेर से अधिक नहीं देना चाहिए तथा दूसरी घास के साथ मिलाकर देना चाहिए।

(१४) मूंगफली की फलियां तोड़ने से जो भाग बच जाता है उसका भी चारा अच्छा होता है। पशु इसे बड़े चाव से खाते हैं।

मूंग और चने को गाह लेने के पश्चात् जब दाना निकाल दिया जाता है, तो शेष भाग चारे का काम देता है।

हरा चारा—(१) जंगलों में या पड़ती भूमि में, जहां पशु चराये जाते हैं, बरसात में हरा चारा मिलता रहता है। कई स्थानों में तो आठ-दस महीनों तक दूब-जैसा हरा चारा मिल जाता है। ऐसे स्थानों में चराते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि चरागाह को अलग-अलग भागों में बांट लिया जाय और क्रमानुसार पशु चराये जायं, ताकि घास की बाढ़ होती रहे और पशुओं को भरपेट चारा मिलता रहे। (२) मक्का, (३) जुवार, (४) बाजरा, (५) जौ और (६) जई आदि की खेती का वर्णन इस पुस्तक के दूसरे खण्ड में दिया गया है। जब ये फसलें चारे के लिए उपजाई जाती हैं, तब घनी बोई जाती हैं और फूलने के समय अथवा कुछ पूर्व काटकर खिलाई जाती हैं। ऐसी हरी फसलों में लगभग ७५ शतांश जल मानकर सूखे पदार्थ के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रूप में गणना करके खिलाना चाहिए।

सदाबहार चारा और दलहनी चारा

गिनी घास, हाथिकांडा और लूसर्न की फसलें तो कई साल तक एक ही स्थान पर लगी रहती हैं। इन तीनों की गणना भी सदाबहार चारे में की जाती है।

(१०) बरसीम, (११) सफताल, (१२) सेंजी, (१३) ग्वार और (१४) चंवली आदि की खेती का वर्णन भी दूसरे खण्ड में दिया जा चुका है। इनकी खेती में यह लाभ है कि एक बार लगा देने से, सेंजी के सिवा, अन्यों से कई कटाव मिलते रहते हैं।

सायलेज—सायलेज को एक प्रकार का अचार समझना चाहिए। जिन दिनों में मक्का, जुवार, बाजरे का हरा चारा बहुत मिलता है, उन दिनों में उसे जमीन में गढ़े बनाकर या पक्के गढ़ों में रखते हैं। इनकी कुट्टी काटकर मिट्टी में दबा लेने से लाभप्रद रासायनिक परिवर्तन हो जाता है। बाद में जिन दिनों में हरा चारा नहीं मिलता, उन दिनों इसे खिलाते हैं। गढ़े भरने के लिए कुट्टी काटने की कल से इनकी कुट्टी काटकर गढ़े में डाल देते हैं। जब गढ़ा भर जाता है तो उसपर मिट्टी डालनी पड़ती है। मिट्टी इस रीति से डालनी चाहिए कि बीच में काफी ऊंची हो, ताकि जब सायलेज दबे तो बीच में गढ़ा न हो जाय, वरना बरसात में पानी भर जायगा और सायलेज बिगड़ जायगा।

दाना

अधिक प्रोटीनवाले	कम प्रोटीनवाले
(१) चना	(१) चोकर
(२) तूअर	(२) मक्का
(३) ग्वार	(३) बाजरा
(४) मूंग	(४) गेहूं
(५) उड़द	(५) दालों के छिलके, चूरी आदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) बिनौले
(७) खलियां

इस मद के अन्दर उन फसलों के नाम हैं, जिनमें से चोकर, दालों के छिलके और चूरी को छोड़कर सबकी खेती का वर्णन पुस्तक के दूसरे खण्ड में दिया है। चोकर वह पदार्थ है जो गेहूं के आटे को चालने पर चलने से बच जाता है। दालों के छिलके और चूरी से उन चीजों का अभिप्राय है, जो दाल बनाने में निकलते हैं और पशुओं को खिलाये जाते हैं।

चरागाह की व्यवस्था—कोई-कोई सज्जन अपने फार्म पर कितना ही चारा उपजा सकें, परन्तु सभी कृषक ऐसा नहीं कर सकते; इसलिए ग्राम के सभी पशु चर सकें, ऐसा चरागाह भी होना चाहिए। कम से कम प्रत्येक ग्राम में ५ % भूमि चरागाह के लिए छोड़नी चाहिए। पशुओं को बाहर घुमाना भी उनके स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। इसलिए यदि चरागाह रहा तो चरने और घूमने के दोनों लाभ हो जाते हैं।

पानी की व्यवस्था—पशुओं को पानी देने के विषय में बहुधा असावधानी हो जाती है। स्वच्छ जल कहीं-कहीं ही मिलता है। गन्दा जल पिलाने से पशुओं में बहुत व्याधियां हो जाती हैं और वे मर जाते हैं। इसलिए प्रत्येक ग्राम में पशुओं को पिलाने के लिए स्वच्छ जल की व्यवस्था अवश्य ही होनी चाहिए।

४—पशु-प्रजनन

पशु-प्रजनन वह कला है, जिससे हम अपनी आवश्यकतानुसार गुणवाले पशु उत्पन्न कर सकते हैं। वैज्ञानिकों ने अपने-अपने अनुभवों के आधार पर कुछ सिद्धान्त और नियम बनाये हैं, जिनके अनुसार काम करने से पशुओं की जातियों में सुधार हो सकता है।

पशु-प्रजनन का कार्य हाथ में लेने के पहले हमें यह जानना होगा कि हमारे यहां कौन-सी जाति के पशु हैं, उनमें कौन-कौन से गुण हैं और कौन-से गुण उनमें लाना है।

पशुओं की जातियां

समस्त भारतवर्ष के पशुओं का विचार किया जाय तो थोड़े-बहुत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भेद-भावानुसार लगभग डेढ़ दर्जन से अधिक जातियां गाय की और उनसे आधी भैंस की होंगी। इसी भांति भेड़-बकरियों की भी कई जातियां हैं, परन्तु मुख्य जातियां भेड़ों की पांच और बकरियों की सात मानी गई हैं।

गायों के वर्ग—जैसाकि पहले बताया जा चुका है, हम गायों की जातियों को तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं : दुधारू, भारवाही (जिनकी सन्तान भार ढो सके) और दोकारी।

दुधारू और दोकारी गाय की जातियां—(१) अंगोल, (२) कांकरेज, (३) गीर, (४) साहीवाल, और (५) हरियाना अच्छी जातियां मानी गई हैं। वैसे सिन्धी और थारपारकर जातियां भी अच्छी हैं, परन्तु उनके मुख्य स्थान अब पाकिस्तान में हैं।

उपर्युक्त जातियों को पहचानने के चिह्न[1] तथा उनके गुण-दोष

अंगोल—वर्तमान आंध्र प्रदेश इनकी जन्मभूमि मानी गई है। इस जाति के पशुओं का रंग सफेद होता है। बदन लम्बा और गर्दन छोटी होती है। ककुद काफी ऊंची होती है। नर की ऊंचाई[2] लगभग अट्ठावन इंच[3] और मादा की पचपन इंच के करीब होती है। वजन में इस जाति के पशु काफी भारी होते हैं। नर का वजन[4] लगभग पन्द्रह मन और मादा का लगभग बारह मन होता है। गाय का ऐन

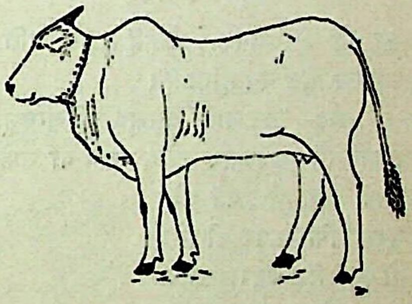

अंगोल गाय

---

[1] Agriculture and Animal Husbandry in India, by M. S. Randhawa, 1958 के आधार पर।

[2] जमीन से ककुद के पीछे तक की ऊंचाई।

[3] १ इञ्च=०.०२५ सेंटीमीटर।

[4] १ मन=३७.३२४ किलोग्राम।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौड़ा, मुलायम और उभरी हुई नसोंवाला होता है। एक ब्यांत में इस जाति की गाय लगभग चालीस मन दूध देती है।

कांकरेज—इनकी जन्मभूमि दक्षिण-पश्चिम गुजरात है। ये पशु भूरे रंग के परन्तु आगे और पीछे के भागों पर काली झांई रहती है। इनके सींग मोटे, पहले कुछ बाहर की ओर आकर फिर पीछे जाते हैं। चेहरा चौड़ा और बीच में कुछ दबा हुआ होता है। गर्दन पतली और लम्बी होती है तथा ककुद ऊंची होती है। नर की ऊंचाई लगभग बासठ इंच और मादा की इक्यावन इंच होती है। नर का वजन लगभग सोलह मन और मादा का बारह मन होता है। गाय का ऐन और थन बड़े होते हैं। इस जाति की गाय का दूध एक ब्यांत में लगभग तीस मन होता है।

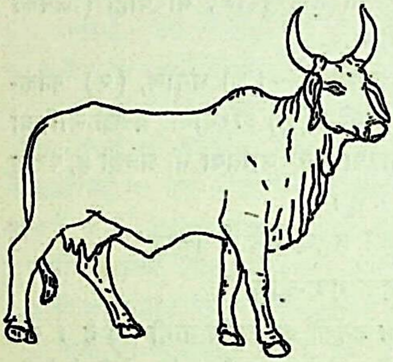

कांकरेज गाय

गीर—इस जाति के पशुओं की जन्मभूमि गुजरात (काठियावाड़) है। इनका रंग अधिकतर सफेद, लाल या सफेद-लाल बिंदकी-युक्त होता है। इनके सींग पीछे की ओर मुड़कर फिर ऊपर की ओर हो जाते हैं। चेहरा उभरा हुआ मोटा और शरीर लम्बा होता है। नर की ऊंचाई लगभग तिरेपन इंच और मादा की नर से तीन-चार इंच कम होती है। नर का वजन कांकरेज से कुछ

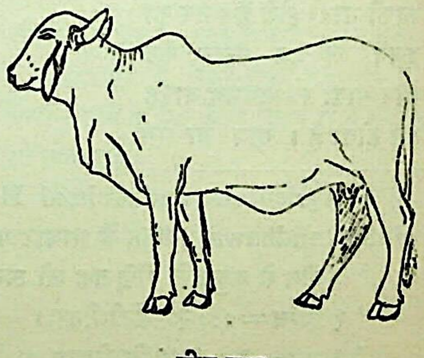

गीर गाय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कम लगभग पन्द्रह मन और मादा का करीब दस मन होता है। इस जाति की गाय के ऐन चौकोर होते हैं। गाय एक ब्यांत में लगभग चालीस-पैंतालीस मन दूध देती है।

साहीवाल—इनकी जन्मभूमि मध्य पंजाब है। ये पशु छोटे सींगवाले बादामी रंग के होते हैं। इनका सिर चपटा तथा गर्दन पतली और लम्बी होती है। नर की ऊंचाई लगभग चौवन इंच और मादा की अड़तालीस इंच होती है। नर का वजन लगभग पन्द्रह मन और मादा का ग्यारह मन तक होता है। इस जाति की गाय के ऐन तो बड़े होते हैं परंतु थन ऊपरवाली जातियों के गायों से छोटे होते हैं। यह जाति दूध के लिए विख्यात है। एक ब्यांत में लगभग नब्बे मन तक दूध देती है।

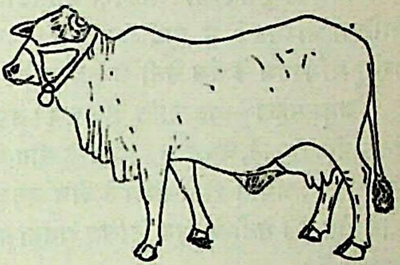

साहीवाल गाय

हरियाना—इस जाति के पशु दक्षिण पंजाब और दिल्ली के आस-पास पाये जाते हैं। इनका रंग काली झांई लिये हुए सफेद होता है। सींग छोटे और खुरदुरे तथा चेहरा लम्बा और चपटा होता है। ककुद साधारण ऊंची होती है। नर की ऊंचाई छप्पन इंच और मादा की लगभग बावन इंच होती है। नर का वजन लगभग चौदह मन और मादा का करीब दस मन होता है। गाय का ऐन बड़ा, जिसके अगले थन कुछ बड़े होते हैं। एक ब्यांत में यह गाय लगभग तीस मन तक दूध देती है।

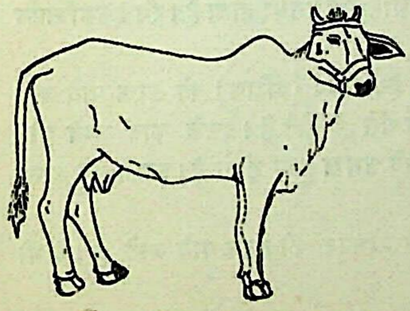

हरियाना गाय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त पशुओं में दूध की मात्रा देखते हुए हम यही कहेंगे कि साहीवाल, गीर और अंगोल को दुधारू जाति की गणना में मानकर दूसरी दो यानी कांकरेज और हरियाना को दोकारी जाति मानना चाहिए। इन दोनों के बैल खेती में अच्छा काम देते हैं।

भारवाही बैलों की जातियां

उपर्युक्त दुधारू और दोकारी जातियों के सिवाय निम्नलिखित प्रख्यात जातियां भारतवर्ष में पाई जाती हैं। इनकी गाय दूध तो कम देती है परन्तु अधिकांश के बैल खेती के काम और भार ढोने के अच्छे होते हैं।

अमृतमहल—यह जाति दक्षिण की तरफ मैसूर के पास पाई जाती है। इनके सींग चिकने, चमकीले, हरिन के सींग के आकार के सिर के बीच में से निकलते हैं, अर्थात् दोनों सींगों के बीच जगह बहुत कम रहती है। कान बहुत छोटे होते हैं। खेती के काम के लिए अथवा गाड़ी में भार ढोने के लिए अच्छे काम के हैं।

कांग्यम—ये पशु भी दक्षिण भारत में ही पाये जाते हैं और सूरत-शक्ल में अमृत महल-जैसे ही होते हैं।

खिलारी—ये शोलापुर-सतारा की तरफ दक्षिण में पाये जाते हैं। सूरत अमृत महल जैसी ही होती है।

गौलव—यह जाति नागपुर की ओर पाई जाती है। इनके शरीर के ढांचे का अगला भाग वड़ा होता है और पिछला पतला। इसके बैल दौड़ने में अच्छे होते हैं। सिर उभरा हुआ और मुंह पतला होता है। रंग इनका सफेद होता है।

देवनी—इस जाति के पशु हैदराबाद (दक्षिण) की तरफ पाये जाते हैं। करीब-करीव गीर जाति के जैसे ही होते हैं। इनके कान लम्बे और नीचे लटके हुए होते हैं। सिर आगे उभरा हुआ होता है। इनका रंग लाल-काले धब्बों से युक्त सफेद है।

नागौर—इस जाति के बैल जोधपुर की तरफ पाये जाते हैं। ये भी दौड़ने में अच्छे होते हैं।

निमाड़ी—इस जाति के पशु सफेद धब्बोंवाले लाल रंग के होते हैं। सिर उभरा हुआ और सींग कुछ ऊपर जाकर बाहर की ओर बढ़ते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मालवी—यह जाति मध्यप्रदेश में मालवा में पाई जाती है। खेती के काम में ये बड़े अच्छे होते हैं। रंग इनका अधिकतर काली झाईं लिये हुए सफेद होता है। सिर चौड़ा और सींग सिर की बाजू से निकले हुए ऊपर को जाते हैं और नोकीले होते हैं।

मेवाती—इस जाति के पशु अलवर और भरतपुर की तरफ पाये जाते हैं। करीब-करीब हरियाना-जैसे होते हैं।

रथ—इस जाति के बैल भी अलवर के आस-पास पाये जाते हैं ये भी करीब-करीब हरियाना-जैसे होते हैं।

हल्लीकर—इस जाति के पशु भी दक्षिण भारत में पाये जाते हैं। सूरत इनकी अमृतमहल जाति के पशुओं-जैसी होती है। रंग गहरी काली झाईं लिये सफेद होता है।

वज़न में देखा जाय तो अमृतमहल, निमाड़ी, मालवी, साहीवाल और हल्लीकर करीब-करीब बराबर होते हैं। हरियाना का वज़न इनसे कुछ अधिक होता है। इनसे अधिक खिलारी, देवली और नागौर का तथा सबसे अधिक कांकरेज और गीर का होता है।

भैंस की जातियां—

भैंस वैसे स्थानानुसार देखी जाय तो कई जाति की मिलेगी, परन्तु निम्नलिखित चार जातियां दूध के लिए विख्यात हैं। भैंसें बहुधा दूध के लिए ही पाली जाती हैं, वैसे नर-पशु भार ढोने और धान के खेतों को जोतने में भी अच्छे काम के हैं।

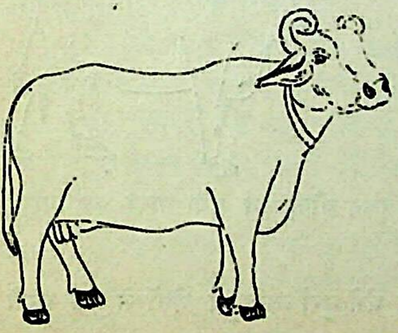

मुर्रा—इस जाति की भैंस रोहतक (पंजाब) तथा दिल्ली में पाई जाती हैं। चकरीदार सींगों से इनकी पहचान सरल हो जाती है। इनका रंग काला और चमकीला होता है। चेहरा सुन्दर, कटा हुआ, मादा की गर्दन लम्बी और पतली पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नर की बहुत मोटी होती है। शरीर का ढांचा अच्छा मोटा होता है। नर की ऊंचाई छप्पन इंच और मादा की बावन इंच होती है। नर का वज़न लगभग सोलह मन और मादा का लगभग बारह मन तक होता है। ऐन काफी बड़ा, बराबर और बड़े थनवाला होता है। ऐसी भैंस दूध और घी के लिए उत्तम पाई गई हैं। एक ब्यांत में साधारणतः लगभग पचास मन और कोई कोई भैंस अस्सी-नब्बे मन तक दूध देती है।

जाफराबादी—इस जाति के पशु काठियावाड़ (गुजरात) की तरफ होते हैं। सिर बहुत मोटा और सींग नीचे की तरफ आकर मुड़तेहैं।मुर्रा से इसका शरीर लंबा होता है। नर की ऊंचाई छप्पन इंच, मादा की पचपन इंच और नर का वजन सोलह मन तथा मादा का लगभग बारह मन होता है।

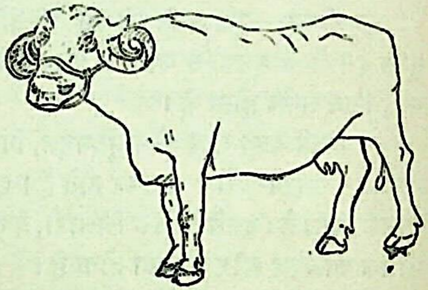

नागपुरी—ये बम्बई प्रांत में नागपुर की तरफ पाई जाती हैं। इनके सींग बड़े लम्बे होते हैं और गर्दन के साथ लगे हुए लगभग डेढ़-दो फुट लम्बे चले जाते हैं। मुर्रा से इस जाति की भैंस छोटी होता हैं। इनको पालने में खर्च कम पड़ता है। वैसे दूध के लिए आर्थिक दृष्टि से काफी अच्छी है। नर की ऊंचाई छप्पन इंच और मादा की बावन इंच होती है। नर का वजन चौदह मन तथा मादा का ग्यारह मंन तक होता है।

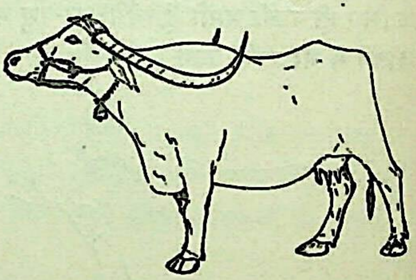

मेहसाना—इस जाति की भैंसें मुर्रा जाति की भैंसों से कुछ छोटी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

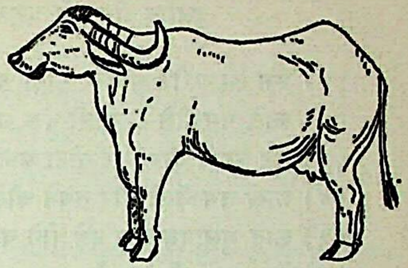

और नागपुरवाली से बड़ी होती हैं। सींग नागपुर वाली जैसे, परन्तु छोटे। रंग काला, नर की ऊंचाई छप्पन इंच और मादा की लगभग बावन इंच होती है। नर का वज़न सोलह मन और मादा का बारह मन तक होता है। दूध में नागपुरी से कुछ अच्छी होती है।

विभिन्न गुणोंवाले पशुओं की पहचान

दुधारू गाय की पहचान

(१) गाय दिखने में फणी के आकार की हो; अर्थात् अगले भाग की अपेक्षा पिछला भाग बड़ा होना चाहिए।

(२) सिर बड़ा, आंखें तेज़ पानीदार, नथने चौड़े और थूथन बड़ी होनी चाहिए।

(३) गर्दन पतली और लम्बी होनी चाहिए।

(४) कान मुलायम हों।

(५) चमड़ी पतली होनी चाहिए जो हिलाने से हिल सके। अधिक चर्बीवाली गायों की चमड़ी मोटी होती है अतः वह हिलती नहीं।

(६) गाय जब खड़ी हो तो पिछली टांगें चौड़ी होनी चाहिए जिसमें ऐन की बनावट अच्छी हो।

(७) ऐन बड़ा और उसपर चारों थन बराबर की दूरी पर होने चाहिए और उनका आकार भी उत्तम हो।

(८) नाभि के पास की एक शिरा, जो ऐन तक जाती है और जिसे 'दुग्ध-शिरा' कहते हैं, वह उभरी हुई होनी चाहिए। यह अधिक दूध की द्योतक है।

(९) स्वभाव शान्त होना चाहिए।

(१०) सब प्रकार का खाने-योग्य चारा-दाना खा सके और जल्दी खा जाय।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुधारू भैंस की पहचान

(१) भैंस का शरीर चौकोर होना चाहिए।
(२) काले चमकीले रंगवाली भैंस अच्छी होती है।
(३) मुंह लम्बा और सिर मोटा अच्छा होता है।
(४) आंखें चमकीली और नथने चौड़े होने चाहिए।
(५) कान मुलायम और बड़े होने चाहिए।
(६) ऐन बड़ा, चौकोर और मुलायम होना चाहिए।
(७) थन बराबर आकार के और बराबर की दूरी पर तथा समान आकार के होने चाहिए।
(८) दुग्ध-शिरा उभरी हुई होनी चाहिए। अधिक दूध देनेवाली भैंस की दुग्ध-शिरा उभरी हुई होती है।
(९) चारा-दाना खाने में अच्छी हो। सब प्रकार का खाने-योग्य चारा-दाना खा सके।
(१०) स्वभाव शान्त हो। विशेष चंचल न हो।

भारवाही या खेतों के जुताई-योग्य बैलों की पहचान

(१) बैल का अगला भाग पिछले भाग से बड़ा होना चाहिए।
(२) अच्छे दौड़नेवाले बैलों का पिछला भाग, जैसा कि गोलव जाति के बैलों का होता है, बड़ा हलका होता है।
(३) काठी ठोस और मजबूत होनी चाहिए।
(४) बैल के पांव जब वह खड़ा रहे तो खड़े और सीधे रहने चाहिए। अगले पांवों के बीच का हिस्सा चौड़ा होना चाहिए।
(५) खुर मोटे लेकिन विशेष फटे हुए न हों। मोटे खुरों से जमीन की पकड़ अच्छी होती है।
(६) पिछले पैरों के पुट्ठे अच्छे बने हुए होने चाहिए।
(७) गर्दन मोटी होनी चाहिए। पतली गर्दनवाला बैल माल ढोने में अच्छा नहीं होता।
(८) कंधे ढालू और मजबूत पुट्ठों से भरे हुए होने चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(९) पांव की हड्डियां समान और मोटी हों ।

(१०) पूंछ पतली और लम्बी होनी चाहिए ।

(११) सिर मोटा और आंखें चमकीली होनी चाहिए ।

(१२) पतले और छोटे सींगवाला बैल अच्छा होता है ।

(१३) बैलों में चंचलता होनी चाहिए । चंचल बैल चाल में तेज होते हैं ।

(१४) हर प्रकार के चारे-दाने को खानेवाला और जल्दी खानेवाला बैल अच्छा होता है ।

(१५) बधिया हुए बैल अच्छे होते हैं ।

(१६) बैल खरीदे जायं तो चार-पांच साल की आयु के खरीदने चाहिए ।

बैलों की आयु का अनुमान

बैलों की आयु का अनुमान उनके सींगों पर बननेवाले चक्करों तथा दांतों से किया जाता है । आयु के तीसरे वर्ष से सींगों पर चक्कर बनना आरम्भ होते हैं और प्रतिवर्ष एक चक्कर बनता है । इस हिसाब से चक्कर की संख्या में दो जोड़ देने से आयु का अनुमान हो जाता है परन्तु इसकी अपेक्षा दांतों से अनुमान और ठीक अच्छा होता है और लोग बहुधा उन्हीं से करते हैं ।

दांतों की संख्या—

	अस्थायी या दूध के दांत, जिनकी जगह पर कुछ समय बाद स्थायी दांत निकल आते हैं		स्थायी
	दांत	दाढ़	दाढ़
ऊपर का जबड़ा	०	६	६
नीचे का जबड़ा	८	६	६

ऊपर के अंकों से यह ज्ञात होगा कि बैलों के ऊपर के दांत नहीं होते । छः अस्थायी और छः स्थायी दाढ़ें होती हैं । नीचे के जबड़े में सामने के भाग में आठ दांत होते हैं । ऊपर के जबड़े में दांतों के सामने कठोर पेड़ी होती है । बैल वर्ग के पशु जब घास चरते हैं तो नीचे के दांत तथा ऊपर की पेड़ी से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दबाकर उसे काटते हैं। दांत और दाढ़ों के बीच में काफी खाली जगह रहती है। डाढ़ें दांतों के निकट से ही शुरू नहीं होतीं। दूध के आठों दांत और छः-छः डाढ़ें कुछ समय में घिस जाती हैं और उनकी जगह पर स्थायी दांत-दाढ़ निकल आते हैं। दूध के दांत सफेद, छोटे और चमकीले होते हैं। स्थायी दांत मोटे और कुछ भूरे रंग के होते हैं।

दांत-दाढ़ निकलने का क्रम

अस्थायी दांत

सामने के दो दांत	उम्र के समय
उनके बगल के दो	एक सप्ताह में
फिर दूसरे दो	दो सप्ताह में
पूरे आठ	चार सप्ताह में

इनकी जगह स्थायी दांतों के निकलने का समय

सामने के दो	ढाई साल में
उनके बगल के दो	तीन साल में
फिर दूसरे दो	चार साल में
पूरे आठ	पांच साल में

अस्थायी दाढ़ों का क्रम

पहली चार	उम्र के समय
दूसरी दो	चार सप्ताह में

स्थायी दाढ़ों का क्रम

पहली चार	दो-ढाई साल में
दूसरी दो	तीन साल में

जबड़े के प्रत्येक बाजू की चौथी, पांचवीं और छठी दाढ़ें क्रमानुसार छः महीने में, डेढ़ साल में और दो-ढाई साल में।

अस्थायी दांत आठ-दस माह की आयु के बाद क्रमानुसार धीरे-धीरे घिसते जाते हैं और स्थायी दांत उनकी जगह निकलते आते हैं, जैसाकि ऊपर बतलाया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त क्रम से यह ज्ञात होगा कि यदि आपको सामने के दो स्थायी दांत दिखें तो समझिये बैल की आयु दो-ढाई साल की है। यदि चार स्थायी दांत दिखें तो उसकी आयु तीन-सवा तीन साल की होगी। यदि छः स्थायी दांत दिखें तो उसकी आयु चार साल की होगी और यदि आठों स्थायी दांत निकल आवें तो वह बैल पांच वर्ष का होगा। पांच साल की आयुवाला बैल खेती के लिए अच्छा होता है। इसके बाद दांत फिर घिसने लगते हैं। सात-आठ साल की आयु तक करीब-करीब सभी दांत आधे घिस जाते हैं। दस साल की आयु तक दांतों की कलई थोड़ी ही रह जाती है। पन्द्रह-सोलह साल की आयु तक दांत बिलकुल घिस जाते हैं और उनकी जड़ों में खड्डे नज़र आने लगते हैं।

स्मरण रहे, स्थायी दाढ़-दांत का निकलना पशुओं के खान-पान तथा उनकी जाति पर भी निर्भर है। यदि खान-पान अच्छा हो तो स्थायी दांत कुछ जल्दी भी निकल आते हैं। इसलिए दांतों से पूरी-पूरी आयु नहीं जानी जाती, अनुमानित आयु ही बताई जा सकती है।

अच्छे सांड की पहचान

अच्छे बैलों के जो लक्षण बताये हैं, उनमें बधियाने के सिवाय सब लक्षण होने चाहिए। जहां तक बने, ज्ञात वंशावलीवाला सांड पशु-प्रजनन फार्म से मंगाना चाहिए।

पशु-प्रजनन में सांड का महत्त्व

यह भलीभांति विदित है कि अच्छे सांड के गुण उसके द्वारा गर्मायी हुई गायों के बछड़ों में आते हैं। पहली पीढ़ी में ५०% गुण आ जाते हैं। दूसरी में लगभग ७५% शतांश, तीसरी में ८७% शतांश और चौथी में ९४% तक सांड के गुण आ जाते हैं।

सांड में गुणार्जन की शक्ति अधिक होती है इसलिए जिस जाति के गुण हमें अपने दूध में लाने हैं, उसी जाति के सांड को खरीदना चाहिए।

सांड तो अपने गुण अर्जित करता ही है परन्तु अपने यूथ की गायों का भी चुनाव होते रहना चाहिए। दूसरे जानवरों से लड़नेवाली, कम दूध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देनेवाली, या अन्य अवगुणवाली हों, तो ऐसी गायों को यूथ से निकालकर बेच देना चाहिए।

यदि अपने यूथ में गायें और सांड दोनों अच्छे हैं तो लगातार वैज्ञानिक ढंग से प्रजनन करने से नये पशुओं में उन्नत गुण स्थायी हो जाते हैं।

स्मरण रहे, प्रत्येक पचास गाय-पीछे एक सांड रखना चाहिए।

पशु-प्रजनन के प्रकार

पशु-प्रजनन चार प्रकार से होता है :

(१) 'इन एण्ड इनब्रीडिंग'—एक ही जाति की गाय को उसी जाति के सांड से वर्धाना और यदि दूध में गुणार्जन जल्दी करना हो तो उसी सांड से उसके द्वारा उत्पन्न हुई बछिया को वर्धाना। ऐसी क्रिया को अंग्रेजी में 'इन एण्ड इनब्रीडिंग कहते हैं।

(२) संकर-क्रिया—इस प्रकार के प्रजनन की चार रीतियां हैं :

(क) एक वर्ग के पशु को दूसरे वर्ग के पशु से वर्धाना। जैसे खच्चर पैदा करने के लिए गधी से घोड़े का मेल कराया जाता है।

(ख) इसमें पशु एक ही वर्ग के होते हैं परन्तु दोनों की जातियां पृथक् होती हैं। जैसे साहीवाल जाति की गाय को अंगोल जाति के सांड से वर्धाना या अंगोल गाय को साहीवाल जाति के सांड से वर्धाना।

(ग) एक ही जाति के सांड को उसी जाति की गाय से मिलाना चाहिए, परन्तु आपस में रिश्ता न हो।

(घ) कृत्रिम गर्भाधान—हाल ही में एक ऐसी रीति निकली है जिसमें सांड का मिलन गाय से नहीं होता, वरन् सांड का वीर्य निकालकर गर्भायी जानेवाली गाय की योनि में यंत्र से छोड़ा जाता है। ऐसी क्रिया से गाय गर्भवती हो जाती है। इस क्रिया में ऋतुकाल के प्रारम्भ में तथा पन्द्रह-बीस घण्टे बाद एक बार और वीर्य योनि में छोड़ना अच्छा रहता है। कृत्रिम गर्भाधान के कई लाभ हैं। (१) सांड अधिक संख्या में नहीं रखने पड़ते। (२) एक सांड के वीर्य से आठ-दस गायें वर्धायी जा सकती हैं। (३) एक स्थान से दूसरे स्थान पर वीर्य ले जाकर गर्भाधान किया जा सकता है। (४) गायें ऐसी छोटी, दुर्बल या अपंग हों कि सांड का बोझ न झेल सकें,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो भी वे वर्धायी जा सकती हैं।

(३) उन्नतीकरण प्रजनन (ग्रेडिंग)---इस रीति में सांड अच्छे ज्ञात कुल का होता है और गायों की वंशावली अज्ञात होती है। साधारणतः यह रीति अधिकतर ग्रामों में काम में लाई जाती है।

ग्रामीण जनता को अच्छे सांडों की सेवा सरलता से प्राप्त हो सके इसके लिए 'पशु-ग्राम-केन्द्र' खोलने की योजनाएं सरकार ने बनाई हैं। इसमें सरकार की तरफ से अच्छा सांड उन ग्रामों को दिया जाता है जहां की जनता उस सांड के खान-पान की व्यवस्था अच्छी तरह से कर सके। गायें अच्छी रक्खी जायं और उन्हें उसी सांड से वर्धाया जाय। गांव में कमजोर अज्ञात कुल के सांड न रहने दिये जायं और नर-बच्चे, जिनसे गायें वर्धायी जा सकें, उन्हें बधिया किया जाय।

सांड आवश्यकतानुसार गुणवाला भेजा जाता है; अर्थात् जिस प्रकार के पशु उत्पन्न करना हो उन्हीं गुणों को लानेवाला सांड दिया जाता है। जैसे दुधारू पशु या भारवाही या दोकारी पशु उत्पन्न करना।

गर्भाधान का समय

ध्यान रहे, पशुओं में गर्भाधान उसी समय होता है जब मादा गर्माती है और सांड गर्मायी हुई मादा के पास ही जाता है। जब गर्भ रह जाता है तो फिर मादा गर्भाती नहीं। यदि फिर गर्माये तो समझना चाहिए कि या तो किसी कारण से पहली बार गर्भ नहीं रहा या गर्भ गिर गया।

गर्माने की अवधि गाय में एक-दो दिन और भैंस में दो-तीन दिन तक रहती है। यदि उस काल में सांड न मिले तो याद रखिये, गाय बीस दिन बाद और भैंस अट्ठाईस दिन बाद फिर गर्माती है। जो गाय-भैंस अधिक दिनों तक न गर्माये, उसे बाजरे और चने की चूरी खिलानी चाहिए।

जब गाय बहुत रंभाये और दूसरी गायों पर कूदे और जब भैंस बहुत रेंके तो समझना चाहिए वे गर्मायी हुई हैं। उन दिनों में उनमें बहुत बेचैनी आ जाती है। सांड के साथ मेल हो जाने पर फिर नहीं रंभातीं या रेंकतीं।

गर्भाधान के पश्चात् कुछ दिनों तक ऐसा चारा-दाना नहीं देना चाहिए जिसकी तासीर गर्म हो, जैसे गेहूं का भूसा, खली आदि। चारा-दाना आव-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्यकता से अधिक भी नहीं देना चाहिए। ऐसी सावधानी नहीं रखने से गर्भपात हो जाता है।

गाय-भैंस में गर्भकाल और प्रसव के समय ध्यान देने योग्य बातें

गर्भाधान के पश्चात् गाय लगभग २८५ दिनों में और भैंस ३१० दिनों में जनती है। गर्भाधान के बाद गर्भ का परिवर्धन होता है और प्रसव के बाद जेर गिरती है, जिसे देखते रहना चाहिए और गिरते ही ज़मीन में गाढ़ देना चाहिए।

प्रसव के बाद मादा पशु को भूख बहुत लगती है अतः गेहूं का दलिया पकाकर, उसमें थोड़ा घी-गुड़ मिलाकर खिलाना चाहिए और कुछ दिनों तक गेहूं का दलिया भिगोकर, उसमें घी और गुड़ डालकर खिलाना चाहिए। गांवों में अच्छे पशु-पालक गाय को प्रसव के समय से दो सप्ताह के अन्दर-अन्दर लगभग दो सेर घी और इतना ही गुड़ तथा भैंस को गाय से दुगुनी मात्रा खिलाते हैं। कुछ लोग थोड़ा सोआ और अजवाइन भी खिलाते हैं। सोआ और अजवाइन से पशुओं का पेट साफ हो जाता है और दूध भी बढ़ता है। गाय को गेहूं का दलिया लगभग एक मन और भैंस को इससे दुगुनी मात्रा देते हैं। पहले पन्द्रह दिन तक दलिये में घी-गुड़ मिलाते हैं बाद में सिर्फ दलिया ही देते हैं। गाय को सेर-डेढ़ सेर और भैंस को दो सेर दलिया नित्य देना चाहिए। इसके बाद साधारण दाना दिया जाता है जो दूध की मात्रा का लगभग एक-तिहाई भाग गाय के लिए और उससे कुछ अधिक भैंस के लिए होता है।

प्रसव के समय जो दूध निकलता है उसे खीस कहते हैं। यह खीस दस्तावर होता है। गाय-भैंस के बच्चों के पेट इसीसे साफ होते हैं। गरम करने से यह खीस बहुत जल्दी जम जाता है। इतना ही नहीं, अच्छे दूध में थोड़ा खीस डाल दिया जाय और गरम किया जाय तो वह भी जम जाता है। बहुधा लोग दूध में गुड़ या शक्कर डालकर उसमें थोड़ा खीस डाल करके थाली में पानी की भाप से जमाते हैं जिससे सब दूध बर्फी के जैसा जम जाता है। किसी कढ़ाई में थोड़ा-सा पानी भरकर ऊपर खीस-दूध मिश्रण थाली में रख दिया जाय और फिर उस पानी को गरम किया जाय,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो उस मिश्रण की बर्फी जम जाती है जो खाने में बड़ी स्वादिष्ट होती है।

खीस से अच्छा दूध जम जाता है इसलिए प्रसव के पश्चात् दस-बारह दिन का दूध अच्छे दूध में नहीं मिलाना चाहिए। जब उस दूध में खीस का गुण न रहे, तभी उसे दूसरे दूध में मिलाना चाहिए।

गाय बहुधा जनवरी से जुलाई (माघ से आषाढ़) तक और भैंस जुलाई से जनवरी (आषाढ़ से माघ) तक बच्चा जनती है।

गाय और भैंस बहुधा एक ही बच्चा जनती है। किसी-किसी गाय को कभी-कभी दो बच्चे हो जाते हैं।

सन्तान में नर-मादा के गुण जो आते हैं वे दो प्रकार के होते हैं: एक वंश-परम्परागत और दूसरे उपार्जित। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बिलकुल नया गुण आ जाता है। ऐसे गुण को गुण-क्रान्ति कहते हैं।

बछड़ों की देख-भाल

उपर्युक्त वर्णन से गाय-भैंस की जातियां, उनके गुण, प्रजनन की रीतियां, गर्भाधान का समय, गर्भ की अवधि तथा प्रसव के समय की देख-भाल आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है। अब हमें बछड़ों की सम्हाल पर विचार करना है, क्योंकि हमारा भावी यूथ उन्हीं पर निर्भर है। यदि वे स्वस्थ रहें और उनकी बाढ़ अच्छी रही तो निश्चय रूप से हमारा यूथ अच्छा होगा।

(१) सबसे पहले यह देखना चाहिए कि प्रसव के समय दो माह पूर्व से ही दुहना बन्द कर देना चाहिए। बहुधा गाय-भैंस गर्भाधान के तीन-चार माह बाद दूध नहीं देतीं, परन्तु कुछ ऐसी होती हैं जो बहुत दिनों तक दूध देती रहती हैं। ऐसी का दुहना लगभग दो माह पूर्व से ही बन्द करना आवश्यक है। ऐसी गायों को चारा-दाना भी अच्छा देना चाहिए, ताकि होने-वाला बच्चा स्वस्थ और मोटा-ताज़ा हो। चारा-दाना कब्जकारी न हो। चोकर, अलसी के बीज का चूर्ण, जई का दलिया और नमक देना अच्छा होता है। ऐसे दाने में पचास शतांश चोकर, पैंतीस शतांश जई का दलिया, पन्द्रह शतांश के लगभग अलसी का चूर्ण और मुट्ठी-भर नमक डालना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(२) प्रसव के पश्चात् यदि बछड़ा सांस न ले तो नाक-मुंह साफ कर देना चाहिए और आवश्यकता हो तो कृत्रिम सांस काम में लानी चाहिए।

(३) बच्चे की नाभि पर 'टिंकचर आयोडीन' लगाना चाहिए। नाभि के साथ जेर का जो थोड़ा-सा टुकड़ा लगा रहता है, जबतक वह गिर न जाय, ध्यान रखना चाहिए। कुत्ते उसे खींच ले जाते हैं जिससे नाभि पर घाव हो जाता है। यदि घाव हो जाय तो घाव का इलाज कराना चाहिए।

(४) साधारण गाय-भैंसें अपने बछड़ों को चाटकर साफ कर देती हैं; परन्तु जहां गायों को बछड़े नहीं दिखाये जाते, जैसा कई डेरियों में होता है, तो वहां उन्हें पोंछकर साफ करना चाहिए। उनकी ख़ुरियों पर जो सफेद भाग होता है उसे निकाल देना चाहिए।

(५) प्रसव के एक-दो घंटे बाद ही उसे माता का दूध (खीस) पिलाना चाहिए, क्योंकि ऐसा दूध चिकना और रेचक होता है जिससे बछड़े का पेट साफ हो जाता है।

(६) जो बछड़े प्रसव के बाद तुरन्त माता से अलग कर दिये जाते हैं उन्हें दूध पीना सिखाना पड़ता है। एक साफ तसले में कुछ गरम किया हुआ दूध रखकर उसमें बच्चे का मुंह डाला जाय और दूध में डूबी हुई अपने हाथ की उंगलियां बच्चे के मुंह में रखी जायं तो वह दो-चार दिन में दूध पीना सीख जाता है।

साधारणतः कई स्थानों में दूध दुहने के पहले और बाद में बछड़ों को मां का दूध पिलाया जाता है। कहीं-कहीं बच्चा दूध पीता रहता है और गाय दुही जाती है। वर्तमान डेरियों में बहुधा बच्चों को जन्म से ही अलग कर देते हैं जिससे यह होता है कि बछड़ों को बे-हिसाब दूध नहीं मिलता, आवश्यकतानुसार नापकर दूध दिया जाता है। दूसरे, कभी-कभी ऐसा होता है कि यदि बछड़ा मर जाय तो गाय और भैंस दूध नहीं देती। प्रसव के समय से बछड़े को अलग कर देने से यह स्थिति नहीं आती।

(७) बछड़ों को सदा बांधकर नहीं रखना चाहिए। उन्हें घूमने का अवसर देना चाहिए ताकि उनके अंग अच्छे और सुदृढ़ बनें।

(८) अलग-अलग उम्र के बच्चों को अलग-अलग रखना चाहिए। उसी भांति नर बछड़ों को मादा बछियाओं से अलग रखना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) सींग-रहित करना—आजकल डेरियों में बहुधा सींग-रहित गायें नज़र आती हैं इसका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि गायें आपस में लड़कर एक-दूसरी को हानि न पहुंचायें। इसके लिए बछड़ों के सींग निकलने की जगह कास्टिक सोडा घिस देते हैं। यह कार्य किसी चिकित्सक से सीख लेना चाहिए; क्योंकि यदि कास्टिक कम लगा तो उद्देश्य सिद्ध न होगा और यदि अधिक लग गया तो घाव हो जायगा। यह कार्य, जब बछड़ा आठ-दस दिन का हो, तभी कर देना चाहिए। कास्टिक लगाने के पश्चात् आस-पास की जगह वेसलीन लगाना चाहिए। इतना और ध्यान रहे कि कास्टिक बछड़े की आंख में न लग जाय।

(१०) बछड़ों को पहले चार सप्ताह तक उनके वजन के प्रमाण-अनुसार दूध देना चाहिए। प्रत्येक पांच सेर वजन पीछे आधा सेर दूध देना चाहिए। बाद में धीरे-धीरे दूध की मात्रा कम करके दूधी (क्रीम-रहित दूध) पिलाते रहना चाहिए। इसके साथ-साथ गेहूं, चावल, अलसी आदि के मिश्रण की कांजी दे सकते हैं। इन्हें जहां तक बने, हरा घास देना चाहिए।

(११) गाय की बछिया जब चार साल की हो जाय और भैंस की जब पांच साल की हो जाय, तब सांड़ बताना चाहिए। बहुधा ये इसी उम्र में गर्माती हैं। जहां चारे-दाने की उत्तम व्यवस्था होती है, वहां गर्माने का समय उपर्युक्त समय से पहले ही आ जाता है।

पशु-प्रजनन में ध्यान देने योग्य बातें

अन्त में यह कहना होगा कि प्रजनन की रीति द्वारा तथा उनकी और उनके बछड़ों की देख-भाल द्वारा ही अच्छे पशु प्राप्त किये जा सकते हैं। इस कला को प्रोत्साहन देने के लिए निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना होगा :

(१) उपयोगी पशुओं का वध रुकवाना;

(२) 'पशु-ग्राम-केन्द्र' खुलवाना;

(३) पशु-मेले और प्रदर्शनी लगवाना तथा अच्छे पशुओं के मालिकों को पारितोषिक दिलवाना;

(४) पशु-प्रदर्शनी के स्थानों में व्याख्यान आदि की व्यवस्था करना;

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिसमें मेलों में एकत्रित जनता को बहुत-सी जानकारी मिल सके। इसमें विभिन्न स्थानों के अच्छे-अच्छे पशु-पालकों को आपस में मिलकर अपना-अपनी सफलता के आधारों पर बातचीत करने का अवसर मिलता है।

५—भेड़

भारतवर्ष में १९५९ की गणनानुसार भेड़ों की संख्या ३,९२,४६,२४८ है।

भेड़ों के वर्ग

भेड़ें तीन प्रकार की होती हैं : एक ऊन देनेवाली, दूसरी मांसवाली और तीसरी दोकारी। मांसाहारियों का कहना है कि अधिक ऊन देनेवाली भेड़ों का मांस स्वादिष्ट नहीं होता।

भेड़ों की जातियां

वैसे देखा जाय तो भेड़ों की कई जातियां हैं यद्यपि बकरियों की जाति से कम। मोटे तौर पर हम इन्हें दो भागों में बांट सकते हैं : पहाड़ी और मैदानी। पहाड़ी भेड़ें मैदानी भेड़ों से बड़ी होती हैं और उनकी ऊन अपेक्षाकृत अधिक मुलायम होती है। भेड़ों की किसी-किसी जाति में सींग होते हैं। बिना सींगवाली भेड़ें अच्छी मानी गई हैं। भेड़ों का आयु लगभग १० वर्ष की होती है।

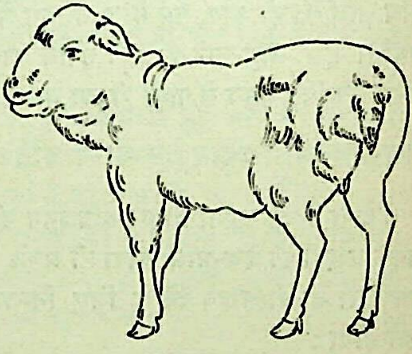

ऊनवाली—ऊनवाली भेड़ों में सबसे उत्तम स्पेन की मेरिनो जाति मानी गई है। इनके बाल महीन और बहुत मुलायम होते हैं। इनके बदन पर एक वर्गइंच स्थान में लगभग चालीस से अड़तालीस हजार तक बाल होते हैं।

बीकानेरी—भारत में बीकानेरी भेड़ अच्छी मानी गई हैं। इनके सींग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं होते। इनकी ऊन बड़ी मुलायम होती है। बढ़िया कालीन इन्हींकी ऊन से बनते हैं। इनकी ऊन के रेशे की लम्बाई साढ़े तीन इंच से पांच इंच तक की होती है। सालभर में मादा से डेढ़ सेर (१.४ कि. ग्रा.) और नर से लगभग ढाई सेर (२.३ कि. ग्रा.) ऊन मिलती है। मादा का वजन लगभग एक मन (३७.३ कि. ग्रा.) और नर का पौने दो मन (लगभग ६५ किलोग्राम) तक होता है।

भेड़ों की ऊन काटने के पहले उन्हें नहलाया जाय और जबतक बाल सूख न जायं, तबतक पक्के फर्श पर रखा जाय तो ऊन साफ उतरती है और बाजार में ऐसी ऊन का मूल्य अधिक मिलता है।

कई स्थानों में ऊन एक बार उतारी जाती है और कई जगह दो बार। बीकानेरी भेड़ों पर प्रयोग करके देखा गया तो दो बार ऊन उतारना अच्छा पाया गया। इससे ऊन मुलायम रहती है और कुछ अधिक भी उतरती है।

इस जाति की भेड़ों के मुंह पर ऊन नहीं होती। मुंह बहुधा काला होता है। इनके खुरों में यह विशेषता होती है कि काले मुंहवाली भेड़ के खुर सफेद और सफेद मुंहवाली के काले होते हैं।

इनकी ऊन का निर्यात भी होता है।

मांसवाली भेड़ें

नैलोरी—इस जाति की भेड़ें मद्रास में पाई जाती हैं। इनका रंग सफेद-काला मिला हुआ होता है। सिर घने बालों से ढंका रहता है। मादा के सींग नहीं होते। नर के सींग बल खाये हुए होते हैं। मादा का वजन लगभग एक मन (३७.३ किलोग्राम) होता है। इस जाति का पालन अधिकतर मांस के लिए ही होता है।

दोकारी—दोकारी भेड़ों की मुख्यतः तीन जातियां हैं—लोही, दक्खिनी, विलारी।

लोही—इस जाति की भेड़ें पंजाब में पाई जाती हैं। ये सफेद रंग की सींगरहित होती हैं। मादा का वजन लगभग एक मन (३७.३ किलोग्राम) और नर का डेढ़ मन (५६ किलोग्राम) होता है। साल-भर में इनसे डेढ़ सेर (१.४ किलोग्राम) के लगभग ऊन मिलती है जिससे बहुधा कम्बल बनते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं। ऊन के रेशे की लम्बाई तीन-चार इंच होती है। इनका मांस नैलोरी जैसा तो नहीं होता, परन्तु साधारणतः अच्छा होता है।

दक्खिनी—काले या सफेद रंग का इस जाति की भेड़ें बम्बई प्रान्त में पाई जाती हैं। मादा सींगरहित होती है। नरों में किसी-किसीके सींग निकल आते हैं। साल-भर में प्रत्येक भेड़ से लगभग तीन पाव (०.७ किलोग्राम) ऊन मिल जाती है। यह ऊन अच्छी न होने से मोटे कम्बल बनाने के काम आती है। ऊन के रेशे की लम्बाई लगभग सवा तीन इंच होती है। मादा का वजन लगभग आधा मन (१६ किलोग्राम) होता है। लोही से इसका मांस अच्छा माना गया है।

बिलारी—इस जाति की भेड़ें मद्रास की तरफ पाई जाती हैं। इनका रंग काला होता है। कोई-कोई सफेद या भूरे रंग की भी होती है। मादा सींगरहित होती है। नर के सींग बल खाये हुए होते हैं। इनकी ऊन भी कम्बल बनाने के काम आती है। यह अच्छी नहीं होती। मांस साधारणतः अच्छा ही होता है।

प्रजनन—जब भेड़ दो साल की हो जाय, तब नर बताना चाहिए। साल-डेढ़ साल का नर भेड़ों को वर्धाने-योग्य हो जाता है। एक बार गर्माने के बाद गर्भवती न हो, तो तेरह से इक्कीसवें दिन में फिर गर्माती है, इसका ध्यान रखना चाहिए। इनमें गर्भ-काल पांच महीने का होता है। साल-भर में भेड़ें एक ही बार जनती हैं। प्रत्येक पचास भेड़ पीछे एक भेड़ा रखना अच्छा होता है। भेड़ की उम्र लगभग दस साल की होती है। भेड़ का दूध गाय-भैंस के दूध से अधिक गाढ़ा होता है। चोट लगने या पांव मुड़ जाने पर इनके दूध की मालिश की जाती है। यह बड़ी अच्छी गर्म औषधि मानी जाती है।

चारा-दाना

भेड़ें सदा नीचा मुंह किये चलती हैं इसलिए जमीन पर जो घासपात होता है खा जाती हैं। बकरियों की भांति पेड़ों के पत्ते अधिक नहीं खातीं। प्रत्येक भेड़ को लगभग तीन-चार किलोग्राम हरा चारा, जिसमें से कुछ दलहन-वर्ग का भी हो, काफी होता है। दाना साधारणतः कम ही लोग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देते हैं, परन्तु देना चाहिए । चोकर-चूरी-दालों के छिलके इत्यादि का मिश्रण देना उत्तम होगा।

भेड़-बकरियों को रात को कांटेदार टहनियों के घेरे में रखना होता है और उसी घेरे में कुछ छाया का भी प्रबन्ध होना चाहिए। घरबार फूस का बनाया जा सकता है। प्रत्येक भेड़-बकरी के लिए लगभग दस वर्गफुट जमीन मिल जाय, इतना बड़ा घेरा होना चाहिए और ऊंची जगह बनाना चाहिए।

अन्य उपयोग—ऊन के सिवाय भेड़ का चमड़ा तो काम में आता है परन्तु इनका मलमूत्र भी खाद के लिए अच्छा माना गया है। भेड़ चरानेवाले इन्हें किसानों के खेतों में रात को बिठाते हैं और बदले में कुछ अनाज ले लेते हैं। एक भेड़ से एक महीने में लगभग मन-सवा मन खाद मिल जाता है।

६—बकरियां

भारतवर्ष में १९५६ की गणनानुसार बकरियों की संख्या ५,५४,०५,४९० थी।

बकरी गरीब की गाय कहलाती है क्योंकि यह जंगली पेड़ों की पत्तियां खाकर थोड़ा-बहुत दूध दे देती है। इनका दूध जल्दी पचता है क्योंकि इसमें स्नेह के कण गाय-भैंस के दूध में पाये जानेवाले कणों से छोटे होते हैं। बकरियों का दूध कुछ खारा होता है और उसमें एक प्रकार की हीक आती है जिससे वह अच्छा नहीं मालूम होता, परन्तु पीने के आदी हो जाने से लोग काम में ले आते हैं। यह भी कहते हैं कि दूध देनेवाली बकरियों से बकरे यदि पचास फीट दूर रखे जायं तो दूध में हीक नहीं आती।

बकरियां दूध की अपेक्षा मांस के लिए अधिक पाली जाती हैं। हजारों की संख्या में ये नित्य-प्रति काटी जाती हैं, फिर भी संख्या बढ़ती जाती है। सन् १९४९ में जहां बकरियों की संख्या ४.७ करोड़ थी, १९५६ में वह ५.५ करोड़ हो गई।

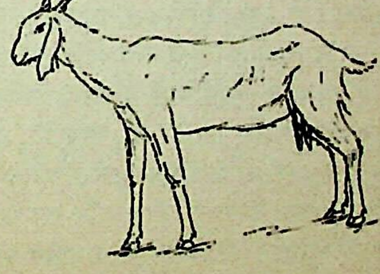

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बकरियों की मुख्य-मुख्य जातियां

राजस्थान—बीकानेरी और छावर।

पंजाब—बारबरी, बीतल, कांगड़ी, पहाड़ी।

काश्मीर—काश्मीरी।

उत्तरप्रदेश—जमनापारी।

बिहार—पटनई।

बम्बई—सूरती।

दक्षिण-भारत—मलाबारी।

पहाड़ी स्थानों में बकरियां माल भी ढोती हैं। बद्रीनारायण के रास्ते में बड़े-बड़े बालोंवाली सफेद रंग की और मुड़े हुए सींगोंवाली बकरियां अब भी माल ढोती हुई दीख जाती हैं। दस-दस सेर की थैलियां इनकी पीठ पर लाद दी जाती हैं जिन्हें लेकर ये पहाड़ी रास्तों पर बड़े सपाटे से जाती हैं।

बकरियां जाति-अनुसार छोटी-बड़ी, छोटे-बड़े कानोंवाली, काली, सफेद, लाल या चितकबरी रंग की होती हैं। दूध के विचार से जमनापारी, बीतल और बारबरी बकरी अच्छी मानी गई हैं। जमनापारी इन तीनों में ऊंची होती है। लगभग २.५ फुट ऊंची होती है और लगभग तीन सेर (२.७ किलोग्राम) दूध देती है। यह ६ महीने से लेकर ८ महीने तक दूध देती है। बीतल करीब दो किलोग्राम और बारबरी लगभग सवा किलोग्राम दूध प्रति-दिन देती है।

बकरी की उम्र लगभग १५ वर्ष की होती है, परन्तु इतने दिनों तक बिरली ही बचती होगी। मांसाहारी लोग शायद ही बचने देते होंगे। वैसे देखा जाय तो बकरी से पांच ब्यांत लेना लाभप्रद होता है।

प्रजनन—बकरियों की आयु लगभग डेढ़ साल की हो, तब बकरा दिखाना चाहिए। बकरे की आयु भी साल-डेढ़ साल की होनी चाहिए। पचास बकरियों पीछे एक बकरा रखना चाहिए। बकरियां बीस-पचीस दिन में गर्मा जाया करती हैं और यह अवस्था दो-तीन दिन तक रहती है। इनमें गर्भकाल की अवधि पांच महीने की है। जमनापारी बकरी, जो दूध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के लिए प्रसिद्ध है, सालभर में एक बार जनती है और एक ही बच्चा देती है। दूसरी बकरियां, विशेषतः बारबरी जाति की, सवा साल में दो बार जनती हैं और दो बच्चे एक साथ देती हैं। एक अच्छा बकरा दस-बारह वर्ष तक गर्भदान करने के योग्य रहता है। बकरियों के अधिकांश नरबच्चे वधिया कर दिये जाते हैं ताकि उनसे अच्छा और अधिक मांस मिले।

चारा-दाना—बकरियां अधिकतर जंगलों में चराई जाती हैं और बबूल, बेर तथा अन्य कांटेदार पेड़ों और झाड़ियों के पत्ते खाती हैं। बकरी पालने-वाले बहुधा दाना नहीं देते। दूध देनेवाली को कुछ देते हैं। दलहन के छिलके, चूनी, गेहूं का चोकर इत्यादि का मिश्रण देते हैं। यथार्थ में देखा जाय तो दूध की मात्रा का एक-तिहाई दाना तो दूध के लिए और पाव-भर स्वास्थ्य के लिए देना चाहिए। चूनी, चोकर, खली आदि का मिश्रण देना उत्तम होगा।

बच्चों की देख-भाल—पहले एक माह तक बच्चों को बकरी का दूध पीने देना चाहिए परन्तु ऐसा होता नहीं। तीन-चार दिन बाद ही दूध निका-लना शुरू हो जाता है। महीने भर में बच्चे पत्ते खाना शुरू कर देते हैं। बच्चों को दूध कम पिलाया जाय तो उन्हें दाना भी देना चाहिए।

बकरियों से अन्य लाभ

बकरियों के मल-मूत्र का खाद उत्तम होता है। इसमें बुराई है तो यह कि बकरियां बबूल की फलियां खाती हैं जिसके बीज कठोर छिलके के होते हैं सो वैसे ही निकल जाते हैं। जब इनका मल खेतों में डाला जाता है तो बबूल के कई पौधे निकल आते हैं जिन्हें निंदाई कराकर निकलवाना पड़ता है। इनका चमड़ा भी व्यावसायिक दृष्टि से अच्छे काम का है। प्रतिवर्ष लगभग पौने तीन करोड़ रुपये की खालों का तो निर्यात ही होता है। कश्मीरी पश्मीना वहां की बकरियों के बालों का ही होता है।

७—डेरी-व्यवसाय

व्यवसाय के प्रकार

डेरी-व्यवसाय चार प्रकार का होता है। एक तो वह जहां से दूध या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उससे बननेवाले पदार्थ जैसे क्रीम, मक्खन, घी पनीर, दूधी (क्रीम-रहित दूध) मठ्ठा इत्यादि बेचे जायं। ऐसी डेरियों में अच्छे दुधारू पशु रक्खे जाते हैं, उनके नर बच्चों की देखभाल की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। कई डेरियों में तो वे उनके जन्म के कुछ दिन बाद ही बेच दिये जाते हैं। मादा बच्चों की देखभाल ठीक से की जाती है और प्रजनन की रीतियों द्वारा अच्छा दूध बनाया जाता है।

दूसरे प्रकार का डेरी-व्यवसाय वह होता है जहां से दूध के पदार्थों का तो वितरण होता ही है, साथ-साथ नर बछड़ों का भी पालन-पोषण होता है। उनसे खेती का काम लिया जाता है यद्यपि वे उतने अच्छे नहीं होते जो भारवाही जाति के होते हैं। ऐसी डेरीवाले दोकारी जाति के पशु रखते हैं।

जिस डेरी से अधिकतर दूध ही देने का प्रश्न हो, वहां गायें रखना अच्छा होता है क्योंकि भैंस की अपेक्षा गाय से कम खर्चे में दूध प्राप्त हो सकता है। जहां से क्रीम, मक्खन, घी, पनीर आदि पदार्थों का वितरण करना हो तो वहां कुछ भैंसें भी रखनी होंगी।

तीसरे प्रकार की डेरी वह होती है जिसमें पशु न रखकर सिर्फ दूध खरीदा जाता है और दूध या उसके पदार्थ बनाकर बेचते हैं। ऐसी डेरीवाले बहुधा दुधारू पशुओं के मालिकों को चारे-दाने के लिए अग्रिम रुपया देते हैं।

चौथे प्रकार की डेरी वह होती है जो बहुधा बड़े नगरों में होती है। ऐसे डेरीवाले गाय-भैंसों को खरीदकर रखते हैं और जब दूध देना बन्द कर देती है तो उन्हें बेच देते हैं। ऐसे पशु बहुधा कसाईखाने में मांस के लिए मार दिये जाते हैं।

सफलता के आधार

डेरी-व्यवसाय की सफलता डेरी के पशु, पात्र तथा पशु-शालाओं आदि की सफाई पर निर्भर है। ज़रा-सी भूल से मनों दूध बिगड़ सकता है और यदि बार-बार ऐसी घटनाएं हो जायं तो व्यवसाय की साख चली जाती है।

डेरी में जिस पशुशाला में दूध निकाला जाता है, वह पक्की होनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहिए। दूध निकालने के लिए पशु उसमें आवें, उससे पहले उसका फर्श धुल जाना चाहिए। दीवालों और छतों को भी समय-समय पर साफ कराते रहना चाहिए ताकि धूल और जाले वगैरा न रहें। गायों को दूध निकालने के स्थान में लाने से पूर्व उन्हें ब्रुश से साफ करना चाहिए ताकि उनके बदन से धूल या बाल आदि दूध में न गिरें। दूध निकालने के पहले पशुओं के ऐन और थनों को साफ पानी से धोकर उन्हें कपड़े से पोंछ लेना चाहिए। भैंसों को तो पानी से धोकर लाना चाहिए।

दूध निकालने के बर्तन साफ धुले हुए और भाफ से आंशिक निर्जीवी-कृत होने चाहिए। प्रत्येक गाय के दूध का वजन किया जाता है ताकि यह ज्ञात हो जाय कि कौन-कौन सी गायें रखने-योग्य हैं और कौन-सी अपने यूथ से अलग करनी हैं।

डेरीवालों को पशुओं का अभिलेख भी रखना पड़ता है कि कौन-सी गाय-भैंस कब वर्धाई गई, कब वह जनेगी, कौन-सी ऋतु में उनको जनता के लिए कितना दूध चाहिएगा और उस ऋतु में कितने पशु दूध देनेवाले होंगे, आदि-आदि।

पशु-प्रजनन के प्रकरण में यह बतलाया गया है कि प्रत्येक पचास गाय या भैंस पीछे एक सांड़ और एक भैंसा रखना होगा और गर्भ-धारण के समय, रीति इत्यादि पर भी पूरा-पूरा प्रकाश डाला गया है। डेरी-व्यवसाय-वालों को भी उनकी ओर ध्यान रखना होता है।

डेरी के पशुओं की औसत आयु

गाय-बैल	बीस वर्ष
भैंस	पचीस वर्ष
भेड़	दस वर्ष
बकरी	पन्द्रह वर्ष

डेरी-फार्म घर

(१) मालिक या प्रबन्धक के रहने का घर

यह घर कैसा और कितना बड़ा हो, यह मालिक की इच्छा पर निर्भर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। बहुत बड़ी डेरी में अधिक वेतनवाला योग्य प्रवन्धक रखना होगा, अतः उसके लिए अच्छे कंम्पाउण्डवाला मकान देना होगा, जिसमें फल-फूल सब्जी आदि भी लगाये जा सकें।

(२) नौकरों के रहने के घर

डेरी का कार्य ऐसा होता है कि इसमें रात को भी काफी काम करना पड़ता है। अधिकांश डेरियों में आखीर-रात को दूध निकालना पड़ता है जब प्रातःकाल में ग्राहकों के पास वह पहुंचाना होता है, इसलिए बहुत-से नौकरों को डेरीफार्म पर ही रखना पड़ता है। उनके लिए आवश्यकतानुसार घरों की व्यवस्था भी होनी चाहिए।

(३) दुधारू पशु-घर

दुधारू पशुओं का चारा-दाना सूखे पशुओं के चारे-दाने से भिन्न होता है और उनकी सफाई इत्यादि का भी पूरा-पूरा ध्यान रखना होता है, अतः उनके बांधने का घर अलग होना चाहिए। ये पशु दूध निकालने के समय ऐसे घरों में लाये जाते हैं और वे पंक्तियों में बांधे जाते हैं। किसी डेरी में ऐसी पंक्तियां होती हैं कि पशुओं के मुंह आमने-सामने रहते हैं। किसी-किसीमें मुंह विमुख रहते हैं। विमुख बांधने में लाभ यह है कि पशुओं का मल-मूत्र एक ही नाली में गिरता है; जिससे उसे हटाने में सहूलियत रहती है। मल-मूत्र हटाने और चारा-दाना डालने के लिए ट्रालियां भी होती हैं। ऐसी ट्रालियां लटकती हुई चलती हैं अर्थात् इनके पहिये ऊपर की ओर रहते हैं और वे ऊपर लगी हुई पटरी पर चलती हैं। प्रत्येक पशु को या तो नाप-कर या वज़न करके दाना डाला जाता है। दानेवाली ट्राली पर एक कांटा और वाल्टी लटके रहते हैं सो जल्दी-जल्दी वज़न करके डालते जाते हैं।

अच्छी डेरी में ऐसे पशुओं को बांधने के लिए लोहे के नलों के गलफंदे लगे रहते हैं। पशु जाकर अपने-अपने स्थान पर खड़े हो जाते हैं और एक व्यक्ति गलफंदे की एक बाजू उठा देता है जो दूसरी बाजू के नल के क्लिप में फंस जाती है। ऐसी डेरियों में पानी पीने की व्यवस्था भी ऐसी रहती है कि पशु चाहिए उतना पानी नल द्वारा प्राप्त कर लेता है। पशु के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुंह के सामने एक चौड़ा गोल तसला-सा रहता है जिसमें कुछ छेदवाला तवा रहता है। जब प्यास लगती है तो पशु तवे को दबाते हैं। उसके दबते ही पानी नल द्वारा तसले में आने लगता है। जबतक पशु तवे को दबाये रखते हैं पानी आता रहता है और वे पीते रहते हैं; ज्योंही मुंह हटाते हैं, तवा ऊपर उठ आता है और नल का मुंह बन्द हो जाता है।

दूध बहुधा ऐसे घरों में निकाला जाता है और प्रत्येक गाय का दूध एक कुप्पे में डाला जाता है जहां से एक चलनी में छनकर वह एक छोटे-से मक्खी-रोधक जालीदार कक्ष में जाता है इस कक्ष में कांटे में लगी हुई बाल्टी में गिरता है और वजन हो जाता है। एक अभिलेखक रजिस्टर में प्रत्येक गाय के दूध का वजन लिख लेता है। वह दूध फिर दूध रखने के बड़े बर्तन में डालकर डेरी के पदार्थ-गृह में पहुंचा दिया जाता है।

(४) सूखे पशुओं का घर

सूखे पशु, अर्थात् जिनसे दूध नहीं मिलता, कहीं-कहीं बाड़ों में खुले ही छोड़ दिये जाते हैं और कहीं-कहीं बांधे भी जाते हैं। जहां खुले छोड़ दिये जाते हैं वहां वे इच्छा-अनुसार खुली जगह में या छाया में चले जाते हैं।

(५) बछड़ों के घर

अलग-अलग उम्र के बछड़े अलग-अलग बाड़ों में रखने चाहिए, उसी भांति नर और मादा बछड़ों को भी अलग-अलग बाड़ों में रखना चाहिए। ये बहुधा खुले ही रहते हैं और इच्छानुसार धूप या छाया में चले जाते हैं।

(६) सांड-घर

प्रत्येक पचास गाय के पीछे एक सांड रखना होता है। जहां तक बने, सांडों को रखने के घर अलग होने चाहिए।

(७) बैल-घर

प्रत्येक डेरी-फार्म पर एक सौ दुधारू गायों के पीछे फार्म के काम के लिए तथा माल ढोने के लिए आठ जोड़ी बैल रखने होते हैं। यदि ट्रक हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो बैलगाड़ी कुछ कम की जा सकती हैं। ऐसे बैलों को रखने का घर भी पृथक् होना चाहिए।

दूधारू पशुओं को रखने के घर पक्के होने अनिवार्य हैं। दूसरे घर कच्चे-पक्के दोनों हो सकते हैं।

(८) चारा-दाना रखने का घर

अपने यूथ की पशु-संख्यानुसार चारा-दाना रखने का घर भी डेरी पर बनवाना होगा। दाना रखने का घर पक्का और चूहों से हानि न हो, ऐसा बनवाना चाहिए।

(९) औजार-घर

खेती के छोटे-छोटे औजारों के लिए भी एक कमरा होना चाहिए। बड़े औजार टीन, कवेलू या छप्पर की छाया में रखे जा सकते हैं।

(१०) दूध और दूध-पदार्थघर

दूध और दूध-पदार्थघर ऐसा पक्का होना चाहिए कि वह अच्छी तरह से धुल सके। दरवाजे दोहरे हों, एक शीशे का और बाहर का जाली का। खिड़कियों में भी जाली लगी रहनी चाहिए जिससे दिन में मक्खियां और रात में पतंग तथा अन्य कीट अन्दर न आ सकें। ऐसे घर में निम्न-लिखित कक्ष होंगे :

(१) **दूध और दूधपदार्थ-वितरण-कक्ष**—यह कक्ष ऐसा होना चाहिए कि उसके अन्दर बाहर का कोई व्यक्ति नहीं जा सके। छोटी खिड़की द्वारा ही पदार्थों का वितरण हो।

(२) **शीतागार**—एक कक्ष ऐसा ठंडा होना चाहिए जिसमें रखने से पदार्थ बिगड़ने न पायें। यदि डेरी छोटी हो तो फ्रिज़ीडियर से भी काम चल सकता है।

(३) जिन डेरियों में मक्खन-पनीर आदि पदार्थ बनते हों, उनमें एक बड़ा कक्ष ऐसा होना चाहिए जिसमें ये चीजें बनाई जा सकें।

(४) **बर्तन धोने का कक्ष**—डेरी के बर्तन चिकने हो जाते हैं सो उन्हें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोडा और गरम पानी से धोना पड़ता है। इसके लिए भी एक ऐसा कक्ष होना चाहिए जिसमें एक हौज़ हो। हौज़ में टेप द्वारा पानी लिया जा सके और ऐसा भी प्रबन्ध होना चाहिए जिसमें बॉयलर से भाप लेकर उस पानी को गरम कर सके।

(५) **बॉयलर-घर**—डेरी-व्यवसाय के आकारानुसार छोटा-बड़ा बॉयलर लगाना होगा ताकि आवश्यकता-अनुसार उससे भाप प्राप्त कर सकें। भाप सिर्फ पानी गरम करने के लिए ही नहीं, बर्तनों के निर्जीवीकरण या आंशिक निर्जीवीकरण के लिए भी उसकी आवश्यकता होती है। दूध के निर्जीवीकरण या आंशिक निर्जीवीकरण के लिए भी भाप की आवश्यकता होती है।

(६) **निर्जीवीकरण कक्ष**—इसमें भाप से बर्तनों का निर्जीवीकरण किया जाता है।

(७) **डेरी-पदार्थ वितरणघर**—पदार्थ-वितरण-गृह में या उसके पास प्रबन्धक का एक आफिस-कक्ष भी होना चाहिए।

डेरी-कार्य के लिए आवश्यक यंत्रों और बर्तनों की सूची

इनकी संख्या व्यवसाय के आकारानुसार हो सकती है।

(१) **दूध निकालने के बर्तन**—जिनके मुंह आधे खुले हुए हों, ताकि उसके द्वारा दूध बर्तन में गिरे और ऊपर से दूध में कोई वस्तु न गिरे।

(२) **दूध छानने की चलनी**—यह चलनी ऐसी होती है जिसके नीचे का पट छेददार जमा हुआ होता है और दूसरा ऊपर का छेददार पट अलग हो जाता है। नीचे के पट पर रुई रखकर उसपर ऊपर का पट रख देते हैं और फिर दूध डालते रहते हैं। इससे दूध अच्छा छन जाता है।

(३) दूध रखने के छोटे-बड़े बर्तन।

(४) दूध से क्रीम अलग करने का यंत्र 'क्रीम-सेपरेटर'।

(५) **गर्बर-परीक्षण यंत्र**—इसके द्वारा, दूध में स्नेह कितना है, इसकी जांच होती है।

(६) **मथन-ढोल**—इसमें बिलोकर मक्खन बनाया जाता है। यह एक पीपे-जैसा होता है जिसमें पकाई हुई क्रीम या दही डालकर उसे धुरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर घुमाते हैं। जिस प्रकार अपने घरों में गृहणियां गरम या ठंडा जल दही में डालती हैं, उसी भांति गरम जल, बर्फ का पानी या वर्फ के टुकड़े इस ढोल में डाले जाते हैं।

(७) मक्खन से पानी निकालने और उसमें नमक मिलाने का यंत्र—इस यंत्र से मक्खन को दबाकर उसमें से पानी निकाला जाता है। कुछ डेरियों में मक्खन में पीला रंग और नमक भी मिलाते हैं। नमक मिलाने से मक्खन का स्वाद अच्छा हो जाता है और उसमें अधिक समय तक टिकने की शक्ति बढ़ जाती है।

(८) मक्खन बनाने के हत्थे—इससे मक्खन की चौकोर या आयताकार टिकियां बनाते हैं। फिर उन्हें चिकने कागज़ में लपेटकर रखते हैं।

(९) आंशिक तथा पूर्ण निर्जीवीकरण यंत्र।

(१०) एनामेलवाली बाल्टियां।

(११) दूध बेचने के नापवाले यंत्र।

(१२) दूध-वितरण की बोतलें—बहुधा अच्छी डेरियों से दूध बोतलों में भरकर उनके मुंह कागज के ढक्कन से सील करके दिया जाता है।

(१३) बोतलों में दूध भरने का यंत्र—यह एक बर्तन होता है जिसमें दूध भर देते हैं और फिर इससे बोतलें भरी जाती हैं।

(१४) बोतल सील करने का यंत्र—इससे बोतलों के मुंह पर रखे हुए कागज के ढक्कन लोहे की कड़ी से कसे जाते हैं। इस यंत्र में कई कड़ियां लगी रहती हैं, अतः बोतलों के मुंह जल्दी-जल्दी बन्द हो जाते हैं।

(१५) दूध-वितरण की बोतलें—ये बोतलें एक खास प्रकार की चौड़े मुंह की होती हैं। ये अलग-अलग नाप की होती हैं। अधिकांश आधा सेर और एक सेर की होती हैं।

(१६) डेरी धोने तथा वहां के बर्तन और बोतलें धोने के ब्रुश।

(१७) आवश्यक हो तो मक्खन से घी बनाने की कढ़ाई।

(१८) घी रखने की बनियां।

'क्रीम-सेपरेटर' बड़ा उपयोगी यंत्र है। इसके द्वारा दूध का स्नेह कम-ज्यादा किया जा सकता है। इसमें दूध डालकर इसे चलाने से क्रीम, जिसमें स्नेह रहता है, वह एक नली से निकल आती है और दूसरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नली से स्नेहरहित दूध (दूधी) अलग हो जाता है। फिर क्रीम में स्नेह की जांच करके, दूध में जितना स्नेह रखना होता है, उतनी क्रीम स्नेहरहित दूध में मिला देते हैं। ऐसे दूध को 'मानकित दूध' कहते हैं। बहुधा दूध का मानकरण ऐसा किया जाता है जिससे उसमें साढ़े तीन या चार शतांश स्नेह रह जाय। भारत में गायों की कुछ जातियां ऐसी हैं जिनके दूध में पांच शतांश तक स्नेह है और भैंसों के दूध में तो सात-आठ शतांश तक स्नेह पाया जाता है। इस सेपरेटर द्वारा आवश्यकता से अधिक स्नेह को निकालकर उससे मक्खन बना लेते हैं। इसके सिवाय एक लाभ यह है कि बहुत-से दूध का दही बनाकर बिलोना सहल नहीं होता, अतः क्रीम निकालकर 'दूधी' बेच देते हैं या जानवरों को पिला देते हैं और क्रीम का दही बनाकर उसे बिलो लेते हैं।

दूध और दूध के पदार्थ

खीस—प्रसव के बाद का दूध खीस या चीका कहलाता है। यह चिकना और रेचक होता है और गरम करने पर बर्फी जैसा जम जाता है। दस-बारह दिन तक दूध में खीस का गुण रहता है फिर दूध बन जाता है।

पूर्ण दूध—जैसा दूध गाय-भैंस के ऐन से निकलता है, उसे पूर्ण दूध कहते हैं।

दूधी या क्रीमरहित दूध—जिस दूध में से क्रीम निकाल ली जाती है और जिसके साथ स्नेह निकल जाता है उसे 'दूधी' कहते हैं।

क्रीम—यह गाढ़ा दूध होता है जिसमें दूध का सब स्नेह आ जाता है। पूर्ण दूध से जो क्रीम निकाली जाती है वह दूध का लगभग पांचवां भाग होता है। सेपरेटर में ऐसी व्यवस्था रहती है कि न्यूनाधिक स्नेहवाली क्रीम बन सकती है। साधारणतः दूध से पन्द्रह से बीस शतांश तक क्रीम निकाली जाती है। बीस शतांशवाली से पन्द्रह शतांशवाली क्रीम में अधिक स्नेह रहता है। कुछ ग्राहक क्रीम का उपयोग करते हैं।

मानकित दूध—एक प्रमाणित परिमाण में स्नेहवाला दूध मानकित दूध होता है। इसमें ३.५ से ४.० शतांश तक स्नेह रहता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आंशिक निर्जीवीकृत दूध—दूध में जीवाणु (बैक्टीरियां) रहते हैं जिन के द्वारा दूध विगड़ जाता है। आंशिक निर्जीवीकरण से ऐसे जीवाणुओं की संख्या कम हो जाती है और कई प्रकार के व्याधिकर्ता जन्तु मर जाते हैं। ऐसा करने से दूध ठहरने की अवधि वढ़ जाती है, वह चौवीस घंटे तक अच्छा बना रहता है।

पूर्ण निर्जीवीकृत—इस क्रिया द्वारा दूध के सब जीवाणु नष्ट कर दिये जाते हैं। ऐसा करने से दूध कितने ही समय तक अच्छा बना रहता है।

आंशिक तथा पूर्ण निर्जीवीकरण की युक्तियां—

आंशिक निर्जीवीकरण—इसमें दूध को भाफ से ८२° से० के तापमान पर एक मिनिट गरम करके उसे तुरन्त २° से० के तापमान पर ले आते हैं। इस यंत्र में दूध टेप द्वारा उस स्थान पर जाता है जहां वह गरम होकर नालीदार यंत्र पर गिरता है जिसके ऊपरी भाग में ठंडा पानी और नीचे के भाग में नमक व वरफ का पानी रहता है, अतः वह तुरन्त ठंडा होकर लगभग २° से० मान पर आ जाता है। ऐसे दूध को वोतलों में वन्द करके चौबीस घण्टे तक उसे रख सकते हैं।

छोटे वच्चों के लिए सफर में दूध ले जाना पड़े, तो उसका आंशिक निर्जीवीकरण निम्न युक्ति से किया जा सकता है:

साफ धुली हुई बोतल (वर्तमान सोडावाटरवाली बोतल ठीक होगी) में दूध भरकर उसका मुंह रुई से बन्द करके उसके मुंह पर कागज़ बांध दें। यदि ब्राउन पेपर या चिकना कागज़ हो, तो अच्छा रहेगा। बोतल में इतना दूध भरना चाहिए कि वह दो-तीन इंच खाली रहे। फिर किसी चौड़े वर्तन में पानी रखकर उसमें एक पीतल की चलनी उलटी रख दें और उसपर बोतलें रख दें। फिर उस वर्तन को ऐसे ढक्कन से ढक दें जो बराबर बैठ जाय और उसपर कुछ वजन रख दें, ताकि भाप में कुछ रुकावट रहे। जब भाप निकलने लगे उस समय से आधे घण्टे तक गरम करें। इसी प्रकार चौबीस घण्टे बाद फिर गरम करें और उसके चौबीस घण्टे बाद फिर आधे घण्टे तक इसी रीति से गरम करें। ऐसा करने से उस दूध का आंशिक निर्जीवीकरण हो जाता है और वह चाहे जितने दिन तक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रखा जा सकता है। इतना ध्यान रहे कि एक बोतल को एक बार खोल लेने पर उसे जल्दी हा काम में ले ग्राना चाहिए।

पूर्ण निर्जीवीकरण—ऊपर जो तीन बार गरम करने की युक्ति बताई गई है उससे भी पूर्ण निर्जीवीकरण हो सकता है। वैसे शीघ्र निर्जीवीकरण की एक दूसरी युक्ति भी है। इसमें दूध को १२०° से० के तापमान पर दबी हुई भाप में ग्राधे घण्टे तक गरम किया जाता है। ऐसे दूध का रंग कुछ ग्रंश तक बदल जाता है ग्रौर वह इतना जल्दी नहीं पचता जितना जल्दी ऊपर की रीति से तीन दिनों में निर्जीवीकृत किया हुग्रा दूध पचता है।

मक्खन—क्रीम को पकाकर उससे मक्खन बनाते हैं। इसका ग्रर्थ यह है कि क्रीम में जामन डालकर उसका दही बनाते हैं ग्रौर उसे मंथन-ढोल में डालकर, जैसाकि पहले बतलाया गया है, उससे मक्खन बनाते हैं। जामन द्वारा खास प्रकार के जीवाणु का प्रवेश कराया जाता है जिसके द्वारा क्रीम में ग्रम्लता ग्राती है। यदि यह जामन ग्रच्छा नहीं होगा ग्रौर यदि उसमें दूसरे प्रकार के जीवाणु का प्रवेश होगया होगा, तो क्रीम का दही बिगड़ सकता है। वह बिगाड़नेवाले जन्तु की जाति-ग्रनुसार चिकना शहद-जैसा या कड़वा हो सकता है। कभी-कभी यदि रंग लानेवाले जन्तु पहुंच जायं तो वह रंगीन हो जायगा। यदि ग्रौर भी दूसरे प्रकार के जन्तु ग्रा जायं तो वह क्रीम फट जायगी। घरों में महिलाएं जो दूध जमाती हैं, वे उसे गरम करके कुछ ठंडा करती हैं ताकि जामनवाले उपयोगी जीवाणु गर्मी से मर न जायं। ग्रच्छा दही बनाना हो तो दही के बर्तन में से ऊपर का दो-तीन इंच का दही हटाकर नीचे का दही चम्मच से काटकर जामन के लिए काम में लिया जायगा तो उससे बहुत ग्रच्छा दही बनेगा। उसमें या उससे नीचे की पर्त में ही ग्रावश्यकीय जन्तु रहते हैं।

घी—मक्खन को गरम करके उससे घी बनाते हैं। इतना ध्यान रहे कि मक्खन बहुत तेज ग्रांच पर गरम न किया जाय। तापमान १२०° से० ग्रधिक नहीं होना चाहिए।

मट्ठा—दही को बिलोकर मक्खन निकालने के बाद जो पदार्थ बच जाता है उसे मट्ठा कहते हैं। मनुष्यों के लिए मट्ठा ग्रमूल्य वस्तु मानी गई है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसे नित्य पिया जाय तो मनुष्यों की आयु बढ़ती है, पाचनशक्ति तीव्र होती है और थकावट दूर होती है।

पनीर---दूध में 'रेनेट' नाम का जामन डालने से दूध जम जाता है, वह खट्टा नहीं होता। ऐसे पदार्थ को पनीर कहते हैं। पनीर 'दूधी' से भी बनाते हैं। विदेशों में इसका उपयोग अधिक होता है। विदेशों में एक प्रकार की पनीर ऐसी भी होती है, जिसमें कीड़े पड़ जाते हैं।

छेना—दूध को फाड़ने से जो गाढ़ा पदार्थ बनता है, उसे छेना कहते हैं। इससे सन्देश, रसगुल्ला, चमचम आदि बंगाली मिठाइयां बनती हैं।

एक सौ सेर दूध से निम्नलिखित मात्रा में दूसरे पदार्थ बन सकते हैं:

क्रीम २० सेर, दूधी ८० सेर, दही ८५ सेर, रबड़ी ४० सेर, खोआ २५ सेर, छेना २० सेर, मक्खन ७ सेर, घी ६ सेर।

गाय-भैंस के दूध का शतांश में विश्लेषण

	जल	स्नेह	दुग्ध-शर्करा	प्रोटीन	लवण
गाय	८७	४ से ४.५	५.०	३.५	०.५
भैंस	८२.४	७ से ८	४.५	४.३	०.७

८—पशु-चिकित्सा

रोग और अंग-भंग पशुओं में होते ही रहते हैं और जहां पशु-चिकित्सालय हो वहां उनकी चिकित्सा जल्दी हो जाती है; परन्तु सब जगह ऐसी सुविधाएं नहीं होतीं, अतः कृषकों को व्याधियों से बचाने के नियमों की ओर ध्यान रखना होता है और यदि व्याधि आ जाय या पशुओं की आपसी लड़ाई से अथवा आकस्मिक घटना से अंग-भंग हो जाय तो उनकी चिकित्सा भी कुछ अंश तक तुरंत हो सके, इसकी जानकारी भी कृषकों में होनी चाहिए। ऐसी जानकारी के लिए ही यहां पर यह संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है।

व्याधियां तीन प्रकार की होती हैं: १. साधारण—जैसे खांसी, सर्दी, आफरा आदि, २. संक्रामक—अर्थात् वे व्याधियां जिनके जन्तु वातावरण की वायु द्वारा फैलकर व्याधि फैला दें; जैसे पशु-प्लेग, ज़हरबाद आदि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३. छूतवाली—अर्थात् जो व्याधिग्रस्त पशु को छूने से अथवा उनका जूठा चारा-दाना खाने से हो जाय; जैसे खुरपका, मुंहपका।

रोग के फैलने से रोग की अवस्था में काम की हानि, पशु-धन की क्षति होती है। इतना ही नहीं, व्याधि से मुक्त होने के पश्चात् भी कई दिनों तक पशु बेकार हो जाते हैं। जैसे खुरपका व्याधि में अथवा पशु-प्लेग में हो जाते हैं।

अस्वस्थ पशुओं के लक्षण

निम्नलिखित साधारण चिह्न दिखाई दें तो समझना चाहिए कि पशु अस्वस्थ है :

(१) पागुर करना बन्द कर दे या ठीक से नहीं करे।

(२) चारा-दाना ठीक से नहीं खाय।

(३) बार-बार उठने-बैठने लगे।

(४) आंख-नाक से पानी गिरे।

(५) थूथन सूखा दीखे।

(६) कान गरम हों।

(७) रोएं खड़े हो जायं।

(८) गोबर पतला हो।

(९) दुधारू पशुओं में दूध की मात्रा घट जाय।

(१०) पेट में दर्द हो तो बार-बार मुंह पार्श्व (बगल) की ओर ले जाता है।

(११) खुरपका-जैसी व्याधि में लंगड़ाना।

(१२) किसी-किसी व्याधि में बेचैनी बहुत होती है।

चिकित्सा करने के पहले यदि उनके बाहरी या भीतरी अंगों के नाम ज्ञात हो जाय तो चिकित्सा में सुविधा होती है, इसलिए नीचे गाय का चित्र मय अंगों के नाम के दिया जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गाय का चित्र अंगों के नाम-सहित

१. कान, २. सींग, ३. मस्तक, ४. आंख, ५. नथने, ६. मुंह, ७. थूथन, ८. जबड़ा, ९. गर्दन, १०. ककुद, ११. रीढ़ का हड्डी, १२. कमर, १३. पृष्ठास्थि, १४. कूल्हा, १५. पिनबोन, १६. पूंछ, १७. वालों का गुच्छा, १८. टखना, १९. नख, २०. टांग, २१. दुग्धकोष, २२. थन, २३. दुग्धकूप, २४. हृदय, २५. घुटना, २६. कन्धे का जोड़, २७. श्वासनली, २८. गल।

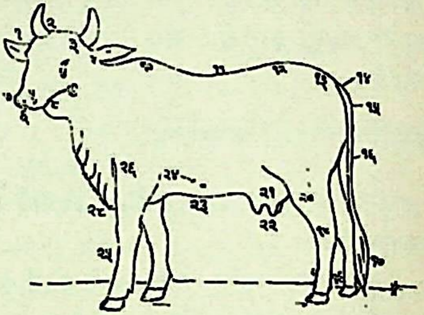

पशुओं की चिकित्सा करनेवालों को पशुचिकित्सक कहते हैं। चिकित्सा के सिवाय इन्हें निम्नलिखित कार्य भी करना होता है :

(१) **शृंगरोधन**—छोटे बच्चों के सींग निकलने के स्थान पर 'कास्टिक सोड़ा' लगाकर सींग की जड़ को जला देते हैं, ताकि सींग निकलें ही नहीं और बड़े होने पर पशु आपस में लड़कर एक-दूसरे को हानि नहीं पहुंचायें। इसकी विधि बछड़ों की देखभाल के वर्णन में दी गई है।

(२) **बधिया करना**—सांड़ को छोड़कर दूसरे नर पशु को बधिया कर देते हैं ताकि उनकी उपयोगिता बढ़ जाय। इसके लिए एक यन्त्र द्वारा अंडकोष की नाड़ी (chord) को दबा देते हैं जिससे वह टूट जाती है।

(३) **कृत्रिम गर्भाधान**—इसका वर्णन पशु-प्रजनन के प्रकरण में हो चुका है।

(४) **टीका लगाना या पाछना**—संक्रामक या छूत के रोगों से बचाने के लिए टीका लगाना पड़ता है या पाछना पड़ता है।

(५) **दागना**—जहां बहुत-से पशु होते हैं, वहां पहचानने के लिए नम्बर लगाये जाते हैं। ऐसे नम्बर गरम लोहे के नम्बरों से दागे जाते हैं। कभी-कभी कुछ व्याधियों से बचाने के लिए भी दागना पड़ता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(६) नाल लगाना—पक्की सड़कों पर जिन घोड़ों या बैलों को लगातार चलना पड़ता है उनके लोहे की नाल लगानी होती है। यह क्रिया कुछ मिस्त्री लोग किया करते हैं।

रोगों की रोकथाम—चिकित्सा से रोग की रोकथाम अच्छी है।

रोग की चिकित्सा की अपेक्षा उसके रोकथाम की युक्तियों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। निम्नलिखित साधारण नियमों की ओर ध्यान रखा जाय तो पशु रोग के आक्रमण से बचाये जा सकते हैं :

(१) साफ चारा-दाना और स्वच्छ जल देना चाहिए।

(२) कुछ पशु स्वभाव से ही लड़ाकू होते हैं, सो उनको अच्छे जानवरों के यूथ से अलग रखना चाहिए और जहां तक बने उन्हें अपने यूथ से निकाल ही देना चाहिए!

(३) जब नये पशु हाट या मेले से खरीदे जायं तो कुछ दिनों तक उनको अपने यूथ से अलग रखना चाहिए। दो-तीन सप्ताह तक अलग रखना काफी होगा। ऐसा करने से अपने यूथ में किसी व्याधि के आने की सम्भावना नहीं रहती। कुछ पशु 'निरापद' होते हैं, अर्थात् उनपर रोगों का असर नहीं होता। कुछ रोग-प्रभावी होते हैं, अर्थात् उन्हें रोग जल्दी पकड़ लेते हैं।

(४) अपने पशुओं को मेले या प्रदर्शनी में ले जाना पड़े तो उन्हें पशु-प्लेग का टीका लगाकर ले जाना चाहिए ताकि उनपर व्याधि का असर न हो।

(५) पशुओं को जंगलों में पागल गीदड़, सांप आदि काट खाते हैं, अतः उनको बचाना चाहिए।

(६) यदि अपने गांव में कोई ऐसी व्याधि आ जाय जो अनजानी हो तो तुरन्त उसकी सूचना अपने जिले के पशुचिकित्सक को देनी चाहिए। जो रोग पशुओं में बहुत जल्दी फैलते हैं उन्हें 'पशु-महामारी' कहते हैं।

रोगों के प्रकार—रोग कई प्रकार के होते हैं और बहुधा निम्नलिखित कारणों से होते हैं :

(१) खान-पान की असावधानी तथा मौसम के हेरफेर से होनेवाले।

(२) छूत और संक्रामकता से होनेवाले।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(३) अन्य रोग।
(४) अंग-भंग।
(५) विष-पान से।
(६) जहरीले जानवरों के काटने से।
(७) अनजाने नये रोग।

रोग को पहचानने को रोग-निदान कहते हैं। निदान के पश्चात् निम्न-लिखित विचित्र गुणवाली औषधियां काम में लाई जाती हैं:

औषधियों के गुण

१. उत्तेजक, २. कफनिस्सारक, ३. कीड़ा-नाशक, ४. गंध-नाशक, ५. नशाकारी, ६. पौष्टिक, ७. मृदु रेचक, ८. रेचक, ९. रोगाणुनाशक, १०. रोगाणुरोधक, ११. सिकुड़नकारी।

रोग, रोगनिदान और चिकित्सा

(१) खानपान की असावधानी तथा मौसम के फेरफार से होनेवाले रोग—

(क) अजीर्ण

कारण—चारादाना अधिक खा जाने से अथवा कोई ऐसी चीज खाने से, जो जल्दी पचे नहीं।

लक्षण—कमर ऊंची हो जाती है। पशु पानी बहुत पीते हैं। बार-बार पार्श्व की ओर देख-देखकर पेट पर लात मारते हैं।

चिकित्सा—खाना बन्द कर देना चाहिए। रेचक औषधि देनी चाहिए और पार्श्व पर मालिश करना चाहिए।

(ख) आफरा

कारण—दलहन वर्ग का घास अधिक खा जाने से अथवा कोई अनाज ज्यादा खा जाने से।

लक्षण—अजीर्ण के जैसे लक्षण, पर पेट बहुत फूल जाता है। पार्श्व फूले हुए नजर आते हैं। सांस लेने में कठिनाई होती है।

चिकित्सा—पशुओं को घुमाना। पार्श्व पर मालिश करना। और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इससे भी लाभ न हो तो पार्श्व में छेद करके गैस निकालना। इसके लिए छोटी पिचकारी-जैसा यन्त्र होता है।

(ग) कब्ज

कारण—कब्जकारी चीज अधिक खा जाने से।

लक्षण—चारा नहीं खाया जाता और गोबर ठीक से नहीं होता।

चिकित्सा—रेचक और पाचक औषधियां देना।

(घ) दस्त

कारण—ऐसा पदार्थ खाने से जो जल्दी पचे नहीं।

लक्षण—गोबर बार-बार होता है और पतला होता है।

चिकित्सा—पाचक तथा सिकुड़नकारी आन्तरिक औषधि पिलाना।

(ङ) पेचिश

कारण—पेट में कीड़े पड़ने से, या अन्य बीमारी से।

लक्षण—गोबर के साथ आँव और खून आता है।

चिकित्सा—सिकुड़नकारी औषधि पिलाना।

(च) धसका

कारण—सर्दी से या गले में किसी चीज के अटकाव से।

लक्षण—खांसी चलती है।

चिकित्सा—तारपीन का और सरसों का तेल बराबर भाग में मिलाकर मालिश करनी चाहिए। यदि गले में किसी चीज के अटकाव से खांसी होगई हो तो उसे निकालना चाहिए।

(२) छूतवाले तथा संक्रामक रोग

इस प्रकार की व्याधियों में सबसे पहले यह करना चाहिए कि रोगग्रस्त पशु को दूसरे पशुओं से अलग कर देना चाहिए और जो रोगी पशु मर जाय उसे गड़वा देना चाहिए, ताकि व्याधियां अधिक न फैलें।

ऐसी व्याधियों में पांच मुख्य हैं:

(क) खुरपका और मुंहपका (खराड़े आना)

(ख) गला-घोटू।

(ग) गिल्टी रोग।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(घ) ज़हरवाद।

(ङ) पशु-प्लेग (माता)।

(क) खुरपका और मुंहपका

लक्षण—इसमें थोड़ा बुखार आता है। मुंह में छाले पड़ जाते हैं जिससे लार टपकती रहती है। खुर भी पक जाते हैं और चलने में पशु लंगड़ाते हैं। थोड़ी सावधानी रक्खी जाय तो पशु मरते तो नहीं, पर कुछ दिनों के लिए वेकार हो जाते हैं।

चिकित्सा—सौ भाग पानी में ढाई भाग फिटकरी डालकर उससे मुंह और ज़बान धोये जाएं तो लाभ होता है। खुरों को १% फिनाइल के पानी से धोना भी अच्छा होता है।

(ख) गलाघोंटू—

लक्षण—इसमें बुखार १०५° से १०६° फे० तक हो जाता है, सांस लेने में कठनाई होती है। मुंह लाल हो जाता है और उससे लार गिरती है। ज़बान फूल जाती है और नीली हो जाती है। गले के आस़-पास सूजन आ जाती है और सांस-नली बंद हो जाती है जिससे पशु मर जाते हैं। कभी-कभी यह रोग इतने जोरों का होता है कि एक-दो दिन में ही पशु मर जाता है।

चिकित्सा—भारत में गले के नीचे दागने की प्रथा है। ऐसा करने से जानवर अच्छे होते देखे गए हैं। सांस-नली में योग्य चिकित्सक द्वारा आपरेशन हो जाय तो भी पशु बच जाते हैं। खाने को चावल और अलसी की राब देनी चाहिए। आठ-दस तोला शराब, एक तोला सोंठ और दो माशा काली मिर्च का चूर्ण राब में मिलाकर दिन में दो बार देना चाहिए।

(ग) गिल्टी

लक्षण—इसमें तापमान १०५° फे० से भी अधिक हो जाता है। मुंह और आंखें लाल हो जाते हैं। पतले रक्त-मिश्रित दस्त हो जाते हैं और पेशाब में भी रक्त आता है। बदन पर जगह-जगह सूजन आ जाती है परन्तु गलाघोंटू रोग-जैसी नहीं। सांस लेने में कठिनाई होती है और पशु लड़-खड़ाकर गिर जाते हैं तथा मर जाते हैं।

चिकित्सा—अभी तक इस रोग की कोई चिकित्सा नहीं निकली है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रोग के आरम्भ में 'एण्टी एन्थ्रेक्स (Anthrex) सिरम' का टीका लगाना लाभप्रद होगा।

(घ) जहरबाद

लक्षण—इसमें कंधे और गर्दन पर तथा कभी-कभी पिछले पांव पर भी सूजन आ जाती है जो पहले गरम होती है और बाद में ठंडी हो जाती है। पशुओं का चलना-फिरना बन्द हो जाता है। सूजन पर से बाल गिरने लगते हैं। उसपर पसीना आता है जिसमें बू आती है और पशु मर जाते हैं।

चिकित्सा—इसकी चिकित्सा तो कोई नहीं है। अच्छे पशुओं को पछवा देना चाहिए ताकि उनपर व्याधि का आक्रमण न हो।

(ङ) पशु-प्लेग—

लक्षण—अस्वस्थता के साधारण लक्षणों के सिवाय इसमें यह होता है कि पशु को जोर का बुखार आता है। तापमान १०५° फे० हो जाता है। मुंह, जबान और ओंठ पर लाल-लाल छाले पड़ जाते हैं और मुंह से लार गिरती रहती है। गोबर में बू आती है और कभी-कभी रक्त भी आ जाता है। जब रोग अधिक बढ़ जाता है तो पशु पार्श्व पर मुंह रखकर बैठ जाता है। इस व्याधि से सात आठ दिन में पशु की मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा—रोग के आते ही स्वस्थ पशुओं को पशु-प्लेगरोधक टीका लगवा देना चाहिए। रोगी पशु को बहुत मुलायम हरा चारा देना चाहिए, साथ-साथ चावल का मांड़, चावल या अलसी के चूरे की राब बनाकर नाल से पिलाना चाहिए, यदि वैसे न खाये। कुछ ताकत बनी रहे इसके लिए आठ-दस तोला शराब, एक तोला सोंठ, दो माशा कालीमिर्च का चूर्ण राब में मिलाकर दिन में दो बार देना चाहिए।

(३) अन्य रोग

(क) घाव या रक्त बहना—

चिकित्सा—नीम के पानी से धोकर चार भाग तेल में एक भाग कपूर मिलाकर लगाना चाहिए।

रक्त बहता हो तो निम्नलिखित घोल उस घाव पर डालना चाहिए:

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीला थोथा	एक तोला
हीरा कसीस	एक तोला
खड़ी	एक तोला
गरम पानी	बीस तोला

दूध पीनेवाले बच्चे भी थन को काट देते हैं। ऐसी स्थिति में घाव को लाल दवा (१ : १०००) पानी में या उतने ही पानी में एक चम्मच नमक डालकर घाव को धोना चाहिए। बाद में पोंछकर बोरिक एसिड और जिंक आक्साइड (१ : ८) का मलहम लगा देना चाहिए।

(ख) चर्म रोग—दाद-खुजली आदि।

चिकित्सा—साबुन और गरम पानी से धोकर दस तोला गंधक और पचास तोला सरसों का तेल मिलाकर लगाना चाहिए।

(ग) मोच खाना—

चिकित्सा—तारपीन और मीठे तेल को बराबर भाग में मिलाकर गरम करके मालिश करने और सेकने से लाभ पहुंचता है।

(घ) फोड़ा—

चिकित्सा—अलसी की पुल्टिस बांधकर घाव फूट जाय तो घाव के इलाज-जैसी चिकित्सा होनी चाहिए।

(ङ) बांडी—

इसमें पशु की पूंछ के बाल गिर जाते हैं और धीरे-धीरे पूंछ छोटी होती जाती है। ज्योंही यह व्याधि दीखे, पशु को गिराकर तेज़ औज़ार से थोड़ी पूंछ काटकर फेंक देनी चाहिए और कटे हुए मुंह को बहुत गरम तेल में थोड़ी देर डुबोकर रखना चाहिए ताकि वह भाग जल जाय। यदि ऐसा नहीं किया गया तो व्याधि धीरे-धीरे पूंछ की जड़ तक पहुंच जाती है और पशु मर जाते हैं।

(च) स्तन-रोग—

लक्षण—इसमें दुधारू पशु के ऐन और थन फूल जाते हैं।

चिकित्सा—सूजन पर गरम जल से सिकाई करनी चाहिए। यदि घाव हो जाय तो घाव की चिकित्सा की जानी चाहिए।

उपर्युक्त रोगों के सिवाय पशुओं में इनफ्लुएंजा, 'मिल्क फीवर'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'निमोनिया', 'धनुर्वात', 'चिचड़ी बुखार', 'सूखा रोग', क्षय रोग आदि हो जाते हैं परन्तु ये ऐसे नहीं होते जिनका वर्णन यहां दिया जाय। यदि हो जायं तो कुशल चिकित्सक से चिकित्सा करा लेनी चाहिए।

(४) अंग-भंग—

पशु आपस में लड़ पड़ते हैं या अकस्मात् कहीं गिर जाते हैं तो सींग या अन्य अंग टूट जाते हैं।

चिकित्सा—सींग टूट जायं तो घाव को नीम के पानी से या स्पिरिट से या देशी शराब से साफ धोकर निम्नलिखित चूर्ण लगाकर पट्टी बांध देनी चाहिए :

नीलाथोथा, फिटकरी, सुहागा और कोयला बराबर-बराबर मिला करके चूर्ण करके लगाना चाहिए।

हड्डी टूट जाय तो टूटे हुए भागों को बराबर जमाकर खपच्चियों (बांस की तीलियों) से बांध देना चाहिए। कुछ दिनों में हड्डी जुड़ जायगी।

५. विष

ढोर कभी-कभी विषैले पौधे खा जाते हैं। हरी अलसी के पौधे खाने से भी कुछ जानवर मरते हुए देखे गये हैं। जुवार जिसकी बाढ़ अच्छी नहीं होती उसके पौधों में भी हायड्रोसायनिक अम्ल नाम का विष बन जाता है। उसके खाने से भी कभी-कभी पशु मर जाते हैं। कभी कभी दुष्ट लोग जान-बूझकर चमड़े के लालच से पशुओं को विष दे देते हैं और कभी धोखे से भी कोई जहरीली चीज खा ली जाती है।

लक्षण—अलग-अलग प्रकार के विष-पान के लक्षण अलग-अलग होते हैं। जब मालूम हो जाय कि विष खाया है तो तुरन्त रेचक औषधि देनी चाहिए और खाने के लिए चावल या अलसी की राब देनी चाहिए।

(६) जहरीले जानवरों के काटने का विष

यदि सांप काट खाय और पता चल जाय कि अमुक स्थान पर काटा है, तो उस स्थान पर चाकू से चीरा लगाकर 'पोटेशियम परमेगनेट'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(लाल दवा, जो कुओं में डाली जाती है), तुरन्त मल देनी चाहिए।

(७) अनजाने रोग

ऐसे रोग आ जायं तो चिकित्सकों को दिखाना चाहिए।

चिचड़ी—पशुओं को चिचड़ी बहुत तंग करती है। उनका खून पीती रहती है और पिछले पांव की जांघों पर और गायों के ऐन पर लग जाती है।

इनसे छुटकारा पाने के लिए जहां ये लग जाती है वहां 'गेमेक्सीन'[1] लगाकर दस-पन्द्रह मिनिट बाद उस स्थान को साबुन से साफ धो डालना चाहिए ताकि पशु औषधि को चाटने न पाये। औषधि लगाने के साथ पशुओं के मुंह पर 'सूंड़िया'[2] बांध देना चाहिए ताकि वे चाट न सकें।

चार भाग नीम या सरसों के तेल में एक भाग मिट्टी का तेल मिलाकर लगाने से भी चिचड़ियां मर जाती हैं। थोड़ी देर बाद इस औषधिवाले स्थान को भी धो डालना चाहिए।

नीचे कुछ उपयोगी साधारण औषधियां लिखी हैं, जिन्हें कृषकों को अपने घरों में रखना चाहिए, ताकि समय पर काम दे सकें:

१. अजवायन, २. अफीम का सत, ३. अरंडी का तेल, ४. अम्ल कार्बोलिक, ५. कत्था, ६. कपूर, ७. काली मिर्च, ८. कुचला, ९. खड़ी, १०. गंधक, ११. टिक्चर आयोडीन, १२. तारपीन का तेल, १३. तूतिया, १४. नौसादर, १५. पोटेशियम परमेगनेट, १६. फिटकरी, १७. फिनाइल, १८. मुसव्वर, १९. मैग्नेशियम सलफेट, २०. शराब देशी, २१. सेली सायलिक अम्ल, २२. सोडा, २३. सोहागा, २४. सोंठ, २५. हीरा कसीस।

कुछ उपयोगी नुस्खे[3] जो उपर्युक्त दवाइयों से बन सकते हैं:

---

[1] एक भाग गेमेक्सीन को हजार भाग जल में मिलाकर लगाना चाहिए।

[2] सूंड़िया—एक प्रकार की जाली होती है जो दौनी करते समय पशुओं के मुंह पर बांधी जाती है।

[3] Edward J. T. 1927 some disease of Cattle in India, P. 142-145 से।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तेजक

शराब	१० तोला
सोंठ	१½ तोला
काली मिर्च	८ तोला
कांजी	१½ सेर

कीड़ा नाशक

नीला थोथा	१ माशा
पानी	१० तोला

खून बंद करने के लिए

तूतिया	१ भाग
हीराकसीस	१ भाग
फिटकरी	४ भाग
गरम पानी	४० भाग

घाव

कपूर	१ भाग	तरल
मीठा तेल	४ भाग	
सोहागा	१ भाग	सूखी दवा
कोयला	१ भाग	
फिटकरी	१ भाग	
तूतिया	१ भाग	

चर्म रोग

गंधक	१ भाग
सरसों का तेल	४ भाग

मालिश सूजन पर

तारपीन का तेल	१ भाग
सरसों का तेल	१ भाग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुंह पकने पर

फिटकरी	१ भाग
पानी	४० भाग

रेचक

मेग्नेशियम सलफेट	४० तोला
सोंठ	१$\frac{1}{4}$ तोला

सिकुड़नकारी

खड़ी	२० तोला
कत्था	१$\frac{1}{2}$ तोला
अजवायन	१$\frac{1}{4}$ तोला

९—कुक्कुटादि-पालन

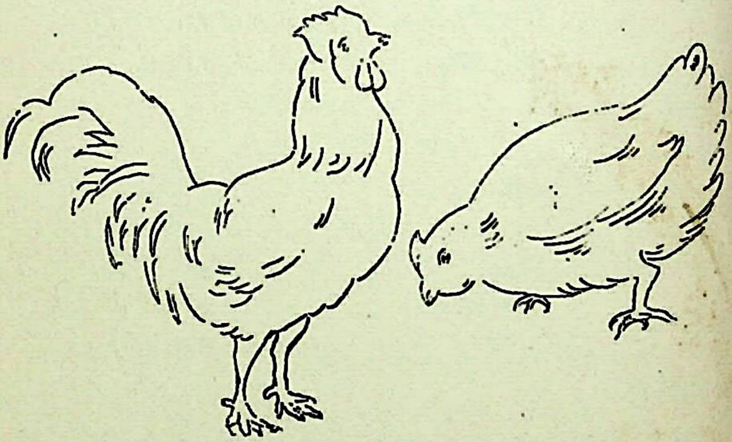

मुर्गी

उपयोगी पक्षी

मुर्गियां, बतखें, शुतुरमुर्ग आदि पक्षियों के पालन को कुकुट्टादि-पालन कहते हैं। यह धंधा ऐसा है कि यदि बड़े पैमाने पर किया जाय तो सारा समय इसीमें लग सकता है, परन्तु कृषकों के लिए आर्थिक दृष्टि से यह एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अच्छा सहायक धंधा माना गया है क्योंकि ऐसे पक्षी फार्म पर बिखरा हुआ अन्न तथा थोड़ा-बहुत दाना खाकर अपने अण्डों-बच्चों के द्वारा तथा बड़े पक्षियों की बिक्री द्वारा काफी आय दे देते हैं।

उपर्युक्त पक्षियों में मुर्गियों का पालन विशेष रूप से होता है इसलिए इनके विषय का यहां वर्णन किया जाता है।

मुर्गियों के वर्ग—जिस प्रकार पशु दुधारू, भारवाही और दोकारी होते हैं ऐसे ही मुर्गियां भी तीन प्रकार की होती हैं : प्रथम अधिक अंडे देने-वाली, दूसरी मुटानेवाली और तीसरी दोकारी। खाने में मुटानेवाली मुर्गी का मांस अच्छा माना गया है।

चूंकि देशी मुर्गियां कम और छोटे अण्डे देती हैं, अतः कुछ उन्नत जातियां जैसे 'ब्लैक मिनार्का', 'रोड आयलैंड', 'वाईट लेगहार्न' बाहर से यहां लायी गई हैं। इनसे इस धंधे में काफी उन्नति हुई है। जहां देशी मुर्गियां साल-भर में पच्चास-साठ अंडे देती हैं वहां उपर्युक्त जाति के मुर्गों से मेल कराने से (विशेषतः 'रोड आयलैंड' तथा 'वाईटलेगहार्न' के मेल से) दसवीं पीढ़ी में जाकर औसत दर्जे के डेढ़ सौ अण्डे देने लगी। सिर्फ संख्या ही नहीं बढ़ी, अण्डों का आकार भी बढ़ा। मांस के विचार से 'रोड आयलैंड' जाति की मुर्गियां अच्छी मानी गई हैं।

मुर्गीशाला

मुर्गी तथा इनके बच्चों को कुत्ते-बिल्ली से बचाने के लिए रात को पिंजड़ों में रखना होता है। पिंजड़ों में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि पक्षी जाली पर बैठा करें ताकि बीट नीचे गिर जाय और पक्षी गंदे न हों। पिंजड़े ऐसे स्थानों में होने चाहिए जहां प्रकाश और कुछ धूप मिल जाया करे, ताकि उनमें हानिकर्ता कीट या जन्तु न होने पायें। सर्दी के दिनों में रात को पिंजड़ों पर कपड़े या चट्टियां डाल देनी चाहिए ताकि सर्दी से बचाव हो सके। उन्नत जाति की मुर्गियों के रखने का घेरा कम-से-कम इतना लम्बा-चौड़ा होना चाहिए कि प्रति-पक्षी तीन वर्गगज़ जमीन हो, ताकि उन्हें घूमने-फिरने का स्थान मिल सके। जब मुर्गियों को पिस्सू और जूं बहुत सताते हैं तो वे धूलि-स्नान करती हैं अतः उस घेरे में ऐसी व्यवस्था

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होनी चाहिए जिसमें थोड़ी जगह में धूल पड़ी रहे। मुर्गियां बहुधा ज़मीन कुरेदती हैं अतः उनके लिए घेरे में ऐसी भूमि भी होनी चाहिए जहां वे कुरेद सकें। सारे घेरे का फर्श पक्का होना चाहिए।

चार-दाना

यद्यपि ऐसे पक्षी बिखेरे गये दानों से पेट भर लेते हैं, फिर भी कम से कम प्रति-पक्षी एक-दो छटांक दाना नित्य देना चाहिए। दाने में सभी प्रकार के अनाज खा लेते हैं। इन्हें हरी सब्जियां भी देनी चाहिए। इसके लिए उचित रीति यह होगी कि तार की जाली में सब्जियां रख दी जायं ताकि उनमें से अपनी चोंच से नोच-नोचकर खा सकें और बिखेरकर बिगाड़ें नहीं।

मुर्गियों को पानी भी साफ पिलाना चाहिए। बीमार पक्षियों के रहने और पानी की व्यवस्था अलग होनी चाहिए।

मुर्गे-मुर्गियों का उनकी उपयोगितानुसार वर्गीकरण

खस्सी मुर्गे—मुर्गे मुटायें, इसलिए उन्हें खस्सी कर देते हैं।

भक्षणार्थ मुर्ग—ऐसे मुर्ग खाने में स्वादिष्ट और मोटे होते हैं।

मुर्गियां

(१) अंडे सेनेवाली, (२) अंडे नहीं सेनेवाली, (३) पोषिका, जो दूसरी मुर्गियों के अंडे सेती हैं, (४) अंडे देनेवाली, (५) कुड़क मुर्गी।

अच्छे मुर्ग की पहचान

अच्छा मुर्ग चंचल, चौड़े वदन का, मजबूत पांवोंवाला, बहुत बोलनेवाला, अच्छा लड़नेवाला, तेज़ आंखवाला और अपनी मुर्गियों की रक्षा करनेवाला होता है। उसकी कलगी, डाढ़ी और खार अच्छे बने हुए होते हैं।

अच्छी मुर्गी की पहचान

मुर्गियों के पर गिरते हैं। अच्छी मुर्गी के पर एक साथ गिरते हैं। ऐसी मुर्गी अंडे जल्दी देने लगती है और बहुत समय तक देती रहती है। उसकी आंखें चमकीली, कलगी बड़ी और योनि-मुख नम तथा चौड़ा होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुर्गियां छः-सात महीने की होने पर अंडे देने योग्य हो जाती हैं, परन्तु मुर्गा ऐसा होना चाहिए जो एक साल की आयु का हो गया हो। उन्नत मुर्गियां सालभर में डेढ़ सौ तक अंडे देती हैं और दो वर्ष तक बराबर देती रहती हैं। अंडे बहुधा दोपहर के बाद दिये जाते हैं और अंडे देते समय मुर्गी एक विशेष आवाज करती है। एक मुर्गी लगातार बीस अंडे देकर कुछ दिनों के लिए कुड़क हो जाती है और फिर अंडे देने लगती है। अंडे बिना मुर्गे के मेल के भी होते हैं परन्तु उनसे चूजे नहीं निकलते।

अच्छे अंडों की पहचान

ताजा अंडे साफ और चिकने होते हैं, बासी खुरदरे हो जाते हैं। अंडे को पकड़कर कान के पास रखकर हिलाने पर यदि भद-भद की आवाज निकले तो समझना चाहिए कि अंडा बिगड़ गया। प्रकाश द्वारा देखने के यंत्र भी बने हुए हैं जिनसे अच्छे अंडे की पहचान हो जाती है।

अंडों की आयु बढ़ाना हो तो उन्हें शीतागार में रखना चाहिए। उनपर तेल लगाने से अथवा चूने के पानी[1] में डुबोकर रखने से भी आयु बढ़ जाती है। मिट्टी के बर्तन में अंडे रखकर उसमें चूने का पानी इतना गिरायें कि वे उसमें डूबे रहें। चूने का पानी उसी भांति तैयार किया जाय, जैसे पुताई (सफेदी) के लिए किया जाता है। इस प्रकार से रक्खे हुए अंडे गर्मी में दो महीने तक और सर्दी में चार महीने तक खराब नहीं होते।

१३०° फे० तापमान के गर्म जल में अंडे पन्द्रह-बीस मिनट तक रख-कर निकाल दिये जायं तो ऐसे अंडे दो-एक सप्ताह तक नहीं बिगड़ते।

अंडे सेना—जिन अंडों से चूज़े निकालने होते हैं उन्हें सेना पड़ता है। ऐसे कार्य के लिए अच्छे आकारवाले अंडे पोषिका मुर्गी के नीचे रक्खे जाते हैं अथवा कोई भी अंडे सेनेवाली मुर्गी के नीचे रक्खे जाते हैं। इनको सेने की कृत्रिम युक्तियां भी निकल चुकी हैं। ऊष्मा-नियंत्रक यंत्र में एक प्रमाणित तापमान (लगभग १०३° फे०) पर रखने से अंडों से बच्चे निकल आते हैं।

जब अंडे मुर्गी के नीचे रक्खे जायं तो इतना ध्यान रहे कि एक मुर्गी के

---

[1] Tips to Better Farming 1956, I.C.A.R. Publication.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीचे आठ-दस अंडों से ज्यादा न रहें। अंडे सेनेवाली मुर्गी को आराम पहुंचे, इसलिए मिट्टी के तसले बनवाकर उनमें घास जमा देनी चाहिए। ये इतने ऊंचे न हों कि मुर्गी को उड़कर बैठना पड़े। फूटे घड़ों की पेंदियां भी काम दे सकती हैं। कुछ लोग इसके लिए लकड़ी के बक्से रखना पसन्द करते हैं परन्तु उनमें पिस्सू, चिचड़ी आदि कीट घुस जाते हैं और मुर्गी को तकलीफ देते हैं। अंडे पर बैठनेवाली मुर्गी को रोज संध्या को धीरे से उठाकर दाना चुगने के लिए छोड़ देना चाहिए। ऐसी मुर्गी को मक्का, गेहूं या जुवार का दाना देना चाहिए। दस्तावर खाना नहीं देना चाहिए, क्योंकि पतली बीट से अंडे खराब हो जाते हैं। इसका दाना कुछ दूर तक बिखेर देना चाहिए, ताकि वह घूम-फिर सके।

सात दिन बाद अंडों को देखते रहना चाहिए, जो विगड़ जायं उन्हें काम में ले आना चाहिए। लगभग तीन सप्ताह तक अंडा सेया जाता है, तब चूज़े निकलते हैं।

कुछ लोगों का खयाल है कि चूज़ों को पहले दो दिन तक कोई खाना नहीं दिया जाय, परन्तु वर्तमान प्रयोगों[1] के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ऐसा नहीं करना चाहिए। उन्हें खाना देने में कोई हर्ज नहीं है। दो-एक रोज़ हो जायं तो उन्हें चूने के छोटे-छोटे डले देना भी लाभप्रद होता है। आठ-दस दिन की आयु के बाद तो उन्हें हरी सब्ज़ियां भी देनी चाहिए। चूज़ों को प्रोटीन्स की आवश्यकता अधिक होती है जिसकी पूर्ति अनाजों से नहीं हो सकती, अतः उन्हें दूधी (मलाई निकाला हुआ दूध) देना चाहिए।

अंडे और मुर्गियों का चालान

अंडे देवदार के बक्सों में पुआल, धान की भूसी या घास में रखकर भेजे जाते हैं। इन्हें कीलों से पेक नहीं करते, क्योंकि पेक करते समय या बक्स खोलते समय अंडों के फूटने का डर रहता है। इन्हें रस्सी से बांध देते हैं।

मुर्गियां चौड़ी टोकरियों में रखकर उनके मुंह पर जाली लगा दी जाती है और टोकरियां रवाना कर दी जाती हैं।

---

[1] Tips to Better Farmiug 1056. I.C.A.R. Publication.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुर्गियों के शत्रु और रोग

शिकारी पक्षी, कुत्ते, बिल्ली, नेवला, गीदड़, सांप आदि जानवर ऐसे हैं जो इनके बच्चों को खा जाते हैं। दूसरे प्रकार के शत्रु वे हैं जो इन्हें कष्ट देते हैं। जैसे जूं, पिस्सू, चिचड़ी आदि। इन दूसरे प्रकार के शत्रुओं द्वारा संक्रामक रोग भी फैलते हैं।

पहले प्रकार के शत्रुओं से बचाने के लिए पक्षी जालीदार घेरे में रखने होंगे। दूसरे प्रकार के शत्रुओं से बचाने के लिए धूलि-स्नानवाली मिट्टी में प्रत्येक दस मुर्ग पीछे दस शतांशवाला एक तोला डी० डी० टी० चूर्ण छिड़कना चाहिए। पक्षियों के पिंजड़ों में भी पांच शतांशवाला तरल डी० डी० टी० या दो शतांश क्रियोसोट तेल का छिड़काव होना चाहिए।

पक्षियों के बदन पर भी दस शतांशवाला डी० डी० टी० छिड़का जा सकता है, परन्तु उसे दस-पन्द्रह मिनट के बाद पोंछ डालना चाहिए।

जूं से बचाने के लिए राख, गंधक और तम्बाकू का मिश्रण पक्षियों के बदन पर मलना अच्छा होगा। एक भाग तम्बाकू, एक भाग गंधक और दस भाग राख लेना चाहिए।

चिचड़ी को मारने के लिए चार भाग नीम या सरसों के तेल में एक भाग मिट्टी का तेल मिलाकर पक्षियों के बदन पर लगाना चाहिए। इसके लिए पांच शतांशवाला डी० डी० टी० चूर्ण भी काम में लाया जा सकता है। एक भाग गेमेक्सीन को एक हजार भाग जल में मिलाकर लगाने से भी चिचड़ियां मर जाती हैं।

रोग

रोग दो प्रकार के होते हैं: असंक्रामक और संक्रामक। असंक्रामक रोग असंतुलित आहार, प्रतिकूल वातावरण या वंशानुवंशगत होते हैं।

सूखे-जैसा रोग—असंतुलित आहार से जिसमें विटामिन्स की कमी होती है उससे होता है। अत्यधिक गर्मी-सर्दी या असंतुलित आहार से अथवा गंदे स्थानों में पहले से भी कुछ रोग हो जाते हैं। ऐसे रोग प्रतिकूल वातावरण द्वारा होते हैं। ऐसे रोगों के लिए औषधोपचार की अपेक्षा कारण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हटाना अच्छा होगा। वंशानुवंशगत रोगवाले पक्षियों को निकाल देना चाहिए। पक्षियों को दाना दिया जाय तो वह भी गंदी जगह में नहीं डालना चाहिए। पानी भी साफ देना चाहिए।

संक्रामक रोग

ये ऐसे रोग होते हैं कि एक साथ बड़े ज़ोरों से फैल जाते हैं और कई मुर्गियां या चूज़े मर जाते हैं। मुख्यतः ऐसे रोग निम्नलिखित हैं :

(१) काक्सिडायोसिस—

तीन से दस सप्ताह तक की आयु के पक्षियों में यह रोग होता है। इसमें खूनी दस्त आते हैं और पैर लड़खड़ाने लगते हैं। रोगग्रस्त पक्षियों की बीट यदि दाने में मिल जाय तो उस दाने के खानेवालों में भी यह व्याधि हो जाती है। इसलिए यह ध्यान रखना चाहिए कि व्याधि के दिनों में दाना वर्तनों में रखकर दिया जाय और रोगग्रस्त पक्षी अलग रक्खे जायं।

ऐसे पक्षियों के पीने के पानी में 'सल्फाक्विनाक्सोलीन' नाम की औषधि डालनी चाहिए। एक सौ भाग जल में आधा भाग औषधि डालनी चाहिए।

(२) पेचिश (पोल्यूरम)—

यह रोग बहुधा चूज़ों में होता है। सफेद रंग के दस्त लगते हैं। चूज़ों का सिर लटक जाता है।

चिकित्सा—रहने के स्थान की सफाई रखनी चाहिए।

(३) ज़ाता—

इसे 'चिकन पाक्स' या 'फाउल पाक्स' भी कहते हैं। यह रोग बहुधा गर्मी के दिनों में होता है। परहीन अंगों पर छोटे-छोटे भूरे और पीले दाने उठ आते हैं। धीरे-धीरे ये बढ़कर मिल जाते हैं। लगभग तीन सप्ताह में ये सूख जाते हैं और पपड़ी बनकर गिर जाते हैं।

चिकित्सा—रोगग्रस्त पक्षियों को टीका लगवा देना चाहिए। 'डिटॉल' के पानी से घाव धोकर उनपर बोरिक पाउडर भुरभुराना अच्छा होगा। मरे हुए पक्षियों के स्थानों को रोगाणुनाशक औषधियों से साफ कर देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(४) रानीखेत

यह रोग छोटे-बड़े सब पक्षियों में होता है। इसमें मुंह से सफेद चिपचिपी लार गिरती है, खांसी चलती है और श्वास लेने में कठिनाई होती है। पैरों में और परों में लकवा हो जाता है और फिर पक्षी मर जाते हैं। यह रोग चिचड़ी द्वारा फैलता है।

चिकित्सा—स्वस्थ पक्षियों को पछवा देना चाहिए।

(५) हैजा—

भारत के कुक्कुटों में यह रोग नहीं पाया गया। यदि हो जाय तो टीका लगवा देना चाहिए और स्वस्थ पक्षियों को पछवा देना चाहिए।

१०—रेशम-उत्पादन

आज से लगभग साढ़े चार हजार वर्ष पूर्व चीन की राजकुमारी के हाथ से खेलते-खेलते रेशम के कीट का एक कोष 'ककून' गरम पानी में गिर गया और उससे रेशम के तार निकल आये। तभी से रेशम का जन्म हुआ और धीरे-धीरे संसार में इसका फैलाव हुआ। रेशम-उत्पादन में भारत का संसार में चौथा स्थान है।

रेशमी वस्त्रों की मांग दिनोंदिन इतनी बढ़ती जा रही है कि उसकी पूर्ति नहीं होने से नकली रेशम भी बनने लगा है। भारतवर्ष में रेशमी वस्त्र पवित्र माने गये हैं। इतना ही नहीं, इनमें यह गुण भी है कि ये जल्दी मैले नहीं होते और चलते भी बहुत हैं। एक रेशमी वस्त्र दो-तीन सूती वस्त्रों के बराबर चलता है।

भारतवर्ष में काश्मीर, असम, बंगाल, पूर्वी मध्यप्रदेश, मद्रास तथा मैसूर में रेशमी कपड़े तैयार होते हैं।

रेशम-कीट की जातियां

असली रेशम एक प्रकार के पतंग की जाति के कीट की देन है। ऐसे कीट को मोटे तौर पर हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं: एक ये, जो घरों में पाले जा सकते हैं। इनकी इल्लियां पूर्ण बाढ़ पाने पर घरों में कोष बनाती हैं जिनसे रेशम का तागा निकाला जाता है। दूसरी प्रकार के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वे कीट हैं जो साल, अर्जुन, बेर आदि पेड़ों पर ही पाले जाते हैं और पेड़ों पर ही कोष बनाते हैं जो डालियों पर लगे रहते हैं।

घर में पालने योग्य कीट—ये दो प्रकार के हैं : एक वे जिन्हें तूत की पत्तियां खिलाकर पोषा जाता है और जिनसे बढ़िया रेशम निकलता है। दूसरे वे जिन्हें एरंडी के पत्ते खिलाये जाते हैं। इन्हें 'राटी' रेशम कीट कहते हैं। इनका रेशम मोटा होता है।

टसर और मोगा के कीट—जंगली पेड़ों पर जो कीट पोषे जाते हैं, उनसे मिलनेवाले रेशम को 'टसर' और 'मोगा' कहते हैं।

'टसर' बिहार, उड़ीसा और पूर्वी मध्यप्रदेश में होता है। वहां के आदिवासी लोग इनके कीट पोषते हैं। इनके कोषों से बीस-पचीस दिन में पतंग निकलते हैं परन्तु कुछ बड़े कोषों से साल-दो-साल तक भी नहीं निकलते। जो जल्दी निकलते हैं उनके कोष छोटे होते हैं और इन्हींको बहुधा पोषते हैं। जब कोष काटकर नर-मादा निकलते हैं तो मादा को पेड़ों पर बांध आते हैं। वहीं नर से मेल होता है। चूंकि ये कीट पतंग की जाति के हैं इनमें मेल बहुधा मध्य रात्रि के बाद होता है। मेल हो जाने के बाद या तो नर कीट अपने-आप छूट जाते हैं या छुड़ा दिये जाते हैं। इसके बाद नर दो-चार दिन में मर जाते हैं। कोई-कोई दस-पन्द्रह दिन तक भी जिंदा रह जाते हैं।

इन कीटों की एक-एक मादा डेढ़ सौ से दो सौ तक अंडे देती है जिन्हें पत्तों के दोनों में रखते हैं। ऐसे अण्डों से जब आठ-दस दिन में इल्लियां निकल आती हैं, तो एक-एक पेड़ पर पांच-छः दोने बांध दिये जाते हैं जिनसे निकलकर इल्लियां पत्ते खाना शुरू कर देती हैं। जब एक पेड़ के पत्ते खा लेती हैं तो इल्लियों को डालियों से झाड़कर दूसरे पेड़ों पर छोड़ देते हैं। इल्लियां ज्यों-ज्यों बड़ी होती जाती हैं, निर्मोक फेंकती जाती हैं। चार बार निर्मोक फेंकने के पश्चात् पूरी बाढ़ पाई हुई इल्लियां कोष बनाती हैं जो पेड़ों पर लटकते रहते हैं। ऐसे कोषों को इकट्ठे करके इनको पोषनेवाले हाट में बेच आते हैं। जिन कोषों से कीट निकलता है उनको छोड़कर शेष को एक मिट्टी के बर्तन में भरकर उसे उलटा रखकर उसमें भाफ छोड़ते हैं जिनसे कोष के अन्दर के पतंग मर जाते हैं। असम में इस प्रकार का कीट 'मुंगा' होता है जिसका रेशम सुनहरी रंग का होता है जबकि टसर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का रेशम तांबे के रंग का होता है।

इन कीटों का जिन पेड़ों पर पोषण होता है, उनकी काट-छांट इस प्रकार की जाती है कि उनकी डालियां जमीन से पांच फुट ऊपर रहें और ऊपर की डालियां दस फुट से ऊंची न हों।

पक्षियों तथा कीड़ों से बचाने के लिए इन कीटों की रक्षा इसी तरह करनी पड़ती है जैसे फलों की रक्षा करते हैं। पेड़ों के धड़ झाड़कर साफ करते रहते हैं ताकि चींटियां ऊपर न चढ़ पायें।

ऐसे कोषों से तागा निकालने की क्रिया सूत्रणगृहों में अच्छी होती है। वहां इन कोषों को सोडा-जैसे पदार्थों के साथ उबालकर साफ और मुलायम करके यन्त्रों द्वारा सूत की कताई होती है। आदिवासी भी सज्जी आदि से इन्हें गलाकर साफ करके रेशम कातते हैं। एक व्यक्ति एक दिन में पचास से एक सौ कोषों का रेशम कात सकता है।

घरों में पोषे जानेवाले कीट—जैसाकि पहले बताया जा चुका है ये कीट एरंडी और तूत के पत्तों पर पोषे जाते हैं जिसके लिए यदि तूत या एरंडी के पत्ते न मिलें तो इन्हें लगाना होता है। तूत की डालियां लगानी होती हैं। एरंडी के बीज बोये जाते हैं। इनके अंडे रेशम (सेरीकलचर) विभागवालों से मंगवाने चाहिए ताकि वे व्याधिरहित हों। इन कीटों में 'प्रेवीन' तथा 'स्वेतमारी' नाम की व्याधियां ऐसी हैं जिनसे बहुत-से कीट मर जाते हैं और बचे-खुचों से अच्छे कोष नहीं मिलते।

अंडों को साफ हवादार घरों में रखना चाहिए जहां सर्दी-गर्मी का विशेष प्रभाव न हो।

एरी कीट (एरंडी के पत्तों पर पलनेवाले कीट)—इनके अंडे तूत के पत्ते खानेवाले कीट के अंडों से बड़े होते हैं। एक तोले में सात-आठ हजार अंडे रहते हैं। एक सेर रेशम बने, इतनी इल्लियां करीब तीन चार मन पत्ते खा जाती हैं

इनके अंडों से दस-पन्द्रह दिन में इल्लियां निकल आती हैं। इन्हें एरंडी की कोमल पत्तियां काटकर दी जाती हैं। दिन-भर में चार-पांच बार खिलाना पड़ता है और जो बीट गिरती है उसे साफ करना होता है। यदि पत्ते और डालियां जाली पर रखी जायं तो बीट जाली से नीचे गिर जाती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है जिससे सफाई में सुविधा रहती है। इल्लियां बीस-पच्चीस दिन में चार बार निर्मोक फेंकती हैं और बाद में पूरी बाढ़ पाने पर कोष बनाती हैं। कोष दो दिन में बन जाता है। कोष-अवस्था दस दिन से लगाकर बीस-पच्चीस दिन की होती है। जिन कोषों से पतंग निकालने होते हैं उन्हें रखकर शेष को भाप से गरम करते हैं ताकि पतंग अन्दर ही मर जायं। जहां तक बने कोषों से तागा जल्दी निकाल देना चाहिए। इनका रेशम दूधिया रंग का होता है।

तूत पर पलनेवाले कीट—इस वर्ग की मादा ४०० से ५०० तक अंडे देती है। एक तोला अंडे से लगभग डेढ़ हजार इल्लियां निकलती हैं। एक सेर रेशम प्राप्त करने के लिए पांच मन पत्तों की खपत होती है।

इनके अंडे से आठ-दस दिन में ही इल्लियां निकल आती हैं। इल्ली अवस्था में दस-पन्द्रह दिन से बीस-पच्चीस दिन की होती है। ठंडे स्थानों में समय अधिक लगता है। उन्हीं दिनों में चार बार निर्मोक फेंकती हैं। निर्मोक फेंकने के समय खाना कम देना चाहिए। कोष चौबीस से अड़तालीस घंटे में बन जाते हैं और कोषावस्था एक-दो सप्ताह की होती है। पतंग निकालना हो तो जिन कोषों से पतंग निकालने होते हैं उन्हें छोड़कर शेष को गरम पानी में उबाल देते हैं और उनसे रेशम कात लेते हैं। इनका रेशम चमकीले मोतिया रंग का होता है। इल्लियों की देख-भाल एरंडी खानेवाली इल्लियों जैसी होनी चाहिए।

इल्लियों की देख-भाल

एरंडी तथा तूत के पत्तों पर पलनेवाले कीटों को बांस की छिछली टोकरियों के मचानों पर रखना होता है। चींटियों से रक्षा हो सके, इसलिए मचानों के पांव पानी में रखते हैं। जिन घरों में ये रक्खे जायं उनकी खिड़कियों में जाली रखनी चाहिए ताकि बर्र आदि कीट अन्दर न आवें, उसी भांति छिपकिली आदि से बचाने की व्यवस्था भी होनी चाहिए।

कोष से तागा सूत्रण-गृहों में निकालते हैं।

शहतूती रेशम विशेष रूप से मैसूर में उत्पन्न किया जाता है। इस आकार का लगभग ७५% रेशम वहां बनता है जिससे विख्यात मैसूरी और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बेंगलौरी साड़ियां बनाई जाती हैं।

उत्तम मूंगा रेशम की उत्पत्ति आसाम में होती है। मध्यप्रदेश, बिहार तथा उड़ीसा में अधिकतर शहतूती रेशम का उत्पादन होता है।

रेशम के उपयोग

रेशम से कई प्रकार के वस्त्र बनते हैं। ऐसे वस्त्रों पर जरी का सुन्दर काम भी किया जाता है। इसका तागा बहुत मज़बूत होने से हवाई छत्री रेशमी वस्त्रों की ही बनती है। रेशमी वस्त्र जल्दी-जल्दी मैले नहीं होते और चलते भी अधिक हैं। गर्मी के दिनों में रेशम के वस्त्र ठंडे रहते हैं।

११—लाख-उत्पादन

लाख एक प्रकार के कीट द्वारा बनती है जिन्हें 'लाख-कीट या लाख-उत्पादक कीट' कह सकते हैं। ये लाख-कीट कुसुम, खैर, पलाश, बेर आदि वृक्षों[1] की टहनियों से रस चूसकर अपने ऊपर एक पपड़ी-सी बनाते हैं जो सूखकर लाख बन जाती है। इन्हीं टहनियों पर से छीलकर लाख निकाल लेते हैं।

लाख-कीट के आतिथेय वृक्ष और कीट की जीवनचर्या

जिन वृक्षों पर लाख-कीट पलते हैं उन्हें आतिथेय वृक्ष कहते है। ये कीट बहुत छोटे होते हैं। एक इंच का बारहवां भाग समझिये। ये टहनियों पर एक-दूसरे से बहुत निकट रहते हैं। नर की अपेक्षा मादाएं अधिक लाख बनाती हैं। इनके द्वारा जो पपड़ी जमती है वह ऊंची-नीची, मोटी, छोटे-छोटे कोष्ठ के आकार की होती है। नर के कोष्ठ की पपड़ी पतली होती है। मादा-कोष्ठ की अपेक्षा इनके कोष्ठ कुछ लम्बे और बीच में से फूले हुए

---

[1]. कुसुम—*Schlei-chera trijuga*
खैर—*Acacia catachu*
पलाश—*Butea frondosa*
बेर—*Zyzphus jujuba*

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होते हैं। इनमें नर की अपेक्षा मादाएं अधिक होती हैं। एक सौ कीट जिस स्थान पर होंगे, वहां तीस नर और सत्तर मादाएं होंगी। तरुण नर कीट के पर और आंखें होती हैं। 'कोषावरण' के समय नर कीटों के मुंह बन्द हो जाते हैं जिससे ये रस नहीं चूस सकते। नर ज्योंही तरुण-अवस्था को प्राप्त होते हैं मादा कीट के पीछे भागते हैं और उनसे मिलने के पश्चात् मर जाते हैं। तरुण नर कीट चल सकते हैं और देख सकते हैं, इसके विपरीत मादाएं अचल और नेत्रहीन हो जाती हैं। मादा लाल कीट 'निम्फ' टहनियों पर चिपकने के पश्चात् तीन वार निर्मोक फेंकती हैं।

शृंगिकाएं बहुत छोटी रह जाती हैं और शरीर गोल हो जाता है। नरों से मिलने के पश्चात् ये अपने लाख के घरों में दो सौ से पांच सौ तक अंडे देती हैं।

प्रकृति ने दोनों में ऐसे विभिन्न गुण दिये हैं कि यदि मादाएं चाहें तो विना नर के मेल के नर-मादा कीट उत्पन्न कर लेती हैं। ऐसे कीट असंसेचित जाति के कीट कहलाते हैं।

मादा-कोषों से सालभर में अधिकतर दो वार और कहीं-कहीं तीन-चार बार 'निम्फ' निकल पड़ते हैं। इस क्रिया को 'पोआ छोड़ना' कहते हैं। लगभग तीन सप्ताह तक यह निर्गम की क्रिया चलती रहती है। निम्फ कोषों से निकलकर नई टहनियों पर चले जाते हैं।

लाख-संचारण

यह वह क्रिया है जिसके द्वारा निम्फ नई टहनियों पर पहुंचाये जाते हैं। जिस समय निम्फ निकलते हैं, लाख-उत्पादक निम्फवाली डालियों के दस-बारह इंच के टुकड़े करके उन्हें नई टहनियों पर बांध आते हैं।

नई टहनियां बहुत-सी निकलती रहें इसके लिए पेड़ों की काट-छांट करनी पड़ती है। जब निम्फ निकलकर नई टहनियों पर जम जाते हैं तो बांधे हुए टुकड़ों को निकालकर उनसे भी लाख निकाल लेते हैं।

लाखवाले वृक्षों की काट-छांट

लाख-संचारण के लिए पेड़ों की काट-छांट ऐसी होनी चाहिए कि जहां

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से दो टहनियां फूटें, वहां उनके मोड़ की जगह से थोड़ी दूरी पर काटना चाहिए, ताकि प्रत्येक में नई टहनियां फूट निकलें। पौन इंच से एक इंच व्यास की टहनियों की काट-छांट करनी चाहिए।

खैर की काट-छांट मार्च में, कुसुम की फरवरी और जुलाई में, बेर की मार्च-अप्रैल में और पलाश की मई में होनी चाहिए।

संचारण का कार्य जून-जुलाई में होता है। अगस्त में नरों का निर्गम होकर मादाओं से मेल होता है और अक्तूबर में पोआ फूटते हैं। इनसे बननेवाली लाख को कार्तिकी लाख कहते हैं। नवम्बर में पोआ छोड़नेवाली टहनियों से जो लाख बनती है, उसे 'वैसाखी' लाख कहते हैं।

लाख की तैयारी

पोआ छूटने की अवधि के बाद लाख की टहनियां काट ली जाती हैं और उनपर से चाकू से लाख छील ली जाती है। कुसुम की टहनियों से लाख जल्दी नहीं छूटती, इसलिए उन टहनियों के दो-तीन इंच लम्बे टुकड़े कर डालते हैं। ऐसी छीली हुई या कुसुम के टुकड़ों पर लगी हुई लाख को कच्ची लाख कहते हैं। लाख जिन टहनियों पर से निकाली जाती है उन पर कुछ राल लगा रहता है इससे वे जल्दी जलती हैं।

फूंकी और आरी लाख—जब टहनियों से कीट निकल जाते हैं तो उसे 'फूंकी' लाख कहते हैं। इसमें मरे हुए सूखे कीट रहते हैं। जिस स्थान के अन्दर जीवित कीट रहते हैं उसे 'आरी' कहते हैं।

लाख को छीलकर रखते समय यह देखना चाहिए कि उसमें जीवित कीट न रहें। यदि ऐसे कीट रह जाते हैं तो लाख के ढेले बन जाते हैं जो सरलता से नहीं टूटते। इसलिए लाख को सुखाकर रखना चाहिए ताकि सब कीट मर जाएं।

लाख का रंग निकालना

लाख का रंग पत्थर की बड़ी-बड़ी कूड़ियों (बर्तन) में निकाला जाता है। इनका व्यास दो-ढाई फुट का होता है और ये इतनी ही गहरी होती हैं। इसमें बीस सेर के लगभग लाख डालकर उसमें पानी भर करके एक व्यक्ति पांव से घिसता है। चूंकि बर्तन के अन्दर की सतह खुरदरी रहती है, लाख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उससे घिसती है। उसका रंग घुट जाता है। पानी आवश्यकतानुसार बदल दिया जाता है और जब साफ पानी रहने लगता है तो कपड़े से छानकर लाख को अलग निकाल लेते हैं।

लाख का चूर्ण—रंग-रहित लाख को लाख चूर्ण (Seed lakh) कहते हैं।

चपड़ा—लाख-चूर्ण में लगभग बारह शतांश राल डालकर उसे गरम करके उसकी पतली चद्दरें बनाते हैं, जिसे चपड़ा (Shellace) कहते हैं।

बटन लाख—ऊपर की पिघली हुई लाई को जस्ते के चद्दर पर इतनी डालते हैं कि उसकी पाव इंच मोटी और तीन इंच व्यास की टिकिया बन जाय। इन टिकियों पर कारखानेवाले अपने नाम की मोहर भी लगा देते हैं।

लाख के उपयोग—चूड़ियां, ग्रामोफोन रेकार्ड, फाउंटेनपेन, खिलौने आदि वस्तुएं बनती हैं। सोने के गहनों में भी लाख भरी जाती है। सैकड़ों मन लाख प्रतिवर्ष पार्सलों पर मोहरें लगाने में लग जाती है।

११—मधु-उत्पादन

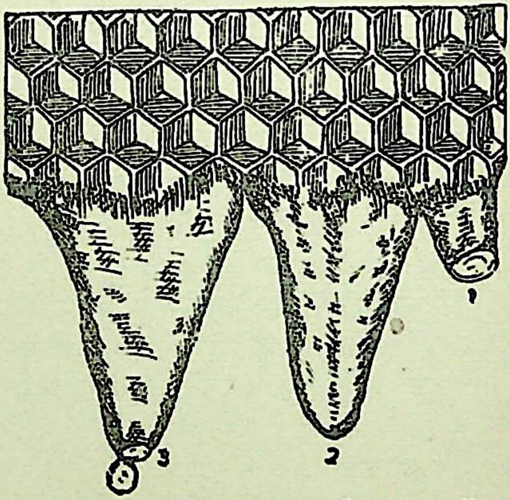

मधु बहुत ही उपयोगी पदार्थ है। कई प्रकार की आयुर्वेदिक औषधियां इसमें मिलाकर दी जाती हैं। कई लोग वैसे भी इसे खाते हैं। मधुमक्खियां फसलों के गर्भाधान में सहायक होती हैं। कहीं-कहीं विदेशों में जब फसलों में फूल आने लगते हैं तो कृषक लोग मधुमक्खियां पालनेवालों से मधुमक्खी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पालने की पेटिकाएं छत्तों-सहित किराये पर ले जाते हैं। ऐसा करने से उपज बढ़ती है। प्रकृति ने मधु बनाने के लिए मधुमक्खियां बनाई हैं।

मधुमक्खियों के प्रकार

ये तीन प्रकार की हैं : बड़ी मक्खी सारंगा (ऐपिस डोरसैटा); भुंगा (एपिस फ्लोरिया) और खैरा या मौना (एपिस इण्डिका)

सारंगा—इसे पहाड़ी मक्खी भी कहते हैं। ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों की चट्टानों पर, बड़े-बड़े राजमहलों पर या ऊंचे भवनों पर और जंगलों में ऊंचे वृक्षों पर ये अपने छत्ते बनाती हैं। ये बड़ी खतरनाक होती हैं। इनके छत्ते को छेड़ दिया जाय या कहीं उसे घी के धूप की सुगंध लग जाय तो ये मक्खियां बुरी तरह से पीछे पड़ती हैं। कभी-कभी मनुष्य इनके डंकों से मर भी जाते हैं। जंगल के निवासी फिर भी इनके छत्ते से शहद निकाल ही लाते हैं।

छोटी मक्खी भुंगा—इस जाति की मक्खी मैदानों में होती है। इसके छत्ते लगभग छः इंच व्यास के होते हैं। कहीं-कहीं सुरक्षित स्थानों में बड़े भी हो जाते हैं। चूंकि इनसे शहद बहुत कम मिलता है अतः इनका पालना लाभप्रद नहीं होता, यद्यपि ये पाली जा सकती हैं।

खैरा—यह मक्खी पहाड़ और मैदान दोनों जगह होती है और शहद के लिए पाली जाती है। मैदानवासी इसे 'खैरा' और पहाड़ी 'मौना' कहते हैं। इनमें थोड़ा अन्तर यह होता है कि पहाड़ी मौना का रंग कुछ अलग होता है और खैरा से उनका आकार भी कुछ बड़ा होता है। खैरा का रंग कुछ पीला होता है और यह सारंगा से छोटी और भुंगा से कुछ मोटी होती है।

मधुमक्खियां फूलों से मकरंद लाकर उससे मधु बनाती हैं और पराग लाकर उसे खाती हैं, फिर उससे मोम बनाती हैं। मकरंद छत्तों में सूखता है और जब सूखकर शहद बन जाता है तो मक्खियां मधु-कोषों को मुहरबन्द कर देती हैं

मकरंद तथा परागवाले पौधे और वृक्ष

फूलों में जाति-अनुसार मकरंद और पराग न्यूनाधिक मात्रा में पाया जाता है । ये पदार्थ निम्नलिखित जाति के पौधों और पेड़ों में अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं :

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सस्य—सरसों, दलहन के फूल, कपास।

साग-भाजी—भिंडी, मूली और कद्दूवर्गीय पौधों के फूल।

फलों के पेड़—सेव, नासपाती, खूवानी, आलूबुखारा, अमरूद, जामुन, सन्तरा, नीबू।

जंगली पेड़—तूत, शीशम, सेमल, साल, इमली, यूकेलिप्टस, अगीठा आदि-आदि।

मधुमक्खी का रहन-सहन

इनका रहन-सहन बहुत शिक्षाप्रद और सामाजिक ढंग का होता है। एक छत्ते में तीन-चार हज़ार से लेकर तीस-चालीस हज़ार तक मधुमक्खियां पाई जाती हैं। इनके छत्ते में एक रानी, कुछ नर और शेष कमेरी रहती हैं। दूसरे कोषों की अपेक्षा रानी के रहने का कोष वड़ा होता है। अण्डों से जो वालकीट निकलते हैं, आरम्भ में उन्हें मकरन्द दिया जाता है और वाद में मकरन्द और पराग का मिश्रण देते हैं जिसे 'मधुमक्खी की रोटी' कहते हैं।

अण्डे देने के कोष अलग बनाये जाते हैं जिनमें रानी घूम-घूमकर अधिकतर संसेचित और कुछ असंसेचित अण्डे देती है। पहले प्रकार के अण्डों से मादा और दूसरों से नर होते हैं। एक रानी दिन-भर में एक हज़ार अण्डे दे सकती है। मधुमक्खी के वालकीट को लारवा या ढोल कहते हैं। लारवा पांच बार निर्मोक छोड़ता है और बाद में कोष (प्यूपा) वनाकर उसमें रूपांतरित हो जाता है।

रानी का स्वयंवर या 'मिलन-उड़ान'

रानी का स्वयंवर वड़े अनोखे ढंग का होता है। वह उड़ान मारती है और ऊंची उड़ती चली जाती है। इसके पीछे कुछ भौंरे (नर) जाते हैं। चूंकि रानी अच्छी ताकतवर होती है, अत. वहुत-से नर तो उड़ते-उड़ते मर जाते हैं या हारकर उड़ान छोड़ देते हैं। जो उसके पास पहुंच पाता है उसीसे गर्भाधान होता है। पन्द्रह दिन तक उड़ान मारने पर भी यदि कोई भौंरा उसे न पकड़ पाये तो फिर वह कुमारी ही रह जाती है। जो अण्डे उससे होते हैं, उनसे नर होते हैं। ऐसी कुमारी रानी अधिक दिनों तक जीवित भी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं रहती। गर्भाधान एक ही वार होता है। गर्भाधान के बाद जब यह छत्ते पर लौटकर आती है तो इसका बड़ा स्वागत होता है । उसकी प्रतिष्ठा और स्थापना का उत्सव मनाया जाता है।

एक छत्ते में एक ही रानी रहती है लेकिन जब मधुमक्खियों की संख्या वहुत बढ़ जाती है तो फिर उड़ान का कार्यक्रम बनता है। रानी के आहार पर पोषकर कुछ 'लारवा' रानी बनने योग्य बनाये जाते हैं। ऐसी रानियां कुछ नर और कमेरियों को लेकर दूसरे स्थान पर जाकर छत्ता बनाती हैं। स्थानांतर की क्रिया को 'पोआ छोड़ना, या 'उड़ान' कहते हैं । वहां नये स्थान पर इन नई रानियों में युद्ध होता है और जो जीतती है वही रानी मानी जाती है। उसीका स्वयंवर होता है।

एक रानी की आयु लगभग तीन साल की होती है। जब वह किसी आकस्मिक घटना से मर जाती है या कम अण्डे देने लगती है या शक्तिहीन हो जाती है तो कमेरी मक्खियां उसे मार देती हैं और छत्ते में नई रानी की स्थापना होती है।

रानी स्वयंवर (मिलन-उड़ान) या स्थानान्तर के सिवा कभी छत्ता नहीं छोड़ती। उसका डंक दूसरी रानियों से लड़ने के समय काम आता है। रानी को खिलाने-पिलाने और कोषों की सफाई का काम कमेरी करती हैं। छत्ते की व्यवस्था में रानी का कोई हाथ नहीं होता। वह कमेरियों का काम है। पूरी प्रजातन्त्र-पद्धति है।

नर—प्रत्येक छत्ते में इनकी संख्या दो सौ से चार सौ तक रहती है। इनके डंक नहीं होते। इनका पिछला भाग गोल और काला होता है। चूंकि ये कुछ काम नहीं करते, वसन्त और शरद-ऋतु में 'मिलन-उड़ान' के लिए उपजाये जाते हैं। अधिक सर्दी के दिनों में इन बेकारों को कमेरयां भगा देती हैं या भूखों रखकर मार देती हैं।

कमेरी मक्खियां—ये मादा मक्खियां निरन्तर काम करती रहती हैं। रानी के अभाव में असंसेचित अण्डे देती हैं। इनके डंक होते हैं जिनमें उलटे कांटे होते हैं, सो वह डंक एक वार लगा कि फिर बाहर नहीं आता। इसीसे सूजन हो जाती है और जलन होती है । इनका डंक छिन जाने से ये जल्दी ही मर जाती हैं। कमेरी को प्रारम्भ में तीन सप्ताह तक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'धाय' का काम करना पड़ता है। छत्तों की सफाई और बालकीट को आहार देने का काम इन्हें करना पड़ता है। उसके बाद दोपहर के समय छत्ते की तरफ मुंह करके कुछ दिनों तक उड़ती रहती हैं और बाद में मकरंद और पानी लाने बाहर जाती हैं। कठिन काम के समय इनकी आयु पांच-छः सप्ताह होती है। कम काम के समय पांच-छः महीने भी जी जाती हैं।

कमेरी के बदन पर मकरंद लाने की एक थैली होती है और पराग लाने की उनके बदन पर टोकरियां होती हैं। पराग झाड़ने के लिए पिछले पांवों पर ब्रुश भी होते हैं। कमेरियों के शरीर में कुछ ग्रंथियां होती हैं जिनसे मोम बनता है जो छत्ता बनाने के काम में आता है।

संक्षिप्त जीवन-चक्र

		लगभग दिन	
	रानी	कमेरी	नर
अण्डावस्था	३	३	३
डिम्भावस्था	५	५	५
कोषावस्था	७	११	१५
तरुण-अवस्था	३ वर्ष	४ से ६ सप्ताह (काम के दिनों में)	४ से ६ महीने

छत्ता—यह मोम का बनता है। प्रत्येक प्रकोष्ठ षट्कोणाकार होता है। छत्ते में निम्न प्रकार के प्रकोष्ठ होते हैं :

आधार-कोष्ठिका—इनसे छत्ते की बनावट शुरू होती है।

आहार-कोष्ठिका—मधु-कोष्ठ में मधु और पराग-प्रकोष्ठ में पराग रहता है। मधुमक्खियां इसे प्रतिकूल समय पार करने तथा अपने 'लारवों' (बच्चों) के लिए इकट्ठा करती हैं जिन्हें मनुष्य छीन लेते हैं।

पूर प्रकोष्ठ—छत्ते के नीचे की ओर मूंगफली के आकार के कोष्ठ होते हैं। उनमें रानियां पैदा की जाती हैं। नरों के कोष्ठ कमेरियों के कोष्ठ से कुछ बड़े होते हैं।

जब डिम्भ की पूर्ण बाढ़ हो जाती है तो उनके मुंह मोम से बन्द कर दिये जाते हैं। दूसरे कोष्ठों के मुंह मोम और पराग-कणों से बन्द किये जाते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं। कमेरी-कोष्ठिका के बन्द मुंह ऊंचे उठे हुए होते हैं और इनके बीच में छेद होता है।

मधुमक्खी-पालन की युक्तियां

मधु की बढ़ती हुई मांग को देखकर ही मनुष्यों ने मधुमक्खी पालने की युक्तियां निकालीं, फिर छत्ता बनाने व मकरन्द आदि की प्राप्ति में सहायता देने की व्यवस्था की। उनके लिए छत्ताधार बनाया ताकि उसके बनाने में मधुमक्खियों का विशेष समय नष्ट न हो। अनुकूल स्थानों में मधु-वाटिकाओं (मधु-मक्खियों के पालने का स्थान) की स्थापना की और मकरंद की आंशिक पूर्ति के लिए चीनी का शरबत बनाया, जिसे चूसकर मक्खियां मधु बनाने लगीं।

मधु-वाटिकाएं ऐसे स्थानों पर होनी चाहिए जहां मकरंदवाले फूल अधिकता से हों और उनके फूलने का समय भी लम्बा हो।

मधुमक्खियों को पालने के लिए छोटी-छोटी पेटिकाएं बनाई जाती हैं। ऐसी पेटिकाएं फार्म पर ऐसे स्थानों में रखनी चाहिए जहां गर्मी में पेड़ों की छाया मिल जाय, सर्दी में धूप भी मिल सके और बच्चों के चलने-फिरने के मार्ग से अलग हो। पेटिका के पांव किसी बर्तन में रखकर उनमें पानी भर देना चाहिए ताकि चींटियां न चढ़ पायें।

ऐसी पेटिका में एक प्रवेश-द्वार होता है जिसके द्वारा मक्खियां अन्दर आती-जाती हैं। इसमें कुछ चौखटे रहते हैं जिनपर 'कृत्रिम आधार-छत्ते' लगाये जाते हैं। इनपर मधुमक्खियां पूरा छत्ता बनाती हैं। ऐसे छत्ते एक-दूसरे से पाव इंच की दूरी पर रहते हैं ताकि मक्खियां आ-जा सकें। ये छत्ते एक-दूसरे से चिपक न जायं तथा प्रत्येक चौखट मधु निकालने के लिए बाहर निकाली जा सके। चौखटों की दूरी को 'मधुमक्खी-अंतराल' कहते हैं। इस अन्तराल में कभी 'विभाजिकाएं' (डमी बोर्ड्स) भी लगा देते हैं ताकि एक-दूसरे से जुड़ने न पायें।

जब मधु निकाला जाता है तो निकालनेवालों को मक्खियां डंक न मार दें, इसलिए हाथों में दस्ताने और मुंह पर एक कपड़े का पर्दा डालना पड़ता है। पालतू मधुमक्खियां भी कभी-कभी बिगड़ जाती हैं सो उन्हें धुआं देकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अथवा कार्बोलिक ऐसिड और क्लोरोफार्म का प्रयोग कर वश में करते हैं। मधु निकालने के पहले मधु-प्रकोष्ठों के मुंह चाकू से खोल दिये जाते हैं और फिर छत्ते को यंत्र में रखकर घुमाते हैं जिससे शहद निकल आता है।

नई रानी को पेटिका में छोड़ने के पहले उसे 'रानी डोली' (क्वीन इन्ट्रोड्यूसिंग केज) में रखते हैं जो तार की जाली की बनी हुई होती है। इस डोली के द्वार पर मधु और चीनी का घोल लगा देते हैं। इसे ऐसा रखते हैं कि एक ओर से रानी और दूसरी ओर से मक्खियां उसे खाती रहती हैं। ऐसा करने से दोनों में परिचय हो जाता है तो फिर एक दिन बाद रानी को पेटिका में छोड़ देते हैं। पेटिका में मधुमक्खियों के आने-जाने के मार्ग में ऐसा जालीदार तार लगा देते हैं कि रानी बाहर निकल कर भाग न जाय और मधुमक्खियां सरलता से अंदर आ-जा सकें।

नक़ली मकरन्द

एक छिछली कटोरी में चीनी की चाशनी डालकर उसमें थोड़ी-सी दूब डाल देते हैं जिसपर बैठकर कमेरी रस चूस सकें। पानी और चीनी को गरम करके चाशनी बना दी जाती है। चाशनी बनाने के लिए एक भाग पानी और दो भाग चीनी मिलाते हैं।

मधुमक्खी के शत्रु

एक प्रकार के पतंग की मादा छत्ते में अंडा दे जाती है जिससे इल्ली निकलकर मोम खा जाती है और जाला भी बुन देती है। पेटिका में खाली छत्ते नहीं रहने देना चाहिए।

बर्रें—एक प्रकार की बर्रें मधुमक्खियों के में पेटिका आने-जाने के मार्ग पर उड़ती रहती हैं और उन्हें तंग करती हैं, उनसे बचाना चाहिए।

चींटियां—इनसे बचने के लिए पेटिका के पाये पानी में रखने चाहिए।

उपर्युक्त वर्णन में मधु-उत्पादन पर काफी प्रकाश डाला गया है परंतु फिर भी जो कृषक इस कला को अपनाना चाहें, किसी अच्छी 'मधु-वाटिका' में जाकर दो-चार दिन में वहां की व्यवस्था देख लें और वहीं से पालतू मधुमक्खियां ले आवें तो अच्छा होगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिशिष्ट

: १ :

साग-भाजी-सम्बन्धी विशेष जानकारी

१. प्रति छटांक बीज-संख्या और प्रति एकड़ आवश्यक बीज तथा प्रति १०० फुट की कतार में

नाम तरकारी	बीज संख्या प्रति छटांक	आवश्यक बीज प्रति-एकड़	आवश्यक बीज प्रति १०० फुट
१	२	३	४
अजवाइन	६०,०००	५ सेर	१ तोला
अदरक		१२ मन	१५० टुकड़े
अरारूट		२० मन	१०० टुकड़े
अर्वी		१०-१२ मन	५० गांठें
आर्टिचोक ग्लोब	१०००	५ से ६ छटांक	१ तोला
जेरुसेलम (कच्चू)		५-६ मन कच्चू के टुकड़े	१०० टुकड़े
आल (लौकी)	४५०	१ सेर	१ तो०
आलू		२० मन (पहाड़ी)	३ सेर
		१२ मन (देसी)	२ सेर
उच्चे		३ सेर	२ तो०
एण्डाइव	२७,०००	१ सेर	१ तो०
ऐस्पेरेगस	२,०००	२ से ३ सेर	१ तो०
ककड़ी (रैन्ता)	२,०००	१ सेर	१ तो०
कद्दू	४५०	२ सेर	२ तो०
,, विलायती		२ सेर	२ तो०
,, भूरा (शिशकुम्हड़ा)	८००	१ सेर	१ तो०
करेला	४००	३ सेर	२ तो०
कलौंजी	२४,०००	१० सेर	२ तो०

१ तोला = ११.६६४ ग्राम   १ सेर = ०.९३३ किलोग्राम

१ छटांक = ५८.३१६ ग्राम   १ मन = ३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१	२	३	४
किराश्रो	६००	२० सेर	२ छटांक
कुसुम	१८००	१० सेर	२ तो०
कुलफा		३ सेर	१ तो०
केल	१८,०००	१० छटांक	२ तो०
केला		४०० पौंच	१० पौंच
कोलाड्स	१७,०००	३ छटांक	२ तो०
क्रेस	१००,०००	३ सेर	१ तो०
खरबूजा	२,४००	१ सेर	१ तो०
खसखस	१२,००,०००	२ सेर	१ तो०
खिसारी	१,१५०	१ मन	१ छ०
खीरा	२,०००	८ छटांक	२ तो०
खीरा गोल		„	२ तो०
गराड़ू		१०-१५ मन	४० टुकड़े
गाजर	५०,०००	१॥ सेर	१ तो०
गांठ गोभी	१४,०००	२ सेर	१ तो०
„ चीनी	४०,०००	३ छटांक	१ तो०
„ फूल	१६,०००	२ छटांक	१ तो०
„ बंध	१०,०००	२ छटांक	१ तो०
ग्वार	१,७५०	८ सेर	१ छ०
चना	५००	१ मन	१ छ०
चंवली	४५०	८ सेर	१ छ०
चिचड़ा		४ सेर	२ तो०
चुकन्दर	३,५००	३ सेर	२ तो०
चौलाई	७०,०००	३ सेर	१ तो०
जीरा सफेद	१,४००	७ सेर	२ तो०

१ तोला = ११.६६४ ग्राम १ सेर = ०.९३३ किलोग्राम
१ छटांक = ५८.११९ ग्राम १ मन = ३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१	२	३	४
जीरा स्याह		६ सेर	२ तो०
टमाटर	१५,००	२ छटांक	१ तो०
तरबूज़	४५०	१॥ सेर	१ तो०
तरोई	८००	२ सेर	१ तो०
घीया तरोई	८००	२ सेर	१ ता०
तूग्रर (ग्ररहर)	६००	१० सेर	१ छटांक
दिलपसन्द (टिण्डा)		२ सेर	१ तो०
धनिया	८,०००	८ सेर	२ तो०
पटुग्रा		५ सेर	२ तो०
पपैया (पपीता)		४०० पौधे	१० पाधे
परवल		१,५०० लता के टुकड़े	२० टुकड़े
पारस्निप	५,६००	२ सेर	१ तो०
पालक	६,०००	४ सेर	२ तो०
,, खट्टा		३ सेर	२ तो०
पार्सली	३५,०००	२ सेर	१ तो०
प्याज़	२०,०००	२½ सेर	१ तो०
फूट	२,०००	८ छटांक	१ तो०
बथुग्रा		४ सेर	१ तो०
बैंगन	१०,०००	५ छटांक	१ तो०
ब्रुसेल्स स्प्राउट्स	१३,०००	३ छटांक	१ तो०
ब्रोकोली	१४,०००	२ छटांक	१ तो०
भिण्डी	८५०	५ सेर	१ छटांक
मटर	२०० से ३००	२० सेर देशी	३ छटांक
मक्का	३५०	१० सेर	२ छटांक

१ तोला = ११.६६४ ग्राम　　१ सेर = ०.९३३ किलोग्राम

१ छटांक = ५८.३१९ ग्राम　　१ मन = ३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१	२	३	४
मिर्च	१०,०००	१०-१२ छटांक	१ तोला
मूली	१०,०००	४ सेर	१ तो०
मेथी	६,५००	१५ सेर	२ तो०
मोगरी		२ सेर	१ तो०
रतालू		१५ मन	३० टुकड़े
राई	३२,०००	५ सेर	१ तो०
रुटेबागा	२२,०००	१ सेर	१ तो०
रूबर्ब	३,६००	२ सेर	१ तो०
लहसुन		१० मन	१०-१२ गांठें
लीक	१६,०००	२ सेर	१ तो०
लेट्यूस	३२,०००	२ सेर	१ तो०
शकरकन्द		२०,००० लता के टुकड़े	७० टुकड़े
शलजम	२२,०००	१½ सेर	१ तो०
शिकोरी	५०,०००	२ सेर	१ तो०
शेरविल		२ सेर	१ तो०
सरसों पीली	१४,०००	५ सेर	१ तो०
सरसों सफेद		६ सेर	१ तो०
साग कुलफा		३ सेर	१ तो०
,, मरसा	७०,०००	३ सेर	१ तो०
,, लाल	७०,०००	३ सेर	१ तो०
सायावीन	१,२००	१० सेर	१ छटांक
साल्सीफाई	९,०००	४ सेर	१ तो०
सेम	२००	१० सेर	१ छटांक
सेम (फ्रेंच बीन)	२००	१५ सेर	१ छटांक

१ तोला=११.६६४ ग्राम १ सेर=०.९३३ किलोग्राम

१ छटांक=५८.३१९ ग्राम १ मन=३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१	२	३	४
सेम बकला बीन		१५ सेर	२ छटांक
" ब्राड बीन	२५	२० सेर	४ "
" स्कारलेट रनरबीन	२४	१५ सेर	४ "
सुथनी		१२ मन	१०० गांठें
सूरन (ओल)		७५ मन	प्रथम वर्ष में[1]
सेलेरी	१,००,०००	३ छटांक	१ तोला
सोआ		१० सेर	१ छटांक
सौंफ वड़ी		८ सेर	१ "
" छोटी		५ सेर	१ "
स्क्वेश गर्मीवाली	८००	२ सेर	२ तोला
" जाड़ेवाली	८००	२ सेर	२ "
हल्दी		१२ मन हरी गांठें	१०० गांठें

१. इस बीज से दूसरे साल में लगभग ५ एकड़ और चौथे में १० एकड़ जमोन रोपी जा सकेगी।

१ तोला = ११.६६४ ग्राम
१ छटांक = ५८.३१९ ग्राम
१ सेर = ०.९३३ किलोग्राम
१ मन = ३७.३२४ किलोग्राम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२—भिन्न-भिन्न प्रान्तों में कुछ मुख्य-मुख्य

चै०—चैत्र ज्ये०—ज्येष्ठ श्रा०—श्रावण
वै०—वैशाख आषा०—आषाढ़ भा०—भाद्रपद

नाम तरकारी	बंगाल	बिहार	उत्तरप्रदेश
अदरक	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
अर्वी	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	वै०—आषा०
आर्टिचोक	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	वै०-आषा०
आल (लौकी)	श्रा०—भा०	ज्ये०—आषा०	चै०-आषा०
	मा०—फा०	मा०—फा०	
आलू	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
ककड़ी (खीरा)	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०
	मा०—फा०	मा०—फा०	आश्वि०—का०
ककड़ी रेती	फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०
कद्दू पीला	फा०—चै०	ज्ये० से श्रा०	आषा०-श्रा०
	श्रा०—भा०	मा०—फा०	मा०—फा०
कद्दू भूरा (पेठा)	ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०
करेला	मा०—फा०	चै० से श्रा०	चै० से श्रा०
किराओ	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
खरबूजा	फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०
गराडू, रतालू	चै० से ज्ये०	चै० से आषा०	चै० से आषा०
गाजर	आश्वि०—का०	भा० से का०	भा० से का०
गोभीगांठ	भा० से आश्वि०	भा० से मार्ग०	भा० से का०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तरकारियों के बोने के समय की तालिका

आश्वि०—आश्विन मार्ग०—मार्गशीर्ष मा०—माघ
का०—कार्तिक पौ०—पौष फा०—फाल्गुन

पंजाब	मध्य भारत और गुजरात	दक्षिण बम्बई और मद्रास	पहाड़ों पर
ज्ये०—आषा०	आषा०	आषा०—श्रा०	फा०—चै०
ज्ये०—आषा०	आषा०	आषा०-श्रा०	फा०—चै०
आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	श्रावण	फा०—चै०
ज्ये०—आषा०	आषा०—श्रा०	मा०—फा०	फा०—चै०
आश्वि०—का०	आषा०—श्रा०	आषा०—श्रा०	फा०—वै०
मा०—फा०	कार्तिक	माघ	
आषा०—श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०—श्रा०	ज्ये०-आषा०
		माघ०—फा०	
फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०	ज्ये०—भा०
आषा०-श्रा०	आषा०—श्रा०	चै०-वै०	फा०—ज्ये०
मा०—फा०			
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
फा० से आषा०	आषा०—श्रा०	माघ—फा०	—
आश्वि०—का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०	फा०—ज्ये०
फा०—चै०	फा०—चै०	फा०—चै०	ज्ये०—भा०
ज्ये०-आषा०	ज्ये०—आषा०	फा०—आषा०	फा०—ज्ये०
आश्वि०—का०	श्रा०—का०	श्रा०—मार्ग०	फा०—वै०
भा० से का०	भा०—का०	भा०—का०	फा०—ज्ये०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम तरकारी	बंगाल	बिहार	उत्तरप्रदेश
गोभीफूल	भा०—आश्वि०	श्रा०—का०	आषा०-का०
गोभी बंध	भा०—आश्वि०	भा०—का०	भा०—का०
ग्वार	—	आषा०—श्रा०	आषा०-श्रा०
घिया तरोई	चै०—ज्ये०	ज्ये०—आषा०	वै०-आषा०
	—	माघ	माघ
चना	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०-का०
चंवली	—	आषा०—श्रा०	आषा०-श्रा०
चिचड़ा	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०
चुकन्दर	आश्वि०—का०	भा०—का०	का०—पौ०
टमाटर	भा०—का०	श्रा०—का०	श्रा०—का०
तरबूज	मा०—फा०	पौ०—फा०	मा०—फा०
तरोई	चै०—ज्ये०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०
		माघ	
तूअर	आषा०—का०	आषा०—श्रा०	आषाढ़
धनिया	आश्वि०—का०	मार्ग०—पौ०	का०-मार्ग०
परवल	आश्वि०—का०	आषा०-श्रा०	ज्ये०-आषा०
		आश्वि०—का०	
प्याज	भाघ—मार्ग०	मार्ग०—माघ	का०-मार्ग०
बैंगन	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०-आषा०
	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०
	माघ—फा०	मा०—फा०	मा०—फा०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पंजाब	मध्य प्रदेश और गुजरात	दक्षिण बंबई और मद्रास	पहाड़ों पर
श्रा०—का०	भा०-आश्विव०	भा०-आश्विव०	फा०—वै०
भा०—का०	भा०-आश्विव०	भा०-आश्विव०	फा०-ज्ये०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	फा०—चै०
ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	—
आश्विव०-का०	आश्विव०-का०	आश्विव०-का०	फा०—चै०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	चै०—वै०
ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आश्विव०-का०	आश्विन	आषा०-पौ०	चै०—वै०
श्रा०—का०	श्रा०—का०	श्रा०—पौ०	वै०—ज्ये०
मा०—फा०	माघ०—फा०	माघ०—फा०	—
श्रा०-आश्विव०	—	—	—
ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आषाढ़	आषाढ़	आषाढ़	—
आश्विव०-का०	आश्विन—पौ०	का०—पौ०	फा०-ज्ये०
आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा०	—
आश्विव०-का०	भा०—का०	भा०—पौ०	चै०-ज्ये०
आषाढ़-श्रा०	ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	ज्ये०-श्रा०
आश्विव०-का०	माघ०-फा०	माघ०-फा०	—
—	—	—	—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम तरकारी	बंगाल	बिहार	उत्तरप्रदेश
ब्रसेल्स स्प्राउट्स	आश्वि०–का०	भा०—का०	भा०—का०
भिंडा	ज्ये०—भा०	आषा०-श्रा० माघ	चै०-आषा०
मटर	आश्वि०–का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
मक्का	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०	वै०-आषा०
मिर्च	ज्ये०-आषा०	आषा०-श्रा०	आषा०-श्रा० माघ—फा०
मूली	आषा०–मार्ग०	आषा०-पौ०	आषा०-पौ०
मेथी	आश्वि०–का०	आश्वि०-पौ०	का०—मा०
मोगरी	आश्वि०–का०	आश्वि०-का०	आश्वि०-का०
लेट्यूस	आश्वि०–का०	आश्वि०-मार्ग	आश्वि०-पौ०
शकरकंद	आश्वि०–का०	आश्वि०-का० माघ	आषाढ़
शलजम	भा०–आश्वि०	श्रा०—भा० आश्वि०-का० (विदेशी)	श्रा०-आश्वि०
सरसों	आश्वि–का०	आश्विन	आश्वि०-का०
साग	चै०-आषा०	वै०—भा०	वै०—भा०
सेम	आषा०-भा०	आषा०—श्रा०	आषाढ़
ब्राडबीन	आश्वि०–का०	आश्कि०-का०	आश्वि०-का०
फ्रेंचबीन	आश्वि०–का०	भा०—का०	भा०—का०
सूरन	आषा०-श्रा०	ज्ये०-आषा०	ज्ये०-आषा०
हल्दी	ज्ये०-आषाढ़	आषाढ़	ज्ये०-आषा०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पंजाब	मध्यप्रदेश और गुजरात	दक्षिण बंबई और मद्रास	पहाड़ों पर
आश्वि०—का०	भा०—का०	भा०—का०	वै०—ज्ये०
ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	आषा०-श्रा०	वै०—आषा०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	फा०—ज्ये०
ज्ये० —आषा०	ज्ये०—आषा०	आषाढ़	चै०—भा०
फा०—चै०	भा०—आश्वि०	भा०—मार्ग०	चै०—ज्ये०
भा०—का०	भा०—का०	भा०—पौ०	चै०—ज्ये०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	चै०—ज्ये०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	चै०—ज्ये०
आश्वि०—पौ०	आश्वि०—का०	श्रा०—मा०	चै०—ज्ये०
	मा०—फा०		
आषाढ़	आषाढ़	आषाढ़	—
		आश्वि०—का०	
भा०—आश्वि०	भा०—का०	आश्वि०—का०	—
			चै०—आषा०
आश्वि०—का०	आश्विन	आश्विन	चै०-आश्वि०
वै०—भा०	वै०—भा०	वै०—भा०	वै०—श्रा०
ज्ये०— आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०
आश्वि०—का०	आश्वि०—का०	का०—पौ०	चै०—आषा०
आश्वि०—का०	भा०—श्रा०	आश्वि०—का०	वै०—ज्ये०
ज्ये०— आषा०	ज्ये०—आषा०	ज्ये०—आषा०	—
ज्ये०—आषा०	आषाढ़	आषा०—श्रा०	फा०—चै०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३—साग-भाजियों में रासायनिक पदार्थों की मात्रा

शरीर के निर्माण, वृद्धि तथा जीर्णोद्धार के निमित्त जिन भोज्य पदार्थों का उपयोग किया जाता है उनमें जल, आमिषजातीय (Protieds), शर्कराजातीय (Carbohydrates), स्नेहजातीय (Fats), तन्तुयुक्त (Fibre), कुछ लवण (Salts) और खाद्योज (Vitamins) पाये जाते हैं। इनमें से अन्तिम पदार्थ बहुत ही न्यून मात्रा में रहते हैं, तथापि उनका स्वास्थ्य से अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऐसे पदार्थों की आवश्यकता तथा उपयोगिता का विस्तृत वर्णन पृष्ठ ३९१ पर दिया गया है। यहांपर अन्य पदार्थों का कुछ वर्णन किया जाता है।

जल—यह पानी के रूप में वैसे तो काम में लाया ही जाता है परन्तु अन्य खाद्य-सामग्री में भी यह उपस्थित रहता है। जल का महत्त्व सबको विदित ही है। खाद्य-पदार्थ इसीमें घुलते हैं और घुले हुए पदार्थों का शरीर के अवयव तरल पदार्थ के रूप में शोषण करते हैं, रक्त का दौरा बना रहता है और पसीने के द्वारा अनावश्यक पदार्थ बाहर निकलते हैं। शरीर के कोठे को शुद्ध कर अनावश्यक पदार्थों को मल-मूत्र के रूप में बाहर फेंकने में भी जल सहायक होता है।

आमिषजातीय पदार्थ—इन्हें मांसोत्पादक पदार्थ भी कहते हैं। इन्हींसे बच्चों के शरीर के अंग बनते हैं और परिश्रम द्वारा मनुष्यों के पुट्ठों तथा अन्य अंगों का जो ह्रास होता है, उनका जीर्णोद्धार होता है।

शर्कराजातीय पदार्थ—इनसे शरीर में उष्णता तथा कार्य करने की शक्ति पैदा होती है।

स्नेह—इनमें गुण तो शर्कराजातीय पदार्थों के ही होते हैं, परन्तु उनसे सवा दो गुने अधिक गुणकारी होते हैं।

तन्तुयुक्त पदार्थ—इनका शरीर के पोषण से तो कोई सम्बन्ध नहीं, परन्तु सम्भवतः ये मल-त्याग में सहायक होते हैं।

लवण—ये अम्ल, क्षार या धातुओं के मेल से बने हुए होते हैं। वैसे तो अपनी-अपनी जगह सभी महत्त्व रहते हैं परन्तु कुछेक की आवश्यकता बहुत न्यून मात्रा में होती है जो भोजन-सामग्री द्वारा प्राप्त हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इनमें विशेष महत्त्व फॉसफोरस, चूना और लोहे के लवणों का होता है। तांबे की अनुपस्थिति में लोहा काम नहीं कर सकता, इसलिए इसे भी महत्त्व दिया जा सकता है परन्तु यह बहुत ही न्यून मात्रा में चाहिए। फॉस-फोरस का उपयोग दिमागी कोषों की बनावट में होता है। चूने के साथ मिलकर यह हड्डियां बनाता है। चूने का असर हृदय पर भी पड़ता है। लोहे का सम्बन्ध रक्ताणु (Red blood corpuscles) की बनावट से है।

उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए प्रत्येक मनुष्य के भोजन में एक चतुर्थांश भाग साग-भाजी का होना चाहिए। ऐसी सूरत में कौन-सी साग-भाजियों द्वारा भिन्न-भिन्न पदार्थों की पूर्ति कितनी होती है, यह जानने के लिए यहां एक सारणी[1] दी जाती है जिससे पाठक गणना कर सकते हैं।

---

१. इस सारिणी के अंक Dr. Aykroyd, Director Nutrition Research Laboratories, Koonoor Health Bulletion. No. 23, 1941 से लिये गए हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साग-भाजियों में रासायनिक

ये अंक बाजार में जैसी साग-भाजियां मिलती हैं उनके न्यूनाधिकता हो सकती है । उसी प्रमाणानुसार दूसरे पदार्थों में भी

नाम	जल %	शर्करा जातीय %	आमिष-जातीय %	स्नेह-जातीय %
अदरक	८०.६	१२.३	२.३	०.६
अर्वी	७३.१	२२.१	३.०	०.१
आल (लौकी)	९६.१	२.६	०.२	०.५
आलू	७४.७	२२.६	१.६	०.१
ककड़ी, खीरा	९६.४	२.८	०.४	०.१
कद्दू पीला	९२.६	५.३	१.४	०.१
कद्दू भूरा	९६.०	३.२	०.४	०.१
करेला	९२.४	४.२	१.६	०.२
कुसुम	८९.६	५.१	३.३	०.७
केला कच्चा	८३.२	१४.७	१.४	०.२
खिसारी (पत्ती)	८४.२	७.६	६.१	१.०
गाजर	८६.०	१०.७	०.९	०.१
गोभी गांठ	९२.१	५.६	१.१	०.२
गोभी फूल	८९.४	५.३	३.५	०.४
गाभी बन्ध	९०.२	६.३	१.८	०.१
ग्वार	८२.५	९.९	३.७	०.२
चने की कोंपल	६०.६	२७.२	८.२	०.५
चिचड़ा	९४.१	४.४	०.५	०.३
चुकंदर	८३.८	१३.६	१.७	०.१
टमाटर	९४.५	३.६	१.०	०.१
टिंडा	९२.३	५.३	१.७	०.१
तरोई	९५.४	३.७	०.५	०.१
धनिया	८७.९	६.५	३.३	०.६
पालक	९१.७	४.०	१.९	०.९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थों की मात्रा

विश्लेषण के हैं। तरकारियों की आयु-अनुसार जल की मात्रा में कुछ हेर-फेर होगा।

तन्तुयुक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		कै० Ca.[1] %	फा० P.[2] %	लोहा Fe. %
४.२	१.२	०.०२	०.०६	०.००२६
—	१.७	०.०४	०.१४	०.००२१
—	०.५	०.०२	०.०१	०.०००७
—	०.६	०.०१	०.०३	०.०००७
—	०.३	०.०१	०.०३	०.००१५
—	०.६	०.०१	०.०३	०.०००७
—	०.३	०.०३	०.०२	०.०००५
०.८	०.८	०.०२	०.०७	०.००२२
—	१.०	०.१८	०.०६	०.००७६
—	०.५	०.०७	०.०३	०.०००६
—	१.१	०.१६	०.१०	०.००७३
१.२	१.१	०.०८	०.०३	०.००१५
—	०.७	०.०२	०.०४	०.०००४
—	१.४	०.०३	०.०६	०.००१३
१.०	०.६	०.०३	०.०५	०.०००८
२.३	१.४	०.१३	०.०५	०.००५८
—	३.५	०.३१	०.२१	०.०२८३
—	०.७	०.०५	०.०२	०.००१३
—	०.८	०.२०	०.०६	०.००१०
—	०.५	०.०१	०.०२	०.०००१
—	०.६	०.०२	०.०३	०.०००९
—	०.३	०.०४	०.०४	०.००१६
—	१.७	०.१४	०.०६	०.०१००
—	१.५	०.०६	०.०१	०.००५०

१ कै० — कैलशियम २ फा० — फॉस्फोरस

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम	जल %	शर्करा-जातीय %	आमिष-जातीय %	स्नेह-जातीय %
पारस्निप	७२.४	२३.२	१.३	०.३
पार्सली	६८.४	१६.७	५.६	१.०
प्याज	८६.८	११.६	१.२	०.१
फ्रेंचबीन	६१.४	४.५	१.७	०.१
बथुआ	८७.६	१.७	४.७	०.४
बैंगन	६१.५	६.४	१.३	०.३
ब्रसेल्स-स्प्राउट्स	८४.६	६.२	४.७	०.५
भिंडी	८८.०	७.७	२.२	०.२
मक्का (हरी)	४.६०	१.१	४.३	०.५
मटर हरी	७२.१	१६.८	७.२	०.१
मिर्च हरी	८२.६	६.१	२.६	०.६
मूली	६४.४	४.२	०.७	०.१
मेथी	८१.८	६.८	४.६	०.६
लहसुन	६२.८	२६.०	६.३	०.१
लीक	७८.६	१७.२	१.८	०.१
लेट्यूस	६२.६	३.०	२.१	०.३
शकरकंद	६६.५	३१.०	१.२	० ३
शलजम	६१.१	७:६	०.५	०.२
सरसों	८४.६	७.१	५.१	०.४
साग	८५.८	५.७	४.६	०.५
सूरन	७८.७	१८.४	१.२	०.१
सेम	८७.४	१०.०	४.५	०.१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तन्तुयुक्त %	खनिज Mineral matter %	खनिज पदार्थों में		
		कै० Ca. %	फा० P. %	लोहा Fe. %
१.७	१.१	०.०५	०.०४	०.०००४
१.८	३.२	०.३६	०.२०	०.०१७६
—	०.४	०.१८	०.०५	०.०००७
१.८	०.५	०.०३	०.०३	०.००१७
—	३.३	०.१५	०.०८	०.००४२
—	०.५	०.०२	०.०६	०.००१३
—	१.०	०.०५	०.०८	०.००२३
१.२	०.७	०.०६	०.०८	०.००१५
—	०.७	०.०१	०.१०	०.०००७
—	०.८	०.०२	०.०८	०.००१५
६.८	१.०	०.०३	०.०८	०.००१२
—	०.६	०.०५	०.०३	०.०००४
१.०	१.६	०.४७	०.०५	०.०१६६
०.८	१.०	०.०३	०.३१	०.००१३
१.३	०.७	०.०५	०.०७	०.००२३
०.५	१.२	०.०५	०.०३	०.००२४
—	१.०	०.०२	०.०५	०.०००८
—	०.६	०.०३	०.०४	०.०००४
१.८	२.५	०.३७	०.११	०.०१२५
—	३.१	०.५०	०.१०	०.०२१४
०.८	०.८	०.०५	०.०२	०.०००६
२.०	१.०	०.०५	०.०६	०.००१६

साग-भाजियों में अन्य खनिज पदार्थों की मात्रा, कैलशियम, फासफोरस और लोहे की मात्रा को पूर्ण खनिज पदार्थ की मात्रा में से कम कर देने से मालूम की जा सकती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

४---साग-भाजी और खाद्योज (विटामिंस)

पीछे बताया गया है कि खाने की वस्तुओं में पोषक पदार्थों के सिवाय कुछ ऐसे पदार्थ भी होते हैं जिन्हें खाद्योज पदार्थ या 'विटामिंस' कहते हैं।

यदि हमारे भोज्य पदार्थों में विटामिंस न हों तो शरीर की बाढ़ और बनावट अच्छी नहीं होती। व्याधियों से बचने की शक्ति का ह्रास हो जाता है और सूखा, बेरीबेरी, स्कर्वी, पेलेग्रा इत्यादि कई प्रकार की व्याधियां आक्रमण कर बैठती हैं।

हमारा देश शाकाहारियों का देश है और अन्य खाद्यों के सिवाय साग-भाजी द्वारा भी इन पदार्थों की पूर्ति हो सकती है। यहां पर पाठकों की जानकारी के लिए दो-चार शब्द दे दिये जाते हैं ताकि पाठकगण इस जानकारी से लाभ उठायें।

अभीतक खोज द्वारा जो खाद्योज पदार्थ निकाले गए हैं वे बहुत-से हैं और उनकी संख्या बढ़ती जा रही है। अभी इन सबका नामकरण भी ठीक से नहीं हुआ है। इन्हें अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों के नाम दे रक्खे हैं जैसे विटामिन 'ए', विटामिन 'बी', 'सी' आदि।

नित्य के भोजन में आटा, दाल, चावल, दूध, घी व मांस इत्यादि जो पदार्थ काम में लाये जाते हैं उनमें से अधिकांश में एक या अनेक विटामिन रहते हैं। परन्तु यहांपर सिर्फ उन विटामिनों का वर्णन दिया जाता है जिनके विषय में काफी छानबीन हो चुकी है और जो साग-भाजियों में पाये जाते हैं या जिनका परोक्ष रूप से साग-भाजी से सम्बन्ध है—जैसे 'ए', 'बी', 'सी' और 'डी', 'जी'।

भिन्न-भिन्न विटामिनों का वर्णन देने से पहले यह बता देना उत्तम होगा कि साग-भाजियों को काटकर धोने से कुछ विटामिन धुलकर बह जाते हैं इसलिए काटने से पहले उन्हें धो डालना चाहिए। अगर बाद में धोने की आवश्यकता पड़े तो अधिक नहीं धोना चाहिए।

पकाने से भी विटामिनों का कुछ अंश नष्ट हो जाता है, इसलिए आवश्यकता से अधिक नहीं उबालना चाहिए। बहुधा मठा (छाछ) डालकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साग-भाजी खट्टी की जाती है। ऐसा करना अच्छा है क्योंकि इससे विटामिन कम नष्ट होते हैं।

विटामिन 'ए'

इनका सम्बन्ध आंख की रोशनी से बहुत अधिक है। इनके पूर्ण अभाव में रतौंधी आने लगती है और अगर इनकी मात्रा कम रही तो आंख की ज्योति कम हो जाती है। इनके सेवन से केवल रतौंधीवाले ही नहीं बल्कि जो आंख की दुर्बलता (Colour blindness) के कारण भिन्न-भिन्न रंगों को नहीं बता सकते, उनकी भी आंखें ठीक हो जाती हैं।

इसके सिवाय यदि निम्नलिखित अन्य लक्षण पाये जायं तो समझना चाहिए कि हमारे शरीर में विटामिन 'ए' की कमी है और ऐसे पदार्थ भोजन के काम में लाने चाहिए जिनसे इनकी पूर्ति हो। आंखों का फूलना, थोड़े-से परिश्रम से थकावट मालूम होना, सिर में दर्द रहना, जल्दी-जल्दी सर्दी लगना, मन का उत्साहहीन होना, त्वचा में रूखापन, बालों की चमक कम पड़ना और झड़ना, दांतों का खराब होना और जल्दी गिर पड़ना, खांसी आना, बच्चे के फेफड़े तथा अंतड़ियों का बिगड़ना, बच्चों के शरीर की बाढ़ का रुकना, वजन न बढ़ना और फोड़े-फुंसी होना इत्यादि। संक्षेप में यह कहना चाहिए कि इसकी कमी से शरीर में व्याधियों को रोकने की शक्ति कम हो जाती है। ऐसी सूरत में हमें ऐसी साग-भाजी काम में लानी चाहिए जिनसे विटामिन 'ए' की पूर्ति हो।

यथार्थ में देखा जाय तो साग-भाजियों में विटामिन 'ए' नहीं होते; परन्तु उनका अग्रगामी 'केरोटीन' (Carotene) नामक एक पदार्थ होता है जिससे यकृत (कलेजा) विटामिन 'ए' को बना लेता है। निम्नलिखित सूची से ज्ञात होगा कि केरोटीन किन-किन साग-भाजियों में पाया जाता है।

हरा धनिया, साग, चने की भाजी, खिसारी की भाजी, कुसुम, सेलेरी, मेथी, पार्सली, गाजर, पुदीना, पालक, लेट्यूस, बन्ध गोभी, हरी मिर्च, सूरन, ग्वार, टमाटर, फ्रेंचबीन, करेला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, चिचड़ा, लहसुन, मटर, कद्दू, अदरक, भिंडी, तरोई, हरी मक्का, आलू, अर्वी, फूल गोभी, गांठ-गोभी, पारस्निप, टिण्डा, प्याज, सिंघाड़ा, शकरकंद तथा बैंगन इत्यादि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपर्युक्त सूची 'केरोटीन' की न्यूनाधिक मात्रा के अनुसार दी गई है। सबसे अधिक मात्रा धनिया में और सबसे कम शकरकंद में होती है। लेकिन धनिया अधिक नहीं खाया जा सकता, इसलिए इनमें से जो चीज अधिक मात्रा में खाने लायक हो उनका उपयोग करना चाहिए। इसी क्रमानुसार आगे की सूचियां भी दी गई हैं।

विटामिन 'बी'

इस पदार्थ के अभाव से शरीर निर्बल हो जाता है, स्मरण-शक्ति कम हो जाती है और बहुधा 'बेरीबेरी' नामक रोग हो जाता है। निम्नलिखित लक्षणों से विटामिन 'बी' की आवश्यकता समझनी चाहिए।

शरीर की कमजोरी, पुट्ठों का ढीला पड़ना, अंगों में दर्द होना, पैरों का कमजोर होना, झिनझिनी आना, हाथ-पैरों में जलन होना, पैर तथा मुंह फूलना, पाकाशय में गड़बड़ी होना, भूख कम लगना, कब्जियत रहना सांस जल्दी-जल्दी चलना, दिल की धड़कन का बढ़ जाना, स्वभाव में चिड़चिड़ापन आना आदि।

निम्नलिखित साग-भाजियों का सेवन करने से विटामिन 'बी' की पूर्ति हो सकती है:

मटर, फूलगोभी, पारस्निप, लेट्यूस, अर्वी, लीक, मेथी, पालक, चुकन्दर, गाजर, मूली, कच्चू, वन्ध गोभी, प्याज, शलजम, ककड़ी, फ्रेंच-बीन, गांठ गोभी, गराडू, रतालू, करेला, टमाटर, तरोई, भिण्डी, कद्दू, सूरन, आलू, बैंगन इत्यादि।

विटामिन 'सी'

'सी' के अभाव में शरीर निर्बल हो जाता है और स्कर्वी नामक व्याधि आक्रमण कर बैठती है। निम्नलिखित लक्षण 'सी' का अभाव दर्शाते हैं:

मसूड़ों का फूलना, उनमें से खून बहना तथा कभी-कभी घाव हो जाना, दांतों का जल्दी गिरना, बदबूदार सांस, जीभ का फूलना व लाल हो जाना, तिल्ली का बढ़ना, भूख कम लगना, कब्जियत रहना, हाथ-पैरों में दर्द होना, मुंह पर छोटी-छोटी फुंसियों का होना तथा आंखों में दर्द होना, त्वचा का रूखापन, शरीर का निर्बल होना, स्त्रियों में मासिक स्राव की अधिकता और वजन घटना इत्यादि। जब व्याधि बहुत बढ़ जाती है तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कभी-कभी हृदय की गति बन्द हो जाती है और शरीरान्त हो जाता है। विटामिन 'सी' के सेवन से उपर्युक्त व्याधियों से बचने के अलावा शरीर में यदि कोई घाव हों तो वे शीघ्र भर जाते हैं।

निम्नलिखित साग-भाजियों के उपयोग से 'सी' विटामिन की पूर्ति हो सकती है :

पार्सली, मिर्च, साग, धनिया, बन्धगोभी, चुकन्दर, करेला, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, गांठगोभी, सेलेरी, फूलगोभी, ग्वार, पालक, शलजम, रूबर्ब, टमाटर, शकरकन्द, बैंगन, आलू, मूली, भिण्डी, पारस्निप, लेट्यूस, फ्रेंचबीन, लहसुन, सेम, प्याज, लीक, अदरक, ककड़ी, गाजर, कद्दू इत्यादि।

विटामिन 'डी'

हड्डियों की बनावट में इसका बहुत महत्त्व है। हड्डियां चूना और फॉसफोरस के मेल से बनती हैं, जिनका उचित परिमाण में उपयोग 'डी' की उपस्थिति में ही हो सकता है। इसके अभाव से बच्चों को सूखा रोग हो जाता है। हड्डियां ठीक से नहीं बन पातीं और दांत भी पूरे नहीं बनते। हड्डियां पतली और कमजोर हो जाती हैं। पेट बाहर निकल आता है और पसलियां दब जाती हैं। सिर बड़ा और भौं के बाल लम्बे हो जाते हैं। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। गर्दन और सिर में पसीना बहुत आता है।

साग-भाजियों द्वारा तो इस पदार्थ की पूर्ति नहीं हो सकती है, क्योंकि यह बहुत कम मात्रा में कुछ ही सब्जियों में पाया जाता है। परन्तु यदि सब्जियों द्वारा विटामिन 'ए' की पूर्ति होती रहे तो दूध द्वारा जो विटामिन 'डी' मिलता है उसका पूर्ण उपयोग हो जाता है। हरी मटर, धनिया, पोदीना, अंकुरे हुए मूंग तथा चने में विटामिन 'डी' पाया जाता है।

खाद्योज 'जी'—इन्हें खाद्योम बी[2] भी कहते हैं। इनका दूसरा नाम ब्यूटी-विटामिन्स (अर्थात् सुन्दरता लानेवाले खाद्योज) भी हैं। इनके अभाव से पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है, कमजोरी मालूम पड़ती है, वजन घट जाता है, मुंह और नाक के पास की चमड़ी फट जाती है और मोतिया-बिन्द या आंख में फूले की व्याधि हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: २ :

फल-सम्बन्धी विशेष जानकारी

१—मुख्य-मुख्य फलों की

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अंतर
			फुट
अंगूर	बरसात में या जाड़े के आरंभ में	डाली, दाब-कलम या गूटी	८×८
अंजीर	बरसात में	डाली या दाब-कलम	१५×१५
अमरूद	बरसात में या जाड़े के अंत में	बीज या भेंट-कलम	१८×१८
अनानास	भाद्रपद	सकर्स	२×२
अनार	बरसात में	बीज, डाली या दाब-कलम	१५×१५
आड़ू	बरसात में या जाड़े के अंत में	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	२०×२०
आम	बरसात में या जाड़े के अंत में	भेंट-कलम	बीजू ४०×४० कलम ३५×३५
आलूबुखारा	बरसात में या जाड़े के अंत में	चश्मा चढ़ाकर (Ring grafting)	१५×१५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खेती की सारणी

फल-प्राप्ति का समय	पौधे लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने का अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
गरमी में	२—३	४०—५०	सीमाप्रांत में भाद्रपद और आश्विन में फलता है
चैत्र से ज्येष्ठ	२—३	—	
श्रावण-भाद्रपद और पौष-माघ	बीजू ५—६ कलमी ३—४	३०—३५ २०—२५	
श्रावण से आश्विन	१$\frac{1}{4}$	३—४	
श्रावण से कार्तिक	४—५	४०—५०	
वैशाख से ज्येष्ठ	३—४	७—८	सीमाप्रांत में भाद्रपद से कार्तिक तक फल मिलते हैं
ज्येष्ठ से श्रावण भाद्रपद	बीजू १०—१२ कलमी ५—६	बीजू १००-१२५ कलमी ५०-६०	दक्षिण भारत में चैत्र-वैशाख में फल मिलते हैं
वैशाख-ज्येष्ठ	४—५	७—८	

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है	पौधों का अन्तर
			फ़ुट
आंवला	बरसात में	बीज या भेंट-कलम	(एक-दो पेड़)
कटहल	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
केला	बरसात में	सकर्स	१०×१०
खजूर	बरसात में	सकर्स	२०×२०
खिरनी	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
खूबानी	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५×१५
गुलाबजामुन	बरसात में	बीज या दाब-कलम	१५×१५
चकोतरा (ग्रेप फ्रूट)	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर	२०×२०
जामुन	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
नारियल	बरसात में	फल से	२०×२०
नासपाती	पौष-माघ में	चश्मा (Ring grafting)	२०×२०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फल-प्राप्ति का समय	पौधे लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
मार्गशीर्ष से माघ-फाल्गुन	४—५		
वैशाख-ज्येष्ठ से			
श्रावण-भाद्रपद	७—८		
करीब साल-भर	१—२	५—६	एक पेड़ एक ही बार फलता है परन्तु पास में जो नये पौधे निकलते रहते हैं, वे फलते जाते हैं।
ज्येष्ठ-आषाढ़ से आश्विन	१५—२०	७०—८०	
ज्येष्ठ	१०—१२		कहीं-कहीं फाल्गुन-चैत्र में भी फल मिलते हैं।
ज्येष्ठ से भाद्रपद	८—१०		
ज्येष्ठ-आषाढ़	१४—१५		
भाद्रपद से कार्तिक कलमी	५— ६		
आषाढ़	१०—१२		
जाड़े में	५—६	७५—८०	
आषाढ़-भाद्रपद	६—७		

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम फल	पौधे लगाने का समय	पौधा कैसे तैयार किया जाता है ?	पौधों का अन्तर
			फुट
नीबू	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज या गूटी	१५ × १५
पपीता	बरसात में या जाड़े के अन्त में	बीज	१० × १०
बेर	बरसात में या जाड़े के आरम्भ में	बीज या चश्मा (Ring grafting)	२० × २०
बेरी-गूज	बरसात के अन्त में	बीज	२ × ३
बेरी-स्ट्रा	जाड़े के आरम्भ में	जड़वाली लता (Runuers)	१ १/४ से १ १/२
बेल	बरसात में	बीज	(एक-दो पेड़)
रामफल	बरसात में	बीज	१५ × १५
लीची	बरसात में	गूटी या दाब-कलम	२५ × २५
लोकाट	जाड़े के अन्त में	बीज, गूटी या भेंट-कलम	२० × २०
शरीफा	बरसात में	बीज	१५ × १५
शहतूत	बरसात में	डाली से	(एक-दो पेड़)
संतरा (माल्टा, मासमी)	बरसात में	चश्मा चढ़ाकर या बीज से	१८ × १८
सपाटू (चीकू)	बरसात या जाड़े में	भेंट-कलम	२५ × २५
सेब	जाड़े में	चश्मा चढ़ाकर	१५ × १५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फल-प्राप्ति का समय	पौधे लगाने के समय से फलने का समय	व्यावसायिक दृष्टि से पौधों के फलने की अवधि	विवरण
	वर्ष	वर्ष	
श्रावण-भाद्रपद	बीजू ६—७	३०—४०	
पौष-माघ	कलमी ३—४	१५—२०	
जाड़े के अन्त में	१—१½	३—४	
माघ से चैत्र	बीजू १०-१२ कलमा ६-७		
पौष से फाल्गुन	३-४ महीने में	१	पहाड़ों पर पौधे आश्विन-कार्तिक में लगाये जाते हैं।
चैत्र-वैशाख (मैदान)	(चार-पांच महीने में)	१	
माघ-फाल्गुन (पहाड़)			
गरमी में	७—८		
गरमी में	७—८		
ज्येष्ठ-आषाढ़	५—६	१५—२०	
फाल्गुन-चैत्र	५—६	३०—४०	
श्रावण-भाद्र० से कार्त्तिक-अगहन	५—६	१५—२०	
चैत्र-वैशाख	३—४		
कार्त्तिक से पौष	बीजू १०-१२	४०—५०	
चैत्र-वैशाख	कलमी ४—५	१५—२०	
चैत्र-वैशाख	५—६	२०—२५	
कार्त्तिक से माघ	६—७		

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२—मुख्य-मुख्य फलों के पोषक द्रव्य[1]

ये अंक फलों का जो अंग उपयोग के योग्य होता है उसके हैं। स्मरण रहे कि ये मात्राएं फलों की जाति, आयु, जलवायु तथा भूमि की जाति-अनुसार न्यूनाधिक हो सकती हैं। तुलनात्मक दृष्टि से ये अंक उपयोगी होंगे।

नाम फल	जल	आमिष-जातीय	शर्करा-जातीय	स्नेह	तन्तुयुक्त	खनिज द्रव्य फा० (P)	खनिज द्रव्य कै० (Ca)	खनिज द्रव्य लो० (Fe)
	%	%	%	%	%	%	%	%
अखरोट	४.८	१५.६	११.२	६४.५	२.६	०.३८	०.१०	.००४८
अंगूर नीले	८५.५	०.८	१०.२	०.१	३.०	०.०२	०.०३	.०००४
अंजीर ताजे	८०.८	१.३	१७.१	०.२	—	०.०३	०.०६	.००१२
अनानास	८६.५	०.६	१२.०	०.१	—	०.०१	०.०२	.०००९
अमरूद	७६.१	१.५	१४.५	०.२	६.९	०.०४	०.०१	.००१०
अनार	७८.०	१.६	१४.६	०.१	५.१	०.०७	०.०१	.०००३
आड़ू	९०.१	१.५	७.६	०.२	—	०.०३	०.०१	.००१७
आम	८६.१	०.६	११.८	०.१	१.१	०.०२	०.०१	.०००३
आलूबुखारा	८९.८	०.७	८.९	०.२	—	०.०२	०.०२	.०००६
आंवला	८१.२	०.५	१४.१	०.१	३.४	०.०२	०.०५	.००१२
इमली	२०.९	३.१	६७.४	०.१	५.६	०.११	०.१७	.०१०९
कटहल	७७.२	०.७	१८.९	०.१	१.१	०.०३	०.०२	.०००५
कमरख	९३.९	०.५	४.८	०.२	०.४	०.०१	०.०१	.०००६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काजू	५.९	२१.२	२२.३	४६.९	१.३	०.४५	०.०५	.००५०
केला	७३.४	१.१	२४.७	०.१	—	०.०३	०.०१	.०००५
खजूर	२६.१	३.०	६३.३	०.२	२.१	०.०८	०.०७	.०१०६
चकोतरा	८८.०	०.६	१०.२	०.१	०.६	०.०३	०.०३	.०००१
जामुन	७२.२	०.७	१९.७	०.१	०.९	०.०१	०.०२	.०००१
तेंदू	७९.६	०.८	१९.०	०.२	—	०.०१	०.०१	.०००३
दाख	१८.५	२.०	७७.३	०.२	—	०.०८	०.१०	.००४०
नारियल (गिरी)	३६.३	४.५	१३.०	४१.६	३.६	०.२४	०.०१	.००१७
नासपाती	८६.९	०.२	११.५	०.१	१.०	०.०१	०.०१	.०००७
नीबू कागजी	८४.६	१.५	१०.९	१.०	१.३	०.२	०.०९	.०००३
नीबू जंभीरी	८५.०	१.०	११.१	०.९	१.७	०.०१	०.०७	.००२३
पपीता	८९.६	०.५	९.५	०.१	—	०.०१	०.०१	.०००४
पिश्ता	५.६	१९.८	१६.२	५३.५	२.१	०.४३	०.१४	.०१३७
बादाम	५.२	२०.८	१०.५	५८.९	१.७	०.४९	०.२३	.००३५
बेर	८५.९	०.८	१२.८	०.१	—	.०३	०.०३	.०००८
मकोय	८२.७	१.८	११.५	०.२	३.२	०.०६	०.०१	.००१
रामफल	७७.७	१.४	२०.९	०.२	—	०.०१	०.०१	.०००६
लोकाट	८७.४	०.७	१०.२	०.३	०.९	०.०२	०.०३	.०००७
संतरा	८७.८	०.९	१०.६	०.३	—	०.०२	०.०६	.०००१
सीताफल	७३.५	१.६	२३.९	०.३	—	०.०४	०.०२	.००१०
सेव	८५.९	०.३	१३.४	०.१	—	०.०२	०.०१	.००१७
स्ट्राबेरी	८७.८	०.७	९.८	०.२	१.१	०.०३	०.०३	.००१८

[1] ये अंक एकरायड महोदय के हैल्थ-बुलेटिन नं० २३, १९४१ से लिये गये हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

३—फल और खाद्योज (विटामिन्स)

पृष्ठ ३६२ से ३६५ में विभिन्न विटामिनों के गुणों का वर्णन दिया गया है। अधिकांश साग-भाजी आग पर पकाकर खाई जाती हैं, जिनसे कुछ विटामिन नष्ट हो जाते हैं, परन्तु फल तो विना आग पर पकाये ही खाये जाते हैं, इससे इनके विटामिन नष्ट नहीं होते। विविध फलों में निम्नलिखित विटामिन पाये जाते हैं।

निम्नलिखित फलों में खाद्योज 'ए' पाये जाते हैं। यह सूची खाद्योज के परिमाणानुसार दी है; अर्थात् सबसे पहले फल में अधिक तथा आखिरी फल में कम खाद्योज होंगे। अन्य खाद्योजों की सूची में भी यही क्रम रहेगा।

खूबानी, आम, पपीता, तेन्दु, पीला आड़ू, स्ट्राबेरी, कटहल, सन्तरा लाल केला, अंजीर, पिश्ता, कमरख, आलूबुखारा, चकोतरा, कच्चा आम, केला, तरबूज, काजू, इमली, बेर, अनानास, कागजी नीबू, अंगूर, नासपाती, अखरोट इत्यादि।

निम्नलिखित फलों में खाद्योज 'बी' पाये जाते हैं—अखरोट, बादाम, आम, संतरा, अनानास, खूबानी, खजूर, पपीता, अंजीर, खरबूजा, तरबूज, आलूबुखारा, अंगूर, केला, सेव, नींबू, पीला आड़ू, नासपाती, स्ट्राबेरी।

निम्नलिखित फलों में खाद्योज 'सी' पाये जाते हैं :

आंवला, अमरूद, संतरा, कागजी नींबू अनानास, स्ट्राबेरी, मकोय, पपीता, जंभीरी नीबू, चकोतरा, अनार, पका आम, केला, नासपाती, कच्चा आम, नीले अंगूर, सेव, अंजीर, तरबूज, आड़ू आलूबुखारा।

निम्नलिखित फलों में खाद्योज 'जी' पाये जाते हैं—पपीता, खूबानी, केला, नासपाती, अंजीर, सेव, आम, पीले आड़ू, ताजे जरदालू, खजूर, ताजे अंजीर, आलूबुखारा, अनानास, तरबूज, सन्तरा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

४---भिन्न-भिन्न प्रान्तों के विख्यात फल

प्रांत-नाम	फल-नाम
आसाम	अनानास. केला, सन्तरा।
काश्मीर	आलूचा, खूबानी, नासपाती, सेव।
पंजाव	माल्टा, सेव।
वंगाल	केला, नारियल, तरबूज, संतरा।
बम्बई	अंगूर, अंजीर, अनार, आम, काजू, केला, मुसंबी, सपाटू।
बिहार	आम, लीची।
मध्यप्रदेश	बेर, संतरा।
मद्रास	अंगूर, अनानास, आम, केला, नारियल, नासपाती संतरा, स्ट्राबेरी।
उत्तरप्रदेश	अनानास, अमरूद, आम, खरबूजा, खूबानी, तरबूज, नासपाती, लीची, लोकाट, सेव, स्ट्राबेरी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: ३ :

सर्वे सेटलमेंट

सर्वे का अर्थ है, नापना और सेटलमेंट का अर्थ है, शर्तें ठीक करना। भूमि को माप कर उसका मान-चित्र बनाने तक की क्रिया सर्वे कहलायेगी और भूमि-कर या लगान की शर्त तय करना सेटलमेंट होगा। यह शर्त भूमि की जाति, जो उसके रंग, गहराई तथा स्थान की स्थिति देखकर ठीक की जाती है। इनके सिवाय भूमिकर-मूल्यांक में सिचाई की सुविधा, माल के चालान या बिक्री की सरलता आदि बातों का भी ध्यान रखा जाता है। सेटलमेंट दो प्रकार की होती है। एक स्थायी होती है, जिसमें एक बार जो कर लगा दिया, हमेशा के लिए लगा रहता हैं। दूसरी अल्पकालीन में लगान एक सेटलमेंट की अवधि के बाद घटाया-बढ़ाया जा सकता है। जमींदारी-उन्मूलन के बाद अब पहली प्रकार की सेटलमेंट का सफाया हो गया है।

१—भूमि नापने और मानचित्र बनाने के लिए काम में लाये जानेवाले यंत्र—

जरीब (छियासठ फुटवाली चेन) १, सूआ १०, झंडियां ५, लट्ठा (Offset rod) १, राइट एंगल (Optical square) १, फील्ड-बुक १, प्लेन टेबल १, लेवल १, दिशाज्ञान यंत्र (Magnetic needle) १, सुहावल (Swival) १, शिस्त (Alidade) १, परकार १, पैमाना (Diagonal scale) १, गुनिया (Ivory scale) १, कंघी (Acre comb) १, प्रोटेक्टर (Proeector) १ (मानचित्र पर कोण बनाने के लिए, यदि प्रिजमेटिक अभ्यास का उपयोग किया जाय।)

उपर्युक्त के सिवाय दो चीजें और काम की हैं। प्लानीमीटर—इससे क्षेत्रफल मालूम करते हैं और दूसरा पेंटोग्राफ, जिससे बड़े नक्शे से छोटा और छोटे से बड़ा आसानी से बन सकता है। इसमें एक जगह ऐसी होती हैं जिसमें एक पेंसिल लगा दी जाती है और एक और जगह होती है जिसमें पेंसिल के आकार की पिन होती है। जब यह पिन किसी मान-चित्र पर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घुमाई जाती है तो पेंसिल से दूसरे कागज पर जितना चाहिए, उतना बड़ा मानचित्र उसी आकार का बन जाता है।

चेन—यह एक सौ कड़ीवाली ६६ फुट लम्बी चेन होती है। इसीसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक की दूरी नापी जाती है।

सूआ—चेन खींचनेवाला व्यक्ति जहां चेन पूरी होती है, एक सूआ गाड़ता जाता है। इससे कितनी चेन हुई, गिनने में भूल नहीं होती। चेन के पीछे चलनेवाला व्यक्ति सूआ उठाता जाता है। जब दस सूए पूरे हो जाते हैं तो फिर चेन खींचनेवाले को दे देता है।

झंडियां—एक स्थान से दूसरे स्थान तक नापते समय स्थान ठीक से दीखे, इसलिए बांस या लकड़ी की बनी झंडियां बीच में गाड़नी पड़ती हैं। ये आवश्यकतानुसार छः फुट से ग्यारह फुट तक ऊंची हो सकती हैं। इनके छोर पर तीखा लोहा लगा रहता है जिससे ये सरलता से गाड़ी जा सकती हैं। इनके ऊपरी भाग पर आधी लाल और आधी सफेद कपड़े की झंडियां रहती हैं।

लट्ठा या आफसेट रॉड—चेन-लाइन से दायें-बायें एक चेन से कम दूरी के स्थानों को नापने के लिए काम में लाया जाता है। यह करीब दस फुट लम्बा होता है और इसपर कड़ियों की दूरी के चिह्न रहते हैं।

राइट एंगल—चेन-लाइन के दायें-बायें स्थान की दूरी नापते समय यह देखना होता है कि वह स्थान चेन-लाइन से समकोण पर है। चेन पर समकोण कहां से होगा, इसे जानने के लिए यह यंत्र काम का है।

फील्ड-बुक—यह एक नोट-बुक होती है जिसमें पैमाइश करनेवाले नाप तथा अन्य आवश्यक बातें लिखते हैं और उन्हींके आधार पर नक्शे बनाते हैं। इसीके आधार पर मानचित्र बनता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

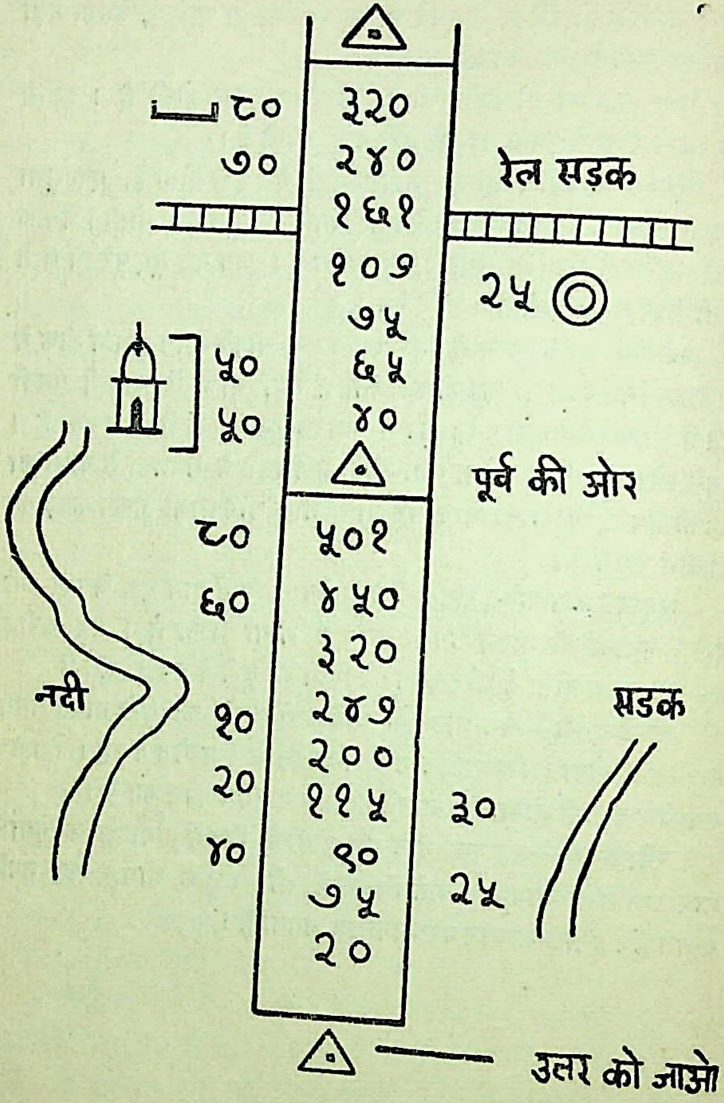

फील्ड-बुक का नमूना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानचित्र—भूमि की नपती के बाद फील्डबुक के आधार पर मानचित्र बनाया जाता है जिसमें सीमा, सड़कें, खेत तथा मुख्य-मुख्य स्थान बनाये जाते हैं। इसके लिए प्लेन टेबल पर मानचित्र का कागज़ लगाकर सर्वे का कार्यारम्भ होता है।

प्लेन टेबल—यह एक ३०″ × २४″ नाप का आयताकार तख्ता होता है जिसे स्क्रू द्वारा एक तिपाई पर कस देते हैं। तिपाई के पांव ऐसे बने हुए होते हैं कि टेबल को सम धरातल में लाने के लिए उन्हें आगे-पीछे कर सकते हैं। टेबल का समतल होना लेवल से देखा जाता है। टेबल पर कागज पर एक ओर रेखा खींचकर उसे दिशाज्ञान-यन्त्र के बराबर रखकर, उससे उत्तर दिशा का ज्ञान कर, उस रेखा के एक छोर पर उत्तर दिशा जानने के लिए चिह्न लगा देते हैं।

जिस स्थान से सर्वे प्रारम्भ करना होता है, उस स्थान पर टेबल खड़ी करके टेबल पर एक विन्दु लगा देते हैं। टेबल पर का एक विन्दु उसके नीचे की भूमि पर ठीक नीचे है या नहीं, यह जानने के लिए सुहावल लटकाकर देख लेते हैं। प्लेन टेबल में शिश्त बड़े काम की चीज है। यह एक पीतल की पटरी लगभग दो फुट लम्बी और एक इंच चौड़ी होती है, इसमें दोनों छोर समकोण बनाते हुए ऊपर को उठे हुए होते हैं। इन उठे हुए भागों में से एक में ऊपर से नीचे तक कटा हुआ भाग होता है। इस कटे हुए भाग के बीचों-बीच ऊपर से नीचे तक एक बाल या महीन तार लगा हुआ होता है। दूसरे छोर पर तार न होकर महीन छिद्र होते हैं। जब नक्शे पर किसी स्थान की सीध कायम करनी होती है तो उस स्थान पर झंडी गाड़कर टेबल पर लगाई हुई शिश्त के छिद्रों द्वारा उस झंडी को देखते हैं। जब सामने का तार झंडी की आड़ में आ जाता है तो वह सीध मानकर शिश्त के द्वारा रेखा खींच दी जाती है। ऐसे दूर की झंडियों के मार्ग रेखा द्वारा नक्शे पर बनाकर उनकी दूरी नापकर निर्धारित स्केल (जो साधारणतः १६″=१ मील) के आधार पर उसपर चिह्न लगा देते हैं और उन चिह्नों को जोड़ देते हैं, तो चौहद्दी या सीमा बन जाती है। फिर छोटे टुकड़े नापते जाकर फील्डबुक में ब्यौरा लिखते जाते हैं और कम्पास, डायगोनल स्केल और गुनिये की सहायता से खेत इत्यादि स्थान बना देते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानचित्र पूरा हो जाने पर खेतों का क्षेत्रफल कंघी द्वारा निकाल लेते हैं। कंघी एकड़-कंघी या बीघा-कंघी, जैसी चाहें, बनवा ली जाती है।

एकड़वाली कंघी एक आयताकार चौखटा होता है जो लगभग छः इंच लम्बा और चार इंच चौड़ा होता है। इस चौखटे की चौड़ाई ऊपर की ओर लगभग एक इंच होती है जिस पर एक पैमाना बना हुआ होता है। चौखटे की लम्बाई की ओर ऊपर-नीचे बराबर की दूरी पर छेद होते हैं। यह दूरी १/२ इंच होती है। ठीक आमने-सामने के छेदों में से निकलता हुआ एक डोरा बांधा जाता है। क्षेत्रफल निकालने के लिए इस कंघी को मान-चित्र पर रख देते हैं और परकार को धागों के बीच में रखकर खेत की सीमा तक बढ़ाते जाते हैं। जब जितना अधिक बढ़ सके, बढ़ जाता है तो कंघी के पैमाने पर रखकर क्षेत्रफल जान लेते हैं।

मानचित्र पक्का बना रहे, इसलिए कागज़ पर से उसे ट्रेसिंग कपड़े पर उतार लेते हैं।

२—सर्वेवालों के जानने योग्य कुछ बातें

(१) **चेन से लम्ब डालना**—यदि राइट एंगल पास में न हो और आफ-सेट डालना पड़े तो निम्नलिखित रीति से डाल सकते हैं। चेन के मार्ग पर लम्ब डालने के स्थान से तीस कड़ी दूर दोनों ओर दो सूए गाड़ दो और उनमें चेन के दोनों दस्ते डाल दो। फिर चेन को बीचोंबीच से पकड़कर जिस ओर लम्ब डालना हो खींचो, और जहां वह पड़े वहां तीसरा सूआ गाड़ दो। यह स्थान वह होगा जिस पर लम्ब पड़ेगा।

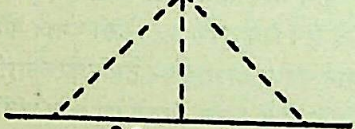

दूसरी रीति—चेन के मार्ग में लम्ब डालने के स्थान पर गाड़ दो। फिर चेन के दोनों दस्तों को सूओं में डालकर चालीस कड़ी पर के चिह्न को पकड़कर खींचो, ताकि चेन तन

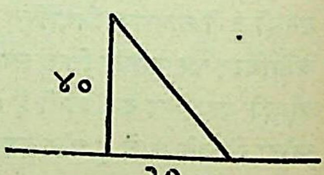

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाय। जिस स्थान पर चालीस कड़ियों वाला चिह्न पड़ेगा, वह लम्ब पर होगा।

(२) चेन की राह में आये हुए अटकाव को पार करना—

यदि चेन की राह में कोई ऐसा अटकाव आ जाय जैसे मकान, और उसकी वजह से सामने की झंडी नहीं दिखलाई दे, तो निम्नलिखित रीति से काम करना चाहिए।

जहां तक झंडी दिखे, उस स्थान को नापते जाओ और फिर उसपर एक लम्ब-कोण डालो जो मकान की सीमा से बाहर हो जाय। ख पर

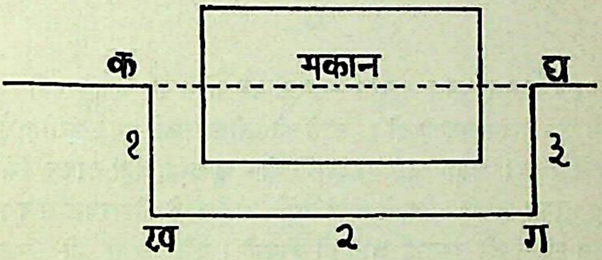

दूसरा लम्ब ख ग डालो और ग पर ग घ लम्ब डालो जो लम्बाई में क ख के बराबर हो। फिर घ स्थान पर दूसरी झंडी गाड़कर आगे बढ़ चलो। इस ख ग की दूरी क घ की दूरी के बराबर होगी।

इस भांति यदि तालाब या अन्य कोई रुकावट आ जाय तो उसे भी पार किया जा सकता है।

(३) नदी की चौड़ाई नापना—मान लो, क ख अपनी चेन का मार्ग है। ठीक सामने दूसरे किनारे पर कोई पत्थर या पेड़ का निशान चुन लो। ख पर ख ग लम्ब डालकर उसे घ तक इतना बढ़ाओ कि ग घ की लम्बाई ख ग के बराबर हो; फिर घ पर लम्ब डालकर ऐसे स्थान पर चले जाओ जहां से ग और सामने के किनारेवाला चुना हुआ पेड़ सीध में आ जाय। घ ङ को नाप लो। यह दूरी नदी के बराबर होगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

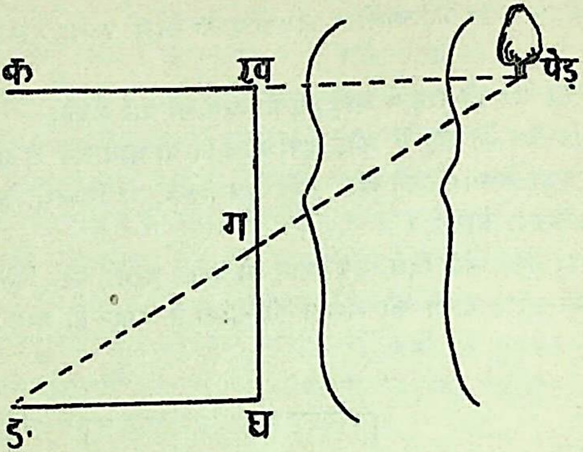

(४) **ढालू भूमि नापना**—लट्ठे की नोक पर एक रस्सी बांधकर उसमें एक वजन लटका दो। लट्ठे को सीधा रखते हुए रस्सीवाला छोर हाथ में रखो। जहां लट्ठे की दूसरी नोक छू जाय, वहां जाकर फिर उसी भांति नापते जाओ। जितने लट्ठे नपेंगे, उन्हें लट्ठे की लम्बाई से गुणा करने से उस स्थान की लम्बाई ज्ञात हो जायगी। यदि रस्सी की लम्बाई भी,

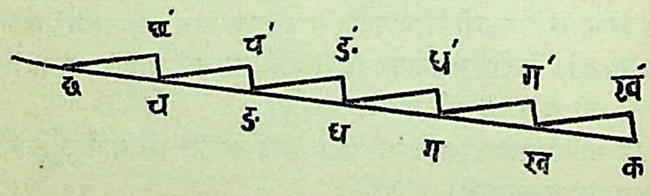

अर्थात् सतह से लट्ठे की ऊंचाई तक नापते जायं, तो उस स्थान की ऊंचाई भी ज्ञात हो जायगी।

(५) **पेड़, मीनार या भवन की ऊंचाई निकालना**—पेड़ या मीनार की सतह से कुछ दूरी पर लट्ठा ख घ खड़ा कर दें, फिर उससे उतनी दूर जायं कि जिसमें अपनी आंख, लट्ठे की नोक (ग) और मीनार की चोटी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(झ) एक सीध में हो जायँ। अब जमीन पर भी दूरी क ख और क ग नाप लें, फिर निम्नलिखित सूत्र से गणना करने से ऊंचाई ज्ञात हो जायगी।

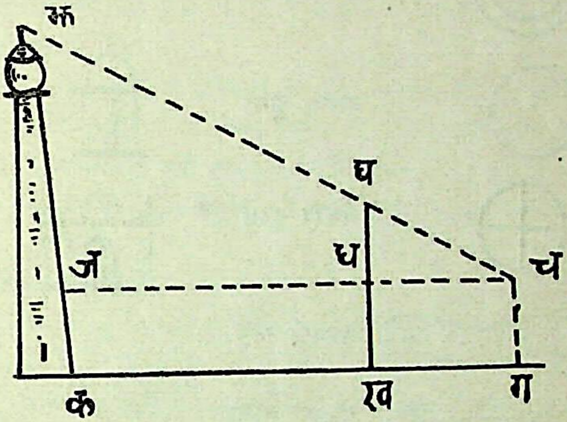

च ध : ध घ :: च ज : ज झ

मान लें च ध ८ फुट है और ध घ ६ फुट और च ज ४० फुट है तो ज झ $\frac{६ \times ४०}{८}$ = ३० फुट होगा। इसमें जमीन से नापनेवाले की आंख तक की ऊंचाई जोड़ देनी चाहिए। मान लें, आदमी की ऊंचाई ५½ फुट है तो आंख पांच फुट की ऊंचाई पर होगी। इसलिए उस मीनार की ऊंचाई ३० + ५ = ३५ फुट होगी।

३—मानचित्रों में दिखाये जानेवाले सांकेतिक चिह्न

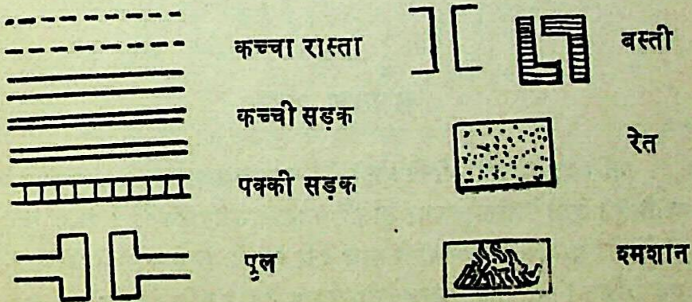

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

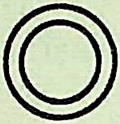
पक्का कुआं

कब्रिस्तान

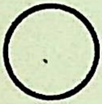
कच्चा कुआं

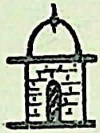
मंदिर

बेकार कुआं

मस्जिद

सरहदी नदी

सरहदी नाला

बाग

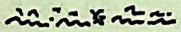
चरनोई

बीड़

उपर्युक्त वर्णन चेन तथा प्लेन टेबल सर्वे का है। सर्वे और भी यन्त्रों से की जाती है जैसे कम्पास सर्वे, थीडियोलाइट सर्वे इत्यादि, परन्तु कृषकों के काम की न होने से यहां उनका वर्णन नहीं दिया जाता।

: ४ :

समतल करना

भूमि बहुधा ऊंची-नीची होती है। समतल स्थान बहुत कम जगह पाये जाते हैं। खेती के लिए बहुधा भूमि समतल करनी पड़ती है। इसके सिवाय खेतों और पानी की नालियों में ढाल देना अथवा सड़कें और नहरों के लिए एक उचित निष्पत्ति का ढाल देना पड़ता है। यद्यपि समतल का शब्दार्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक सतह में लाने का है, परन्तु व्यावहारिक रूप में जमीन के ऊंचे-नीचे स्थानों को नापकर मान-चित्र में उनकी ऊंचाई-गहराई दिखाना, आवश्यकतानुसार नालियों में या जमीन में ढाल लाना इत्यादि सब क्रियाएं इस शब्द से सम्बन्ध रखती हैं।

साधारणतः पृथ्वी के विभिन्न भागों की ऊंचाई समुद्र की जल-तह से मापी जाती है। भूमि के छोटे-मोटे टुकड़ों की ऊंचाई उनको समतल करने के लिए एक मानसिक रेखा मानकर उसके आधार पर ऊंचाई का नाप लिखा जाता है। इस कार्य के लिए निम्नलिखित यन्त्र काम में लाये जाते हैं :

चेन—साधारणतः सौ फुट की।

अंकित स्टाफ—यह एक प्रकार का पैमाना होता है जो तीन भागों में होता है और पहले में दूसरा और दूसरे में तीसरा भाग रखा रहता है। ऊंचाई की आवश्यकतानुसार दूसरे-तीसरे को खींचकर ऊंचा कर लेते हैं। पहला पांच फुट लम्बा और दूसरा-तीसरा ४.५ फुट लम्बे होते हैं। इनपर फुट और इंच के चिह्न अंकित होते हैं।

लेवल लेने के यन्त्र

(१) स्पिरिट लेवल—राज लोग इसे काम में लाते हैं। यह लकड़ी और पीतल के केस में एक कांच की नली होती है, जिसमें स्पिरिट भरा होता है और एक बबूला हवा का छोड़ देते हैं। इसे जब किसी चीज पर रखा जाय और वह समतल होगी तो बबूला नली के बीच में रहता है। जब समतल नहीं होती, तो बबूला ऊंचाई की ओर दौड़ जाता है।

(२) नीचे दिये हुए प्रकार का यन्त्र भी लेवल जांचने के काम आता है। जब रस्सी से बंधा हुआ लटकन क ख वाली पटड़ी के बीचों-बीच होता है तो भूमि की धरातल सम होगी। ऐसा लेवल ढाल देने में बड़े काम का है। जितना ढाल देना है उतना देकर इस यन्त्र को क ख पटड़ी पर जहां लटकन की रस्सी छुए, चिह्न लगा देना चाहिए। फिर जहां उतना ढाल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देना हो, इसे रखकर देख सकते हैं।

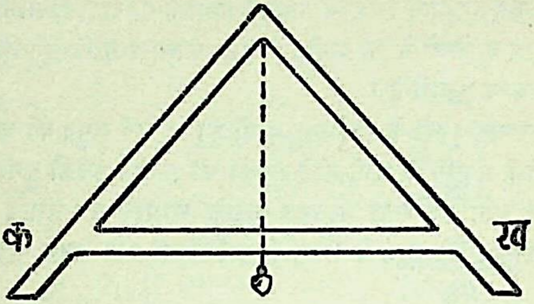

(३) डम्पी लेवल—यह एक नालीदार यन्त्र होता है, जिसे तिपाई पर जमाकर लेवल में कर लेते हैं। इस नली के सामने के भाग में दो खड़े तार और उनके बीचों-बीच से काटता हुआ एक आड़ा तार रहता है। दूसरी ओर देखने का लैंस लगा हुआ छेद रहता है। जहां की ऊंचाई-नीचाई देखनी हो वहां अंकित स्टाफ लेकर एक व्यक्ति खड़ा हो जाता है और यन्त्र द्वारा देखकर उस स्टाफ को दो तारों के बीच में करके, जहां पर बीच का तार पड़ता है, वे अंक लिख लिये जाते हैं। वे अंक उलटे दिखते हैं, थोड़ा महावरा हो जाने पर आसानी से पढ़े जा सकते हैं। ऐसे यन्त्र से सौ गज की दूरी भी आसानी से पढ़ी जा सकती है।

दो निकटवर्ती स्थानों की ऊंचाई-निचाई जानना

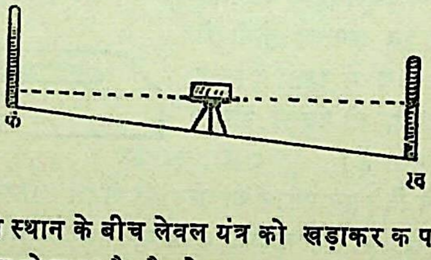

क और ख स्थान के बीच लेवल यंत्र को खड़ाकर क पर स्टाफ लेकर एक व्यक्ति खड़ा हो जाता है और लेवल द्वारा वहां का अंक पढ़ लिया जाता है। फिर लेवल को घुमाकर, जो तिपाई पर आसानी से घूम जाता है, ख स्थान की ऊंचाई पढ़ लें। मान लें, पहला अंक १.२ फुट है और दूसरा ४.८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फुट है तो दोनों स्थानों की ऊंचाई में ३.६ फुट का अन्तर हुआ। यदि दोनों स्थानों की दूरी २०० गज है तो इसका अर्थ यह होगा कि स्थान क ख से २०० गज की दूरी पर ३.६ फुट ऊंचा है।

जब बहुत दूर-दूर के स्थानों की ऊंचाई-निचाई देखनी होती है तो चेन-लाइन पर लेवल को कई जगह खड़ा करके आगे-पीछे के स्थानों की ऊंचाई देखते हुए लिखते जाते हैं और फिर हिसाब करके लिख लेते हैं।

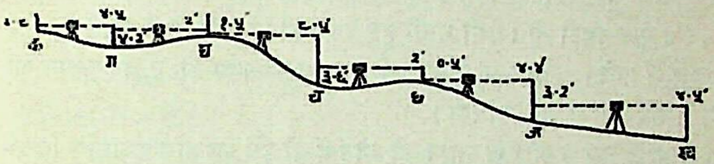

मान लें, हमें क और ख की ऊंचाई का अन्तर जानना है तो उपर्युक्त दोनों स्थानों के बीच हमें कई जगह यंत्र खड़ा करना होगा और क, ग, घ, च, छ, ज, और ख स्थानों की ऊंचाई के अंक लिखने होंगे। एक से दूसरे स्थान की दूरी भी लिखनी होगी।

उपर्युक्त चित्र से ज्ञात होगा कि हमारे दो स्थानों की दूरी के मार्ग में घ और छ स्थान चढ़ाव के तथा ग, च, ज, ख उतार के हैं। हम यदि चढ़ाई और उतराई के अंकों को अलग-अलग जोड़कर उनका अन्तर निकाल लें तो हमें ख से क की ऊंचाई का पता लग जायगा।

चढ़ाव	उतार
	ग ४.५—२.८=१.७'
घ ४.२—२=२.२'	च ८.५—१.५=७.०'
छ ३.६—२=१.६'	ज ४.४—०.५=३.९
	ख ४.५—३.२=१.३
३.८	१३.९

१३.९—३.८=१०.१' अर्थात् क ख से १०.१' ऊंचा है। दोनों स्थानों की दूरी मालूम होने से हम यह कह सकते हैं कि ख से क अमुक दूरी पर १०.१' ऊंचा है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मान लें, उपर्युक्त स्थान में हमें सड़क बनानी है या नहर काटनी है तो हमें कहीं से मिट्टी काटनी होगी और कहीं भरनी होगी। कहां से कितनी मिट्टी कटेगी और कहां कितनी भरेगी, यह निम्नलिखित चित्र से भली-भांति ज्ञात होगा।

इस कार्य के लिए हम ऐसी सीधी रेखा मान लेते हैं जो उपर्युक्त स्थानों की ऊंचाई या गहराई से अधिक गहरी हो। उपर्युक्त अंक से हम जानते हैं कि ख क से १०.१' फुट नीचा है तो हम ऐसी रेखा मानते हैं जो ख स्थान पर ५ फुट गहरी हो। ऐसी मानी हुई रेखा को 'डेटम'[1] रेखा कहते हैं। इस रेखा से प्रत्येक स्थान की ऊंचाई की गणना की जाय तो उतार-चढ़ाव का पता सरलता से लग जायगा।

यदि हम क और ख स्थान को जोड़ दें तो हमें यह ज्ञात होगा कि किस-

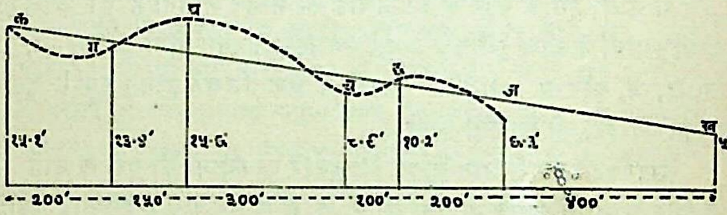

किस स्थान से मिट्टी कटेगी और किस-किस स्थान में भरेगी। दोनों स्थानों की दूरी १३५०' है तो इस चित्र में ढाल १३५० फुट में १०.१ फुट का हुआ। अब हम जितना ढाल देना चाहें वैसी क ख रेखा बनाकर गणना करके मिट्टी काट या भर सकते हैं।

यह रीति सड़क या नहर बनाने में काम आती है; परन्तु जहां पोखर या तालाब बनाना हो अथवा एक खास स्थान में कई जगहों की ऊंचाई या गहराई जानना हो तो उसके लिए कई जगह यंत्र रखकर उन स्थानों की ऊंचाई निकालते हैं और सम ऊंचाई वाले स्थानों की रेखाओं से जोड़ते हैं। ऐसी रेखाएं कॉण्टूर कहलाती हैं। कॉण्टूर रेखाओं की जानकारी पहाड़ों की

---

[1]. यथार्थ में 'डेटम' रेखा उस मानी हुई रेखा या सतह को कहते हैं जिसके आधार पर ऊंचाई दिखलाई जा सके।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऊंची-नीची भूमि पर वगीचों के पेड़ लगाने तथा उनकी सिंचाई के लिए नालियां वनाने में भी अच्छा काम देती है।

निम्नांकित तीन चित्रों से ज्ञात होगा कि पहले में ढाल एक कोने की ओर है। दूसरे में बीच की भूमि ऊंची है और तीसरे में बीच की भूमि नीची है। तीनों में क, ख, ग कॉण्टूर सम ऊंचाई के स्थानों को मिलाते हैं। इन कॉण्टूरों पर यदि सिंचाई की नाली वनाई जाय तो पानी उनसे नीचे की ओर जा सकेगा। यदि पेड़ लगाये जायं तो उस कॉण्टूर पर वनाई हुई नाली से सब पेड़ों को पानी मिलेगा।

ऐसे चित्रों से ऊंची-नीची भूमि को समतल करने अथवा ढालू वनाने में सहायता मिलती है।

समतल क्रिया भू-संरक्षण में भी आवश्यक होती है। कृषकों के खेतों की उपजाऊ भूमि वर्षा के पानी द्वारा वह जाती है और कहीं-कहीं प्रकृति द्वारा यह क्रिया इतने वेग से भी होने लगती है कि खेतों में पानी से पहले

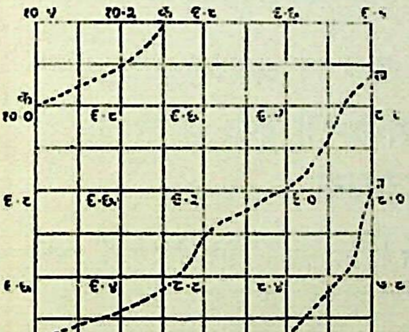

चित्र १

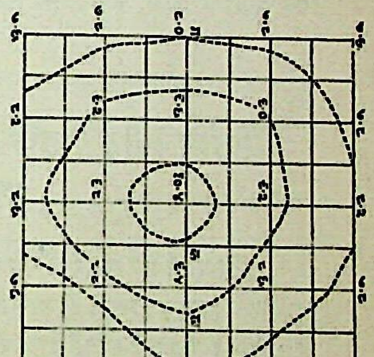

चित्र २

छापरे और वाद में धीरे-धीरे छोटे नाले तक वन जाते हैं। ऐसी क्रियाओं से होनेवाली हानि को रोकना वहुत आवश्यक है। इसके लिए खेतों में जगह-जगह कॉण्टूर वांध वांधने पड़ते हैं अर्थात् ऊंचाई वाले स्थानों पर आवश्यकतानुसार एक या डेढ़ फुट ऊंची पारियां बनानी होती हैं ताकि पानी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

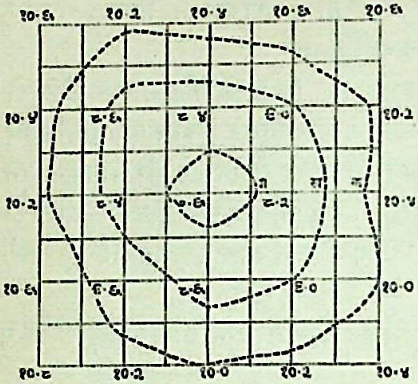

चित्र ३

के वहाव में कुछ रुकावट हो। वह संकरी जगह से न वहकर फैलकर वहे; और साथ ही पानी के ऊपर से वहने के पहले उसमें के भूमिकण नीचे बैठ जायं। कहीं-कहीं ढाल पर समानान्तर पारियां बनानी होती हैं, जिन पर घास जमने दी जाती है या फसलें (strip cropping) उगानी होती हैं। इन सबमें समतल करने की क्रियाओं की आवश्यकता होती है।

: ५ :

मकान और सड़कों-सम्बन्धी कुछ साधारण जानकारी

कृषि-फार्म पर कुछ कच्चे-पक्के मकान, सड़कें, छोटे-छोटे पुल, पक्की नालियां, अनाज भरने की भखारियां या खत्तियां इत्यादि बनवाने पड़ते हैं। इनकी लिपाई-पुताई या सफेदी कराने में कितने वर्गफुट काम होगा, यह पीछे दिये हुए क्षेत्रफलों से निकाल सकते हैं और बनावट में कितने घन-फुट काम हुआ, यह घन-फुट निकालने के सूत्रों से जाना जा सकता है। इनके सिवाय अन्य वस्तुओं की आवश्यकता का अनुमान निम्नलिखित जानकारी से हो सकता है :

ईंट—जिस नाप की चाहें बना सकते हैं। साधारणतः ९″×४″×२.५″ की होती हैं।

१०० घनफुट की चिनाई के लिए उपर्युक्त नाप की १३०० से १४००

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तक ईंटें लगती हैं, जिसमें टूट-फूट भी शरीक है। तीन-चौथाई ईंटें, एक-चौथाई चूना या मिट्टी।

चूना—चूने का पत्थर जलाकर चूना बनाया जाता है। इससे उन कंकरों में से कार्बन-डाइ-ग्राक्साइड नाम की गैस निकल जाती है।

बुझा हुआ चूना—पानी से ठंडा किया हुआ चूना।

कंक्रीट—लगभग डेढ़ इंच के छेद द्वारा गिर जानेवाले पत्थर के टुकड़ों को कंक्रीट कहते हैं।

नींव में भरने के लिए कंक्रीट चूने में मिलाकर भरी जाती है। इसके लिए एक भाग चूना, दो भाग बालू और चार भाग कंक्रीट मिलाकर आवश्यकतानुसार पानी से गीली करके काम में लानी चाहिए।

सीमेंट-कंक्रीट—एक भाग सीमेंट, तीन भाग बालू और छः भाग कंक्रीट।

ईंटों की चिनाई के लिए चूना—एक भाग चूना और दो भाग बालू मिलानी चाहिए।

सुर्खी-चूना मिश्रण—दो भाग चूने के साथ चार-पांच भाग सुर्खी मिलानी चाहिए। ईंट के टुकड़े पीसकर सुर्खी बनाई जाती है, अथवा मिट्टी के ढेले पकाकर बना लेते हैं।

दीवाल का प्लास्टर—सीमेंट एक भाग और महीन बालू चार भाग।

फर्श का प्लास्टर—सीमेंट एक भाग, बालू दो भाग और बजरी चार भाग मिलानी चाहिए।

१०० वर्गफुट प्लास्टर के लिए ३.२५ घन-फुट सीमेंट लगेगा। एक घनफुट सीमेंट का वजन लगभग ४५ सेर होता है।

चूना या सफेदी कराना—एक मन चूने में ५००० वर्गफुट स्थान पर सफेदी हो जाती है।

एक मन चूने में लगभग छः मन पानी, एक सेर गोंद और आधी छटांक नील डालना चाहिए।

दो राज (सिलावट) और छः औरतें एक दिन में २०० घन-फुट दीवार की चिनाई कर देंगे।

एक राज दो मजदूरों के साथ १५० वर्गफुट का प्लास्टर कर सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक मज़दूर ३०० वर्गगज़ की सफेदी एक दिन में कर सकता है।

सड़कें

फार्म पर कच्ची-पक्की सड़कें बनानी पड़ती हैं ताकि खेतों में खाद डालने अथवा फसल हटाने के लिए गाड़ियां या जुताई के भारी यंत्र खेतों में आसानी से जा सकें। ऐसी सड़कों पर कंकर-पत्थर डालकर उन्हें ऐसी बना लेना चाहिए जिससे आवश्यकता पड़ने पर वे बरसात में भी काम दे सकें।

फार्म की सड़कें बनाने में इतना ध्यान रखना चाहिए कि वे सीधी, कम-से-कम लम्बाईवाली तथा प्रत्येक खेत के लिए उपयोगी हों। यदि कोई नाला बीच में पड़ जाय तो वहां उचित ढाल देने के लिए कुछ टेढ़ी करनी पड़ती है। कहीं-कहीं ऐसे नालों में पत्थर की रपट भी बनानी पड़ती है ताकि थोड़ा पानी उनपर से बहता रहे और गाड़ियां या कृषि के यंत्र भी सरलता से पार ले जाये जा सकें।

सड़क-निर्माण के लिए फार्म पर घूमते हुए पहले नक्शे में उसके निशान लगा लेने चाहिए। फार्म की सड़कें आठ फुट चौड़ी काफी होंगी। सड़कों के दोनों ओर डेढ़-दो फुट घास जमने देनी चाहिए, ताकि सड़कें कटें नहीं। बरसाती पानी के बहाव के लिए नालियां भी होनी चाहिए। ये नालियां दो-ढाई फुट चौड़ी और वर्षानुसार न्यूनाधिक गहरी होनी चाहिए। साधारणतः १ या १½ फुट चौड़ी काफी होंगी। नालियों की बाज़ू का ढाल बहुत हलका-सा होना चाहिए ताकि वे कटें नहीं। सड़क बीच में से कुछ ऊंची होनी चाहिए, जिससे पानी न रुककर बगल की नालियों में बह जाय।

सड़क बनाते समय नालियों की मिट्टी सड़क पर डालनी चाहिए। ऐसी मिट्टी जब बरसात में अच्छी तरह से जम जाय, तब बीच की आठ फुट तक की चौड़ाई की मिट्टी करीब छः इंच गहरी खुदवाकर उस स्थान पर तीन-चार इंच व्यास के पत्थरों की छः इंच मोटी गिट्टी की तह डालकर उसे भी दबाना चाहिए। गिट्टी डालकर दबाने के पहले उसपर कुछ बालू (रेत) या मोरम भी डालना चाहिए ताकि वह बैठकर अच्छी तरह जम जाय।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सड़क की नालियां या सिंचाई की नालियां पार करने के लिए छोटी पुलियां (Culverts) बनानी होती हैं। इनके लिए अच्छी नींव भर कर ईंट-चूने से बनाना अच्छा होगा। जहां व्यय कम करना हो, लोहे के नल डाल कर उनपर मिट्टी डाली जा सकती है अथवा लकड़ी की पुलियां बन सकती हैं।

बरसात के पहले या बाद में सड़कों की मरम्मत का भी ध्यान रखना चाहिए। जहां कहीं बैठ जाय या कट जाय तो बैठने की जगह कुछ खोदकर भर देनी चाहिए। जहां कट जाय वहां तुरन्त मरम्मत कर देनी चाहिए।

: ६ :

मुद्रा, नाप, तौल, गणना-सम्बन्धी उपयोगी सारणियां

मुद्रा

भारतीय मुद्रा

३ पाई	=१	पैसा
४ पैसा	=१	आना या इकन्नी
२ इकन्नी	=१	दुअन्नी
२ दुअन्नी	=१	चवन्नी
२ चवन्नी	=१	अठन्नी
२ अठन्नी	=१	रुपया या १६ आना

पाई और पैसे तांबे के तथा अन्य सिक्के मिश्रित धातु के होते हैं। महाजनी लिखावट में निम्नलिखित चिह्न काम में लाये जाते हैं)। पैसा,)॥ दो पैसा,)॥। तीन पैसा, -) एक आना, =) दो आना, ≡) तीन आना, ।) चार आना, ॥) आठ आना, ॥।) बारह आना, १) रुपया आदि। हमें पांच रुपये पन्द्रह आने ग्यारह पाई लिखना है तो वह ५॥।≡)॥।२ लिखा जायगा।

नई मुद्रा का मान—

१०० नये पैसे=१ रुपया। इसमें १, २, ५, १०, २५ और ५० पैसे के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिक्के बने हैं।

प्रचलित कागजी मुद्रा—

नोट १), २), ५), १०) और १००) रुपया।

विदेशी मुद्राओं का भारतीय मुद्रा में मूल्य-विनिमय

	भारतीय मुद्रा
१ अंग्रेजी पौंड	= १३ रु० ३३ न० पै०
१ अमेरिकन डालर	= ४ रु० ७५ न० पै०
१०० फ्रांसीसी फ्रेंक	= १०२ रु०
१०० इटली का लीरा	= ० रु० ७७ न० पै०
१ पश्चिमी जर्मनी का मार्क	= १ रु० २० न० पै०
१ मिस्र का पौंड	= १३ रु० ६६ न० पै०
१०० जापान के येन	= १ रु० ३२ न० पै०
१ रूस का रूबल	= रु० ३४ न० पै०

नाप

लम्बाई

८ पड़े जौ	= १ इंच (आठ जौ को बराबर मिलाकर रखने में जितना स्थान आ जाय, वह १ इंच माना जाता है)
१२ इंच	= १ फुट
३ फुट	= १ गज
२२० गज	= १ फलांग
८ फलांग या १७६० गज	= १ मील

साधारण लम्बाई नापने के लिए १०० फुट की जरीब, जिसमें १०० कड़ियां होती हैं, काम में लाई जाती हैं। खेतों की पैमाइश के लिए ६६ फुट की जरीब काम में आती है। १० वर्गजरीब = १ एकड़ होती है। इसमें भी १०० कड़ियां होती हैं।

नया नाप

१० मिलीमीटर	= १ सेंटीमीटर
१० सेंटीमीटर	= १ डेसीमीटर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१० डैसीमीटर	=१ मीटर
१० मीटर	=१ डेकामीटर
१० डेकामीटर	=१ हेक्टामीटर
१० हेक्टामीटर	=१ किलोमीटर
१ किलोमीटर	=०.६२ मील
१ मील	=१.६१ किलोमीटर

क्षेत्रफल का नाप

१४४ वर्गइंच	=१ वर्गफुट
९ वर्गफुट	=१ वर्गगज
४८४० वर्गगज	=१ एकड़
६४० एकड़	=१ वर्गमील

यद्यपि भूमि का क्षेत्रफल अब एकड़ों में ही नापा जाने लगा है, परन्तु कहीं-कहीं बीघों में भी नापा जाता है। बीघा सब जगह का समान नहीं होता, इसलिए पाठकों की जानकारी के लिए मुख्य-मुख्य भागों के बीघों का मान वर्गगज और एकड़ों में नीचे दिया जाता है :

प्रांत	एकड़		बीघा	बीघा		वर्गगज
बंगाल	१	=	३.०२	१	=	१६००
पंजाब	१	=	२.००	१	=	२४२०
उत्तरप्रदेश	१	=	१.६०	१	=	३०२५
मद्रास	१	=	१.४३	१	=	३४००
बम्बई	१	=	१.२३	१	=	३९२७
बिहार	१	=	१.२०	१	=	४०३३

कपड़े का नाप

३ अंगुल	=१ गिरह
८ गिरह	=१ हाथ=१८ इंच
२ हाथ	=१ गज=३६ इंच

नया नाप

१ मीटर	=३९.३७०९७ इंच
	=१.०९ गज के लगभग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ गज =०.९१४ मीटर (लगभग)

सूत का नाप

१ स्कीन	=१२० गज
७ स्कीन	=१ हेंक
१८ हेंक	=१ स्पिंडल

एक पौंड (आधा सेर) रुई में जितने हेंक बनते हैं, वे काउंट कहलाते हैं। अधिक लम्बे रेशेवाली कपास से अधिक काउंट निकलते हैं और जितने अधिक काउंट निकलेंगे, उतना ही मुलायम (फाइन) कपड़ा बनेगा।

कोण का नाप

६० सेकंड	=१ मिनिट
६० मिनिट	=१ डिग्री
९० डिग्री	=१ समकोण

सूखे पदार्थों के नाप

भारत में कई जगह अनाज की बिक्री नाप से होती है, परन्तु अब धीरे-धीरे तोल का प्रचार बढ़ रहा है, इसलिए जगह-जगह के नाप का ब्यौरा स्थानाभाव के कारण नहीं दिया जाता। सिर्फ एक 'बुशल' का विवरण दिया जाता है क्योंकि अमेरिका की पुस्तकों में बुशल का हिसाब दिया जाता है।

१ बुशल	=१.२८५ घनफुट	१ बुशल जौ	=२४ सेर
१ बुशल गेहूं	=३० सेर	,, मक्का	=२८ सेर
१ बुशल जई	=१६ सेर	,, आलू	=३० सेर

इतना स्मरण रहे कि अनाज के बीज जाति के अनुसार हल्के-भारी भी होते हैं, इससे उपर्युक्त मान में कुछ थोड़ा-सा अन्तर हो सकता है।

साधारणतः कभी-कभी औषधियों के नाप चम्मच के रूप में भी दे देते हैं। उसका मान निम्नलिखित है:

३ चाय-चम्मच	=१ टेबल चम्मच
१६ टेबल चम्मच	=१ कप
२ कप	=१ पाइंट
२ टेबल चम्मच मैदा	=२ छटांक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तरल पदार्थों के नाप

दवाओं का नाप—

६० मिनिम	=	१ ड्राम या १ चाय-चम्मच ।
८ ड्राम	=	१ औंस
२० औंस	=	१ पाइंट

विज्ञानशालाओं में तरल पदार्थों की इकाई मिलीलिटर में होती है। जिसे सी. सी. अर्थात् क्युबिक (घन) सेंटीमीटर भी कहते हैं।

१००० मिलीलिटर	=	१ लिटर
५ औंस	=	१ जिल (Gill)
४ जिल	=	१ पाइंट
२ पाइंट	=	१ क्वार्ट
४ क्वार्ट	=	१ गैलन—२७७.२७४ घनइंच
२.२५ गैलन	=	१ घनफुट
१ गैलन पानी	=	१० पौंड
१ गैलन	=	४.५४६ मीटर

तोल

महाजनी तोल

८ रत्ती	=	१ माशा	
१२ माशा	=	१ तोला=१ रु.	
५ तोला	=	१ छटांक	ऽ-
४ छटांक	=	१ पाव	ऽ।
४ पाव या १६ छटांक	=	१ सेर	ऽ१
५ सेर	=	१ पंसेरी	ऽ५
८ पंसेरी	=	१ मन	१ऽ
६ मन	=	१ मानी	

नया तोल

इस तोल में 'ग्राम', 'किलोग्राम' तथा 'क्विटल' शब्द काम में आते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इनका मान निम्न प्रकार का है :

१ किलोग्राम	=	१००० ग्राम
१ क्विंटल	=	१०० किलोग्राम
१ क्विंटल	=	२ मन, २७ सेर, २ छटांक, ३ तोला और ६ माशा

नये बांट छोटे १, २, ५, १०, २०, ५०, २०० और ५०० ग्राम के हैं।
,, बड़े १, २, ५, १०, २०, ५० और १०० किलोग्राम के हैं।

१ किलोग्राम	=	१ सेर १ छटांक ८ माशा ६ रत्ती
१ सेर	=	०·९३३ किलोग्राम (लगभग ८६ तोला)

जोहरियों का तोल

८ रत्ती SS ८	=	१ माशा . १ SS
१२ माशा	=	१ तोला = १ रुपया भर

अंग्रेजी महाजनी तोल

२७.३४ ग्रेन	=	१ ड्राम
१६ ड्राम	=	१ औंस
१६ औंस	=	१ पौंड
११२ पौंड	=	१ हंड्रेडवेट
२० हं० वे०	=	१ टन

टन दो प्रकार के माने गये हैं

लांग टन	=	२२४० पौं०
अमेरिकन शार्ट टन	=	२००० पौं०

दवाओं का तोल

२० ग्रेन	=	१ स्कुपल
३ स्कुपल	=	१ ड्राम
८ ड्राम	=	१ औंस
१२ औंस	=	१ पौंड

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विज्ञानशालाओं के तोल

१० मिलीग्राम	=१ डैसीग्राम
१० डैसीग्राम	=१ सेंटीग्राम
१० सेंटीग्राम	=१ ग्राम
१० ग्राम	=१ डेकाग्राम
१० डेकाग्राम	=१ हेक्टाग्राम
१० हेक्टाग्राम	=१ किलोग्राम
१ किलोग्राम	=२.०५ पौं० =७००० ग्रेन
१ ग्राम	=१५.४१३ ग्रेन
१ ग्रेन	=०.०६५ ग्राम
१ पौं०	=४५३.६ ग्राम
१ तोला	=११.६६१ ग्राम

गणना

वस्तुओं की गणना

२० इकाई	=१ कोड़ी
१२ इकाई	=१ दर्जन (डजन)
१२ दर्जन	=१ ग्रॉस

कागज की गणना

२४ कागज	=१ दस्ता
२० दस्ता	=१ रीम

समय की गणना

भारतीय		अंग्रेजी	
६० अनुपल	=१ विपल	६० सेकंड	=१ मिनिट
६० विपल	=१ पल	६० मिनिट	=१ घंटा
६० पल	=१ घड़ी	२४ घंटा	=१ दिन-रात
६० घड़ी	=१ दिन	७ दिन	=१ सप्ताह
१५ दिन	=१ पक्ष	५२ सप्ताह	=१ वर्ष =३६५ दिन
३० दिन	=१ महीना		

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१२ महीना	=१ वर्ष
१२ वर्ष	=१ युग
१०० वर्ष	=१ शताब्दी
२॥ घड़ी	=१ घंटा
३ घंटा	=१ प्रहर

: ७ :

एक प्रकार के मान को दूसरे में बदलना

निम्नांकित अंकों से गुणा करने से मान बदले जा सकते हैं :

	सीधा	उलटा
इंच से सेंटीमीटर	× २.५४	× ०.३९४
फुट से मीटर	× ०.३०७७	× ३.२५
गज से मीटर	× ०.९२३	× १.०८३
गज से मील	× ०.००५६८	× १७६०
मील से किलोमीटर	× १.६१	× ०.६२
वर्गगज से एकड़	× ०.०००२०७	× ४८४०
तोला से ग्राम	× ११.६६	× ०.०८६
छटांक से ग्राम	× ५८.३	× ०.०१७
सेर से किलोग्राम	× ०.९३३	× १.०७२
मन से क्विंटल	× ०.३७३	× २.६७८
मानी से क्विंटल	× २.२३८	× ०.४४६
पौंड से किलोग्राम	× ०.४५३६	× २.२०५
घनफुट से मन (पानी)	× ०.७५५	× १.३२४
घनफुट से टन	× ०.०२७८	× ३५.९
घनफुट से पौंड	× ६२.२७८३	× ०.०१६०५
घनफुट से गैलन	× ६.२२८	× ०.१६०५
घनफुट से लिटर	× २८.३३	× ०.३५३२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घनफुट से बुशल	× ०.७७८	× १.२८५
लिटर से गैलन	× ०.२२	× ४.५४३

कोठे, कोठी या भखारी में भरे हुए अनाज का वजन[1] मालूम करना अथवा वजन मालूम हो तो उसके लिए जो स्थान लगेगा उसकी जानकारी निम्नांकित अंकों से गुणा करने से होगी :

	वजन घन-फुट से मन में	वजन मन से घन-फुट में
गेहूं	×०.६२९	×१.५९
मक्का	×०.६०४	×१.६६
ज्वार	×०.५५९	×१.७३
बाजरा	×०.६००	×१.६७
जौ	×०.५३१	×१.८९
धान	×०.४७७	×२.१०
जई	×०.३७५	×२.६९
चना	×०.६२५	×१.६०
उड़द	×०.६१८	×१.६२
मूंग	×०.५४३	×१.८४
तूर	×०.६३३	×१.५८
मटर	×०.५७८	×१.७३
सायबीन	×०.५५६	×१.८०
मेथरा	×०.५७८	×१.७३
बरसीम	×०.५८१	×१.७२
सन के बीज	×०.५३४	×१.८७
अलसा	×०.५२५	×१.९१

---

१. मेरे मित्र देवनारायणजी ठाकुर ने अनाज नाप-तोल करके जो अंक भेजे, उनके आधार पर।

चूंकि एक ही प्रकार के अनाजों में जाति तथा स्थानानुसार घनत्व में थोड़ा-सा अन्तर हो जाता है, इसलिए उपर्युक्त अंकों से दूसरे स्थानों में बहुत ही थोड़ा अन्तर हो सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: ८ :

एक वर्गगज की उपज से एक एकड़ का अनुमान

किसी खेत में एक-एक वर्गगज की फसल को पांच-सात जगह से काट-कर उसकी औसत निकाल ली जाए तो वह उपज एक वर्गगज की होगी। उससे एक एकड़ की उपज निम्नलिखित सारिणी से जानी जा सकती है।

उपज प्रति-वर्गगज	उपज प्रति-एकड़		
	मन	सेर	छ०
१ छटांक	७	२२	८
२ ,,	१५	५	—
३ ,,	२२	२७	८
४ ,,	३०	१०	—
५ ,,	३७	३२	८
६ ,,	४५	१५	—
७ ,,	५२	३७	८
८ ,,	६०	२०	—
९ ,,	६८	२	८
१० ,,	७५	२५	—
११ ,,	८३	७	८
१२	९०	३०	—
१३ ,,	९८	१२	८
१४ ,,	१०५	३५	—
१५ ,,	११३	१७	८
१ सेर	१२१	—	—
२ ,,	२४२	—	—
३ ,,	३६३	—	—
४ ,,	४८४	—	—
५ ,,	६०५	—	—

१ छ०=५८·३५९ ग्राम, १ मन=३७·३२४ किलोग्राम।
१ सेर=०·९३३ किलोग्राम।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: ९ :

पौधों की दूरी और प्रति एकड़ संख्या

गिनती निकालने का सूत्र

$$\frac{४३५६०}{(\text{पंक्तियों का अन्तर फुट में}) \times (\text{पौधों का अन्तर फुट में})} = \text{संख्या पौधे प्रति एकड़}$$

उदाहरण $\frac{४३५६०}{२' \times २'} = १०,८९०$

अन्तर पंक्तियों में फुट	इंच	अन्तर पौधों में फुट	इंच	संख्या प्रति एकड़
०	६	०	६	१७४,२४०
०	९	०	९	७७,४४०
१	०	०	६	८७,१२०
१	०	१	०	४३,५६०
१	६	०	६	५८,०८०
१	६	१	०	२९,०४०
१	६	१	६	१९,३६०
२	०	०	६	४३,५६०
२	०	१	०	२१,७८०
२	०	१	६	१४,५२०
२	०	२	०	१०,८९०
३	०	०	६	२९,०४०
३	०	१	०	१४,५२०
३	०	१	६	९,६८०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्तर पंक्तियों में फुट	इंच	अन्तर पौधों में फुट	इंच	संख्या प्रति एकड़
३	०	२	०	७,२६०
३	०	२	६	५,८०८
३	०	३	०	४,८४०
४	०	०	६	२१,७८०
४	०	१	०	१०,८९०
४	०	१	६	७,२६०
४	०	२	०	५,४४५
४	०	३	०	३,६३०
४	०	४	०	२,७२२
५	०	५	०	१,७४२
६	०	६	०	१,२१०
८	०	७	०	६८०
१०	०	१०	०	४३५
१५	०	१५	०	१९४
२०	०	२०	०	१०९
२५	०	२५	०	७०
३०	०	३०	०	४८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: १० :

क्षेत्रफल और घनफल निकालने के सूत्र

१—क्षेत्रफल निकालने के सूत्र

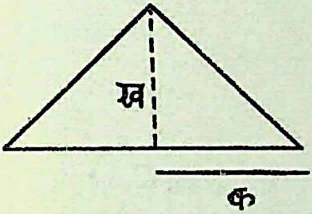

आधार की आधी लम्बाई × आधार के सम्मुख कोण तक की ऊंचाई।

$क \times ख$

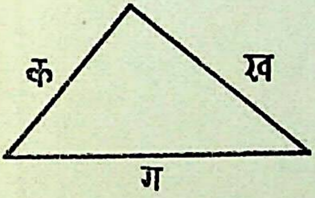

जहां तीनों भुजाओं की लम्बाई मालूम हो और ऊंचाई नहीं मालूम हो

$\sqrt{घ\,(घ-क)\,(घ-ख)\,(घ-ग)}$

$घ = \frac{क}{२} + \frac{ख}{२} + \frac{ग}{२}$

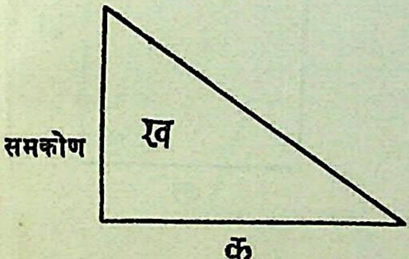

$\frac{क \times ख}{२}$

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समबाहु त्रिभुज

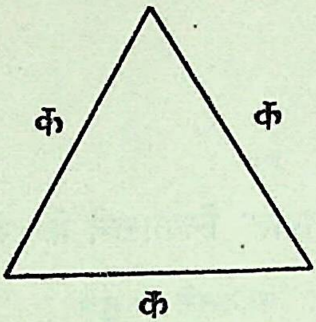

$क \times ०.४३३$ (क= बराबर एक भुजा)

समद्विबाहु त्रिभुज

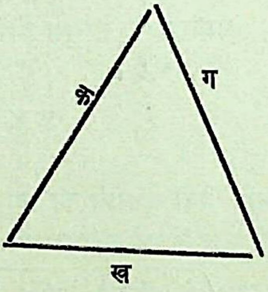

$\frac{ग}{४} \cdot \sqrt{४क^{२} - ग^{२}}$

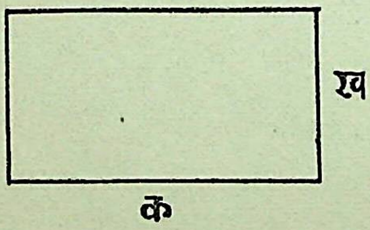

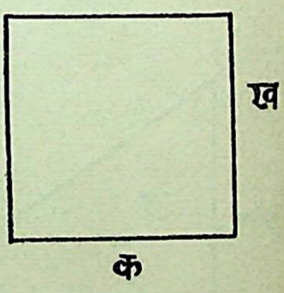

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आयत $क \times ख$ वर्ग $क \times ख$ या $क^{२}$

चतुर्भुज क्षेत्र

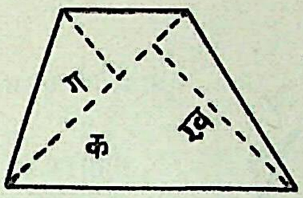

कर्ण क × कर्ण के सम्मुख कोणों की दूरी का योग
ख + ग

समानान्तर चतुर्भुज क्षेत्र

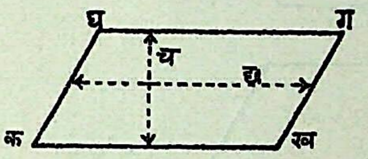

एक भुजा × समानान्तर भुजाओं की दूरी
कख × च
या कघ × छ

सम चतुर्भुज

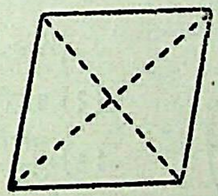

$\frac{1}{2}$ (कर्ण$_1$, कर्ण$_2$)

समलम्ब चतुर्भुज

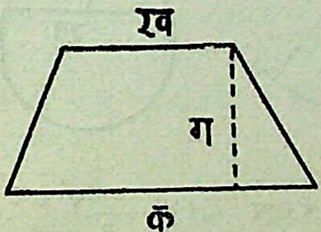

$\frac{1}{2}$ (क + ख) × ग
भुजाओं की दूरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समबाहु पंच या बहुकोण-क्षेत्र

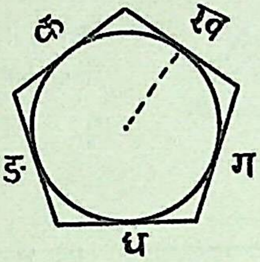

$\frac{\text{भुजाओं की संख्या}}{२} \times १ \text{ भुजा}$

$\times$ आंतरिक वृत्त की त्रिज्या

$\frac{५}{२} \times क \times च$

षट्भुज

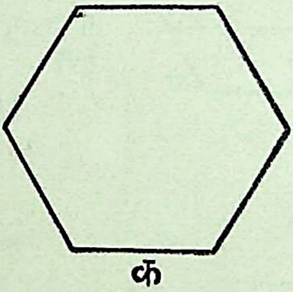

$\frac{३ क^{२}\sqrt{३}}{२}$

वृत्त

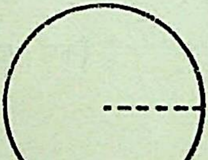

(१) $\frac{२२}{७} \times \text{त्रिज्या}^{२}$

(२) $\text{परिधि}^{२} \times ०.०७९६$

(३) $\frac{\text{परिधि}^{२}}{\frac{४ \times २२}{७}}$

वृत्त-खंड

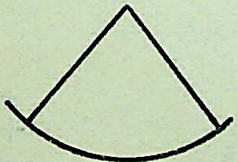

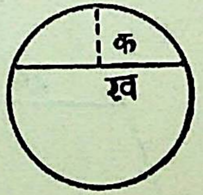

(१) $\frac{१}{२}$ त्रिज्या $\times$ चाप (२) $\frac{४ क}{३}\sqrt{\frac{१}{४} ख \times \frac{२ क^{२}}{५}}$

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इलिप्स

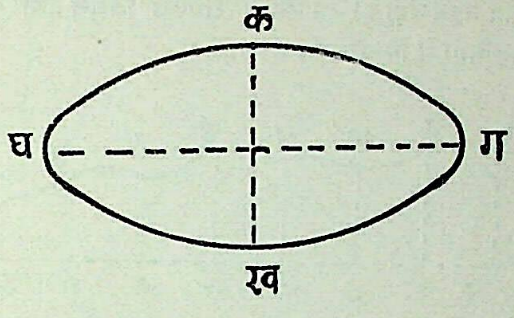

$$\frac{\text{क ख}}{२}\times\frac{\text{ग घ}}{२}\times\frac{२२}{७}$$

जिस खेत का का आकार टेढ़ा-मेढ़ा हो—

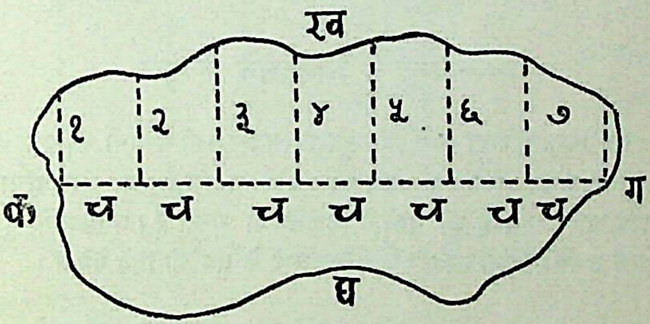

च—बराबर दूरी

१,२ ...८—आफ सेट

$\frac{1}{3}$ पहले और आखिरी आफसेट की लम्बाई का योग

+२ (बचे हुए में से विषम संख्या के आफसेट की लम्बाई का योग)

+४ (बचे हुए में से आफसेट की लम्बाई का योग)

$\frac{1}{3}$ (१+८) +२ (३,५ और ७ की लम्बाई) +४ (२,४,६, आसफेट की लम्बाई)

उपर्युक्त सूत्र से क ख ग का क्षेत्रफल निकलेगा। इसी रीति से क घ ग का भी निकाल लेना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यदि खेत बहुत बड़ा हो तो उसका क्षेत्रफल त्रिभुज तथा सम-लम्ब चतुर्भुज आकृतियों से निकाला जा सकता है।

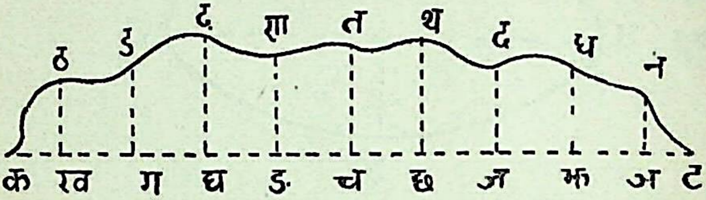

क, ख, ठ, और ञ, ट, न का क्षेत्रफल त्रिभुजों के क्षेत्रफलों के सूत्र से निकाला जा सकता है। शेष का ख ग ठ ड, ग घ ढ़ ड इत्यादि सम लम्ब चतुर्भुजों के सूत्र से निकाल सकते हैं।

२--घनफल निकालने के सूत्र

नालियां, नहर या कुओं की खुदाई, सड़क तथा मकानों की बनावट, ईंट, चूना, पत्थर इत्यादि के अन्य काम और अनाज, भूसा, खाद इत्यादि के नाप, वजन वगैरह इन सूत्रों से निकाले जा सकते हैं। घनफल के सूत्रों के साथ उनकी सतहों का क्षत्रफल निकालने के सूत्र भी दिये गये हैं।

	घनफल	क्षेत्रफल
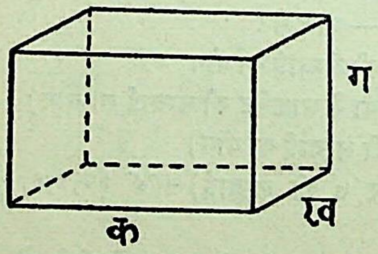	क × ख × ग	२ (कख + खग + गक)

सरल रेखांकित घन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	घनफल	क्षेत्रफल
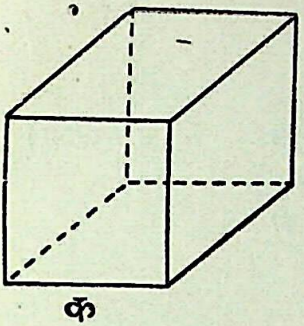	$क^3$	६ $क^2$

घन—जिसकी छः सतहें बराबर हों

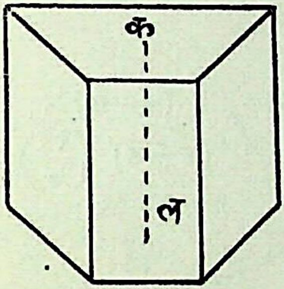	क × ल आधा (क आधार का क्षेत्रफल)	२ क + परिसीमा × लंबाई

त्रिपार्श्व—जिसकी सतह समानांतर चतुर्भुज क्षेत्रों से बनी हों

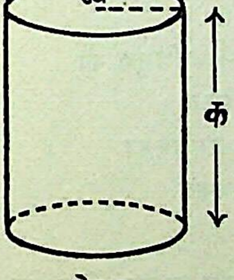	$\frac{२२}{७} \times ख^2 \times क$	$२\left(\frac{२२}{७} \times ख^2\right) \times क\left(\frac{२२}{७} \times २ख^2\right)$

बेलन

---

* Perimeter of the cross section

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	घनफल	क्षेत्रफल
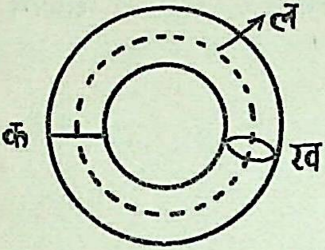 चपटी कड़ी	क × ख (क सेक्शन का क्षेत्रफल) ल बीच की गोलाई	ख × ल (ख परिसीमा)
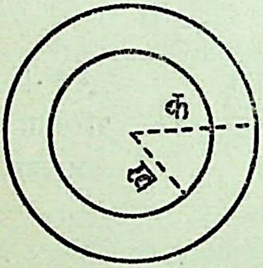 गोल कड़ी	$\frac{१}{४}$ (क—ख) × (क + ख) $\frac{२२}{७}$	(क + ख) × (क—ख) $\left(\frac{२२}{७}\right)^{२}$
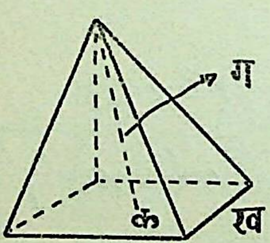	$\frac{१}{३}$ क × ग क आधार का क्षेत्रफल ग ऊंचाई	क + ४ त्रिभुज का क्षेत्रफल क आधार का क्षेत्रफल

सूची-स्तम्भ—वह ठोस पदार्थ जिसका आधार सरल रेखांतरित क्षेत्र हो और बाजुएं त्रिभुजों द्वारा बनी हुई हों और त्रिभुजों के शीर्षक एक स्थान पर मिलते हों।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

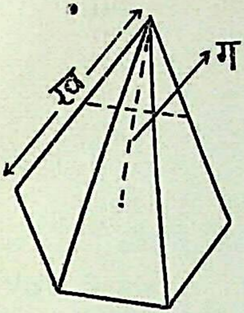

सम सूची-स्तम्भ

	घनफल	क्षेत्रफल
सम सूची-स्तम्भ	$\frac{1}{3}$ क × ग का क आधार का क्षेत्रफल ग की ऊंचाई	क + $\frac{1}{2}$ आधार के घेरे की लम्बाई × ढाल की ऊंचाई ख

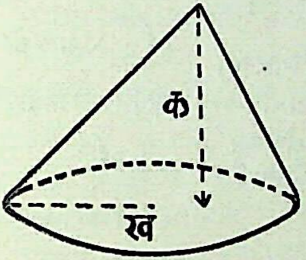

शंकु	$\frac{1}{3} \times \frac{22}{7}$ × ख^2 × क	आधार का क्षेत्रफल + परिधि × $\frac{1}{2}$ तिरछी ऊंचाई

शंकु—उस सूची-स्तम्भ को कहते हैं जिसका आधार गोल हो।

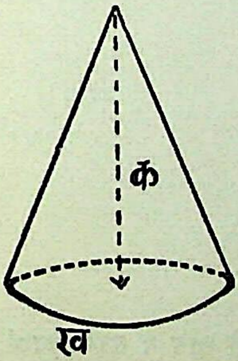

सम शंकु	$\frac{1}{3} \times \frac{22}{7}$ × ख^2 × क	आधार का क्षेत्रफल + परिधि × $\frac{1}{2}$ तिरछी ऊंचाई

सम शंकु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	घनफल	क्षेत्रफल
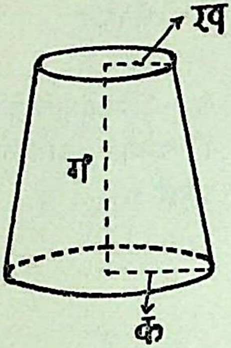 छिन्ना शंकु*	$\dfrac{\frac{२२}{७}\times ग}{३}(क^2+ख^2+क\times ख)$	$\frac{२२}{७}ख^2+\frac{२२}{७}क^2+$ बीच की परिधि × तिरछी ऊंचाई
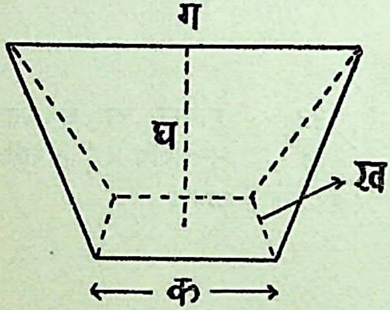 फार	$क\times ख\times \frac{घ}{२}$ (क × ख) आधार का क्षेत्रफल घ ऊंचाई	$क\times ख+२(\frac{ख}{२}\times$ ख के बीच की तिरछी ऊंचाई) $+२(\frac{क+ग}{२}\times$ ढाल की तिरछी ऊंचाई)
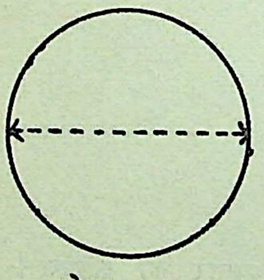 गोला	$व्यास^3\times ०.५२३६$	$व्यास^2\times ३.१४१$

* Frustum of circular cone बाल्टी-जैसे बर्तन में तरल पदार्थ भरा हो तो उसके घनफल की गणना ऐसे सूत्र से हो जाती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: ११ :

पटवारियों के कृषकोपयोगी पत्रक

पटवारियों के पास वैसे तो कई पत्रक रहते हैं परन्तु उनमें से दो ऐसे मुख्य होते हैं कि उनसे कृषकों को उनकी भूमि के विषय में बहुत-कुछ जानकारी मिल जाती है। इनमें से एक पत्रक में कृषक के पूरे खाते का, अर्थात् उनके पास किस-किस प्रकार की कितनी भूमि है और उसका भूमिकर (लगान) क्या है, लिखा रहता है। इसे खतौनी या जमाबन्दी कहते हैं। दूसरा जिसे खसरा कहते हैं उसमें प्रत्येक खेत का ब्यौरा रहता है।

इन दोनों के नमूने आगे दिये हैं। चूंकि प्रत्येक खाने का विवरण स्पष्ट तथा सरल भाषा में है, स्थानाभाव के कारण यहां उन्हें फिर से समझाने की आवश्यकता नहीं।

इतना स्मरण रहे कि आवश्यकतानुसार इनके खाने घटाये-बढ़ाये जा सकते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खतौनी [जमाबन्दी] ग्राम———————तहसील———————

अनुक्रम खाता नम्बर	मालिक का नाम	किसान का तथा उसके पिता का नाम, जाति, निवासस्थान व हक	खाते का खसरा नम्बर	क्षेत्रफल								
				मजरूआ*		पड़त जदीद	पड़त कदीम	वीड	चरणोई	खराव	कुल खा. नं. ५ से ११	जमा या भूमि-कर
				आबपाशी (सिंचाई)	गैर आबपाशी (बरानी)							
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३

जिला——————— प्रान्त——————— सम्वत् २० वि० सन् १९ ई०

दूसरे खातों का क्षेत्रफल	मतालबा (भूमिकर)				वसूल					बकाया				विवरण
	साल हाल		बकाया	कुल	नम्बर स्याहा	किस्त पहली	किस्त दूसरी	बाकी	कुल	साल हाल	पुराना		कुल	
	किस्त पहली	किस्त दूसरी									संमत	रकम		
१४	१५	१६	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खसरा ग्राम———— तहसील————

सर्वे क्रमांक व खेत का नाम	क्षेत्रफल बीघा या एकड़ में	मालिक का नाम	खातेजात के खाते का क्रमांक	कृषक तथा उसके पिता का नाम, जाति, निवास स्थान, हक्क तथा समय	लगान या भूमिकर	उप-कृषक, शिकमी काश्तकार तथा उसके पिता का नाम, जाति, निवास स्थान, समय	लगान उप-कृषक	आवपाशी का साधन निवान इत्यादि क व्यवस्था-सहित
१	२	३	४	५	६	७	८	९

जिला———— **प्रान्त**———— **संवत् २०** **विक्रमी. सन् १९** **ईसवी**

खरीफ			रब्बी			जायद			क्षेत्रफल दो फसली		गैर मजरूआ भूमि का विवरण				
	क्षेत्रफल			क्षेत्रफल			क्षेत्रफल				शामिल जोत खातों की		अलावा जोत गैर खात ों की		
जिन्स	आवपाशी (सींची हुई)	गैर आवपाशी (बरानी)	जिन्स	आवपाशी (सींची हुई)	गैर आवपाशी (बरानी)	जिन्स	आवपाशी (सींची हुई)	गैर आवपाशी (बरानी)	आवपाशी (सींची हुई)	गैर आवपाशी (बरानी)	भूमि का विवरण	क्षेत्रफल	भूमि का विवरण	क्षेत्रफल	विवरण
१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

: १२ :

भारतीय भूमि का क्षेत्रफल[1]

नाम प्रान्त	कुल क्षेत्रफल हजार एकड़ में	वह क्षेत्रफल जो बोया गया हजार एकड में	वह क्षेत्रफल जो एक बार से अधिक बार बोया गया हजार एकड में	कुल हजार एकड़ में	सिंचाई का क्षेत्रफल हजार एकड़ में
आंध्र	६७,८७३	२८,१०६	२,६४४	३०.७५०	७,०६८
असम	५४,३३५	५,११८	८८५	६,००३	१,५३३
बिहार	४३,००७	११,१९०	५,८१५	२५,००५	४,३८४
महाराष्ट्र और गुजरात	१,२२,२६४	६७,२२५	३,१३६	७०,३६१	३,६१६
जम्मू और काश्मीर	५५,०५५	१,६७८	२२८	१,९०६	७४३
केरल	९,६०२	४,५२५	८५७	५,३८२	८२९
मध्यप्रदेश	१,०९,५७४	३८,३५२	५,२२१	४३,५७३	२,०४९
मद्रास	३२,०८५	१४,४१४	२,७३१	१७,१४५	५,५१७
मैसूर	४७,४३८	२४,८९८	८०१	२५,६९९	१,८२९
उड़ीसा	३८,५०४	१३,८५४	१,१०४	१४,९५८	२,४१४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पंजाब	३०,१३३	१८,१०८	५,६७८	२३,७८६	७,४५९
राजस्थान	८४,५७६	३०,७०२	३,१७९	३३,८८१	३,४९०
उत्तरप्रदेश	७२,६१०	४१,८१३	१०,९५३	५२,७६६	११,४२०
प० बंगाल	२१,७१४	१२.८४९	२,१२८	१४,९७७	३,००९
दिल्ली	३६६	२१७	१०७	३२४	७९
हिमाचलप्रदेश	६,९६४	६७९	३६८	१,०४७	९४
मणिपुर	५,५२२	२२४	—	२२४	१४५
त्रिपुरा	२,५८३	४८२	८३	५६५	४
अंडमान-निकोवार द्वीप	२,०५८	१९		१९	—
लाक्षा-द्वीप समूह	७	७		७	—
कुल	८,०६,२७०	३,२२,४६०	४५,९१८	३,६८,३७८	५५,६८२

[1] १९६०-६१ के अंक अभी प्रकाशित न होने से १९५६-५७ के अंक ही दिये जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभिन्न प्रकार की फसलों का क्षेत्रफल और उपज, सन् १९६०-६१

निम्नांकित अंकों से ज्ञात होगा कि पिछले ९ वर्षों में खाद्यान्न तथा अन्य फसलों के क्षेत्रफल और उपज में काफी वृद्धि हुई है

	नाम फसल	क्षेत्रफल हजार एकड़ में		उपज हजार टन[1] में	
		१९५१-५२[2]	१९६०-६१[3]	१९५१-५२[2]	१९६०-६१[3]
धान्य	गेहूं	२३,४५०	३१,७५१	६,०३१	१०,६४८
	चावल	७३,६६५	८३,३३५	२०,७४१	३३,७००
	जव	७,८३५	७,९१६	२,२९३	२,७३४
	जुवार	३९,१४४	४२,१०८	५,९४४	९,०८५
	बाजरा	२२,८३९	२८,०६३	२,२९९	३,१३४
	मक्का	८,०७३	१०,७५८	२,०२१	३,९१५
	रागी	५,३९९	५,७६०	१,२१२	१,६४०
	छोटे धान्य	११,८३४	१२,२४५	१,८९१	१,९४९
	कुल	१,९२,२३९	२,२१,९३६	४२,४४०	६६,८०५
दलहन	उड़द	३,१३५	३,९१०	३६६	४६४
	कुलथी	२,५३१	३,९३६	१८२	३८०
	खिसारी	१,७५९	४,७०७	२२१	८६८
	चना	१६,८५७	२३,२४४	३,२९३	६,२२४
	तूर (अरहर)	६,०४५	५,९०७	१,९०१	२,०४८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	मटर	२,३५२	२,९०८	६१८	१,०३३
	मसूर	१,१०७	१,९५५	१८४	३५३
	मूंग	२ ६९७	३,२५१	२५४	३०५
	मोथ	४२५	३,३५२	३८	२१८
	अन्य	९,४७१	४,१७०	१,२९२	५५९
	कुल	४६,३७९	५७,३४०	८,३४९	१२,४५२
तिलहन	अलसी	३,४०२	४,२३३	३१६	४१०
	एरंडी	१,४२८	१,१३५	१०५	९८
	तिल	५,८४५	४,८५८	४३८	२८८
	मूंगफली	११,७९८	१५,४५५	३.०४५	४,३५४
	सरसों-राई	५,९१५	७,२६५	९१६	१,३८०
	कुल	२८,३८८	३२,९४६	४,८२०	६,५३०
ताग	कपास	१६,१९८	१८,९७१	३,१३३ (२)	५,३९४ गांठें २९२पौंड की
	पाट	१,९५१	१,५२९	४,६७८ (३)	४,०३० गांठें ४००पौंड की
	मेस्टा	—	६९४	—	१,१४७ गांठें ४००पौंड की
	सन	—	७९०	—	७६

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्य	अदरक (सोंठ)	४७	४४	१५	१६
	आलू	६०५	८८४	१,५५३	२,६५६
	गन्ना	४,७९२	५,७३४	६,०६८	८,६९०
	मिर्च काली	२०२	२३५	२३	२६
	मिर्च लाल	१,३८४	१,४१२	३४१	३६३
	तम्बाकू	७१२	९६८	२०५	२९४

भवन वेद वेदांग विद्यालय
दिनांक
वेदाङ्ग पुस्तकालय
आगत क्रमांक
दिनांक 1857

[1] १ टन = २७.२ मन = १०.१३ क्विंटल।
[2] Agril. statistics in India. Vol. viii n0. 3, 1953
[3] Directorate of Economics and statistics. केन्द्रीय खाद्य और कृषि-मंत्रालय के सौजन्य से।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri